ekuuh; fojUnj flg] e[; U;k;kèkh'k ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

रबि कुमार एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 88 of 2015. Decided on 3rd September, 2015.

सत्र विचारण सं॰ 173 वर्ष 2011 में श्री गिरीश चंद्र सिन्हा, विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, सरायकेला द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 21 जनवरी, 2015 एवं दिनांक 22 जनवरी, 2015 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 376 (2) (g)—सामूहिक बलात्कार–दोषसिद्धि–केवल अभियोक्त्री के साक्ष्य पर दोषसिद्धि आधारित की जा सकती है जब तक संपुष्टि इप्सित करने के लिए अनिवार्य कारण नहीं हैं–किसी घायल गवाह के साक्ष्य की तुलना में अभियोक्त्री का साक्ष्य अधिक विश्वसनीय है–अभियोक्त्री का कमजोर साक्ष्य जब यह किसी स्रोत से कोई संपुष्टि नहीं पा रहा है, इसपर विश्वास किए जाने के लिए इसे और भी कमजोर बनाता है–किसी अन्य समर्थनकारी साक्ष्य की अनुपस्थिति में अभियोक्त्री के विवरण को पूर्ण सत्य नहीं माना जा सकता है–चिकित्सीय साक्ष्य उसके मामले को संपूर्णता में भंजित करता है–अपीलार्थीगण दोषमुक्त किए गए। (पैराएँ 20 से 23, 25 से 27)

निर्णयज विधि.–(2012) 8 SCC 21; (2011) 7 SCC 130—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Kaushik Sarkhel, P.A.S. Pati., Tarun Kumar Mahto, For the Appellant; Mr. Pankaj Kumar, For the State.

विरेन्दर सिंह, मुख्य न्यायाधीश.–चूँकि वर्तमान अपील दोनों अपीलार्थियों अर्थात् रबि कुमार एवं दुर्योधन गोप उर्फ मंझला गोप (इसमें इसके बाद अभियुक्तगण के रूप में निर्दिष्ट) द्वारा भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 (2) (g) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए की गयी दोषसिद्धि से उद्भूत होती है, इसे अन्य अपीलों के उपर प्राथमिकता दी गयी है यद्यपि इसे केवल वर्ष 2015 में दाखिल किया गया था और दिनांक 4 मार्च, 2015 को ग्रहण किया गया था। अन्यथा भी, मामलों के ऐसे प्रकार को यथाशीघ्र निपटाना होगा।

2. दोनों अभियुक्तों को अधिनिर्णीत दंडादेश दस वर्ष का कठोर कारावास है तथा प्रत्येक को 5000/- रुपया का जुर्माना चुकाना है और इसके व्यतिक्रम में छह माह का अतिरिक्त कठोर कारावास भुगतना है।

3. जैसा न्यायालय में कथन किया गया है कि दोनों अभियुक्त विगत चार वर्षों से अभिरक्षा में है।

4. अभियोक्त्री (नाम नहीं प्रकट किया गया) और अभियुक्तगण एक ही गाँव (शांति नगर, गम्हरिया) से आते हैं, अभियोक्त्री विधवा है और घटना के लगभग 13 वर्ष पहले उसके पति की मृत्यु हो गयी। वर्तमान मामला किसी गोपाल (गवाह के रूप में उद्धृत नहीं किया गया) को उसके द्वारा दी गयी सूचना पर दर्ज किया गया था जिसने इसे लेखबद्ध किया, और तत्पश्चात, इसे संबंधित पुलिस थाना, आदित्यपुर को दिया गया था। इसपर अभियोक्त्री-परिवादी के अंगूठे का निशान है।

5. घटना की तिथि जैसा पुलिस के पास दर्ज आरंभिक रिपोर्ट से पाया जाता है दिनांक 20/21.7.2011 की मध्यक्षेपी रात्रि (रात्रि लगभग 12 बजे) है। पुलिस के पास प्राथमिकी अगले दिन अर्थात्

दिनांक 21.7.2014 को अपराह्न 2.40 बजे दर्ज की गयी थी। अभियोक्त्री का दिनांक 22.7.2011 को अपराह्न 1.40 बजे डॉक्टर (अ॰ सा॰ मीता सिंह) द्वारा परीक्षण किया गया था।

6. अभियोक्त्री की आयु 40 वर्ष है। वह अभिकथित करती है कि दिनांक 20/21.7.2011 को रात्रि लगभग 12.30 बजे जब वह अपने घर में सो रही थी, वह कुछ आवाज सुनकर अचानक जाग गयी। चूँकि बिजली का बल्ब जल रहा था, वह उस रोशनी में दोनों अभियुक्तों को देख सकती थी। वह आगे अभिकथित करती है कि दोनों अभियुक्त व्यक्ति उसके कमरे में घुसे और तब अभियुक्त रबि कुमार ने उसे पकड़ लिया और जमीन पर लिटा दिया और उसके मुँह पर अपना हाथ रख दिया और अभियुक्त मंझला गोप ने उसके साथ दुष्कर्म किया। (देशी भाषा में उसने कथन किया–दुष्कर्म किया) वह आगे अभिकथित करती है कि इसके बाद, अभियुक्त रबि कुमार ने भी यही कृत्य किया (देशी भाषा में उसने कथन किया–दोनों बार-बारी से मेरे साथ जबरन भयभीत कर संभोग किया और जाते वक्त बोला कि किसी को बताओगी तो जान से मार देंगे। वह आगे अभिकथित करती है कि उसने तुरन्त पड़ोसियों को घटना के बारे में बताया। हम उसके आर्रभिक बयान में इतना ही कुछ पाते हैं जो भारतीय दंड संहिता की धारा 376 (2) (g)/34 के अधीन दिनांक 21.7.2011 के पी॰ एस॰ केस सं॰ 168 वर्ष 2011 के रूप में प्राथमिकी दर्ज करने का आधार है।

7. वर्तमान मामले का अन्वेषण अ॰ सा॰ वंशीधर प्रसाद श्रीवास्तव द्वारा किया गया था जिसने घटनास्थल का दौरा किया और बलराम सतपति, अरुण प्रधान, काशीनाथ दास, नवीन दास, रंजीत प्रधान, योगेन्द्र महतो, गोपाल एवं मंटो दास का बयान दर्ज किया। नवीन दास जो ग्राम प्रधान भी है अभियोक्त्री का दूर का रिश्तेदार है। गाँव वालों के अनुसार, वह अभियोक्त्री का दामाद है।

8. जब डॉक्टर अ॰ सा॰ मीता सिंह द्वारा अभियोक्त्री का चिकित्सीय परीक्षण किया गया था, उन्होंने उसके शरीर पर बाह्य अथवा आंतरिक उपहति नहीं पाया था। कलाई जोड़, कोहनी जोड़, घुटना जोड़ एवं कूल्हा जोड़ के संबंध में एक्सरे किया गया था, जो उपहति उपदर्शित नहीं करता है। यह प्रतीत होता है कि ये समस्त एक्सरे इसलिए किए गए थे क्योंकि अभियोक्त्री का मामला यह था कि उसके विरुद्ध बल का प्रयोग किया गया था। जहाँ तक योनि परीक्षण का संबंध है, हिस्टोपैथोलॉजिकल परीक्षण प्रकट करता है कि जीवित या मृत वीर्य नहीं पाया गया था। एपिथेलियल कोशिका, मवाद कोशिका, आर॰ बी॰ सी॰ एवं बैक्टीरिया के संबंध में यह शून्य है। डॉ॰ मीता सिंह ने अपने रिपोर्ट में आगे मत दिया कि अभियोक्त्री के साथ हाल-फिलहाल के यौन संभोग का इतिहास नहीं है। चिकित्सीय रिपोर्ट विचारण के दौरान प्रदर्श A के रूप में प्रदर्शित किया गया है।

9. अन्वेषण पूरा करने के बाद, दोनों अभियुक्तों के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 (2) (g) के अधीन अपराध के लिए विचारण का सामना करने के लिए चालान दाखिल किया गया था, तद्नुसार, उक्त अपराध के लिए आरोपित किया गया था और पूर्वोक्तानुसार दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया गया है।

10. अभियोजन ने आरोप सिद्ध करने के लिए कुल दस गवाहों का परीक्षण किया है, किंतु हम गवाहों के विवरणों में जाने की आवश्यकता महसूस नहीं करते हैं, क्योंकि अधिकांश गवाहों को पक्षद्रोही घोषित किया गया है जबकि कुछ अनुश्रुत साक्ष्य के गवाह हैं।

11. मुख्यत:, अभियोजन मामला केवल अभियोक्त्री के साक्ष्य पर टिका है। चूँकि साक्ष्य में यह आया है कि घटना के तुरन्त बाद, मामला ग्राम प्रधान नवीन दास को बताया गया था, अभियोक्त्री के साक्ष्य के साथ नवीन दास के साक्ष्य का अधिमूल्यन करने की आवश्यकता है। हम इस तथ्य के प्रति भी जागरुक

हैं कि अभियोक्त्री ने अपने आर्रंभिक बयान में एक शब्द भी ऐसा नहीं कहा है जिसे पुलिस के पास मामला दर्ज करने का आधार बनाया गया है कि उसने ग्राम प्रधान नवीन दास को घटना के बारे में बताया था।

12. दोनों अभियुक्तों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री कौशिक सरखेल ने अभियुक्तों की पहचान को लेकर किसी विवाद्यक को नहीं उठाया है और सही प्रकार से क्योंकि दोनों अभियुक्त अभियोक्त्री के गाँव से आते हैं, अत: वह उन्हें पहले से जानती थी। विद्वान अधिवक्ता द्वारा किया गया मुख्य हमला अभियोक्त्री के साक्ष्य पर है और वह कथन करते हैं कि यदि इसका पठन सही परिप्रेक्ष्य में किया जाता है, यह कतिपय आंतरिक त्रुटियों से पीड़ित है और जब इसे ग्राम प्रधान नवीन दास के साक्ष्य के साथ देखा जाता है, यह और भी अविश्वसनीय बन जाता है ताकि पर दोनों अभियुक्तों को दोषसिद्ध धारित किया जा सके।

13. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि जब अभियोक्त्री कठघरे में आयी, उसने स्पष्टत: कथन किया कि घटना के तुरन्त बाद उसने निकट में रहने वाली और वहाँ जमा हुई महिलाओं को घटना प्रकट किया और तत्पश्चात्, ग्राम प्रधान अ॰ सा॰ 4 नवीन दास को बुलाया गया था जो अभियोक्त्री को अपने साथ अपने घर ले गया, जहाँ उसने दोनों अभियुक्तों को भी समन किया और वहाँ से, अभियोक्त्री एवं दोनों अभियुक्तों को पुलिस थाना और तब अस्पताल ले जाया गया था, जहाँ समस्त तीनों व्यक्तियों का चिकित्सीय रूप से परीक्षण किया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि जब अ॰ सा॰ नवीन दास के साक्ष्य का पठन किया जाता है, वह बिल्कुल भिन्न विवरण देता है। उसने कथन किया कि जब उसे घटना के बाद मामला रिपोर्ट किया गया था, वह अभियुक्तों के घर गया, जिन्हें वहाँ उपलब्ध नहीं पाया गया था, और बाद में, पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार किया था जब वे गाँव में गश्त लगा रहे थे। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वर्तमान मामला दिनांक 21.7.2011 को अर्थात् घटना के अगले दिन दर्ज किया गया था और कि अभियोक्त्री के मुताबिक अभियुक्तगण दिनांक 21.7.2011 को ही पुलिस के साथ थे जब वह भी पुलिस को उपलब्ध थी और उस समय तक मामला भी दर्ज किया जा चुका था, फिर भी अभियोक्त्री एवं अभियुक्तों को चिकित्सीय परीक्षण के लिए डॉक्टर के पास नहीं ले जाया गया था और उन्हें अगली तिथि अर्थात् दिनांक 22.7.2011 को ले जाया गया था। इससे विद्वान अधिवक्ता यह कहानी विकसित करना चाहते थे कि घटना और घटना के तुरन्त बाद जो कुछ हुआ था के संबंध में कहानी, जैसा अभियोक्त्री द्वारा न्यायालय के समक्ष प्रक्षेपित किया गया है घटना का सच्चा विवरण नहीं है और इस प्रकार यह कि कब पुलिस के पास मामला दर्ज किया गया था, अत्यन्त संदेहास्पद बन जाता है।

14. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि एक अन्य तथ्य जो अभियोक्त्री का मामला भंजित करता है, चिकित्सीय साक्ष्य है क्योंकि यह अभिनिश्चित करने के लिए कि क्या उसे अपने शरीर के किसी भाग पर कोई बाध्य उपहति आयी थी, संबंधित डॉक्टर द्वारा अभियोक्त्री का पूरा एक्स–रे परीक्षण किया गया था किंतु विचारण न्यायालय के अभिलेख पर उपलब्ध एक्सरे रिपोर्ट अभियोक्त्री की कहानी झूठलाते हैं जैसा पुलिस के पास दर्ज उसके आरंभिक परिवाद में अथवा अंत में उसके बयान में दिया गया है।

15. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि इतना ही नहीं पूर्वोक्त चूकों के कारण अभियोक्त्री का मामला अत्यन्त कमजोर हो जाता है, अभियोक्त्री का आंतरिक चिकित्सीय परीक्षण भी इस तथ्य का उपदर्शक है कि जैसा अभिकथित किया गया है वैसा कुछ भी नहीं हुआ है, क्योंकि अभियोक्त्री का हिस्टोपैथोलॉजिकल परीक्षण उसके साथ किसी यौन संभोग की संभावना से इनकार करता है क्योंकि जीवित या मृत कोई वीर्य की उपस्थिति नहीं थी। अ॰ सा॰ डॉक्टर मीता सिंह के मुताबिक यह विगत हाल में यौन संभोग का मामला नहीं है और कि यह तथ्य अभियोक्त्री का मामला आगे भंजित करता है।

16. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि एक अन्य पहलू जो अभियोक्त्री के मामले को कमजोर बनाता है यह है कि जब वह कठघरे में आयी, वह यह कथन करने में अत्यन्त स्पष्ट थी कि दोनों अभियुक्तों द्वारा उसके साथ बलात्कार किए जाने के कारण उसके वस्त्र रक्त रंजित थे और कुछ रक्त जमीन पर भी गिरा था जो तथ्य झूठा है क्योंकि अ॰ सा॰ डॉक्टर मीता सिंह के साक्ष्य में कहीं पर भी यह नहीं आया है कि उन्होंने अभियोक्त्री का आंतरिक रूप से परीक्षण करते हुए रक्त का धब्बा ध्यान में लिया था। हिस्टोपैथोलॉजिकल परीक्षण भी इसके बारे में मौन है। अन्यथा भी, जब अन्वेषण अधिकारी अ॰ सा॰ वंशीधर प्रसाद श्रीवास्तव कठघरे में आए वह भी अभियोक्त्री के मामले का समर्थन नहीं करते हैं क्योंकि वह यह कथन करने में स्पष्ट थे कि जब वे घटना स्थल पर आए उन्होंने जमीन पर कोई रक्त ध्यान में नहीं लिया था। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि केवल यही नहीं, अन्वेषण अधिकारी द्वारा रक्त रंजित वस्त्रों को भी कब्जा में नहीं लिया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यदि रक्त रंजित वस्त्रों की कहानी सत्य होती, अन्वेषण अधिकारी ने वस्त्रों को जब्त किया होता क्योंकि घटना के तुरन्त बाद अभियोक्त्री अ॰ सा॰ नवीन दास के साथ पुलिस के पास थी।

17. विद्वान अधिवक्ता ने अभियोजन मामले में पूर्वोल्लिखित दुर्बलताओं को इंगित करते हुए न्यायालय को अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से अवगत कराया है और वह कथन करते हैं कि जब अभियोक्त्री कठघरा में आयी, उसने स्वयं को सर्वोत्तम ज्ञात कारणों से अपने द्वारा स्थापित मूल मामले से अपने मामले में सुधार लाने का अपरिष्कृत प्रयास किया यद्यपि दोनों अभियुक्तों का मामला, जैसा अभियोक्त्री के गवाहों अथवा ग्राम प्रधान अ॰ सा॰ 4 नवीन दास को भी दिए गए सुझाव से पाया जाता है, यह है कि गाँव में स्पर्धा के कारण इस मामले में उन्हें झूठा आलिप्त किया गया था क्योंकि अभियुक्तगण प्रधान के विरुद्ध थे जो अभियोक्त्री का संबंधी है। उन्होंने निवेदन किया कि भले ही अभियुक्तों द्वारा किया गया बचाव कोई समर्थन नहीं पा रहा है, फिर भी इसे अभियोजन मामले पर विश्वास करने का आधार नहीं कहा जा सकता है यदि यह अन्यथा कमजोर है।

18. इस प्रकार, विद्वान अधिवक्ता दोनों अभियुक्तों की दोषमुक्ति के लिए प्रार्थना करते हैं जिस प्रार्थना का जोरदार विरोध विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री पंकज कुमार द्वारा यह कथन करते हुए किया गया है कि अभियोक्त्री विधवा होने के नाते दोनों अभियुक्तों का शिकार बन गयी जब वह घर में बिल्कुल अकेली थी। उन्होंने निवेदन किया कि अभियोक्त्री प्रारम्भ से ही मामले के महत्वपूर्ण पहलू पर संगत है, आरंभ में जब उसने दिनांक 21.7.2011 को पुलिस के पास रिपोर्ट दर्ज किया था और तब द॰ प्र॰ सं॰ की धारा 164 के अधीन दर्ज अपने बयान में और विचारण के दौरान भी। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि नि:संदेह उसके बयान में कुछ अंतर आ गया है, किंतु वे इतने महत्वपूर्ण नहीं हैं कि उसके मामले को पूरी तरह खारिज कर सके। उन्होंने निष्पक्षत: निवेदन किया कि चिकित्सीय साक्ष्य में भी कुछ कमी प्रतीत होती है, किंतु वह भी अभियोक्त्री का मामला भंजित नहीं करेगा। अत:, वह दोनों अभियुक्तों की दोषसिद्धि/दंडादेश, जैसा विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पहले ही दर्ज किया गया है, को मान्य ठहराने की प्रार्थना करते हैं।

19. भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 (2) (g) के मामले पर विचार करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **राय संदीप उर्फ दीपू बनाम राज्य (दिल्ली का एन॰ सी॰ टी॰), (2012)8 SCC 21,** मामले में उत्कृष्ट गवाह की गुणवत्ता पर टिप्पणी करते हुए पैरा 22 में निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

> *"22. gekjs lfopkfjr er esa ^^mRÑ"V xokg** dk vR;Ur mPp x.koÙkk ,o {kerk dk gksuk pkfg, ftl dk fooj.k pukSrhghu gksuk pkfg,A ,sl xokg d fooj.k*

> *ij fopkj djr g, U;k;ky; dk fdlh Ldkp d fcuk bl ijh rjg l Lohdkj dju dh voLFkk e gkuk pkfg,A ,l xokg dh x.koÙkk dh ijh{kk d fy,] ,l xokg dk gfl;r vrkfRod gkxk vkj tk çklfxd gkxk og ,l xokg }kjk fn, x, c;ku dh lR;i.krk gA tk vfèkd çklfxd gkxk] og vkjfHkd fcn l vr rd fn; x; c;ku e lxrrk g vFkkr ml le; ij tc xokg viuk vkjfHkd c;ku nrk g vkj vrr% tc og U;k;ky; d le{k c;ku nrk gA bl vfHk;Dr d çfr vfHk;ktu ekey d lkFk LokHkkfod ,o lxr gkuk pkfg,A ,l xokg d fooj.k e dkb VkyeVky ugh gkuk pkfg,A xokg dk fdlh Hkh yckb d çfr ijh{k.k dk lkeuk dju dh voLFkk e gkuk pkfg, vkj pkg ;g fdruk Hkh dBkj D;k u gk] ml fdlh Hkh ifjfLFkfr d vèkhu ?kVuk] vrxLr 0;fDr;k ,o bld ckn d ifj.kke d rF; d çfr dkb lng ugh NkMuk pkfg,A ,l fooj.k dk dh x;h cjkenfx;k] ç;Dr gfFk;kjk] ?kVuk fd, tku dk rjhdk] oKkfud lk{; ,o fo'k"kK er tl vU; leFkudkjh lkexh e l çR;d d lkFk lg&lcfèkr gkuk gkxkA mDr fooj.k dk çR;d vU; xokg d fooj.k d lkFk lxr :i l ey [kkuk pkfg,A ;g dFku Hkh fd;k tk ldrk g fd bl ifjfLFkfr tU; lk{; d ekey e ykx dh x;h ijh{kk d leku gkuk pkfg, tgk vfHk;Dr dk mld fo#) vfHkdfFkr vijkèk dk nk"kh vfHkfuèkkfjr dju d fy, ifjfLFkfr;k dh J[kyk e dkb xk;c dMh ugh gkuh pkfg,A doy ;fn ,l xokg dk fooj.k mDr ijh{kk ,o ykx dh tku okyh vU; ,lh le#i ijh{kkvk e vfgr gkrk g] ;g vfHkfuèkkfjr fd;k tk ldrk g fd ,l xokg dk ^^mRÑ"V xokg** dgk tk ldrk g ftldk fooj.k fdlh lif"V d fcuk U;k;ky; }kjk Lohdkj fd;k tk ldrk g vkj ftld vkèkkj ij nk"kh dk nfMr fd;k tk ldrk gA vfèkd lVhd :i l] vijkèk d dn fcn ij mDr xokg dk fooj.k v{k..k cuk jguk pkfg, tcfd vU; leLr vku"kfxd lkefx;k tl ekf[kd] nLrkoth ,o rkfRod mí';k dk vijkèk dk fopkj.k dju oky U;k;ky; dk vijkèkh dk vfHkdfFkr vkjki dk nk"kh vfHkfuèkkfjr dju d fy, vU; leFkudkjh lkefx;k dk Nkuu d fy, dnh; fooj.k ij fo'okl dju d fy, l{ke cuku d fy, rkfRod fof'kf"V;k e mDr fooj.k d lkFk ey [kkuk pkfg,A***

20. यह विधि का सुनिश्चित सिद्धांत है कि केवल अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य पर दोषसिद्धि आधारित की जा सकती है जब तक संपुष्टि इप्सित करने के लिए बाध्यकारी कारण नहीं हैं। किसी घायल गवाह की तुलना में अभियोक्त्री का साक्ष्य अधिक विश्वसनीय होता है। यौन प्रहार की पीड़िता का परिसाक्ष्य महत्वपूर्ण है और जब तक बाध्यकारी कारण नहीं हैं जो उसके बयान की संपुष्टि आवश्यक बनाते हैं, न्यायालय के लिए अभियुक्त को दोषसिद्ध करने के लिए केवल यौन प्रहार की पीड़िता के परिसाक्ष्य पर कृत्य करने में मुश्किल नहीं होना चाहिए यदि उसका परिसाक्ष्य विश्वास उत्पन्न करता है और विश्वसनीय पाया गया है। यह भी विधि का सुनिश्चित सिद्धांत है कि अभियोक्त्री के परिसाक्ष्य पर न्यायिक विश्वास के लिए शर्त के रूप में संपुष्टि विधि की आवश्यकता नहीं है, बल्कि दी गयी परिस्थितियों के अधीन विवेकशीलता का मार्गदर्शक सिद्धांत है। घायल गवाह की तुलना में अभियोक्त्री का साक्ष्य अधिक विश्वसनीय होता है। अभियोक्त्री के बयान में महत्वहीन अंतरों का लघु विरोधाभास भी एक अन्यथा विश्वसनीय अभियोजन मामले को खारिज करने का आधार नहीं होना चाहिए।

21. हम पूर्वोक्त सिद्धांतों की कसौटी पर वर्तमान मामले का परीक्षण कर रहे हैं। कोई मत निर्मित करने के लिए आइये हम अभियोक्त्री के साक्ष्य की छानबीन करें कि क्या वह उत्कृष्ट गवाह है जिसके साक्ष्य पर ऐसे गंभीर आरोप के लिए दोनों अभियुक्तों की दोषसिद्धि पोषित की जा सकती है अथवा क्या

यह कतिपय अंतर्निहित दुर्बलताओं से पीड़ित है जो मामले की नींव गिरा देता है ताकि संपूर्णता में अभियोक्त्री का मामला खारिज किया जा सके। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि अभियोक्त्री पूर्वोल्लिखित परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने में विफल रही। जब उसके बयान का दोनों अभियुक्तों पर लगाए गए सामूहिक बलात्कार के गंभीर आरोप के मुकाबले बारीकी से छानबीन किया जाता है, हमारा दृष्टिकोण है कि यह संदेह मुक्त नहीं है क्योंकि उसने स्वयं को बेहतर ज्ञात कारणों से अपने मामले पर सुधार करने का प्रयास किया है जब वह कठघरे में आयी। जब अ॰ सा॰ नवीन दास जो उसका संबंधी एवं ग्राम प्रधान भी है के साक्ष्य के साथ उसके साक्ष्य का अधिमूल्यन किया जाता है, यह प्रतीत होता है कि अभियोक्त्री द्वारा स्थापित मामला वस्तुत: घटना का सच्चा विवरण नहीं है, क्योंकि अभियोक्त्री ने यह कथन करके कि दोनों अभियुक्तों द्वारा उसके साथ किए गए दुष्कर्म के कारण उसके वस्त्र रक्त रंजित हो गए, अपने मामले को और भी वजनदार बनाने के लिए अपने पसंद की कहानी विकसित करने का प्रयास किया जो तथ्य अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आलोक में पूरी तरह बह जाता है। इतना ही नहीं, उसके द्वारा स्थापित मामला चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा झूठा सिद्ध होता है। स्वीकृत रूप से, घटना के तुरन्त बाद अ॰ सा॰ डॉक्टर मीता सिंह द्वारा परीक्षण किए जाने तक वह पुलिस के साथ थी, अत:, उसके पास अपने जननेंद्रियों को धोने का अवसर नहीं हो सकता था। इस संभाव्यता में, हिस्टोपैथोलॉजिकल परीक्षण ने उसके विवरण का समर्थन किया होता जबकि इसके विपरीत यह उपदर्शित करता है कि जीवित अथवा मृत वीर्य नहीं पाया गया था। अ॰ सा॰ डॉक्टर मीता सिंह ने यह कथन भी किया है कि अभियोक्त्री के साथ हाल में यौन संभोग का इतिहास प्रतीत नहीं होता है। यदि हम अभियोक्त्री के विवाहित स्त्री होने के नाते उसके मामले को कुछ जगह भी दे किंतु मामले का तथ्य यह है कि वह विधवा है और कि उसके चिकित्सीय परीक्षण ने यौन संभोग का कुछ संकेत दिया होता जो तथ्य वर्तमान मामले से स्पष्ट रूप से गायब है यदि अभिलेख पर उपलब्ध चिकित्सीय साक्ष्य का परीक्षण किया जाता है।

22. इस मामले में हमें जो चिंतित करता है, यह है कि दोनों अभियुक्तों के चिकित्सीय परीक्षण के संबंध में साक्ष्य उपलब्ध नहीं है ताकि यह कहा जा सके कि वे यौन संभोग करने के लिए शारीरिक रूप से स्वस्थ थे। यद्यपि हम दोनों अभियुक्तों के चिकित्सीय परीक्षण के संबंध में विचारण न्यायालय अभिलेख पर मेडिकल परची उपलब्ध पाते हैं किंतु डॉक्टर, जिन्होंने उस प्रयोजन से अभियुक्तों का चिकित्सीय रूप से परीक्षण किया, कठघरे में नहीं आए हैं। केवल यही नहीं, गवाहों की सूची में उनका नाम नहीं आता हैं। नि:संदेह इस संबंध में अन्वेषण अधिकारी की ओर से चूक प्रतीत होती है क्योंकि उसे गवाहों की सूची में उनका नाम दर्शाने के लिए सजग होना चाहिए था। समान रूप से, अपर लोक अभियोजक भी इस बारे में लापरवाह रहे हैं अन्यथा वह महत्वपूर्ण गवाह होने के नाते डॉक्टर का परीक्षण किए जाने के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 311 के अधीन विचारण न्यायालय के समक्ष आवेदन दाखिल कर सकता था। चाहे जो भी हो, मामले का तथ्य यह है कि दोनों अभियुक्तों का चिकित्सीय परीक्षण अभिलेख पर उपलब्ध नहीं है। किसी भी सूरत में, यह पहलू अभियुक्तों के पक्ष में जाने वाला आधार भी होगा और अभियोजन के साथ नरमी नहीं बरती जा सकती है जहाँ अभियुक्तगण ऐसे गंभीर आरोप का सामना कर रहे हैं। हम यहाँ यह कथन कर सकते हैं कि यदि अन्वेषण अधिकारी ने इस मामले में अभियोक्त्री तथा अभियुक्तों का डी॰ एन॰ ए॰ परीक्षा करवाने का परवाह किया होता, जैसा दिनांक 23.6.2006 के प्रभाव से दंड प्रक्रिया संहिता की धाराओं 53A एवं 164A को सम्मिलित करने के बाद अब आवश्यक है, इसने वस्तुत: अभियोजन के लिए बड़ी सीमा तक अपना मामला सिद्ध करना सुगम बन गया होता कि क्या अभियुक्तगण वस्तुत: अपराध की कारिता में अंतर्ग्रस्त थे।

23. संपूर्ण अभियोजन मामले का परीक्षण करते हुए, न्यायालय को जो प्रतीत होता है, वह यह है कि गवाहों जिन्हें इस मामले में पक्षद्रोही घोषित किया गया है, वे संपुष्टि के गवाह थे। अभियोक्त्री का

कमजोर साक्ष्य, जब यह किसी स्रोत से कोई संपुष्टि नहीं पाता है, इसे आगे विश्वास किए जाने के लिए और भी कमजोर बना देता है। जैसा ऊपर कथन किया गया है, ग्राम प्रधान नवीन दास का साक्ष्य जो अनुश्रुत गवाह के रूप में है भी विश्वासोत्पादक नहीं है जो अभियोक्त्री के मामले को समर्थन देगा क्योंकि उसका नाम पुलिस के पास अभियोक्त्री द्वारा दर्ज आरंभिक परिवाद में नहीं आता है, जबकि वह स्वयं को घटना स्थल पर अभियोक्त्री के साथ होने के रूप में प्रक्षेपित करता है क्योंकि गाँववालों ने घटना के तुरन्त बाद उसे बुलाया था। गवाहों जिन्हें, घटना की सूचना तुरन्त दी गयी थी, को पक्षद्रोही घोषित किया गया है। अन्यथा भी, अ॰ सा॰ नवीन दास का साक्ष्य अभियोक्त्री के साक्ष्य से बेमेल है, अत: उसके साक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता है।

24. कृष्ण कुमार मलिक बनाम हरियाणा राज्य, (2011)7 SCC 130, में भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 (2) (g) के अधीन सामूहिक बलात्कार के अपराध के संबंध में दिए गए निर्णय में पैरा 31 पर निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

*"31. fu%lng] ;g lR; g fd cykRdkj d vijkèk dh dkfjrk d fy, vfHk;Dr dk nk"kh vfHkfuèkkfjr dju d fy, vfHk;kD=h dk ,dek= lk{; i;kIr gkrk g ;fn ;g fo'okl mRiUu djrk g vkj i.kr% fo'oluh;] vdyfdr çrhr gkrk g vkj ;g mRÑ"V x.koÙkk dk gkuk pkfg,A fdr] oreku ekey e] vud dfe;k ftUg ;gk igy gh Åij ç{kfir fd;k x;k g n'kku okyk vfHk;kD=h dk lk{; n'kk,xk fd mldk lk{; ml dkfV e ugh vkrk g vkj mDr vijkèkk d fy, vihykFkh dk nk"kh vfHkfuèkkfjr dju d fy, fo'okl ugh fd;k tk ldrk gA***

25. पूर्वोक्त चर्चा के परिणामस्वरुप हम पाते हैं कि किसी अन्य समर्थनकारी साक्ष्य की अनुपस्थिति में अभियोक्त्री का एकमात्र विवरण पूर्ण सत्य नहीं माना जा सकता है बल्कि दूसरी ओर, चिकित्सीय साक्ष्य उसका मामला संपूर्णता में भंजित करता है। इस प्रकार देखे जाने पर दोषसिद्धि संपोषित करने की गुंजाइश नहीं है। हमारे सुविचारित दृष्टिकोण में, अभियोजन वर्तमान दोनों अभियुक्तों के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 (2) (g) की रिष्टि के अंतर्गत आने वाला सामूहिक बलात्कार का दोष स्थापित करने में बुरी तरह विफल रहा है। वे दोषमुक्ति के पात्र हैं।

26. इस प्रकार, वर्तमान अपील अनुज्ञात किया जाता है और सत्र विचारण सं॰ 173 वर्ष 2011 में विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, सरायकेला द्वारा पारित क्रमश: दिनांक 21 जनवरी, 2015 एवं दिनांक 22 जनवरी, 2015 का दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

27. उक्त नामित दोनों अपीलार्थियों को आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है। उन्हें तुरन्त निर्मुक्त किया जाएगा, यदि किसी अन्य मामले में उनकी आवश्यकता नहीं है।

28. रजिस्ट्री को किसी विलंब के बिना आदेश का परिणाम कारा प्राधिकारी को सूचित करने का निर्देश दिया जाता है। तद्नुसार विचारण न्यायालय को भी अवगत कराया जाएगा।

---

ekuuh; vferkHk dekj xlrk] U;k;efr

मरियम टिग्गा उर्फ मरियम राहा एवं अन्य

cuke

माइकेल उर्फ मिकाल एवं अन्य

Civil Revision No. 11 of 2015. Decided on 4th September, 2015.

सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

(क) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 7 नियम 11—वाद पत्र का अस्वीकरण–वादभूमि का कब्जा इप्सित करने वाला अभिधान वाद–वादीगण का वाद हेतुक ओराँव रुढ़िजन्य विधि के अनुसार उत्तराधिकार का तथ्य है–यह विवाद्यक आनुषंगिक नहीं है बल्कि नींव है जिसने अंतिमता प्राप्त कर लिया है–एक ही पक्षों के बीच वही प्रश्न पुनः उठाया नहीं जा सकता है–मुख्य विवाद्यक, जिसे विचारण न्यायालय द्वारा पक्ष का अधिकार, अभिधान एवं हित घोषित करने के पहले विनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है, को छिपाने के लिए वाद हेतुक चतुर ड्राफ्टिंग द्वारा छद्मावरण है–वाद हेतुक के बारे में भ्रम उत्पन्न करने वाले चतुर ड्राफ्टिंग की विधि में अनुमति नहीं दी जानी चाहिए–वाद पत्र अस्वीकार किया गया। (पैराएँ 12 से 15)

(ख) छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908—धारा 46—अंतरण अधिकार पर निर्बंधन–अनुसूचित जनजाति रैयत उपायुक्त की अनुमति प्राप्त किए बिना वसीयत अथवा किसी अन्य ढंग से भूमि में अपना अधिकार, अभिधान एवं हित अंतरित नहीं कर सकते हैं। (पैरा 11)

निर्णयज विधि.–(2010) 4 SCC 785; (2003)1 SCC 557; 1994 (1) BLJ 669; (1999) 3 SCC 267; (1998) 7 SCC 184; (2000) 8 SCC 143—Referred; (2001) 2 BBCJ 470 (Patna)—Distinguished; (2008) 12 SCC 661; (1997) 4 SCC 467—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Ayush Aditya, Shashank Shekhar, For the Petitioner; M/s Ajit Kumar, Syed Ramiz Zafar, For the Opp. Parties.

अमिताभ कुमार गुप्ता, न्यायमूर्ति.–सिविल प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में सी॰ पी॰ सी॰) की धारा 115 के अधीन यह आवेदन दिनांक 22.1.2015 के आदेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा विद्वान उप–न्यायाधीश I, राँची ने अभिधान वाद सं॰ 156/2014 में वाद पत्र के अस्वीकरण के लिए याची द्वारा दाखिल सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 के अधीन याचिका अस्वीकार कर दिया।

2. अभिवचनों के मुताबिक वादीगण का मामला यह है कि वादीगण/विपक्षी पक्षकार एवं प्रतिवादीगण/याचीगण जाति से अनुसूचित जनजाति समुदाय के ओराँव हैं और वे उत्तराधिकार एवं वसीयत के मामले में अपने समुदाय की रूढ़िजन्य विधि द्वारा शासित होते हैं और रुढ़िजन्य विधि के मुताबिक यदि किसी पुत्र के बिना ओराँव जनजाति के पुरुष की मृत्यु हो जाती है, तब विधवा एवं अविवाहित पुत्री, यदि हो, मृतक की अचल संपत्ति के फलोपभोग में से भरण–पोषण के हकदार होते हैं जब तक विधवा जीवित है और पुनर्विवाह नहीं करती है और जब तक पुत्री का विवाह नहीं होता है। विधवा की मृत्यु अथवा पुनर्विवाह के बाद और अविवाहित पुत्री के विवाह के बाद मृतक पुरुष ओराँव की अचल संपत्ति उसके निकटतम पुरुष गोत्रज पर न्यागत होगी। यह प्रकथन किया गया है कि ग्राम अरगोरा, राँची अवस्थित खाता सं॰ 129 की भूमि अधिकार अभिलेख पुनरीक्षण सर्वे में समान हिस्सा रखने वाले पॉलस ओराँव एवं पटरास ओराँव के नामों में दर्ज की गयी थी। कि पॉलस ओराँव ने खाता सं॰ 129, 275 एवं 401 की भूमि में अपने हिस्से के आधा के बँटवारा के लिए अपने भाई पटरास ओराँव के विरुद्ध बँटवारा वाद सं॰ 29 वर्ष 1975 दाखिल किया था। पूर्वोक्त वाद में दिनांक 24.4.1983 को बँटवारा डिक्री पारित किया गया था जिसके द्वारा वाद पत्र की अनुसूची में वर्णित भूमि पॉलस ओराँव के तख्ता को आवंटित की गयी थी और निष्पादन मामला सं॰ 1/1984 के तहत वाद संपत्ति का कब्जा उसको परिदान किया गया था। कि पॉलस ओराँव की मृत्यु दिनांक 19.7.1994 को किसी पुत्र के बिना अपने पीछे अपनी विवाहित पुत्री मरियम टिग्गा उर्फ मरियम राहा (प्रतिवादी सं॰ 1) को छोड़ते हुए हो गयी। रुढ़िजन्य विधि के मुताबिक, चूँकि पॉलस

ओराँव की मृत्यु किसी पुत्र के बिना हो गयी, पटरास ओराँव ने पॉलस ओराँव की संपत्ति विरासत में पाया और स्वयं अपने अधिकार के प्राख्यान में काबिज बना रहा और अपने जीवनकाल के दौरान काबिज बना रहा और उसकी मृत्यु के बाद वादी सं॰ 1 ने वादी सं॰ 2 से 5 के साथ पटरास ओराँव के उत्तराधिकारियों के रूप में इसे विरासत में पाया और वाद भूमि पर संयुक्त रूप से काबिज हुए और अभी भी इस पर संयुक्त रूप से काबिज हैं। आगे यह अभिवचन किया गया है कि वादीगण स्वर्गीय पॉलस ओराँव के निकटतम उत्तरजीवी पुरुष गोत्रज हैं और वाद भूमि पर कब्जा के हकदार हैं।

यह कथन किया गया है कि पॉलस ओराँव ने अपने जीवनकाल के दौरान दिनांक 20.2.1994 का सादा वसीयत निष्पादित किया था, जिसके द्वारा उसने बँटवारा वाद सं॰ 29/1975 में उसके हिस्से को आवंटित भूमि प्रतिवादी सं॰ 1 से 3 के पक्ष में विरासत में दिया और प्रतिवादी सं॰ 3 को अभिकथित वसीयत के निष्पादक के रूप में नियुक्त किया। यह अभिकथित किया गया है कि उक्त वसीयत पॉलस ओराँव द्वारा छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 (संक्षेप में सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम) की धारा 46 के प्रावधान के उल्लंघन में उपायुक्त, राँची से अनुमति प्राप्त किए बिना निष्पादित की गयी थी। संजीव कुमार राहा ने प्रोबेट केस सं॰ 94/95 में अभिकथित वसीयत के संबंध में प्रोबेट प्रदान करने के लिए न्यायिक आयुक्त, राँची के न्यायालय में याचिका दाखिल किया था जिसमें वादीगण उपस्थित हुए और इस अभिवचन के साथ आपत्ति दाखिल किया कि अभिकथित वसीयत कूटरचित और निर्मित है और उपायुक्त, राँची से अनुमति प्राप्त किए बिना निष्पादित किया गया है। वादीगण की आपत्ति पर प्रोबेट मामला अभिधान वाद सं॰ 1 वर्ष 1998 में संपरिवर्तित किया गया था और कार्यवाही में साक्ष्य दिया गया था और पक्षों को सुनने के बाद विद्वान न्यायिक आयुक्त ने दिनांक 5.5.2003 के आदेश द्वारा प्रोबेट मामला खारिज कर दिया। खारिजी के आदेश के विरुद्ध संजीव कुमार राहा ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील एफ॰ ए॰ सं॰ 2/2004 दाखिल किया जिसे दिनांक 21.12.2012 के निर्णय द्वारा अनुज्ञात किया गया था। उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध वादीगण ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष एस॰ एल॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 27123/2013 दाखिल किया जिसे वादीगण को विधि में उनको उपलब्ध अन्य उपचारों का अनुसरण करने की स्वतंत्रता देते हुए वापस ले लिए गए के रूप में खारिज किया गया था।

आगे, वाद पत्र के पैरा 28 में अभिवचन किया गया है कि ओराँव रुढ़िजन्य विधि के अधीन विवाहित पुत्री को अपने मृत पिता की संपत्ति विरासत में पाने का कोई भी अधिकार नहीं है। कि पॉलस ओराँव ने प्रतिवादी सं॰ 1 से 3 को वाद भूमि विरासत में देने वाला वसीयत निष्पादित किया था किंतु प्रतिवादी सं॰ 2 एवं 3 को अनुसूचित जनजाति के रूप में नहीं माना जा सकता है क्योंकि वे अनुसूचित जनजाति माता एवं गैर–आदिवासी पिता की संतानें हैं। आदिवासी केवल उपायुक्त की अनुमति प्राप्त करने के बाद उसी पुलिस थाना के अंतर्गत निवास करने वाले आदिवासी को वसीयत के रूप में अपनी संपत्ति विरासत में दे सकता है। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम के प्रावधान आदिवासियों के मामलों में प्रयोज्य नहीं हैं जो रुढ़िजन्य विधि द्वारा शासित होते हैं। यह दोहराया गया है कि पॉलस ओराँव की मृत्यु पर उसका भाई पटरास ओराँव निकटतम पुरुष गोत्रज होने के नाते वाद भूमि विरासत में पाया और वादीगण पटरास ओराँव के विधिक उत्तराधिकारी एवं स्वर्गीय पॉलस ओराँव के निकटतम पुरुष गोत्रज होने के नाते पटरास ओराँव की मृत्यु के बाद इसपर शांतिपूर्ण रूप से कबिज बने हुए हैं।

तद्नुसार, वादीगण द्वारा वाद संपत्ति पर अपने अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा एवं कब्जा की संपुष्टि की डिक्री के लिए अनुतोष इप्सित किया गया है और यदि वादीगण को काबिज नहीं पाया जाता है, तब कब्जा की वापसी की डिक्री पारित की जाए और प्रतिवादी सं॰ 1 से 3 को वाद भूमि से वादीगण को बेदखल करने से स्थायी रूप से अवरुद्ध किया जाए।

3. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने अभिलेख पर निम्नलिखित दस्तावेजों अर्थात् वादीगण द्वारा दाखिल वाद पत्र तथा याचीगण द्वारा सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 के अधीन दाखिल आवेदन और विरोधी पक्षकारों द्वारा दाखिल आपत्ति, एफ॰ ए॰ सं॰ 2/2004 में उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 21.12.2012 के आदेश की प्रति और एस॰ एल॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 27123/2013 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश की प्रति को लाया है।

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री आयुष आदित्य ने तर्क किया है कि अवर न्यायालय ने सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 के अधीन दाखिल याचिका में उठाए गए विधि के तथ्यों एवं बिंदुओं पर विचार एवं चर्चा किए बिना आक्षेपित आदेश द्वारा आवेदन अस्वीकार कर दिया है। कि आक्षेपित आदेश न्यायिक विवेक के इस्तेमाल की गयी परिलक्षित करने वाला गूढ़ एवं गैर-सकारण आदेश है, अत: अपास्त किए जाने योग्य है। अपने प्रतिवाद के समर्थन में **(2010)4 SCC 785** में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया गया है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि ग्रहण के चरण पर भी आवेदन निपटाते हुए कारण दर्ज किए जाने चाहिए। यह तर्क किया गया है कि अवर न्यायालय इस तथ्य का अधिमूल्यन करने में विफल रहा है कि विचारण न्यायालय वाद पत्र दर्ज करने के पहले भी अथवा प्रतिवादियों को समन जारी करने के बाद भी सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 के अधीन शक्ति का प्रयोग कर सकता है। कि सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 (a) एवं (d) के अधीन आवेदन विनिश्चित करने के प्रयोजन से वाद पत्र में किए गए प्रकथनों पर विचार किया जाना चाहिए और न कि लिखित कथन में अभिवचनों पर। अपने तर्क को पुख्ता बनाने के लिए विद्वान अधिवक्ता ने **(2003)1 SCC 557** में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है।

सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 के प्रावधान को निर्दिष्ट करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि वाद पत्र में किए गए अभिवचनों से यह स्पष्ट है कि उसमें इप्सित अनुतोष मुख्यत: इस तथ्य पर आधारित है कि वादी एवं प्रतिवादीगण ओराँव आदिवासी समुदाय से आते हैं और उत्तराधिकार तथा वसीयत के मामले में ओराँव आदिवासी की रुढ़िजन्य विधि द्वारा शासित होते हैं, परिणामस्वरुप उन्होंने संपत्ति विरासत में पाया है क्योंकि वे स्वर्गीय पॉलस ओराँव के एकमात्र उत्तरजीवी पुरुष गोत्रज हैं। यह तर्क किया गया है कि प्रतिपादित तथ्य प्रकट करते हैं कि उत्तराधिकार का दावा इस तथ्य पर आधारित है कि वे ओराँव अनुसूचित जनजाति पर प्रयोज्य रुढ़िजन्य विधि द्वारा शासित हैं। यह प्रचारित किया गया है कि ऐसा अभिवचन एफ॰ ए॰ सं॰ 2/2004 में माननीय उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज निष्कर्षों के विरुद्ध हैं जिसके द्वारा यह विनिश्चित एवं न्यायनिर्णीत किया गया है कि वसीयतकर्ता इसाई था और वे ओराँव आदिवासी की रीतियों का अनुसरण नहीं करते थे। विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय एवं निष्कर्ष को पूर्वोक्त एस॰ एल॰ पी॰ में सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी थी जिसे बाद में वापस ले निए गए के रूप में खारिज किया गया था।

यह आग्रह किया गया है कि एफ॰ ए॰ सं॰ 2/2004 में उच्च न्यायालय का निर्णय वाद पत्र के साथ संलग्न किया गया है और इस तथ्य को वाद पत्र के पैरा 24 में सम्मिलित किया गया है।

यह प्रतिवाद किया गया है कि दिए गए तथ्य एवं स्थिति में विद्वान अवर न्यायालय को दस्तावेज का परिशीलन करना चाहिए था किंतु यह ऐसा करने में बुरी तरह विफल रहा है और कोई कारण अथवा याची द्वारा किए गए निवेदनों पर कोई निष्कर्ष दर्ज किए बिना यंत्रवत एवं रुटीन तरीके से सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 के अधीन आवेदन अस्वीकार कर दिया है। वस्तुत: विचारण न्यायालय ने मात्र इस आधार पर आवेदन अस्वीकार किया है कि कार्यालय ने रिपोर्ट दिया कि वाद पत्र सही क्रम में था।

विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह प्रतिवाद किया गया है कि इस तथ्य कि प्रतिवादीगण इसाई हैं और आदिवासी की रुढ़िजन्य विधि द्वारा शासित नहीं हैं के संबंध में एफ॰ ए॰ सं॰ 2 वर्ष 2004 में उच्च न्यायालय

द्वारा दर्ज निष्कर्ष माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट किया गया है; परिणामस्वरुप, इस तथ्य पर निष्कर्ष कि वसीयतकर्ता इसाई था, ने अंतिमता प्राप्त कर लिया है और कब्जा की संपुष्टि एवं कब्जा की वापसी के अनुतोषों का दावा करके तथ्य को छुपाने का प्रयास करके और चतुर ड्राफ्टिंग का सहारा लेकर इस निष्कर्ष को फिर से छोड़ने अथवा खोलने की अनुमति नहीं दी जा सकती है जब ऐसे दावा का आधार इस वाद हेतुक पर आधारित है कि पक्षगण ओराँव हैं और ओराँव रुढ़िजन्य विधि के अनुसार उन्होंने संपत्ति विरासत में पाया है जबकि तथ्य के इस प्रश्न को पहले ही न्याय निर्णीत किया जा चुका है; परिणामस्वरुप, उन्हीं पक्षों के बीच उन्हीं तथ्यों पर वाद का संस्थापन न्याय निर्णीत के सिद्धांत द्वारा वर्जित है। विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद के समर्थन में **(1977)4 SCC 467; (1998)2 SCC 70; (2011)6 SCC 456** एवं **(2010)4 SCC 785** में प्रकाशित निर्णयों पर विश्वास किया है।

4. समानांतर स्तंभ में, विरोधी पक्षकारों/वादीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि वाद पत्र पर इसकी संपूर्णता में विचार किया जाना होगा और वर्तमान मामले में याचीगण ने मामला बनाया है कि वे संपत्ति पर काबिज हैं और उन्होंने कब्जा की संपुष्टि के लिए और कब्जा की वापसी के लिए भी प्रार्थना किया है यदि उन्हें वाद संपत्ति से बेदखल किया गया पाया जाता है। वादीगण ने प्रतिवादियों को वादीगण के कब्जा में हस्तक्षेप करने से अवरुद्ध करने के लिए भी प्रार्थना किया है। कि वाद पत्र अनेक वाद हेतुक पर आधारित है। **(1998)7 SCC 184** एवं **(1999)3 SCC 267** में प्रकाशित निर्णयों पर विश्वास और इनको निर्दिष्ट करते हुए यह तर्क किया गया है कि यह सुनिश्चित सिद्धांत है कि वाद पत्र को अनेक भागों में बाटकर अस्वीकार नहीं किया जा सकता है।

यह प्रतिवाद किया गया है कि यह सुनिश्चित प्रतिपादना है कि प्रोबेट मामला अभिधान विनिश्चित नहीं करता है और मात्र इसलिए कि विवाद्यक उठाए गए थे और प्रोबेट प्रदान करते हुए कार्यवाही में साक्ष्य दिया गया था, का अर्थ यह नहीं है कि उसके अधीन दिए गए निष्कर्षों ने अंतिमता प्राप्त कर लिया है। यह आग्रह किया गया है कि वसीयतकर्ता के अभिधान के विवाद्यक पर विचार करना प्रोबेट न्यायालय का कर्तव्य नहीं है क्योंकि अभिधान, स्वामित्व, आदि से संबंधित विवाद्यक पर सीमित अधिकारिता की ऐसी संक्षिप्त कार्यवाही में विचार नहीं किया जाना है क्योंकि प्रोबेट अथवा प्रशासन पत्र प्रदान किया जाना उन्हीं पक्षों के बीच उन्हीं तथ्यों पर किसी भावी वाद में न्याय निर्णीत के रूप में प्रवर्तित नहीं होता है। प्रतिवाद के समर्थन में उन्होंने **(2010) BBCJ 2470** में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है। विद्वान अधिवक्ता ने **(1994)1 BLJ 669** में प्रकाशित निर्णय पर भी विश्वास किया है और निवेदन किया है कि प्रतिवादित किए गए प्रोबेट मामले में पारित आदेश नियमित अभिधान वाद में पारित डिक्री के तुल्य नहीं है बल्कि प्रोबेट मामले में कार्यवाही संक्षिप्त कार्यवाही है और अंतिम आदेश पारित किए जाने के बाद डिक्री तैयार करने की आवश्यकता नहीं है। कि नियमित वाद में निष्कर्ष के आधार पर पारित डिक्री उन्हीं पक्षों के बीच उन्हीं तथ्यों पर वाद का संस्थापन वर्जित कर सकता है किंतु वसीयत वाद में पारित आदेश उन्हीं तथ्यों पर वाद का संस्थापन वर्जित नहीं कर सकता है। विद्वान अधिवक्ता ने **(2000)6 SCC 301,** में प्रकाशित निर्णय पर भी विश्वास किया है और निवेदन किया है कि प्रोबेट न्यायालय सीमित अधिकारिता का न्यायालय है और भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 373 के अधीन कार्यवाही में पारित उत्तराधिकार प्रमाण पत्र के प्रदान के संबंध में निर्णय उक्त कार्यवाही के किसी पक्ष को सिविल न्यायालय में दाखिल बँटवारा वाद में उसी विवाद्यक को उठाने से वर्जित नहीं करेगा। कि पक्षों के बीच निर्णय अंतिम नहीं है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि सर्वोच्च न्यायालय ने पूर्वोक्त निर्णय में अभिनिर्धारित किया कि भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 387 निर्णय को सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 11 के स्पष्टीकरण VIII के कार्यक्षेत्र से बाहर करती है।

यह प्रतिवाद किया गया है कि भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 387 अधिकथित करती है कि पक्षों के बीच अधिकार के किसी प्रश्न पर भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम के भाग X के अधीन दिया गया कोई निर्णय उन्हीं पक्षों के बीच किसी वाद कार्यवाही में उसी प्रश्न का विचारण वर्जित नहीं करेगा। यह इंगित किया गया है कि भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम के भाग X के अधीन कोई न्याय निर्णयन किसी पश्चातवर्ती कार्यवाही में उन्हीं पक्षों के बीच उसी प्रश्न का उठाया जाना वर्जित नहीं करता है और अधिनियम के अधीन दिया गया ऐसा निर्णय सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 11 के स्पष्टीकरण VIII के कार्य क्षेत्र के बाहर है। अपना तर्क सुदृढ़ करने के लिए उन्होंने **(2000)8 SCC 143** में प्रकाशित निर्णय पर भी विश्वास किया है और निवेदन किया है कि पूर्वोक्त मामले में अधिकथित निर्णयाधार अभिपुष्ट किया गया है।

5. अधिवक्ताओं द्वारा किए गए निवेदनों एवं तर्कों पर विरोधी पक्षकारों/प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किए गए निर्णयों को निर्दिष्ट करना एवं उनपर चर्चा करना इस प्रतिवाद का अधिमूल्यन करने के लिए उपयुक्त है कि संक्षिप्त कार्यवाही में दर्ज निष्कर्ष उन्हीं पक्षों के बीच उन्हीं तथ्यों पर पश्चातवर्ती कार्यवाही का संस्थापन वर्जित नहीं है।

(1998)7 SCC 184 में प्रकाशित निर्णय के परिशीलन पर यह स्पष्ट है कि उक्त मामले में वादीगण ने भागीदारी अधिनियम के निबंधनानुसार प्रतिवादीगण की ओर से प्रसंविदा के अभिकथित भंग से उत्पन्न होने वाला अपना वाद हेतुक उठाया था और उसने देश की विधि पर भी अपना वाद हेतुक उठाया था। विवाद पट्टा अवधि के अवसान के बाद प्रतिवादीगण के काबिज बने रहने के संबंध में था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि वाद पत्र कम्पोजिट वाद हेतुक पर आधारित था, **पहला भाग** पट्टा की अवधि के अवसान पर वादी-पट्टाकर्ता को कब्जा का परिदान देने में उसकी विफलता के कारण तत्कालीन करने वाला किराएदार द्वारा पट्टा के विनिर्दिष्ट प्रसंविदा के भंग को निर्दिष्ट करता और **दूसरा भाग** टी॰ पी॰ अधिनियम की धाराओं 108 (q) एवं 111 (a) के अधीन अपनी सांविधिक बाध्यता का अनुपालन करने में प्रतिवादी-पट्टाधारी की विफलता पर आधारित था। इस प्रकार, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यद्यपि वाद भागीदारी अधिनियम की धारा 69 (2) के अधीन वाद हेतुक के प्रथम भाग की सीमा तक वर्जित था किंतु यह द्वितीय भाग के अधीन वर्जित नहीं था क्योंकि टी॰ पी॰ अधिनियम की धारा 108 (q) एवं 111 (a) के विपरीत संविदा नहीं थी। उक्त मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यह किसी पक्ष का प्रतिवाद नहीं था कि कोई विपरीत संविदा थी जो पट्टाधारी को समय व्यतीत हो जाने पर एक भी दिन अधिक तक पट्टे के निर्धारण के उपरांत काबिज बने रहने की अनुमति देता हो। अतः, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यद्यपि वाद भागीदारी अधिनियम की धारा 69 (2) के अधीन अंशतः वर्जित था जहाँ तक यह पट्टा संविदा की विनिर्दिष्ट धारा सह-पठित वाद पत्र के प्रासंगिक परिवर्णन के अधीन प्रतिवादी की बाध्यता प्रवर्तित करना इप्सित करता था किंतु यह भागीदारी अधिनियम की धारा 69 (2) के अधीन अंशतः वर्जित नहीं था क्योंकि वादी ने अपने वाद हेतुक का भाग देश की विधि अर्थात् टी॰ पी॰ अधिनियम पर उठाया था जिसके अधीन वादी ने टी॰ पी॰ अधिनियम की धाराओं 108(q) एवं 111 (a) के अधीन अपने सांविधिक अधिकार का प्रवर्तन इप्सित किया है। तद्नुसार, यह पाया गया था कि उस अधिकार के प्रवर्तन का पूर्व संविदा के साथ कुछ लेना-देना नहीं था जो समय प्रवाह द्वारा विनिश्चित हो गयी। यह पर्याप्त रूप से स्पष्ट है कि उक्त मामले में अंतर्ग्रस्त तथ्य अथवा ताथ्यिक मैट्रिक्स के संदर्भ वर्तमान मामले के तथ्यों से सुभिन्न किए जाने योग्य है और उक्त मामले के तथ्यों पर निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों पर प्रयोज्य नहीं हैं।

(1999)3 SCC 267 में प्रकाशित निर्णय में विनिश्चयकरण के लिए उद्भूत प्रश्न यह था कि क्या वाद पत्र वाद हेतुक प्रकट करता है और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि परीक्षा यह देखना है कि

क्या प्रार्थना किया गया कोई अनुतोष अपीलार्थी को प्रदान किया जा सकता था यदि याचिका में किए गए प्रकथनों को सत्य सिद्ध किया जाता है। आरंभिक आपत्ति पर विचार करने के प्रयोजन से याचिका में किए गए प्रकथनों को सिद्ध माना जाना चाहिए और न्यायालय को यह पता लगाना होगा कि क्या वे प्रकथन वाद हेतुक अथवा विचारणीय विवाद्यक प्रकट करते हैं। न्यायालय प्रतिशपथ पत्र में उठाए गए विवाद के आधार पर तथ्यों पर विचार नहीं कर सकता है। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सी॰ पी॰ सी॰ का आदेश 7 नियम 11 न्यायालय को वाद पत्र अस्वीकार करने की आज्ञा देता है यदि यह वाद हेतुक नहीं प्रकट करता है और इस नियम के अधीन अभिवचन का कोई भाग विखंडित करने का प्रश्न नहीं है।

उक्त मामले में तर्क किया गया था कि कोई वाद हेतुक नहीं था क्योंकि कुछ अभिकथन तात्विक तथ्यों से विहीन थे, ऐसी दशा में वे वाद हेतुक प्रकट नहीं करते हैं। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि इसलिए, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 के प्रावधान का अवलंब नहीं लिया जा सकता है क्योंकि न्यायालय अभिवचनों को अनेक भागों में विभाजित नहीं कर सकता है और विचार नहीं कर सकता है कि क्या उनमें से प्रत्येक वाद हेतुक प्रकट करता है और वाद पत्र का आंशिक अस्वीकरण नहीं हो सकता है।

यह स्पष्ट है कि उक्त मामले में विनिश्चयकरण के लिए प्रश्न यह था कि क्या वाद हेतुक था। किंतु वर्तमान मामले में, वादीगण के अभिवचन के मुताबिक वादीगण के लिए वाद हेतु का सार यह है कि वे ओराँव आदिवासी हैं और रुढ़िजन्य विधि के मुताबिक उत्तराधिकार एवं विरासत के विधि द्वारा शासित हैं।

(2000)8 SCC 143 में प्रकाशित निर्णय में मामले के तथ्यों के परिशीलन पर यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी का प्रतिवाद यह था कि उत्तराधिकार प्रमाण पत्र के लिए आवेदन साक्ष्य दिए जाने के बाद गुणागुण पर विनिश्चित किया गया था और दिनांक 2.4.1985 की वसीयत के अधीन किसी अधिकार का दावा नहीं किया जा सकता था क्योंकि न्याय निर्णीत का सिद्धांत, विशेषत: सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 11 का स्पष्टीकरण VIII मामले पर प्रयोज्य बन गया है।

यह अभिनिर्धारित किया गया था कि भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धाराएँ 373, 383 (e) एवं 387 इसे स्पष्ट करती हैं कि उत्तराधिकार प्रमाण पत्र के प्रदान के लिए कार्यवाही संक्षिप्त प्रकृति की होती है और ऐसी कार्यवाही में किसी अधिकार को अंतिम रूप से विनिश्चित नहीं किया जाता है। धारा 387 स्पष्टत: प्रावधानित करती है कि भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम के भाग X के अधीन निर्णय पक्षों के बीच अधिकारों के किसी प्रश्न को न्यायनिर्णीत नहीं करता है और यह उन्हीं पक्षों के बीच किसी वाद अथवा किसी अन्य कार्यवाही में उसी प्रश्न के विचारण में वर्जना नहीं होगा। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि धारा 387 वाद अथवा अन्य कार्यवाही दाखिल करने की अनुमति देती है भले ही उत्तराधिकार प्रमाण पत्र प्रदान किया गया है और मात्र इसलिए कि उत्तराधिकार प्रमाण पत्र के आवेदन के संबंध में विवाद्यक उठाए गए थे और/अथवा साक्ष्य दिया गया था, इसका अर्थ यह नहीं है कि उसके अधीन दिए गए निष्कर्ष अंतिम हैं और न्याय निर्णीत के रूप में प्रवर्तित होते हैं।

यह स्पष्ट है कि उक्त निर्णय पक्षों के बीच अधिकारों के किसी प्रश्न के संबंध में हैं और ऐसा निर्णय किसी वाद अथवा किसी अन्य कार्यवाही में इसका विचारण वर्जित नहीं करेगा किंतु, वर्तमान मामले में, विनिश्चयकरण के लिए प्रश्न अथवा विवाद्यक इस तथ्य कि वे आदिवासी रुढ़िजन्य विधि द्वारा शासित ओराँव आदिवासी हैं के आधार पर उनके अधिकार का वादीगण के दावा के संबंध में है। अभिवचनों से यह स्पष्ट है कि विनिश्चयकरण के लिए आवश्यक तात्विक तथ्य यह है कि क्या पक्षगण ओराँव की रुढ़िजन्य विधि द्वारा शासित हैं और एफ॰ ए॰ सं॰ 2/2004 में उच्च न्यायालय द्वारा यह विवाद्यक एवं तथ्य न्यायनिर्णीत एवं विनिश्चित किया गया है जिसके द्वारा साक्ष्य के मूल्यांकन एवं विश्लेषण पर यह अभिनिर्धारित किया गया है कि याची इसाई था और ओराँव आदिवासी की रुढ़िजन्य विधि द्वारा शासित नहीं है।

इसी प्रकार से, विपक्षी पक्षकारों/प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा विश्वास किए गए **(2000)6 SCC 301** में प्रकाशित निर्णय भी उत्तराधिकार प्रमाण पत्र के प्रदान के संबंध में है। उक्त मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यह विवाद्यक पर निर्णय है और न कि ऐसा निर्णय जो न्यायनिर्णीत के रूप में प्रवर्तित होता है पर आने के लिए किसी आनुषंगिक प्रश्न पर निष्कर्ष मात्र नहीं। पूर्वोक्त निर्णय में पैरा 9 में संप्रेक्षित किया गया है:–

*"9. .....pfd gekj ekey e fook|d ugh Fkk] io dk;okgh e] D;k lgknj Hkkb Hkkjrh; mÙkjkfèkdkj vfèkfu;e dh èkkjk 372 d vèkhu dk;okgh e erd dh link fojklr e iku dk gdnkj gkxk] tk erd d fofèkd mÙkjkfèkdkjh d :i e oknh d nkok dk vihykFkh }kjk nh x;h pukrh dk vkèkkj gA bl fu.k; dk ykx dju d fy, Hkh ;g n'kkuk gkxk fd okn e ç'uxr lifÙk fojklr e iku d fy, oknh dk nkok io dk;okgh e vFkkr mÙkjkfèkdkj çek.k i= dk;okgh e , l fook|d d ekè;e l mBk;k x;k FkkA çR;fFk;k d fo}ku vfèkoDrk }kjk , lk fook|d bfxr ugh fd;k tk ldrk FkkA***

उक्त मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उत्तराधिकार प्रमाण पत्र में कार्यवाही अंतिम नहीं है और उत्तराधिकार प्रमाण पत्र जारी किया जाना मात्र ऋणी को उस भुगतान जिसे वह ऐसा प्रमाण पत्र धारण करने वाले व्यक्ति को करता है के लिए पूर्ण क्षतिपूर्ति प्रदान करता है और उत्तराधिकार प्रमाण पत्र का प्रदान सीमित प्रयोजन से किया जाता है, अपने क्षेत्र में सीमित, अभिधान की घोषणा प्रथम दृष्टया होने के नाते, किया गया भुगतान सद्विश्वास में किया गया घोषित किया जाता है, **केवल इस निष्कर्ष की ओर ले जाता है कि उसमें दिया गया कोई निर्णय ऐसी कार्यवाही के प्रयोजन से अंतिम होने के नाते ऐसी घोषणा के सिवाए पक्षों के अधिकारों के अंतिम न्याय निर्णयन के रूप में नहीं माना जा सकता है।**

6. आगे विस्तार देते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि **उत्तराधिकार प्रमाण पत्र का प्रदान** भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 के भाग X के अधीन आता है और इसका विस्तार धाराओं 370 से 390 के बीच है। आगे यह अभिनिर्धारित किया गया था कि धारा 387 को निर्दिष्ट करना महत्वपूर्ण है। यह अधिकथित करती है कि पक्षों के बीच अधिकार के किसी प्रश्न पर भाग X के अधीन किया गया कोई निर्णय उन्हीं पक्षों के बीच किसी वाद अथवा अन्य कार्यवाही में उसी प्रश्न का विचारण वर्जित नहीं करेगा। परिणामस्वरुप, अधिनियम के भाग X के अधीन निर्णय सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 11 के स्पष्टीकरण VIII के अधीन नहीं आते हैं।

यह दोहराया गया है कि उक्त निर्णय, जैसा ऊपर गौर एवं चर्चा किया गया है, वर्तमान मामले के तथ्यों में प्रयोज्य नहीं बनाया जा सकता है क्योंकि प्रोबेट का प्रदान भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 के अध्याय X के अंतर्गत नहीं आता है।

(2008)12 SCC 661 में प्रकाशित निर्णय में प्रश्न यह था कि बँटवारा वाद का प्रभाव क्या होगा जिसे माप एवं सीमांकन द्वारा संपत्तियों का बँटवारा करवाकर इसके तार्किक परिणाम तक नहीं ले जाया गया था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 के अधीन कार्यवाही में इस प्रश्न पर विचार नहीं किया जा सकता है। क्या बँटवारा के लिए कोई संपत्ति छोड़ी गयी है, यह स्वयं तथ्य का प्रश्न है और तथ्यों के न्यायनिर्णयन की आवश्यकता है। उक्त मामले में, **सी॰ नटराजन बनाम आशिम बाई, (2007)12 SCALE 163,** मामले को निर्दिष्ट किया गया था जिसमें पैरा 8 पर निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"8. ...okn i= d vLohdj.k d fy, vkonu nkf[ky fd;k tk ldrk g ;fn okn i= e fd, x, vfHkdFku Lohdkj fd, tkus ij mudh li.krk e lgh eku tku ij fdlh fofèk }kjk oftr çrhr gkr gA vr% ;g ç'u fd D;k okn ifjlhek

*}kjk oftr g ;k ugh] çR;d ekey d rF;k ,o ifjfLFkfr;k ij fuHkj djxkA mDr ç;ktu l] doy okn i= e fd, x, çdFku çklfxd gA bl pj.k ij U;k;ky; çfroknh d ekey ij fopkj dju dk gdnkj ugh gkxkA***

उक्त निर्णय के पैरा 44 में **पोपट एवं कोटेचा संपत्ति बनाम स्टेट बैंक स्टाफ एसोसिएशन, (2005)7 SCC 510,** मामले को निर्दिष्ट किया गया था जिसमें पैराओं 22 एवं 23 पर निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया था:–

*"22. ^^rkRod rF;k** ,o ^^fof'kf"V;k** d chp lfHkUurk gA 'kCn ^^rkRod rF;** n'kkr g fd i.k okn grd fu#fir dju d fy, vko';d rF;k dk dFku djuk gkxkA ,dy rkRod rF; dk yki vi.k okn grd dh vkj y tkrk g vkj c;ku vFkok okn i= nk"ki.k cu tkrk gA ^^rkRod rF;k** ,o ^^fof'kf"V;k** d chp lfHkUurk cl cuke vkèke çl fy0] 1936 (1) ICB 697 e LdkV] y0 t0 }kjk yk;h x;h FkhA*

*23. lh0 ih0 lh0 d vkn'k 7 dk fu;e 11 x.kkx.k ij bldk çfrokn dju d mld vfèkdkj dk è;ku e fy, fcuk Lo; okn dh ik"k.kh;rk dk pukrh nu d fy, çfroknh dk miyCèk djk;k x;k Lor= mipkj vfèkdfFkr djrk g fofèk Li"Vr% dkb pj.k vuè;kr ugh djrh g tc vkifÙk dh tk ldrh g vkj fyf[kr dFku nkf[ky dju d ckj e vfHk0;Dr 'kCnk e Hkh dN ugh dgrh gA bld ctk, Hkh 'kCn ^^xk** dk ç;kx fd;k x;k gA ft ldk fufgrkFk ;g g fd ;g U;k;ky; ij okn i= vLohdkj dju e viuh ckè;rkvk dk ikyu dju dk dr0; Mkyrk g tc ;g çfroknh d eè;{kk i d fcuk Hkh fu;e 11 d pkjk [kMk e çkoèkkfur ncyrkvk e l fdlh l ckfèkr gkrk gA fdlh Hkh fLFkfr e] fu;e 11 d vèkhu okn i= dk vLohdj.k okn dk fu;e 13 d fucèkukulkj u;k okn i= çLrr dju l vioftr ugh djrk gA***

(2008)12 SCC 661 में प्रकाशित उक्त मामले में प्रश्न इस आधार पर वाद पत्र के अस्वीकरण के साथ संबंधित था कि यह परिसीमा द्वारा वर्जित था और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि परिसीमा का प्रश्न विधि एवं तथ्य का मिश्रित प्रश्न है जिसे परिसीमा का विवाद्यक विरचित किए बिना और साक्ष्य दिए बिना सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 (d) के अधीन खारिज नहीं किया जा सकता था। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 की सीमित प्रयोज्यता है। इसकी प्रयोज्यता के लिए यह दर्शाना होगा कि वाद किसी विधि के अधीन वर्जित है। वाद पत्र में किए गए प्रकथनों से ऐसा निष्कर्ष निकालना होगा। सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 (d) का अवलंब लेने के लिए प्रासंगिक वाद पत्र में किया गया प्रकथन है। उस प्रयोजन से, कोई जोड़-घटाव नहीं हो सकता है। सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 (d) का अवलंब लेने के प्रयोजन से साक्ष्य की किसी मात्रा पर विचार नहीं किया जा सकता है। मामले के गुणागुण पर विवाद्यक उस चरण पर न्यायालय के क्षेत्र के अंतर्गत नहीं होंगे। उक्त प्रावधान के अधीन समस्त विवाद्यक आदेश के विषय वस्तु नहीं होंगे।

7. इस प्रकार, पूर्वोक्त निर्णय में की गयी विस्तृत चर्चा से यह पर्याप्त रूप से स्पष्ट है कि यह पता लगाने के लिए कि क्या वाद विधि द्वारा वर्जित है, वाद पत्र में किए गए प्रकथनों पर विचार करना होगा और न्यायालय को प्रतिवादी के अभिवचनों पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है। वस्तुत: यह निर्णय वादीगण की सहायता नहीं करता है। इसके विपरीत, यह याचीगण/प्रतिवादीगण के प्रतिवाद का समर्थन करता है।

8. (1994)1 BLJ 669 में प्रकाशित निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि प्रोबेट मामले में कार्यवाही, यदि इसका प्रतिवाद किया जाता है, नियमित वाद का दर्जा हासिल नहीं करता है। इस प्रतिपादना पर चर्चा की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह सुनिश्चित विधिक अवस्था है।

(2001)2 BBCJ 470 (Patna) में प्रकाशित निर्णय पर भी चर्चा की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह सुनिश्चित है कि कार्यवाही के प्रति वसीयतकर्ता के अभिधान से संबंधित विवाद्यक पर विचार करना प्रोबेट न्यायालय का कर्तव्य नहीं है। प्रोबेट अथवा प्रशासन पत्र का प्रदान किसी भावी वाद में अभिधान के प्रश्न पर न्यायनिर्णीत के रूप में प्रवर्तित नहीं होता है।

इस संबंध में यह कथन करना उपयुक्त है कि इस निष्कर्ष पर आना कि क्या आवेदन/मामला पोषणीय है या नहीं, प्रोबेट न्यायालय सहित प्रत्येक न्यायालय का कर्तव्य है। वर्तमान मामले के तथ्यों में वसीयतकर्ता के ओराँव आदिवासी अथवा इसाई होने का प्रश्न सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 की प्रयोज्यता और इस प्रकार पोषणीयता के विवाद्यक के प्रति गहराई तक गया। तथ्य का यह न्यायनिर्णयन उन्हीं पक्षों के बीच समस्त भावी कार्यवाही में न्यायनिर्णीत के रूप में निश्चयात्मक रूप से प्रवर्तित होता है और ऐसा न्यायनिर्णय अभिधान के प्रश्न पर भी न्यायनिर्णयन नहीं है।

9. वर्तमान मामले में, वादीगण के प्रकथन के मुताबिक यह पर्याप्त रूप से स्पष्ट है कि इस तथ्य कि पक्षगण ओराँव हैं और ओराँव रुढ़िजन्य विधि के अनुसार उन्होंने मृतक पॉलस ओराँव के निकटतम पुरुष गोत्रज होने के नाते उसकी संपत्ति को विरासत में पाया है, वाद भूमि पर अपने अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा के लिए वादी द्वारा वाद संस्थित किया गया है।

10. यह स्वीकार किया गया है कि पहले वादीगण ने आपत्तिकर्ताओं के रूप में पॉलस ओराँव द्वारा वसीयत के निष्पादन को इस आधार पर चुनौती दिया था कि सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम, 1908 की धारा 46 के अधीन वसीयत उपायुक्त से अनुमति प्राप्त करने के बाद निष्पादित किया जाना होगा। धारा 46 का पठन निम्नलिखित है:–

*"46. **j;r }kjk viu vfèkdkj d vrj.k ij ifrcèk-**&(1) j;r }kjk viuh èkfr ;k bld fdlh Hkkx e viu vfèkdkj dk vrj.k&*

(a) fdlh vfHk0;Dr ;k foof{kr vofèk d fy, cèkd vFkok iVV ij ugh fn;k tk;xk tk ikp o"kk l vfèkd gk ;k fdlh lHkkfor fLFkfr e bll vfèkd gk ldrk gk(;k

(b) foØ;] nku ;k fdlh vU; lfonk ;k djkj fd; tku ij fdlh Hkh lhek rd oèk ugh gkxk(

ijUr ;g fd

(a) ,d vfèkHkkxh j;r] tk vulfpr tutkfr dk lnL; g] mik;Dr dh iokuefr l ,d vU; 0;fDr] tk vulfpr tutkfr dk lnL; g ,o] tk mlh Fkku d {k=kfèkdkj dh LFkkuh; lhekvk d Hkhrj fuokl djrk g ftld vrxr èkfr vofLFkr g] dk foØ; vnyk&cnyh] nku ;k olh;r }kjk viuh èkfr ;k viuh èkfr d ,d Hkkx e viu vfèkdkj dk vrj.k dj ldxkA

(b) ....

(c) ....

(2) ....

(3) mi&èkkjk (1) d mYy?ku e fd;k x;k dkb Hkh vrj.k fucfèkr ugh fd;k tk;xk ;k fdlh Hkh U;k;ky; }kjk oèk d rkj ij ekU;rk ugh nh tk;xh] pkg ;g flfoy] nkf.Md ;k jktLo vfèkdkfjrk d i;kx e gh D;k u fd;k x;k gkA"

11. इस प्रकार, सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 और उसमें अंतर्विष्ट प्रावधानों के कोरे पठन पर यह स्पष्ट है कि अनुसूचित जनजाति रैयत उपायुक्त की अनुमति प्राप्त किए बिना वसीयत अथवा किसी अन्य ढंग द्वारा भूमि में अपना अधिकार, अभिधान एवं हित अंतरित नहीं कर सकता है।

इस संदर्भ में यह विवादित नहीं है कि वादीगण–विरोधी पक्षकारों ने सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 के प्रावधान के निबंधनानुसार आपत्ति दाखिल किया था और विचारण न्यायालय ने प्रोबेट अभिधान वाद खारिज कर दिया था। तत्पश्चात, याचियों ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील दाखिल किया और इस उच्च न्यायालय ने एफ॰ ए॰ सं॰ 2/2004 में स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया है कि वसीयतकर्ता इसाई था और पक्षगण आदिवासी रुढ़िजन्य विधि द्वारा शासित नहीं हैं और सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 की प्रयोज्यता नहीं है, तद्नुसार, प्रोबेट प्रदान किया गया था। विपक्षी पक्षकार/याचीगण ने उच्च न्यायालय के निष्कर्ष एवं निर्णय के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष एस॰ एल॰ पी॰ सं॰ 27123/2013 दाखिल किया था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विद्वान एकल न्यायाधीश के निष्कर्ष में हस्तक्षेप किए बिना एस॰ एल॰ पी॰ को वापस लिया गया के रूप में खारिज कर दिया।

वादीगण अर्थात् विरोधी पक्षकार/आपत्तिकर्ताओं ने प्रोबेट मामले में रुढ़िजन्य विधि के आधार पर कि उन्होंने स्वर्गीय पॉलस ओराँव के निकटतम पुरुष गोत्रज होने के नाते विरासत एवं उत्तराधिकार की रुढ़िजन्य विधि के मुताबिक संपत्ति विरासत में पाया है, अपने अधिकार का दावा करते हुए उसी वाद संपत्ति के बँटवारा के लिए वर्तमान वाद संस्थित किया है। यह दावा करते हुए कि वाद न्याय निर्णीत के सिद्धांत द्वारा वर्जित है, याचीगण द्वारा सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 के अधीन आवेदन दाखिल किया गया था जिसका प्रत्युत्तर वादीगण द्वारा यह कथन करते हुए दाखिल किया गया था कि प्रोबेट न्यायालय अभिधान का प्रश्न विनिश्चित करने के लिए सक्षम नहीं है। यह स्पष्ट होगा कि अवर अपीलीय न्यायालय ने कोई कारण दिए बिना एवं न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना केवल इस आधार पर कि कार्यालय रिपोर्ट के मुताबिक वाद पत्र व्यवस्थित है, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 के अधीन आवेदन खारिज कर दिया है।

12. इस मोड़ पर इस तथ्य को ध्यान में लेना आवश्यक है कि वसीयत के संबंध में प्रोबेट के प्रदान के लिए आवेदन पर न्यायालय पर इस प्रश्न का परीक्षण करने का कर्तव्य डाला गया है और इस पर बाध्यकारी है कि क्या आवेदन पोषणीय है या नहीं, विशेषत: आदिवासियों के मामले में क्योंकि यह उपर संगणित सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 एवं 46 (3) के अधीन न्यायनिर्णयन आवश्यक बनाता है। धारा 46 (3) किसी न्यायालय पर सिविल, दांडिक अथवा राजस्व अधिकारिता के प्रयोग में सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 के उल्लंघन में किए गए अंतरण के किसी विलेख का संज्ञान लेने से वर्जना सृजित करती है। धारा 46 के प्रावधान के मुताबिक विधि की आज्ञा की दृष्टि में यदि वसीयत सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 के प्रावधान द्वारा बाधित होता था, प्रोबेट के प्रदान के लिए आवेदन अस्वीकार किए जाने योग्य था, किंतु, जैसी चर्चा ऊपर की गयी है और ध्यान में लिया गया है, उच्च न्यायालय द्वारा आवेदन पोषणीय अभिनिर्धारित किया गया था और दिए गए दस्तावेजों एवं साक्ष्य के मूल्यांकन पर न्यायनिर्णयन किया गया था कि वसीयतकर्ता ईसाई था और न कि ओरावँ, तद्नुसार प्रोबेट के प्रदान के लिए आवेदन अनुज्ञात किया गया था। विनिश्चयकरण के लिए तात्विक तथ्य अथवा प्रश्न कि क्या वसीयतकर्ता इसाई था या ओराँव, न्यायनिर्णीत और विनिश्चित किया गया है और सर्वोच्च न्यायालय तक अभिपुष्ट किया गया है।

जैसा उपर ध्यान में लिया गया है, उसे दोहराते हुए, वादीगण ने इस आधार पर वाद दाखिल किया है कि वसीयत के वसीयतकर्ता सहित पक्षगण ओराँव अर्थात् अनुसूचित जनजाति हैं क्योंकि वे रुढ़िजन्य आदिवासी विधि द्वारा शासित होते हैं। इस प्रकार, जब वाद का पठन इसकी संपूर्णता में किया जाता है, यह प्रकट करता है कि वादीगण का आधार अथवा वाद हेतुक अथवा वाद हेतुक को उद्भूत करने वाला

केन्द्रीय विवाद्यक मुख्यत: ओराँव रुढ़िजन्य विधि के अनुसार उत्तराधिकार का तथ्य है और यह विवाद्यक अथवा आनुषंगिक नहीं है बल्कि वह आधार है जिसने अंतिमता प्राप्त कर लिया है और इसी प्रश्न अथवा तथ्य को उन्हीं पक्षों के बीच पुन: खोला नहीं जा सकता है। सामने आने वाले तथ्यों में, **(2001)2 BBCJ 470 (Patna)** में प्रकाशित निर्णय में अधिकथित निर्णयाधार वर्तमान मामले के तथ्यों पर प्रयोज्य नहीं है।

अलग होने के पहले, **(1977)4 SCC 467,** में प्रकाशित निर्णय को निर्दिष्ट करना प्रासंगिक होगा जिस पर याचीगण द्वारा विश्वास किया गया है जिसमें पैरा 5 में निम्नलिखित सारगर्भित रूप से संप्रेक्षित एवं अभिनिर्धारित किया गया है:–

> *^^5. ge ;kph dh ckj&ckj vkj i'pkrki d fcuk U;k;ky; dh çfØ;k dk ?kkj n#i;kx dju dh funk dju e rfud Hkh ldkp ugh gA mPp U;k;ky; d fu.k; e ik, x, rF;k d fooj.k l ;g fcYdy Li"V g fd çFke efIQ U;k;ky;] cxykj d le{k vc yfcr okn okn i= çkIr dju e fofèk dh n;k'khyrk dk ?kkj n#i;kx gA* **fo}ku efIQ dk Lej.k j[kuk gkxk fd ;fn okn i= d vFki.k vkj vukipkfjd iBu ij ;g Li"Vr% rx dju okyk g vkj x.kkx.k jfgr g] bl vFk e fd ;g okn dju dk Li"V vfèkdkj çdV ugh djrk g] mUg lhO ihO lhO d vkn'k vII fu;e 11 d vèkhu viu 'kfDr dk ç;kx ;g n[ku d fy, djuk pkfg, fd mle mfYyf[kr vkèkkj ifji.k fd, x, gA vkj ;fn prj Mkf¶Vx u okn grd dk Hke lftr fd;k g] lhO ihO lhO d vkn'k x d vèkhu i{kk dk l{erkiod ijh{k.k d igyh luokb e gh bl [kkfjt dj nuk gkxkA ,d fØ;k'khy U;k;kèkh'k xj ftEenkj oknk dk mÙkj gA** *fopkj.k U;k;ky; igyh luokb e i{k dk ijh{k.k dju ij vfuok;r% tkj nx rkfd ckxl ednek dk vkjHkre pj.k ij gh [kkfjt fd;k tk ldA nM lfgrk Hkh , lh fLFkfr dk lkeuk dju d fy, i;kIr :i l lkèku liUu gA (vè;k; XI) vkj mud fo#) bldk bLreky djuk gkxkA bl ekey e fo}ku U;k;kèkh'k u viuh dher ij ml fVli.kh dk egl l fd;k tk tkt cukM 'kk u egkRek xkèkh dh gR;k ij fd;k Fkk% vfèkd vPNk gkuk [krjukd gA***

13. इस प्रकार, वर्तमान मामले में यद्यपि कब्जा की संपुष्टि अथवा कब्जा की वापसी के लिए और प्रतिवादियों को कब्जा में हस्तक्षेप करने से अवरुद्ध करने के लिए अनुतोषों का दावा किया गया है किंतु वादीगण के मामले का आधारभूत तथ्य यह है कि पक्षगण उत्तराधिकार की रुढ़िजन्य विधि द्वारा शासित ओराँव है किंतु वाद पत्र से यह स्पष्ट है कि वाद हेतुक मुख्य विवाद्यक अथवा तथ्य, जिसे विचारण न्यायालय द्वारा पक्ष का अधिकार, अभिधान एवं हित घोषित करने के पहले विनिश्चित एवं न्यायनिर्णीत किए जाने की आवश्यकता है, पर परदा डालने के लिए चतुर ड्राफ्टिंग द्वारा किया गया छद्मावरण है। तथ्य का नकारात्मक निष्कर्ष कि प्रतिवादीगण ओराँव नहीं है स्पष्टत: वाद की खारिजी में परिणत होगा और इस विवाद्यक पर उलटा निष्कर्ष माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट एफ॰ ए॰ सं॰ 2/2004 में इस न्यायालय के निर्णय के विरोध में होगा। यह तथ्य एवं विवाद्यक कि वसीयतकर्ता ईसाई है और विरोधी पक्षकार आदिवासी नहीं हैं, ने अंतिमता प्राप्त कर लिया है और वाद हेतुक के बारे में भ्रम सृजित करने वाले ऐसे चतुर ड्राफ्टिंग की अनुमति विधि में नहीं दी जानी चाहिए।

14. इस प्रकार, उपर की गयी चर्चा एवं न्यायिक उद्घोषणाओं की दृष्टि में यह सुनिश्चित है कि विचारण न्यायालय को दस्तावेजों का परिशीलन करना होगा और आवश्यक आदेश पारित करने के पहले वाद पत्र का इसकी संपूर्णता में पठन करना होगा। दोहराने की कीमत पर, जैसा यहाँ ऊपर चर्चा की गयी है और ध्यान में लिया गया है, यह स्पष्ट है कि वाद पत्र सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 (d) के निबंधनानुसार विधि के अधीन वर्जित है क्योंकि यह न्यायनिर्णीत के सिद्धांत द्वारा बाधित होता है जैसा सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 11 के स्पष्टीकरण VIII में प्रतिष्ठापित किया गया है। इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित

करने में संकोच नहीं है कि विचारण न्यायालय ने न्यायिक विवेक का प्रयोग किए बिना यंत्रवत रहस्यमय कारण रहित आदेश पारित किया है। तद्नुसार, आक्षेपित आदेश एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है।

15. उपर की गयी चर्चा एवं सुनिश्चित विधिक अवस्था की दृष्टि में आवेदन अनुज्ञात किया जाता है और आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है और टी॰ एस॰ सं॰ 156/2014 में दाखिल वाद पत्र सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 7 नियम 11 (d) द्वारा वर्जित के रूप में अस्वीकार किया जाता है। वादीगण-विरोधी पक्षकार ऐसे तुच्छ एवं तंग करने वाले वाद द्वारा याचीगण/प्रतिवादीगण को कारित मानसिक वेदना एवं पीड़ा के लिए भुगतान किए जाने के लिए 10,000/- रुपयों का व्यय जमा करेंगे।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

भारत कैवर्त उर्फ भरत चंद्र कैवर्त (केवट) एवं एक अन्य

cuke

श्रीमती कमला उर्फ बिमला कैवर्त (केवट) एवं अन्य

W.P.(C) 7900 of 2013. Decided on 30th September, 2015.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 8 नियम 1—लिखित कथन–अस्वीकरण–सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 8 नियम 1 के अधीन प्रावधान केवल निर्देशात्मक है और न कि आज्ञापक–विलंब की माफी इप्सित करने वाले आवेदनों पर उदारतापूर्वक विचार किया जाता है–न्यायालय को पक्षों के जोखिम एवं अधिसंभाव्य हानि जो किसी पक्ष को कारित हो सकती है को अभिनिश्चित करने की आवश्यकता है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया–लिखित कथन अभिलेख पर लिया जाए। (पैराएँ 5 एवं 6)

निर्णयज विधि.–(2005) 4 SCC 480—Relied.

अधिवक्तागण.–Ms. Shruti Shreshtha, For the Petitioners.

श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति.–अभिधान (पी॰) वाद सं॰ 101 वर्ष 2011 में दिनांक 17.8.2013 के आदेश से व्यथित होकर वर्तमान रिट याचिका दाखिल की गयी है।

2. याचीगण अभिधान (पी॰) वाद सं॰ 101 वर्ष 2011 में प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 है। याचियों पर दिनांक 18.1.2012 को समन तामील किया गया था और वे दिनांक 2.8.2012 को वाद में उपस्थित हुए। दिनांक 7.2.2013 के आदेश के तहत विचारण न्यायालय ने प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 को लिखित कथन दाखिल करने से वर्जित कर दिया। याचियों ने अभिलेख पर लिखित बयान लेने के लिए सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VIII नियम 1 के अधीन दिनांक 2.5.2013 को आवेदन दाखिल किया किंतु, उक्त आवेदन दिनांक 17.8.2013 के आदेश के तहत अस्वीकार कर दिया गया है। व्यथित होकर, याचियों ने वर्तमान रिट याचिका दाखिल किया है।

3. दिनांक 5.8.2015 के आदेश के तहत प्रत्यर्थियों को नोटिस जारी किए गए थे। याचियों को भी प्रत्यर्थियों पर दस्ती नोटिस तामील करने का निर्देश दिया गया था। दिनांक 26.8.2015 का आदेश अभिलिखित करता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 5 पर वैध रूप से नोटिस तामील किया गया था किंतु, प्रत्यर्थीगण वर्तमान कार्यवाही में उपस्थित नहीं हुए हैं। तत्पश्चात, दो अवसरों पर मामला स्थगित किया गया था। आज भी प्रत्यर्थीगण की ओर से कोई प्रतिनिधित्व नहीं है।

4. याचियों के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याचियों को उनके नियंत्रण के परे कारणों से अभिधान वाद में उपस्थित होने से रोका गया था। याचियों की उपस्थिति के बाद, विचारण न्यायालय ने लिखित कथन दाखिल करने के लिए समय प्रदान किए बिना उन्हें लिखित कथन दाखिल करने से

वर्जित किया गया था। यह प्रतिवाद किया गया है कि सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VIII नियम 1 के अधीन प्रावधान निर्देशात्मक हैं और न कि आज्ञापक। याचियों ने मेडिकल रिपोर्ट प्रस्तुत किया जो प्रतिवादी सं॰ 1 की बीमारी प्रकट करता है जो लिखित कथन दाखिल करने में विलंब माफ करने के लिए पर्याप्त आधार था किंतु, विचारण न्यायालय ने याचियों द्वारा प्रस्तुत मेडिकल रिपोर्ट पर गलत रूप से अविश्वास किया।

5. मैं पाता हूँ कि अभिधान (पी॰) वाद सं॰ 101 वर्ष 2011 वाद अनुसूची संपत्ति में वादी और प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 के 1/3 हिस्सा के लिए आरंभिक डिक्री के लिए संस्थित किया गया था। वादी द्वारा दिनांक 18.5.2009 को प्रतिवादी सं॰ 1 एवं प्रतिवादी सं॰ 2 के पति द्वारा निष्पादित रजिस्टर्ड विक्रय विलेख 3539/3006 और दिनांक 17.6.2011 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख का अवैध, आरंभ से शून्य एवं अप्रवर्तित के रूप में रद्दकरण इप्सित करने की प्रार्थना भी की गयी है। यह प्रतीत होता है कि प्रतिवादियों पर दिनांक 18.1.2012 को समन तामील किया गया था और प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 दिनांक 2.8.2012 को उपस्थित हुए जब विचारण न्यायालय ने लिखित कथन दाखिल करने के लिए समय प्रदान किया। अगली तिथि पर, अर्थात् दिनांक 23.8.2012 को प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 को लिखित कथन दाखिल करने के लिए पुनः अवसर प्रदान किया गया था। अगली दो तिथियों पर पीठासीन अधिकारी अवकाश पर थे और दिनांक 3.1.2013/.4.1.2013 को दोनों पक्षों ने अधिवक्ता के माध्यम से हाजिरी दाखिल किया। यह प्रतीत होता है कि दिनांक 24.1.2013 को वादी ने मामले में कदम नहीं उठाया था और मामला दिनांक 7.2.2013 के लिए रखा गया था। दिनांक 24.1.2013 का आदेश प्रकट करता है कि प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 के लिखित कथन के लिए मामला रखा गया था किंतु दिनांक 7.2.2013 को विचारण न्यायालय ने प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 को लिखित कथन दाखिल करने से वर्जित किया। दिनांक 17.8.2013 का आक्षेपित आदेश आगे प्रकट करता है कि विचारण न्यायालय ने ध्यान में लिया कि प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 को अवसर प्रदान किया गया था और उन्होंने अभिवचन किया कि दिनांक 23.1.2012 से दिनांक 22.11.2012 की अवधि के बीच प्रतिवादी सं॰ 1 बीमार था। दिनांक 1.1.2013 से दिनांक 28.4.2013 तक का प्रतिवादी सं॰ 1 का चिकित्सीय इलाज रिपोर्ट विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया था किंतु विचारण न्यायालय ने मात्र यह संप्रेक्षित करके कि यह प्रतिवादी सं॰ 1 के स्वास्थ्य के बारे में संदेह सृजित करता है, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VIII नियम 1 के अधीन दिनांक 2.5.2013 का आवेदन खारिज कर दिया। यह विवाद में नहीं है कि सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VIII नियम 1 के अधीन आवेदन के साथ याचियों ने विलंब की माफी इप्सित करते हुए आवेदन दाखिल किया। यह सुनिश्चित है कि विलंब की माफी इप्सित करने वाले आवेदनों पर उदारतापूर्वक विचार किया जाता है और आवेदन विनिश्चित करते हुए न्यायालय को पक्षों के जोखिम एवं अधिसंभाव्य हानि जो किसी पक्ष को कारित हो सकती है को अभिनिश्चित करने की आवश्यकता है। जैसा ऊपर गौर किया गया है। अभिधान (पी॰) वाद सं॰ 101 वर्ष 2011 में प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 का बहुमूल्य हित अंतर्ग्रस्त है, प्रतिवादी सं॰ 1 एवं प्रतिवादी सं॰ 2 के पति द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख अभिधान वाद में चुनौती के अधीन है। वादी ने स्वयं और प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 के लिए वाद अनुसूची संपत्ति में 1/3 हिस्सा के लिए आरंभिक डिक्री के लिए प्रार्थना किया है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है कि सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश VIII नियम 1 के अधीन प्रावधान केवल निर्देशात्मक है और न कि आज्ञापक और समुचित मामलों में विचारण न्यायालय लिखित कथन दाखिल करने का समय बढ़ा सकता है। **कैलाश बनाम नन्हकू, (2005)4 SCC 480,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

> *"46. (iv) lh0 ih0 lh0 d vkn'k 8 fu;e 1 d vèkhu fyf[kr dFku nkf[ky dju d fy, le; lhek çkoèkkfur dju dk ç;ktu ekey e rth ykuk g vkj u fd luokb foQy djukA çkoèkku çfroknh ij fu'kDrrk of.kr djrh gA ;g le; c<ku d fy, U;k;ky; dh 'kfDr ij otuk vfèkjkfir ugh djrh gA ;fi lh0 ih0 lh0 d vkn'k 8 fu;e 1 ijUrd dh Hkk"kk udkjkRed g] ;g vuuikyu l çokfgr fdlh nkfMd ifj.kke dk fofufn"V ugh djrh gA çkoèkku d çfØ;kRed*

*fofèk d {k= e gku d ukr bl fun'kkZed vkj u fd vkKkid vfHkfuèkkfjr djuk gkxkA lh0 ih0 lh0 d vkn'k 8 fu;e 1 d vèkhu çkoèkkfur le; lhek d ij fyf[kr dFku nkf[ky dju d fy, le; c<ku dh U;k;ky; dh 'kfDr ijh rjg okil ugh yh x;h gA***

6. उक्त तथ्यों पर विचार करते हुए, मेरा मत है कि प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 को लिखित कथन दाखिल करके गुणागुण पर वाद का प्रतिवाद करने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। तद्नुसार, दिनांक 17.8.2013 का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है। यह प्रतीत होता है कि प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 ने दिनांक 2.5.2013 के आवेदन के साथ लिखित कथन दाखिल किया है। प्रतिवादी सं॰ 1 एवं 2 की ओर से दाखिल लिखित कथन अभिलेख पर लिया जाएगा और विचारण न्यायालय विधि के अनुरुप मामले में अग्रसर होगा।

7. रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; fojUnj flg] e[; U;k;kèkh'k ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

मुकुन्द महतो

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (D.B.) No. 249 of 2014. Decided on 17th September, 2015.

सत्र विचारण सं॰ 136/2000 में पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, बेरमो, तेनूघाट द्वारा पारित दिनांक 11.2.2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या–दोषसिद्धि–प्राथमिकी दर्ज करने में विलंब नहीं हुआ है–चश्मदीद गवाह के साक्ष्य में अंतर्निहित कमजोरी नहीं पायी गयी–एक चश्मदीद गवाह किसी संदेह के परे अभियुक्त के विरुद्ध आरोप सिद्ध करने में सक्षम हुआ है–भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अभियुक्त की दोषसिद्धि मान्य ठहरायी गयी। (पैराएँ 12 से 16)

अधिवक्तागण.–Mr. Amresh Kumar, For the Appellant; Mr. Shekhar Sinha, For the Resp.-State.

विरेन्दर सिंह, मुख्य न्यायाधीश.–अपीलार्थी मुकुन्द महतो (इसमें इसके बाद 'अभियुक्त' के रूप में निर्दिष्ट) ने झारखंड राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण के माध्यम से वर्तमान अपील दाखिल किया है। उसे विगत 15 वर्ष 7 माह और कुछ दिनों से अभिरक्षा में रहता बताया गया है, अतः, अन्य अपीलों पर इसे प्राथमिकता इस तथ्य के बावजूद दिया गया है कि इसे केवल वर्ष 2014 में दाखिल किया गया था, वह भी 3629 दिनों के अत्यधिक विलंब के बाद जिसे न्यायालय द्वारा दिनांक 9 मार्च, 2015 के आदेश के तहत माफ किया गया था।

2. कोई गुहीराम महतो, जवाहर लाल महतो (प्रथम सूचक) का पुत्र इस मामले में मृतक है। घटना पी॰ एस॰ कशमर (जिला बोकारो) की अधिकारिता के अंतर्गत आने वाले ग्राम सिंहपुर, टोला गोरेया कुदार में 12 बजे दोपहर को दिनांक 24 जनवरी, 2000 की है। वर्तमान घटना के संबंध में सूचना रिपोर्ट (फर्दबयान) उसी दिन घटना के दो घंटे के भीतर दोपहर लगभग 2 बजे दिनांक 24.1.2000 को दर्ज की गयी थी। घटना स्थल एवं पुलिस थाना (पी॰ एस॰ कशमर) के बीच की दूरी 14 कि॰ मी॰ है। उक्त रिपोर्ट के आधार पर, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन कशमर पी॰ एस॰ केस सं॰ 3/2000 दर्ज किया गया

था। अ॰ सा॰ जवाहर लाल महतो अभिकथित करता है कि दिनांक 24.1.2000 को उसका पुत्र गुहीराम महतो (मृतक) अ॰ सा॰ महेन्द्र प्रसाद सिंह जिसे गाँव में ड्रेसर के रूप में भी जाना जाता है की प्रेरणा पर दीवार लेखन तथा पल्स पोलियो अभियान के चौथे चरण के लिए पल्स पोलियो ड्रॉप्स पिलाने का काम कर रहा था। लगभग 12 बजे दोपहर में जब मृतक जोगी डोम एवं भगतू डोम की दीवार पर दीवार लेखन कर रहा था, अभियुक्त जो फरसा (तेज धार वाला हथियार) और गाँव में आमतौर पर 'तबला' के रूप में ज्ञात, से लैस होकर मृतक के गर्दन, पीठ एवं कमर पर प्रहार किया जिसके परिणामस्वरुप घटना स्थल पर ही उसकी मृत्यु हो गयी। उसने आगे कथन किया कि किशुन राम महतो, संतोष कालिन्दी, लाल मोहन महतो, बेनी महतो ने घटना देखा था और गाँव वालों जो घटना के तुरन्त बाद वहाँ जमा हुए थे की सहायता से अभियुक्त को पकड़ने का प्रयास किया, किंतु अभियुक्त रक्त रंजित फरसा फेंकने के बाद भागने में सफल रहा। उसने अभियुक्त को भागते देखा था। प्राथमिकी में अभिकथित हेतु अभियुक्त के साथ पुरानी दुश्मनी है, जबकि मृतक की माता अ॰ सा॰ पूरनी देवी कटघरे में आयी, उसने कथन किया कि अभियुक्त की धारणा थी कि मृतक उसकी पत्नी के साथ प्रेम करता था।

3. अ॰ सा॰ डॉक्टर रत्नेश्वर प्रसाद वर्मा जिन्होंने मृतक के मृत शरीर का शव परीक्षण किया ने प्रदर्श 4/1 के रूप में शव परीक्षण रिपोर्ट सिद्ध किया है और मृतक की मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट प्रदर्श 5 के रूप में अ॰ सा॰ जगदीश चंद्र महतो द्वारा सिद्ध की गयी थी, किंतु, अन्वेषण अधिकारी ने कठघरे में कदम नहीं रखा है।

4. शव परीक्षण रिपोर्ट के मुताबिक मृतक को निम्नलिखित उपहतियाँ आयी थी:–

"(i) ÝVy vfLFk d Hkkx ,o eLVk;M rFkk ck,; duiVVh d ikl dVu] vfLFk Hkx d lkFk 5½" x 1" Øfo;y dfoVh rd xgjk dVk gvk@ckgjh dku (fiUuk) Hkh vkfMVjh ehVl d mij fr;d :i l foHkkftr FkkA

(ii) ofVdy 5" x 1½" x Fkkjkfld dfoVh rd xgjk t[eA ikpo] NB] lkro ,o vkBo ilfy;k d vfLFk Hkx d lkFk feMykbu l yxHkx ,d bp nj ihB dk nk;k HkkxA

*(iii) dej d ck,; fgLl ij 5"x1/4" dk [kjkpA***

वस्तुत: उपहति सं॰ 1 घातक सिद्ध हुई जैसा चिकित्सीय साक्ष्य से पाया जाता है। डॉक्टर ने अन्यथा मत दिया कि उपहति सं॰ (i) एवं (ii) फरसा द्वारा कारित की जा सकती थी।

5. आरोप सिद्ध करने के लिए अभियोजन ने कुल 10 गवाहों का परीक्षण किया है, किंतु अभियोजन का मामला मुख्यत: अ॰ सा॰ बेनी महतो के बयानों पर आधारित है जिसका नाम प्राथमिकी में भी आता है। अन्य गवाह वस्तुत: घटना के चश्मदीद गवाह नहीं हैं यद्यपि जब वे कटघरे में आए, उन्होंने छवि प्रस्तुत की मानों उन्होंने स्वयं घटना देखा हो किंतु उनके प्रति परीक्षण से यह आसानी से पाया जा सकता है कि वे घटना समाप्त होने के बाद और अभियुक्त के घटनास्थल से भाग जाने के बाद घटनास्थल पर आए थे।

6. अ॰ सा॰ बेनी महतो ने पूर्णत: अभियोजन साक्ष्य सामने लाया था। जब वह कटघरा में आया, उसने स्पष्टत: कथन किया कि दोपहर लगभग 12 बजे वह डोम टोली में था और उस समय, मृतक दीवार पर लेखन कर रहा था। वह दीवार पर कुछ लिखकर पल्स पोलियो ड्रॉप्स का प्रचार कर रहा था। उस समय, अभियुक्त जो फरसा से लैस था वहाँ आया और मृतक की गर्दन पर वार किया और तत्पश्चात

दो बार मृतक की छाती पर प्रहार किया, जिसके परिणामस्वरुप वह गिर गया और घटना स्थल पर उसकी मृत्यु हो गयी। उसने आगे कथन किया कि अभियुक्त मृतक पर प्रहार करने के बाद घटनास्थल से भाग गया और उस प्रक्रिया में उसने एवं 4-5 लोगों ने उसको पकड़ने का प्रयास किया किंतु उसे पकड़ नहीं पाए। उसने न्यायालय में अभियुक्त को पहचाना। हमने यह अधिमूल्यन करने के लिए कि क्या उसने वस्तुत: घटना देखा था अथवा बाद में उसे घटना के चश्मदीद गवाह के रूप में स्थापित किया गया था, हमने अपनी संतुष्टि के लिए इस गवाह के प्रति परीक्षण का सूक्ष्म संवीक्षण किया है।

7. अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता ने अ॰ सा॰ बेनी महतो का साक्ष्य खारिज करने के अपने प्रयास में कथन किया कि उसने अपने साक्ष्य में कथन किया था कि प्रहार के कारण मृतक की गर्दन कट गयी थी जबकि चिकित्सीय साक्ष्य अन्यथा है। तब उन्होंने निवेदन किया कि यदि कोई प्रति परीक्षण के पैरा 11 का परिशीलन करता है, यह प्रतीत होता है कि वह वहाँ 4-5 लोगों के जमा होने के बाद घटनास्थल पर आया था। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि दो अन्य गवाहों जिनका नाम प्राथमिकी में उल्लिखित किया गया था अर्थात् महेन्द्र प्रसाद सिंह एवं किशुन महतो ने कठघरे में आने के बाद स्वयं को चश्मदीद गवाह के रूप में प्रक्षेपित नहीं किया था जबकि अ॰ सा॰ बेनी महतो पूरे समय तक अ॰ सा॰ महेन्द्र प्रसाद सिंह (ड्रेसर) के साथ बना रहा जैसा मृतक की माता अ॰ सा॰ पूरनी देवी के बयानों से स्पष्ट है और यह तथ्य कि जब अ॰ सा॰ महेन्द्र प्रसाद सिंह अनुश्रुत गवाह साबित हुआ, अ॰ सा॰ बेनी महतो जो महेन्द्र प्रसाद सिंह के साथ था घटना नहीं देख सकता था, अत: यह प्रतीत होता है कि किसी ने घटना नहीं देखा था और इस समस्त गवाहों के नाम बाद में अ॰ सा॰ जवाहर लाल महतो द्वारा अपने फर्दबयान में बाद में अंत:स्थापित किए गए थे। विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, इस प्रकार अभियोजन मामला संदेहपूर्ण बन जाता है जहाँ तक चश्मदीद विवरण का संबंध है।

8. अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि अपराध का हथियार रक्त रंजित फरसा जिसे अभियुक्त द्वारा घटनास्थल पर छोड़ा गया था विचारण के दौरान प्रस्तुत नहीं किया गया है। यह भी अभियोजन मामले को नुकसान पहुँचाता है। इस प्रकार, वह भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के आरोप से अभियुक्त की दोषमुक्ति की प्रार्थना करते हैं।

9. समानांतर स्तंभ में, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि यद्यपि अ॰ सा॰ बेनी महतो के सिवाए समस्त गवाहों को घटना का चश्मदीद गवाह नहीं कहा जा सकता है किंतु अ॰ सा॰ बेनी महतो का साक्ष्य इसके अस्वीकरण की अपेक्षा नहीं करता है। उन्होंने निवेदन किया कि नि:संदेह उसके बयानों में कतिपय अंतर आ गए थे किंतु यह अनदेखा किए जाने योग्य है जब एक बार घटना स्थल पर उसकी उपस्थिति नियत की गयी है। उन्होंने निवेदन किया कि यद्यपि अपराध का हथियार विचारण के दौरान प्रस्तुत नहीं किया गया था, यह संपूर्णता में अभियोजन मामला भंजित करने का आधार नहीं होगा क्योंकि मृतक के शरीर पर पायी गयी उपहतियाँ चिकित्सीय साक्ष्य से संपुष्टि पाती हैं और वे समस्त उपहतियाँ तेज धार वाले हथियार से संभव हैं और वर्तमान मामले में अपराध का हथियार फरसा (तेज धार वाला हथियार) है। इस प्रकार, वह अभियुक्त की दोषसिद्धि/दंडादेश मान्य ठहराने की प्रार्थना करते हैं जैसे पहले ही दर्ज किया गया है।

10. अभियोजन साक्ष्य के संवीक्षण के बाद हमारा सुविचारित दृष्टिकोण है कि अभियोजन युक्तियुक्त संदेह के परे अभियुक्त के विरुद्ध आरोप सिद्ध करने में सक्षम हुआ है। उक्त निष्कर्ष पर आने के कारण निम्नलिखित हैं।

11. मृतक के पिता अ॰ सा॰ जवाहर लाल महतो ने घटना के दो घंटे के भीतर पुलिस के पास रिपोर्ट दर्ज कराया, जैसा प्राथमिकी से पाया जाता है, और घटना तथा पुलिस थाना जहाँ प्राथमिकी दर्ज

की गयी थी के बीच की दूरी 14 कि॰ मी॰ है, इस प्रकार, पुलिस के पास रिपोर्ट दर्ज करने में शायद ही कोई विलंब हुआ है। यदि कोई विलंब होता, यह माना जा सकता था कि परिवादी ने अतिशयोक्तिपूर्ण विवरण देने में कुछ समय लगाया था।

12. इस मामले में जो हमें आश्वस्त करता है यह है कि अ॰ सा॰ जवाहर लाल महतो, मृतक का पिता, प्राथमिकी में भी स्वयं को घटना के चश्मदीद गवाह के रूप में प्रक्षेपित नहीं करता है। वह अपनी पत्नी अ॰ सा॰ पूरनी देवी को भी घटना के चश्मदीद गवाह के रूप में नामित नहीं करता है, शायद अ॰ सा॰ पूरनी देवी जब वह कटघरे में आयी ने यह छवि प्रस्तुत किया मानों उसने घटना देखा था जिस तथ्य को हमने उसके प्रति परीक्षण के कारण त्यक्त कर दिया है। हम इस तथ्य के प्रति जागरुक हैं कि बेनी महतो के सिवाए किसी अन्य ने स्वयं को घटना के चश्मदीद गवाह के रूप में प्रक्षेपित नहीं किया है क्योंकि अन्य समस्त गवाहों जिन्हें अभियोजन द्वारा प्रस्तुत किया गया है, अ॰ सा॰ महेन्द्र प्रसाद सिंह (ड्रेसर) जिसके साथ मृतक दोपहर तक था जैसा मृतक की माता पूरनी देवी द्वारा कथन किया गया है सहित अनुश्रुत साक्ष्य के गवाह हैं किंतु हम उसके साक्ष्य में कोई अंतर्निहित कमजोरी नहीं पाते हैं। हम इस तथ्य के प्रति जागरुक हैं कि अ॰ सा॰ किशुन महतो प्राथमिकी में परिलक्षित है किंतु जब वह कटघरे में आया, उसने स्वयं को अनुश्रुत साक्ष्य के गवाह के रूप में प्रक्षेपित किया, फिर भी वह तथ्य अ॰ सा॰ बेनी महतो के साक्ष्य को कोई नुकसान कारित नहीं कर सकता है। हमने सुनिश्चित सिद्धांत पर उसके साक्ष्य का परीक्षा किया है कि दोषसिद्धि एकमात्र चश्मदीद गवाह के बयान पर आधारित की जा सकती है यदि यह विश्वसनीय है। हमने यह सुनिश्चित करने के लिए कि इस गवाह का साक्ष्य आरोप को पूरी तरह सिद्ध करने के प्रयोजन से अधिमूल्यन की परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद किसी भी संदेह से मुक्त है, इस संबंध में अत्यन्त सतर्क दृष्टिकोण अपनाया है अन्यथा इसे पूर्णत: खारिज कर देना पड़ता। अधिमूल्यन का मापदंड लागू करने के बाद हमारा सुविचारित दृष्टिकोण है कि वह घटना का सच्चा गवाह है।

13. यह कथन करते हुए कि उसका बयान चिकित्सीय साक्ष्य से संपुष्टि नहीं पाता है, उसके साक्ष्य में सूराख करने के लिए अभियुक्त के विद्वान अधिवक्ता का प्रयास हमें स्वीकार्य नहीं है। यदि शव परीक्षण रिपोर्ट देखा जाता है, उपहति सं॰ (i) जो असल में घातक सिद्ध हुई, टेम्पोरल हड्डी एवं मस्ट्वायड हड्डी पर है। यह 5 इंच से अधिक लंबा क्षेत्र आच्छादित करते हुए गर्दन के निकट है। अ॰ सा॰ बेनी महतो ने, जब वह कठघरे में आया, कथन किया कि गर्दन पर हुई उपहति ने गर्दन काट दिया था। यह देहाती व्यक्ति के मुँह से निकलने वाला बिल्कुल स्वाभाविक साक्ष्य है। जैसा इस गवाह द्वारा कथन किया गया है, डॉक्टर द्वारा ध्यान में ली गयी अन्य दो उपहतियों का परिणाम पसलियों के अस्थि भंग में हुआ।

14. अभियुक्त के विद्वान द्वारा इंगित अन्य दुर्बलता यह है कि उसने अपने प्रतिपरीक्षण में कथन किया है कि जब वह घटना स्थल पर आया, वहाँ पहले से 4-5 लोग जमा थे। अत:, वह संभवत: घटना नहीं देख सकता था, हमें अस्वीकार्य है। अभियोजन का मामला यह है कि जब अभियुक्त ने मृतक पर प्रहार किया, उसके तुरंत बाद कतिपय लोग घटनास्थल पर जमा हो गये थे। अ॰ सा॰ बेनी महतो उनमें से एक था। इस पृष्ठभूमि में, घटना के असत्य गवाह के रूप में उसपर संदेह करने के लिए उसका साक्ष्य अविश्वसनीय नहीं होगा।

15. समस्त कोणों से अभियोजन मामले पर विचार करते हुए हमारा दृढ़ दृष्टिकोण है कि अ॰ सा॰ बेनी महतो, घटना का एकमात्र चश्मदीद गवाह, स्वाभाविक एवं विश्वसनीय होने के नाते किसी संदेह के

परे अभियुक्त के विरुद्ध आरोप सिद्ध करने में सक्षम हुआ है। इस प्रकार, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन आरोप के लिए विचारण न्यायालय द्वारा पहले ही दर्ज की गयी दोषसिद्धि मान्य ठहराने योग्य है। तद्नुसार आदेश दिया जाता है।

16. परिणामस्वरुप, वर्तमान अपील खारिज की जाती है।

17. रजिस्ट्री को वर्तमान अपील का परिणाम उच्च न्यायालय विधिक सेवा कमिटी के सचिव को सूचित करने का निर्देश दिया जाता है ताकि कारा में रह रहे अभियुक्त को इस निर्णय के परिणाम से अवगत कराया जा सके।

---

ekuuh; jfo ukFk oek] U;k;efr

अर्जुन मोदी

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 27 of 2015. Decided on 2nd September, 2015.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125—भरण-पोषण—याची का पहला विवाह अभी भी अस्तित्वयुक्त है—इस दशा में, याची की दूसरी पत्नी दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के अधीन किसी भरण-पोषण की हकदार नहीं है—दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के विस्तार को अभिव्यक्ति ''पत्नी'' में विधितः अविवाहित दूसरी स्त्री को सम्मिलित करने के लिए किसी कृत्रिम परिभाषा को पुरः स्थापित करके बढ़ाया नहीं जा सकता है—आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया।

(पैराएँ 12 एवं 13)

निर्णयज विधि.—(2005) 3 SCC 636; (2011) 12 SCC 189—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Brij Bihari Sinha, For the Petitioners; Addl. P.P., For the Resp.-State; Mr. Sanjay Kumar, For the Resp. No. 2.

आदेश

याची ने इस पुनरीक्षण आवेदन में एम॰ पी॰ केस सं॰ 91 वर्ष 2011 में प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 5.12.2014 के आदेश की वैधता को चुनौती दिया है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में ''संहिता'') की धारा 125 के अधीन भरण-पोषण के प्रदान के लिए वर्तमान विरोधी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा दाखिल याचिका अनुज्ञात किया है और याची को आक्षेपित आदेश की तिथि से 3000/- रुपया प्रतिमाह के भरण-पोषण का भुगतान करने का निर्देश दिया गया है।

2. वर्तमान विरोधी पक्षकार सं॰ 2 अवर न्यायालय में याची थी और उस हैसियत से उसने संहिता की धारा 125 के अधीन याचिका उसमें यह अभिकथन करते हुए दाखिल किया कि उसका विवाह लगभग 25-26 वर्ष पहले हिंदू रीति-रिवाजों के मुताबिक वर्तमान याची के साथ संपन्न हुआ था और विवाहोपरांत वह अपने दांपत्य गृह गयी और याची के साथ पति-पत्नी के रूप में रहने लगी। उनको लगभग 23 वर्षीया पुत्री बासमती देवी और दो पुत्रों अर्थात् लगभग 20 वर्षीय धीरज कुमार एवं लगभग 17 वर्षीय दीपक कुमार का जन्म हुआ था। वह 8-10 वर्षों तक शांतिपूर्वक अपने दांपत्य गृह में रही और साहचर्य का आनन्द लिया, किंतु तत्पश्चात् याची दहेज के रूप में पचास हजार रुपया मांगने लगा और मांग पूरा करने में उसके द्वारा अभिव्यक्त अक्षमता पर उसे मानसिक एवं शारीरिक यातना तथा क्रूरता के अध्यधीन किया

गया था और उस पर निर्ममतापूर्वक प्रहार भी किया गया था। तत्पश्चात्, उसने अपने वृद्ध माता-पिता को सूचित किया जिन्होंने याची को समझाने-बुझाने का प्रयास किया, किंतु उसने उसकी माता के साथ भी दुर्व्यवहार किया। पंचायती भी बुलायी गयी थी किंतु याची ने पंचायत द्वारा दिए गए निर्देश का पालन करने से इनकार किया। याची ने किरासन तेल डालकर उसकी हत्या का प्रयास भी किया, किंतु पड़ोसियों एवं उसके पुत्र के मध्यक्षेप के कारण उसे बचाया जा सका था। बाद में, उसे उसके दांपत्य गृह से निकाल दिया गया था। तब से वह अपने पुत्र के साथ अपने माएके में रह रही है। भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन परिवाद मामला सी॰ जे॰ एम॰, बोकारो के न्यायालय में दाखिल भी किया गया था, किंतु यह अभी भी लंबित है। उसका आय का स्वतंत्र स्रोत नहीं है और वह पूर्णत: अपनी वृद्ध माता पर निर्भर है। उसका पति जो बोकारो स्टील लिमिटेड का कर्मचारी है और चालीस हजार रुपया प्रतिमाह वेतन पा रहा है ने याची को अथवा उसके पुत्र को शिक्षा के लिए किसी भरण-पोषण का भुगतान नहीं किया है।

3. नोटिस के बाद, वर्तमान याची अवर न्यायालय में उपस्थित हुआ और अन्य बातों के साथ यह कथन करते हुए अपना कारण बताओ दाखिल किया कि वर्तमान याचिका पोषणीय नहीं है क्योंकि उसने विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के साथ विवाह कभी नहीं किया था और न ही पति-पत्नी के रूप में साहचर्य का कभी आन्नद लिया था और वस्तुत: कोई सुभद्रा देवी उसकी विधिवत ब्याहता पत्नी है और उनके विवाह संबंध से उसको तीन पुत्र एवं दो पुत्रियाँ हैं। उसका मामला यह भी है कि प्रहार अथवा दांपत्य गृह से बाहर निकाले जाने के अभिकथन झूठे, आधारहीन एवं मनगढ़ंत हैं।

4. अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि दोनों पक्षों ने अपने-अपने गवाह प्रस्तुत किए और अनेक दस्तावेजी साक्ष्य भी दाखिल किया। इस मामले में, संहिता की धारा 311 के अधीन किसी मालती देवी का परीक्षण किया गया था और उसने अपने साक्ष्य में परिसाक्ष्य दिया है कि वह याची की प्रथम पत्नी सुभद्रा देवी की बड़ी बहन है और वर्तमान विरोधी पक्षकार सं॰ 2 जो स्वयं का वर्तमान याची की पत्नी होने का दावा कर रही है जो उसकी बहन है। इस गवाह ने आगे परिसाक्ष्य दिया है कि सुभद्रा देवी वर्तमान याची की प्रथम पत्नी है और उनके विवाह के तीन वर्ष बाद, याची ने अपनी प्रथम पत्नी के जीवन काल के दौरान वर्तमान विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के साथ अपना दूसरा विवाह किया।

5. अवर न्यायालय ने अभिवचनों एवं पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्य पर विचार करने के बाद याची को विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को मासिक भरण-पोषण का भुगतान करने का निर्देश दिया जैसा ऊपर उपदर्शित किया गया है। अत:, यह पुनरीक्षण दाखिल किया गया है।

6. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने गंभीर रूप से प्रतिवाद किया कि अवर न्यायालय ने पक्षों के अभिवचनों एवं इस तथ्य पर विचार किए बिना कि भले ही विरोधी पक्षकार सं॰ 2 को इस याची की दूसरी पत्नी के रूप में माना जाए, वह प्रथम पत्नी के जीवनकाल के दौरान किसी भरण-पोषण की विधिवत् हकदार नहीं है, भरण-पोषण प्रदान किया जो विकृत एवं विधि में दोषपूर्ण है। यह निवेदन भी किया गया था कि यह सुनिश्चित है कि संहिता की धारा 125 के अधीन संक्षिप्त कार्यवाही में, न्यायालय से कठोरतापूर्वक अभिवचनों एवं साक्ष्य की विधि का अनुसरण करने की उम्मीद नहीं की जाती है। भले ही वर्तमान कार्यवाही में विवाह के प्रमाण की प्रकृति मजबूत अथवा निश्चयात्मक होने की आवश्यकता नहीं है, किंतु जब तथ्य एवं साक्ष्य पर प्रथम विवाह की अस्तित्वयुक्तता स्थापित की गयी है, किसी भी सूरत में द्वितीय पत्नी किसी भरण-पोषण की हकदार नहीं है। इस दशा में, आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है।

7. पूर्वोक्त निवेदनों के विपरीत, विरोधी पक्षकार की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय ने सही प्रकार से विरोधी पक्षकार द्वारा दिए गए दस्तावेजी साक्ष्य सहित साक्ष्य पर विचार किया और भरण-पोषण प्रदान किया और भले ही यह माना जाता है कि विरोधी पक्षकार

सं॰ 2 याची की दूसरी पत्नी है, किंतु प्रथम विवाह के निश्चयात्मक प्रमाण की अनुपस्थिति में वह **प्याला मुतियालम्मा बनाम प्याला सूरी देमुदु, 2011 (12) SCC 189,** मामले में निर्णय की दृष्टि में भरण-पोषण की हकदार है। पहले विवाह की अस्तित्वयुक्तता के प्रमाण का भार एवं स्तर पति पर है और उसे न्यायालय में संतोषजनक साक्ष्य देकर अपने भार का निर्वहन करना है और याची पहले विवाह की अस्तित्वयुक्तता के अपने अभिवचन को स्थापित करने में विफल रहा है क्योंकि उसने इसके समर्थन में कोई तर्कपूर्ण साक्ष्य नहीं लाया है और कोई अन्य गवाह भी प्रस्तुत नहीं किया है, सिवाए अपने पूर्व विवाह के प्रमाण के रूप में अपनी पहली पत्नी को।

8. एकमात्र प्रश्न जो इस न्यायालय के विचारार्थ आता है, यह है कि क्या दूसरी पत्नी, जिसका विवाह उसके पति के अपनी जीवित पत्नी के साथ पूर्व विवाह की उत्तरजीविता के कारण शून्य है, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के अधीन भरण-पोषण की हकदार है?

9. अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार करने के पहले मैं पक्षों के अभिवचनों का परीक्षण करना चाहूँगा। यह प्रतीत होता है कि किसी भी पक्ष ने अपने अभिवचनों में यह प्रकट नहीं किया है कि पति एवं पत्नी होने के अपने दावा अथवा इनकार के अतिरिक्त उनके बीच कोई अन्य संबंध भी विद्यमान है। विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने कहीं पर भी यह अभिवचन नहीं किया है कि उसकी बड़ी बहन का विवाह याची के साथ हुआ था और बाद में उसने इस याची के साथ विवाह किया था। इसी प्रकार से, वर्तमान याची ने अपने अभिवचनों में कहीं पर भी प्रकट नहीं किया है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 उसकी पत्नी सुभद्रा देवी की बहन है; बल्कि संपूर्ण अभिवचन में उसने वर्तमान विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के साथ किसी संबंध से इनकार किया है और इसे विवादित किया है। किंतु आश्चर्यजनक रूप से, याची की पहली पत्नी सुभद्रा देवी, जिसका ओ॰ पी॰ डब्ल्यू॰ सं॰ 2 के रूप में अवर न्यायालय में परीक्षण किया गया है, ने यह तथ्य प्रकट किया है कि उसकी दो अन्य बहनें हैं और उसने स्वीकार किया है कि पुतुला देवी उसकी छोटी बहन है। जयदेव मोदी जो याची अर्जुन मोदी का पुत्र है ने भी स्वीकार किया है कि पुतुला देवी उसकी मौसी है। अब मैं कुछ दस्तावेजी साक्ष्यों पर चर्चा करना चाहूँगा। वर्तमान विरोधी पक्षकार ने मतदाता पहचान पत्र, आधार कार्ड, अपने पुत्र सुनील कुमार मोदी एवं धीरज कुमार मोदी का आवासीय प्रमाण पत्र, अपने पुत्र दीपक कुमार मोदी के नाम में झारखंड एकेडमिक काउन्सिल, राँची द्वारा जारी अर्नतिम प्रमाण पत्र, दीपक कुमार मोदी की इंटरमीडिएट परीक्षा का मूल प्रवेश पत्र और अन्य दस्तावेजों को दाखिल किया है। इन समस्त दस्तावेजों में, कॉलम में अर्जुन मोदी को विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के पति के रूप में दर्शाया गया है। इसी प्रकार से, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के पुत्रों में से एक दीपक कुमार मोदी के पिता के रूप में इस याची का नाम दर्शाया गया है।

10. वर्तमान याची ने भी सुभद्रा देवी उर्फ बासमती देवी को अपनी पत्नी के रूप में दर्शाते हुए अवर न्यायालय में उसके द्वारा दाखिल कुछ दस्तावेजों पर विश्वास किया है। बासमती देवी के मतदाता पहचान पत्र में इस याची का नाम पति के रूप में दर्शाया गया है और बोकारो स्टील लिमिटेड के मेडिकल कार्ड में भी बासमती देवी को अर्जुन मोदी की पत्नी के रूप में दर्शाया गया है। उक्त दस्तावेजी साक्ष्यों के परिशीलन से इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता है कि वर्तमान विरोधी पक्षकार का अर्जुन मोदी के साथ कुछ संबंध था। मालती देवी जिसका परीक्षण अवर न्यायालय में किया गया था ने स्पष्टत: परिसाक्ष्य दिया है कि सुभद्रा देवी उर्फ बासमती देवी के साथ इस याची के विवाह के लगभग तीन वर्ष बाद उसकी छोटी बहन पुतुला देवी ने इस याची के साथ दूसरा विवाह किया था।

11. यह सुनिश्चित है कि संहिता की धारा 125 के अधीन कार्यवाही के लिए आवश्यक विवाह के प्रमाण की प्रकृति की इतनी मजबूत अथवा निश्चयात्मक होने की आवश्यकता नहीं है जितना भारतीय दंड संहिता की धारा 494 के अधीन अपराध के लिए दांडिक कार्यवाही में। संहिता की धारा 125 के अधीन दंडाधिकारी की अधिकारिता निवारात्मक प्रकृति की होने के कारण दंडाधिकारी वैवाहिक विवाद की अपनी अधिकारिता हड़प नहीं सकता है जो सिविल न्यायालय के पास है। किंतु यदि संहिता की धारा 125 के अधीन कार्यवाही में दिया गया साक्ष्य उपधारणा करता है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 याची की पत्नी है, कार्यवाही के अधीन भरण-पोषण प्रदान करने वाला आदेश पारित करने के लिए यह दंडाधिकारी के लिए पर्याप्त होगा। वर्तमान मामले में, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने मौखिक एवं दस्तावेजी दोनों साक्ष्य प्रस्तुत किया है, और लगभग समस्त दस्तावेजों में याची को विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के पति के रूप में दर्शाया गया है, किंतु उसके विपरीत याची ने भी सुभद्रा देवी उर्फ बासमती देवी को अपनी पत्नी के रूप में दर्शाते हुए मौखिक अथवा दस्तावेजी साक्ष्य दिया है और उसके समर्थन में अनेक दस्तावेजी साक्ष्य भी दिया है। यह सत्य है कि पक्षों ने अपने-अपने अभिवचनों के परे परिसाक्ष्य दिया है, किंतु संहिता की धारा 125 के अधीन संक्षिप्त कार्यवाही में अभिवचनों के प्रमाण का कठोरतापूर्वक अनुसरण नहीं किया जाना है और अभिवचनों के परे साक्ष्य पर भी विचार किया जा सकता है। अत:, पक्षों के साक्ष्य से यह उपधारित किया जा सकता है कि विरोधी पक्षकार सं॰ 2 याची की पत्नी है, किंतु वह याची की प्रथम पत्नी के जीवनकाल के दौरान दूसरी पत्नी है। **प्याला मुतियालम्मा (ऊपर)** मामले में पैराग्राफ 19 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:-

> *"19. fdr] f}rh; fookg liUu djus d le; ij io fookg dh vfLrRo;Drrk dk çek.k ,o lk{; ifr }kjk io fookg dh vfLrRo;Drrk dk vfHkopu djus fn;k tkuk gksxk vkj tc çR;Fkh ifr }kjk io fookg dh vfLrRo;Drrk dk vfHkopu fd;k tkrk g] bl lk{; ndj lrk"k tud :i l fl) djuk gksxkA lforkcu ekey e fo}ku U;k;kèkh'kk }kjk ;gh nf"Vdk.k fy;k x;k Fkk ftl ij çR;Fkh }kjk Hkh fo'okl fd;k x;k gA vr%] ;fn çR;Fkh ifr }kjk fo'okl fd, x, bl ekey dk fu.k;kèkkj ykx Hkh fd;k tkrk g] oreku çR;Fkh ifr viuk vfHkopu LFkkfir dju e foQy jgk g fd mldk io fookg fcYdy vfLrRo;Dr Fkk ftl 1970 e dju dk nkok og djrk g D;kfd mlu bl rF; lfgr fd mlu io fookg d çek.k d xokg d :i e rFkkdfFkr çFke iRuh d flok, ,d Hkh xokg çLrr ugh fd;k g] viu io fookg d leFku e y'kek= lk{; Hkh ugh fn;k gA ;gk Åij nt fd, x, rF;k d vfrfjDr ;g etcr ifjfLFkfr çR;Fkh ifr d fo#) tkrh gA***

12. निर्णय के उक्त पैराग्राफ के कोरे परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि चूँकि पति अपना अभिवचन स्थापित करने में विफल रहा था कि उसका पूर्व विवाह बिल्कुल अस्तित्वयुक्त था, माननीय न्यायालय ने पत्नी को भरण-पोषण प्रदान करने वाला दंडाधिकारी का आदेश पुनर्स्थापित किया। किंतु वर्तमान मामले में, साक्ष्य से आया है कि याची का प्रथम विवाह अभी भी अस्तित्वयुक्त है। जब याची का पूर्व विवाह अथवा प्रथम विवाह स्थापित किया गया है, सुनिश्चित विधि की दृष्टि में, वर्तमान विरोधी पक्षकार सं॰ 2, भले ही उसे द्वितीय पत्नी उपधारित किया जाता है, संहिता की धारा 125 के अधीन किसी भरण-पोषण का हकदार नहीं है। यह समान रूप से सुनिश्चित दृष्टिकोण है कि पुनरीक्षण न्यायालय को साक्ष्यों एवं दंडाधिकारी द्वारा दर्ज निष्कर्ष का संवीक्षण नहीं करना चाहिए था, किंतु यदि प्रकटत: आदेश में कोई अवैधता अथवा कोई तात्विक अनियमितता है, पुनरीक्षण अधिकारिता में कार्यरत यह न्यायालय अपनी आँख बंद नहीं कर सकता है और हस्तक्षेप करने से इनकार नहीं कर सकता है। जहाँ निष्कर्ष

नकारात्मक है अथवा विधिक पहलू का सही प्रकार से अधिमूल्यन नहीं किया गया है, यह न्यायालय जैसा **प्याला मुत्यालम्मा (ऊपर)** में पैराग्राफ 16 में अभिनिर्धारित किया गया है, निष्कर्ष पर आने के लिए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन कर सकता है।

सविताबेन सोमाभाई भाटिया बनाम गुजरात राज्य, (2005)3 SCC 636, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने लगभग समरुप स्थिति में अभिनिर्धरित किया कि अभिव्यक्ति ''पत्नी'' में दूसरी पत्नी को सम्मिलित करने के लिए किसी कृत्रिम परिभाषा को पुर:स्थापित करके धारा 125 के विस्तार को बढ़ाया नहीं जा सकता है जो विधिवत विवाहित न हो।

13. इस प्रकार, विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों एवं अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने पर मैं पाता हूँ कि आक्षेपित आदेश संपोषित नहीं किया जा सकता है और अपास्त किए जाने योग्य है।

14. पूर्वोक्त कारणों से, यह पुनरीक्षण आवेदन एतद् द्वारा अनुज्ञात किया जाता है और आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn ,o çeFk iVuk;d] U;k;efrx.k

सुकरा ओराँव

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (D.B.) No. 508 of 2005. Decided on 15th September, 2015.

सत्र विचारण सं॰ 12 वर्ष 2003 में विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त, फास्ट ट्रैक कोर्ट IV, राँची द्वारा पारित दिनांक 22.7.2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 23.7.2004 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या–दोषसिद्धि–मृतक द्वारा अपनी मृत्यु के पहले दिए गए अपने बयान में अपीलार्थी को आलिप्त नहीं किया–चश्मदीद गवाहों का साक्ष्य अविश्वसनीय प्रतीत होता है–अधिकांश अ॰ सा॰ अनुश्रुत गवाह हैं–विचारण न्यायालयों द्वारा तथ्यों को विचार में नहीं लिया गया था–विचारण न्यायालय ने दोषसिद्धि एवं दंडादेश दर्ज करने में अवैधता किया–अपीलार्थी दोषमुक्त किया गया। (पैराएँ 11 से 16)

अधिवक्तागण.–Mr. Akhouri Anjani Kumar, For the Appellant; Mrs. Laxmi Murmu, For the State.

न्यायालय द्वारा.–अपीलार्थी का किसी बिगा ओराँव की हत्या करने के लिए विचारण किया गया था। विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को उक्त आरोप का दोषी पाने पर, दिनांक 22.7.2004 के अपने निर्णय के तहत उसको भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और तद्नुसार दिनांक 23.7.2004 के अपने आदेश के तहत उसको भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया।

2. अभियोजन मामला यह है कि दिनांक 6.7.2002 को सांय लगभग 4 बजे मृतक बिगा ओराँव अपनी साइकिल पर, बाम्बे मार्केट से घर लौट रहा था और अपने गाँव के सरना स्थान के निकट पहुँचा, अपीलार्थी सुकरा ओराँव ने मृतक की गर्दन पर टांगी का वार किया जिसके परिणामस्वरुप मृतक गंभीर रूप से घायल हो गया, जिसे किसी रामानंद नायक (अ॰ सा॰ 6) द्वारा अपनी साइकिल पर घर ले जाया गया था। इस पर उसे पहले मंदार अस्पताल लाया गया था जहाँ प्राथमिक उपचार किया गया था और तब आर॰ एम॰ सी॰ एच॰ निर्दिष्ट किया गया था।

3. दिनांक 6.7.2002 को ही उस प्रभाव का लिखित रिपोर्ट (प्रदर्श 1) मंदार पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी को दिया गया था। जिस पर, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 341, 324 एवं 327 के अधीन मंदार पी॰ एस॰ केस सं॰ 39 वर्ष 2002 के रूप में मामला दर्ज किया गया था। उक्त लिखित रिपोर्ट में, सूचक पाँचू ओराँव (अ॰ सा॰ 8) द्वारा यह कथन किया गया था कि अपीलार्थी ने स्वयं का मृतक बिगा ओराँव का पुत्र होने का दावा करते हुए बिगा ओराँव की संपत्ति में हिस्सा मांग रहा था किंतु बिगा ओराँव इनकार कर रहा था कि वह उसका पुत्र है और यही कारण था कि अपीलार्थी ने बिगा ओराँव की हत्या कर दी।

4. आर॰ एम॰ सी॰ एच॰ में घायल बिगा ओराँव दिनांक 17.7.2002 तक इलाज के अधीन बना रहा जब अपराह्न 3.30 बजे उसकी मृत्यु हो गयी। तुरन्त तत्पश्चात, बिगा ओराँव की पत्नी चुमनी देवी (अ॰ सा॰ 2) ने अपना फर्दबयान (प्रदर्श 3) दिया, जिसे आर॰ एम॰ सी॰ एच॰ में ही एस॰ आई॰ राम इकबाल मोची (अ॰ सा॰ 7) द्वारा दर्ज किया गया था। वह भी मृतक के मृत शरीर का मृत्यु समीक्षा करता हुआ प्रतीत होता है और मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श 4) तैयार किया। बाद में, किसी अरशाद अहमद (अ॰ सा॰ 4) ने अन्वेषण किया और मृत शरीर शव परीक्षण के लिए भेजा, जिसे डॉ॰ अजित कुमार चौधरी (अ॰ सा॰ 9) द्वारा किया गया था और उन्होंने मृतक के शरीर पर निम्नलिखित उपहतियों को पाया:–

1. xnu d lkeu ,o Åijh Hkkx ij 4 x 1cm dk t[eA xgjkb 'okl uyh rd g vkj 'okl uyh iDpj gA

2. Vfp;kVkeh d lkFk 'okl uyh rd xgjk 2 x1cm dk t[eA

3. flyk x;k t[e v'kr% tkMk x;k 4 x 1/2cm x BMMh d nk, Hkkx ij eyk;e mÙkd

4. 'kY; fØ;k djd flyk t[e (v'kr% tkMk x;k) ukfHk l 'k: gkdj ftQhLVue rd iV d lkeu 16cm yck t[e

5. vkrfjd&vkeVe d lkFk iV dh nhokj dk flyu dk t[e

डॉक्टर ने इस मत के साथ शव परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 5) जारी किया कि मृत्यु उपहति जो मृत्युपूर्व थी के कारण पेरिटोनाइटिस के कारण कारित की गयी थी।

5. इस बीच, आई॰ ओ॰ ने गवाहों का बयान दर्ज किया। अन्वेषण पूरा करने के बाद, जब आरोप–पत्र दाखिल किया गया था, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध का संज्ञान अपीलार्थी के विरुद्ध लिया गया था।

6. तद्नुसार, मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था और अपीलार्थी का विचारण किया गया था, जिसके दौरान अभियोजन ने कुल नौ गवाहों का परीक्षण किया। उनमें से, अ॰ सा॰ 1 बिहारी प्रसाद, अ॰ सा॰ 2 चुमनी देवी मृतक की विधवा, अ॰ सा॰ 5 सनीचरवा ओराँव, अ॰ सा॰ 6 रामानंद नायक, अ॰ सा॰ 8 पाँचू ओराँव (सूचक) और अ॰ सा॰ 10 शशि कुमारी मृतक की पुत्री अनुश्रुत गवाह है जिन्होंने एक या दूसरे व्यक्ति से जानकारी पाया है। अ॰ सा॰ 3 नीरज कुमारी मृतक की पुत्री ने स्वयं का चश्मदीद गवाह होने का दावा किया। यह कथन किया जाए कि मृतक की विधवा अ॰ सा॰ 2 चुमनी देवी और मृतक की पुत्री अ॰ सा॰ 10 यद्यपि अनुश्रुत गवाह हैं किंतु उन्होंने परिसाक्ष्य दिया है कि जब घायल बिगा ओराँव को घर लाया गया था, उसने उनको बताया था कि अपीलार्थी ने उसके उपर उपहति कारित किया था।

7. अभियोजन मामला बंद करने के बाद जब अपीलार्थी के विरुद्ध दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अपराध में फँसानेवाले साक्ष्य/सामग्री रखी गयी थी, उसने इनकार किया।

8. इस पर, विचारण न्यायालय ने अ॰ सा॰ 2 चुमनी देवी एवं अ॰ सा॰ 3 नीरज कुमारी के परिसाक्ष्य पर अंतर्निहित विश्वास करके अपीलार्थी को मृतक बिगा ओराँव की हत्या करने का दोषी पाया और तद्नुसार अपीलार्थी के विरुद्ध दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज किया जो चुनौती के अधीन है।

9. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अखौरी अंजनी कुमार निवेदन करते हैं कि स्वीकृत रूप से अ॰ सा॰ 2 चुमनी देवी चश्मदीद गवाह नहीं है और कि यद्यपि मृतक की पुत्री अ॰ सा॰ 3 नीरज कुमारी ने स्वयं को घटना का चश्मदीद गवाह होने का दावा किया है, किंतु अ॰ सा॰ 3 का परिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 6 रामानन्द नायक के साक्ष्य से झुठलाया जाता है जिसने अभिसाक्ष्य दिया कि जब वह घर लौट रहा था, उसने बिगा ओराँव को सड़क पर घायल दशा में पाया जिसको वह अपनी साइकिल पर अपने घर ले गया जिस तथ्य को अ॰ सा॰ 1 एवं मृतक की पुत्री अ॰ सा॰ 10 द्वारा भी स्वीकार किया गया है और तद्द्वारा न तो अ॰ सा॰ 2 एवं नहीं अ॰ सा॰ 3 को चश्मदीद गवाह कहा जा सकता है और इसलिए, विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को दोषी अभिनिर्धारित करने के लिए अ॰ सा॰ 2 एवं अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य पर विश्वास करने में अवैधता किया।

10. इसके विरुद्ध, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ निवेदन करते हैं कि बचाव पक्ष ने मृतक की पुत्री अ॰ सा॰ 3 नीरज कुमारी से कुछ भी नहीं निकलवाया है और तद्द्वारा उसका इस प्रभाव का साक्ष्य कि इस अपीलार्थी ने उसके पिता पर टांगी एवं छुरा से वार किया था, अक्षुण्ण बना रहता है और तद्द्वारा विचारण न्यायालय अपीलार्थी, जो मृतक का बैरी था क्योंकि वह स्वयं को बिगा ओराँव का पुत्र होने का दावा कर रहा था जबतिक बिगा ओराँव ने सदैव इस तथ्य से इनकार किया और वह अपनी संपत्ति का हिस्सा अपीलार्थी को देने के लिए अनिच्छुक था, के विरुद्ध दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज करने में बिल्कुल न्यायोचित था।

11. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिलेख का परिशीलन करने पर हम पाते हैं कि मृतक के भाई सूचक अ॰ सा॰ 8 पाँचू ओराँव ने मंदार पुलिस थाना के प्रभारी–अधिकारी के समक्ष लिखित रिपोर्ट (प्रदर्श 1) यह कथन करते हुए दाखिल किया कि अपीलार्थी ने मृतक के शरीर पर टांगी से उपहति कारित किया जिसके परिणामस्वरुप वह गंभीर रूप से घायल हो गया। लिखित रिपोर्ट यह कमी नहीं उपदर्शित करती है कि क्या वह चश्मदीद गवाह था किंतु साक्ष्य के क्रम में, अ॰ सा॰ 8 ने स्वीकार किया है कि उसने अपीलार्थी को मृतक पर प्रहार करते कभी नहीं देखा।

12. यही मामला मृतक की विधवा अ॰ सा॰ 2 चुमनी देवी का है जिसने अपने साक्ष्य के अनुसार अपने पुत्र सोमरा ओराँव से घटना के बारे में जानकारी पाया था जिसका परीक्षण अभियोजन द्वारा नहीं किया गया है और तद्द्वारा वह अनुश्रुत गवाह बनी हुई है।

13. अन्य गवाहों अर्थात् अ॰ सा॰ 1 बिहारी प्रसाद, अ॰ सा॰ 5 सनिचरवा ओराँव और मृतक की पुत्री अ॰ सा॰ 10 शशि कुमारी का भी यही दर्जा है जिनके पास घटना देखने का अवसर नहीं था बल्कि उन्होंने एक या दूसरे व्यक्ति से जानकारी पाया था। किंतु अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 10 के साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि जब घायल बिगा ओराँव को घर लाया गया था, उसने उनको प्रकट किया था कि अपीलार्थी ने उपहति कारित किया था किंतु अ॰ सा॰ 10 ने अपने प्रतिपरीक्षण में परिसाक्ष्य दिया है कि

उसके पिता ने उसको अपीलार्थी द्वारा उस पर प्रहार किए जाने के बारे में कभी नहीं कहा था, बल्कि उसे अपनी माता अ॰ सा॰ 2 से इसके बारे में जानकारी हुई जिसने अपने साक्ष्य में कथन किया है कि जब उसका पति घर लाया गया था, उसने प्रकट किया कि अपीलार्थी ने ही उस पर उपहति कारित किया था किंतु आश्चर्यजनक रूप से उसके द्वारा अपने फर्दबयान जिसे मृतक की मृत्यु के तुरन्त बाद दिया गया था में उक्त तथ्य का कथन कभी नहीं किया था।

14. इसके अतिरिक्त, हम अ॰ सा॰ 6 रामानंद नायक के साक्ष्य से पाते हैं कि जब वह घर लौट रहा था, उसने सड़क पर बिगा ओराँव को घायल दशा में पाया जिसे वह अपनी साइकिल पर अपने घर ले गया जिस तथ्य को अ॰ सा॰ 1 एवं अ॰ सा॰ 10 द्वारा अपने प्रतिपरीक्षण में स्वीकार भी किया गया है। अ॰ सा॰ 6 ने स्पष्टत: अभिसाक्ष्य दिया कि जब वह बिगा ओराँव को अपने घर ले जा रहा था, उसने किसी हमलावर का नाम प्रकट नहीं किया था।

15. उस स्थिति में, अ॰ सा॰ 2 के परिसाक्ष्य का वह भाग कि उसे मृतक द्वारा अपने पर अपीलार्थी द्वारा किए गए प्रहार के बारे में बताया गया था पर पूर्वोक्त कारणों से और इस कारण भी कि वह अपीलार्थी से बिल्कुल चिढ़ी हुई थी क्योंकि वह यह अभिवचन करके कि वह बिगा ओराँव का पुत्र था, बिगा ओराँव की संपत्ति में हिस्सा का दावा कर रहा था जबकि बिगा ओराँव इस तथ्य से इनकार कर रहा था, विश्वास नहीं किया जा सकता है। अ॰ सा॰ 3 के साक्ष्य पर आते हुए जिसने चश्मदीद गवाह होने का दावा किया है, हम अ॰ सा॰ 6 के साक्ष्य की दृष्टि में उसको अविश्वसनीय पाते हैं। इन समस्त तथ्यों को विचारण न्यायालय द्वारा विचार में कभी नहीं लिया गया था और तद्द्वारा विचारण न्यायालय ने दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज करने में अवैधता किया जिसे एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है।

16. परिणामस्वरुप, अपीलार्थी को आरोप से दोषमुक्त किया जाता है और तुरन्त निर्मुक्त करने का आदेश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

17. तद्नुसार, यह अपील अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; jfo ukFk oek] U;k;efr

नकीब खान एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Revision No. 433 of 2015. Decided on 6th October, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—आयुध अधिनियम, 1959—धारा 27—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 227—हत्या–उन्मोचन याचिका का अस्वीकरण–यदि यह उपधारित करने के लिए मजबूत एवं गंभीर संदेह है कि अभियुक्त ने अपराध किया है, न्यायालय को यह कहने की छूट नहीं है कि अभियुक्त के विरुद्ध अग्रसर होने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है–अपराधों पर मात्र संदेह करना, अभियुक्त को उन्मोचित करने के लिए अनुज्ञेय नहीं होगा–यह परीक्षण करने का चरण नहीं है कि क्या विचारण का अंत दोषसिद्धि में होगा या नहीं–आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है–पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 7 से 10)

निर्णयज विधि.–2011 (1) JLJ 54 (SC) : (2010) 9 SCC 368; 2015 (1) East Cr. C. 450 (SC); (2013) 3 SCC 330—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s B.M. Tripathy, Nutan Sharma, For the Petitioners; Mr. Ashok Kumar, For the State.

आदेश

एस॰ टी॰ सं॰ 285 वर्ष 2008 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश II, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 26.3.2015 के आदेश जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'संहिता') की धारा 227 के अधीन अपने उन्मोचन के लिए पाँचों याचीगण द्वारा दाखिल याचिका अस्वीकार कर दी गयी है, की विधिक वैधता प्रश्नाधीन है।

2. अनावश्यक विवरणों से रहित कथन किए जाने के लिए आवश्यक तथ्य ये हैं कि प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र में चौपारन थाना के एस॰ आई॰ द्वारा दर्ज किसी अनिल कुमार पांडे (जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है) द्वारा दिए गए बयान के आधार पर भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149, 323, 325, 307, 506/379 एवं अन्य प्रावधानों के अधीन और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन भी चौपारन पी॰ एस॰ केस सं॰ 26 वर्ष 2001 दिनांक 7.2.2001 को संस्थित किया गया था किंतु चूँकि इलाज के दौरान सूचक की मृत्यु हो गयी, बाद में दिनांक 8.2.2001 के आदेश के तहत भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 इस अभिकथन के साथ जोड़ी गयी थी कि सूचक सियारकोनी बंगला का प्रबंधक-सह-केयर टेकर था और वह सवेरे, दोपहर एवं शाम में उक्त बंगला जाया करता था और बंगला की देखभाल के लिए एक चौकीदार के अतिरिक्त छेदी सिंह, नारायण पांडे एवं बबलू पांडे अन्य कामों के लिए काम पर लगाए गए थे। दिनांक 7.2.2001 को प्रात: लगभग 9 बजे जब सूचक किसी गौतम मुखर्जी के साथ बंगला पहुँचा, लाठी, लोहे की छड़, तलवार एवं आग्नेयास्त्र जैसे घातक हथियारों से लैस 10-15 व्यक्तियों ने बंगला में अतिचार किया। उनमें से सूचक ने समस्त पाँचों याचीगण को पहचाना और अन्य व्यक्तियों को भी पहचानने का दावा किया। उनमें से एक रईस खान दोनाली बंदूक पकड़े था, अन्य व्यक्ति बाबू खान, शाहनवाज एवं नकीब तलवार लिए थे और अन्य व्यक्ति लाठी लिए थे और वे सूचक को गाली देने लगे। रईस खान ने अपनी बंदूक से तीन गोली चलाया। घटना देखकर, चौकीदार किसी प्रकार भाग गया किंतु अन्य समस्त अपराधियों ने सूचक और गौतम मुखर्जी को घेर लिया और उनकी हत्या करने का आशय से उन पर प्रहार किया। सूचक को अनेक उपहतियाँ आयी और गौतम मुखर्जी को भी उपहति आयी। सूचक का बायाँ पैर तोड़ दिया गया था। यह भी अभिकथित किया गया है कि बाबू खान ने उनको गंभीर परिणामों की धमकी दी और तत्पश्चात वे सब भाग गए। याचीगण का इरादा जबरन बंगला हड़पना था। अन्वेषण अधिकारी ने सम्यक अन्वेषण के बाद, याचीगण एवं अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया। बाद में, अन्वेषण अपराध अन्वेषण विभाग (सी॰ आई॰ डी॰) को सौंपा गया था और अन्वेषण पूरा करने के बाद, सी॰ आई॰ डी॰ ने भी याचीगण एवं अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध अभिकथन सत्य पाया और पुलिस द्वारा पहले दाखिल किए गए आरोप-पत्र का समर्थन किया।

3. मामला सुपुर्द करने के बाद आरोप विरचित करने के लिए विचारण नियत किया गया था, वर्तमान याचीगण द्वारा अपने उन्मोचन के लिए संहिता की धारा 227 के अधीन याचिका दाखिल की गयी थी किंतु अवर न्यायालय ने दिनांक 26.3.2015 के आक्षेपित आदेश द्वारा याचिका खारिज कर दिया। अत: यह पुनरीक्षण दाखिल किया गया है।

4. विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री त्रिपाठी ने आक्षेपित आदेश का विकृत एवं विधि में दोषपूर्ण के रूप में विरोध करते हुए गंभीर रूप से प्रतिवाद किया कि अगर अभियोजन का संपूर्ण मामला एवं अन्वेषण के दौरान संग्रहित साक्ष्य को पूरी तरह से स्वीकार भी किया जाता है, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध याचीगण के विरुद्ध नहीं बनता है, बल्कि अधिकाधिक अपराध भारतीय दंड संहिता

की धारा 304 भाग II के कार्य क्षेत्र के अंतर्गत आता है। यह निवेदन भी किया गया था कि जहाँ तक तीन घायलों–सूचक जिसकी बाद में इलाज के दौरान मृत्यु हो गयी और दो अन्य घायल व्यक्ति अर्थात् मोहन रविदास एवं गौतम मुखर्जी का संबंध है, कोई भी उपहति शरीर के महत्वपूर्ण अंग पर नहीं थी और मृतक सूचक की मुख्य उपहति भी टिबिया एवं फिबुला के कम्पाउन्ड फ्रैक्चर से संबंधित है और अन्य उपहतियाँ भी सामान्य प्रकृति की थी और स्पष्टत: अनुबंधित करती हैं कि अपीलार्थी का मृतक की हत्या करने का इरादा नहीं था। श्री त्रिपाठी द्वारा यह निवेदन भी किया गया था कि स्थानीय पुलिस एवं अन्वेषण के दौरान अपराध अनुसंधान विभाग द्वारा दर्ज गवाहों के बयानों में अनेक विरोधाभास हैं और उक्त रईस खान ने स्वयं को बंगला का स्वामी होने का दावा किया था। अत:, याचीगण उन्मोचित किए जाने योग्य हैं।

5. याचीगण की ओर से किए गए प्रतिवादों का खंडन करते हुए राज्य का प्रतिनिधित्व कर रहे विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि इस न्यायालय की पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक आक्षेपित आदेश में अवैधता अथवा अनियमितता नहीं है और आरोप विरचित करने के चरण पर मामले के पक्ष–विपक्ष में अतिगामी जाँच करना बिल्कुल अनुज्ञेय नहीं है बल्कि गंभीर संदेह एवं मजबूत प्रथम दृष्टया मामले की उपस्थिति याचीगण के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त है। यह निवेदन भी किया गया है कि चूँकि मामला दर्ज करने के बाद इलाज के दौरान सूचक की मृत्यु हो गयी, सूचक के उक्त बयान को मृतक के मृत्युकालिक कथन के रूप में माना जाएगा।

6. इस तथ्य के प्रति बिल्कुल जागरुक होने पर कि विचारण प्रारंभिक चरण पर है और इस आवेदन में यह न्यायालय अभियुक्त को आरोपित अथवा उन्मोचित करने के सीमित पहलू पर विचार कर रहा है, मैं संहिता की धारा 227 के विस्तार का परीक्षण करना चाहूँगा। इस बिंदु पर विधि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **सज्जन कुमार बनाम सी॰ बी॰ आई॰, (2010)9 SCC 368 [: 2011 (1) JLJ 54 (SC)]** में सारगर्भित रूप से विश्लेषित की गयी है जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 19 में निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

> *"19. ;g Li"V g fd ;fn vkjfHkd pj.k ij etcr lng g tk U;k;ky; dk ;g lkpu dh vkj y tkrk g fd ;g mièkkfjr dju dk vkèkkj g fd vfHk;Dr u vijkèk fd;k g] rc U;k;ky; dk ;g dgu dh NV ugh g fd vfHk;Dr d fo#) vxl j gku d fy, i;kIr vkèkkj ugh gA vfHk;Dr d nk"k dh miènkj.kk ftl vkjfHkd pj.k ij fd;k tkuk g doy çFke n"V;k ;g fofuf'pr dju d ç;ktu l g fd D;k U;k;ky; dk fopkj.k gr vxl j gkuk pkfg, ;k ughA ;fn lk{; ftl nu dk çLrko vfHk;ktu djrk g vfHk;Dr dk nk"k fl) djrk g] ;fn bl çfr ijh{k.k e pukrh fn, tku vFkok cpko lk{;] ;fn gk] }kjk [kfMr fd, tku d igy i.kr% Lohdkj Hkh fd;k tkrk g] ,lk ugh n'kk ldrk gk fd vfHk;Dr u vijkèk fd;k g] rc fopkj.k gr vxl j gku d fy, i;kIr vkèkkj ugh gkxkA***

एक अन्य मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **राज्य, पुलिस इंस्पेक्टर के माध्यम से बनाम ए॰ अरुण कुमार एवं एक अन्य, 2015 (1) East Cr. C 450 (SC)** मामले में संहिता की धाराओं 227 एवं 228 के विस्तार के बारे में अनेक प्रामाणिक निर्णयों पर विचार करने के बाद निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

> *(i) U;k;kèkh'k dk n0 ç0 l0 dh èkkjk 227 d vèkhu vkjki fojfpr dju d ç'u ij fopkj djr g, ;g irk yxku d lhfer ç;ktu l lk{; dh Nkuchu dju ,o eY;kdu dju dh fufookfnr 'kfDr g fd D;k vfHk;Dr d fo#) çFke n"V;k ekeyk curk g ;k ughA çFke n"V;k ekeyk fofuf'pr dju dh ijh{kk çR;d ekey d rF;k ij fuHkj djxhA*

(ii) tgk U;k;ky; d le{k çLrr lkexh vfHk;Dr d fo#) xHkhj lng çdV djrh g ft ldk lefpr :i l Li"V ugh fd;k x;k g] U;k;ky; vkjki fojfpr dju e vkj fopkj.k gr vxlj gku e i.krh U;k;kfpr gkxkA

(iii) U;k;ky; ek= Mkd[kkuk vFkok vfHk;ktu d e[ki= d :i e ÑR; ugh dj ldrk g cfYd bl ekey dh 0;kid vfèkHkk0; rkvk] fdlh ey ncyrk] U;k;ky; d le{k çLrr lk{; ,o nLrkotk d dy çHkko bR;kfn ij fopkj djuk gkxkA fdr] bl pj.k ij ekey d i{k&foi{k e vfrxkeh tkp ugh gk ldrh g vkj lk{; dk rkyk ugh tk ldrk g ekuk og fopkj.k lpkfyr dj jg gA

(iv) ;fn vfHky[k ij ektn lkexh d vkèkkj ij U;k;ky; er fufer dj ldrk Fkk fd vfHk;Dr vijkèk dj ldrk Fkk] ;g vkjki fojfpr dj ldrk g] ;|fi nk"kf lf) d fy, fu"d"k dk ;fDr;Dr lng d ij fl) dju dh vko';drk g fd vfHk;Dr u vijkèk fd;k gA

(v) vkjki fojfpr fd, tku d le; ij] vfHky[k ij ektn lkexh d ifjoh{kd eY; ij fopkj ugh fd;k tk ldrk g fdr vkjki fojfpr dju d igy U;k;ky; dk vfHky[k ij ektn lkexh ij viu U;kf;d food dk bLreky djuk gkxk vkj lr"V gkuk gkxk fd vfHk;Dr }kjk vijkèk dh dkfjrk lHko FkhA

(vi) èkkjkvk 227 ,o 228 d pj.k ij] U;k;ky; dk ;g irk yxku fd D;k mll lkeu vku oky rF; mud vfdr eY; ij fy, tku ij vfHkdfFkr vijkèk xfBr dju oky leLr vo;ok dk vfLrRo çdV djr g] dh nf"V l vfHky[k ij ektn lkefx;k ,o nLrkotk dk eY;kdu dju dh vko';drk gA bl lhfer ç;ktu l lk{; dh Nkuchu djuk D;kfd ml vkjfHkd pj.k ij ;g Lohdkj dju dh mEehn ugh dh tk ldrh g fd vfHk;ktu tk Hkh dgrk g] og i.k lR; g Hky gh ;g lkekU; ckèk vFkok ekey dh 0;kid vfèkHkk0; rkvk d fo#) gA

*(vii) ;fn nk nf"Vdk.k lHko g vkj mue l ,d doy lng] tk xHkhj lng l lfHkUu g] dk mnHkr djrk g] fopkj.k U;k;kèkh'k vfHk;Dr dk mUekfpr dju d fy, l'kDr gkxk vkj ml pj.k ij ml ;g ugh n[kuk g fd fopkj.k dk lekiu nk"kefDr vFkok nk"kf lf) e gkxkA***

7. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उक्त दो मामलों में विनिश्चित निर्णयाधार स्पष्टत: अनुबंधित करता है कि आरंभिक चरण पर यदि यह उपधारित करने के लिए मजबूत एवं गंभीर संदेह है कि अभियुक्त ने अपराध किया है, न्यायालय को यह कहने की छूट नहीं है कि अभियुक्त के विरुद्ध अग्रसर होने का पर्याप्त आधार नहीं है। वर्तमान मामले में, प्रकटत: सूचक की मृत्यु मामला दर्ज करने के बाद इलाज के दौरान हो गयी और डॉक्टर ने मृतक के टिबिया एवं फिबूला का कंपाउन्ड फ्रैक्चर और मृतक के पूरे शरीर पर अनेक उपहतियों को पाया था। अन्वेषण के दौरान भी, गवाहों ने अभिकथनों का समर्थन किया है और इन्हें संपुष्ट किया है। मैंने केस डायरी एवं इसके पूरक भाग तथा विशेषत: सूचक के बयान एवं घायल व्यक्तियों को आयी उपहतियों का परिशीलन किया है जो स्पष्टत: उपदर्शित करती हैं कि मृतक के पूरे शरीर पर अनेक उपहतियाँ आयी थी। इस चरण पर यह तात्विक नहीं है कि वे उपहतियाँ खरोंच मात्र थी। अपराध पर संदेह मात्र करके अभियुक्त को उन्मोचित करना अनुज्ञेय नहीं होगा।

8. राजीव थापर एवं अन्य बनाम मदन लाल कपूर, (2013)3 SCC 330 मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मृतका युवती के पिता की प्रेरणा पर दर्ज परिवाद मामले में उन्मोचन के इसी विवाद्यक

पर विचार करते हुए कि उसे संदेह है कि उसकी पुत्री को जहर दिया गया है, पैराग्राफ 28 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

^^28. ;g vfHk;Dr d fo#) vfHk;ktu@ifjoknh }kjk fd, x, vfHkdFkuk dh lR;rk vFkok vU;Fkk dk eY;kdu dju dk pj.k ugh gA blh çdkj] ;g fofuf'pr dju dk pj.k ugh g fd vfHk;Dr dh vkj l fd;k x;k cpko fdruk otunkj gA Hky gh vfHk;Dr vfHk;ktu@ifjoknh }kjk fd, x, vfHkdFkuk e dN lng n'kku e lQy gkrk g] fopkj.k d igy vfHk;Dr dk mUekfpr djuk vuuK; gkxkA ,lk blfy, g D;kfd bldk ifj.kke vfHk;ktu vFkok ifjoknh dk bl fl) dju d fy, lk{; nu dh vuefr fn, fcuk vfHk;ktu@ifjoknh }kjk fd, x, vfHkdFkuk dk vfrerk nu e gkxkA fdr] bldk foijhr lR; ugh g D;kfd Hky gh fopkj.k gr vxlj gvk tkrk g(vfHk;Dr dk fdlh vlèkk; ifj.kkek d vè;èkhu ugh fd;k x;k gA vfHk;Dr vHkh Hkh fofèk d vu#i lk{; çLrr djd viuk cpko LFkkfir dju e lQy gku dh voLFkk e gkxkA fofèkd voLFkk dh ?kk"k.kk djr g, bl U;k;ky; }kjk fn, x, fu.k;k dh vrghu lph g fd ,l ekey e tgk vfHk;ktu@ifjoknh u yxk, x, vkjkik d leLr vo;ok dk ykr g, vfHkdFku fd;k g vkj fd, x, vfHkdFkuk dh lR;i.krk çFke n"V;k lkf{;r djr g, U;k;ky; d le{k lkexh çLrr fd;k g] fopkj.k djuk gh gkxkA**

9. प्राथमिकी में किए गए अभिकथनों एवं अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के परिशीलन से याचीगण के विरुद्ध गंभीर एवं मजबूत संदेह प्रतीत होता है। यह चरण यह परीक्षण करने का नहीं है कि क्या विचारण का अंत दोषसिद्धि में होगा या नहीं बल्कि न्यायालय को उक्त दो मामलों **सज्जन कुमार (ऊपर)** एवं **राज्य इंस्पेक्टर के माध्यम से (ऊपर)** एवं **राजीव थापर (ऊपर)** में दिए गए मार्गदर्शक सिद्धांतों के अंतर्गत अभिकथन पर विचार करना होगा। अवर न्यायालय ने मामले में अग्रसर होने के लिए पर्याप्त साक्ष्य पाया है और सही प्रकार से अपने उन्मोचन के लिए याचीगण की प्रार्थना को अस्वीकार किया है। विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री त्रिपाठी का प्रश्न कि अधिकाधिक अपराध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 भाग II की परिधि के अंतर्गत आता है, मैं यह मत देने के लिए मजबूर हूँ कि अगर याचीगण कुछ संदेह दर्शाने में सफल हुए भी हैं, इस चरण पर विचार नहीं किया जा सकता है अन्यथा इसे सिद्ध करने के लिए साक्ष्य देने की अनुमति अभियोजन को दिए बिना अभियोगों को अंतिमता देने में परिणत होगा। अत: मैं आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता या अनौचित्यता नहीं पाता हूँ।

10. तद्नुसार, पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mh॰ ,u॰ mikè;k;] U;k;efr

बैजनाथ यादव

cuke

मेसर्स नंद एण्ड सामंत कं॰ प्रा॰ लि॰

S.A. No. 98 of 2011. Decided on 8th October, 2015.

झारखंड भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 2000—धाराएँ 11 (1) (c) एवं 11(1)(d)—बेदखली–किराया के भुगतान में व्यतिक्रम–प्रतिवादी-अपीलार्थी वादी के

अधीन किराएदार था एवं किरायदारी मासिक थी–दोनों न्यायालयों द्वारा समवर्ती निष्कर्ष है कि वादी एवं प्रतिवादी के बीच का संबंध स्थापित किया गया है और अपीलार्थी लगातार दो माह तक किराया का भुगतान करने में व्यतिक्रमी था–अपील खारिज। (पैराएँ 11 से 12)

निर्णयज विधि.–1986 PLJR 46 (SC); AIR 2003 SC 1637—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Sachin Kumar, For the Appellant; M/s Amar Kumar Sinha, Sandeep Verma, For the Respondent.

आदेश

यह द्वितीय अपील बेदखली (टी॰) अपील सं॰ 4/2010 में जिला न्यायाधीश कोडरमा, द्वारा पारित एवं हस्ताक्षरित दिनांक 17 अक्टूबर, 2011 के निर्णय एवं दिनांक 14.11.2011 की डिक्री के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा बेदखली वाद सं॰ 3/2009 में मुंसिफ, कोडरमा द्वारा पारित एवं हस्ताक्षरित दिनांक 4.8.2010 का निर्णय एवं दिनांक 7.8.2010 की डिक्री मान्य ठहरायी गयी है।

2. विचारण न्यायालय में अपीलार्थी प्रतिवादी था और प्रत्यर्थी वादी था।

3. संक्षेप में तथ्य ये हैं कि प्रतिवादी को अप्रिल, 1993 में 225/- रुपया मासिक किराया पर वाद परिसर में किराएदार के रूप में प्रवेश दिया गया था जिसे बाद में सम्यक् रूप से बढ़ाया गया था और वाद दाखिल किए जाने के समय पर यह 350/- रुपया प्रतिमाह था।

4. यह प्रतिवाद किया गया है कि सितम्बर 2008 से प्रतिवादी किराया का भुगतान करने में विफल रहा और आगे मामला सं॰ 6/2008 के तहत उचित किराया के नियतीकरण के लिए किराया नियंत्रक के समक्ष आवेदन दाखिल किया।

5. वादी ने यह भी मामला बनाया है कि उसे अपने निजी उपयोग एवं अधिभोग के लिए वाद परिसर की सद्भावपूर्ण एवं युक्तियुक्त आवश्यकता है। यह प्रतिवादित किया गया था कि भवन जिसमें वाद परिसर अवस्थित है वाणिज्यिक भवन है और वादी को निजी उपयोग एवं अधिभोग के लिए इसकी आवश्यकता थी। अंत में, वादी ने प्रतिवादी को वाद परिसर से बेदखल करने के लिए मुंसिफ न्यायालय, कोडरमा के समक्ष बिहार भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 2000 की धारा 11 (1) (c) एवं 11 (1) (d) के अधीन अंतर्विष्ट प्रावधान के अधीन बेदखली वाद सं॰ 3/2009 के तहत वाद लाया।

6. प्रतिवादी–अपीलार्थी अवर न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुआ और वादी द्वारा किए गए अभिकथनों एवं प्रकथनों से इनकार किया। यह प्रतिवाद किया गया था कि वाद दुकान भवन के बाहर अवस्थित है और वादी को अपने निजी उपयोग एवं अधिभोग के लिए इसकी आवश्यकता नहीं थी। जहाँ तक किराया का भुगतान करने में जानबूझकर किए गए व्यतिक्रम का संबंध है, यह प्रतिवाद किया गया था कि जब कभी बिल दिया जाता था, प्रतिवादी इसका भुगतान करता था। चूँकि प्रश्नगत अवधि के लिए बिल नहीं दिया गया था, प्रतिवादी ने भुगतान नहीं किया था। वस्तुतः वादी को जब एवं जैसे जरूरत हो बिल देने की आदत थी और यह कहना गलत है कि प्रत्येक माह के किराया का बिल दिया गया था।

7. वादी एवं प्रतिवादी ने अपने दावा के समर्थन में अपना साक्ष्य और वाद पत्र तथा लिखित कथन में किए गए प्रतिवादों को प्रस्तुत किया। विद्वान मुंसिफ ने अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य एवं दस्तावेज पर विचार करने के बाद बी॰ बी॰ सी॰ अधिनियम की धारा 11 (1) (d) के अधीन लिए गए आधारों पर विचार करते हुए वादी के पक्ष में वाद डिक्री किया और धारा 11 (1) (c) से संबंधित विवाद्यक वादी के विरुद्ध

विनिश्चित किया। तब प्रतिवादी ने जिला न्यायाधीश, कोडरमा के समक्ष बेदखली (टी॰) अपील सं॰ 4/2010 दाखिल किया जिसे खारिज किया गया था और विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं आदेश मान्य ठहराया गया था, अत: यह द्वितीय अपील की गयी है।

8. मुख्यत: यह प्रतिवाद किया गया है कि किराएदारी मासिक नहीं थी बल्कि वादी जो एक कंपनी है प्रतिवादी के विरुद्ध वाद परिसर के उपयोग एवं अधिभोग के लिए बिल दे रही थी। वादी द्वारा अपनायी गयी प्रथा यह थी कि वह प्रत्येक माह का बिल नहीं दे रहा था। अत:, दोनों अवर न्यायालयों ने विवाद्यक पर गलत रूप से विचार किया और इसलिए इस अपील को विनिश्चित करने के लिए विधिक सारवान प्रश्न अंतर्ग्रस्त है।

9. प्रत्यर्थी वादी के लिए उपस्थित अधिवक्ता ने आपत्ति किया है और निवेदन किया है कि प्रतिवादी-अपीलार्थी मासिक रूप से किराएदार था और प्रत्येक माह के लिए किराया का भुगतान करने की बाध्यता के अधीन था, यदि अभिव्यक्त करार नहीं था, कम से कम अगले माह के अंत तक।

10. प्रत्यर्थी वादी के लिए उपस्थित अधिवक्ता ने 1986 PLJR Page 46 (SC) एवं **AIR 2003 SC 1637** में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है।

11. चाहे जो भी हो, यह विवादित नहीं है कि प्रतिवादी अपीलार्थी वादी के अधीन किराएदार था और किराएदारी मासिक थी। आगे यह प्रतिवादी का स्वीकृत मामला है कि वह सितंबर, 2008 के लिए किराया का भुगतान करने में विफल रहा। दोनों न्यायालयों का समवर्ती निष्कर्ष है कि वादी एवं प्रतिवादी के बीच संबंध स्थापित किया गया है और प्रतिवादी-अपीलार्थी लगातार दो माह के लिए किराया का भुगतान करने में व्यतिक्रमी है। मैं नहीं पाता हूँ कि इस अपील के न्यायोचित निर्णय के लिए विधि के किसी सारवान प्रश्न को विरचित करने की आवश्यकता है।

12. परिणामस्वरुप, अपील गुणागुण रहित प्रतीत होती है और इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; jfo ukFk oek] U;k;efr

राजेश मेहता उर्फ राजन मेहता

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (Cr.) No. 298 of 2015. Decided on 2nd September, 2015.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 82 एवं 83—उद्घोषणा एवं संपत्ति की कुर्की जारी किया जाना—अवर न्यायालय ने न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना और मार्गदर्शक सिद्धांतों का अनुसरण किए बिना और कोई कारण दर्शाए अथवा कोई समाधान दर्ज किए बिना उद्घोषणा एवं संपत्ति कुर्की का आदेश जारी किया—आक्षेपित आदेश अपास्त। (पैरा 10)

निर्णयज विधि.—2012 (1) JLJ 156 (SC) : 2011 (4) JLJR 385 (SC); 2008 (1) JLJR 82 (SC)—Relied.

अधिवक्तागण.—M/s. Ritu Kumar & Niki Sinha, For the Petitioner; Mr. Pran Pranay, For the State.

आदेश

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब लेकर याची ने विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, डालटेनगंज द्वारा पारित दिनांक 20.3.2015 एवं

दिनांक 16.6.2015 के आदेशों की वैधता को चुनौती दिया है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 143, 341, 323, 353, 427, 447 एवं 290 के अधीन संस्थित पंडवा पी॰ एस॰ केस सं॰ 60 वर्ष 2013 से उद्भूत होने वाले जी॰ आर॰ केस सं॰ 2431 वर्ष 2013 के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'संहिता') की धाराओं 82 एवं 83 के अधीन याची के विरुद्ध उद्घोषणा एवं संपत्ति की कुर्की के लिए आदेशिका का जारी किया गया है।

2. अभियोजन मामला जो सूचक तत्कालीन पंडवा पुलिस थाना प्रभारी अधिकारी के स्व-बयान पर आधारित है संक्षेप में यह है कि दिनांक 21.12.2013 को अपराह्न 10.30 बजे यह सूचना प्राप्त करने के बाद कि उषा मार्टिन के मजदूरों एवं गाँववालों के बीच कुछ मतभेद होने के कारण NH 75 अवरुद्ध कर दिया गया है, सूचक वहाँ पहुँचा और देखा कि याची अन्य अभियुक्तों के साथ 150-200 लोगों की भीड़ का नेतृत्व कर रहा था और NH 75 अवरुद्ध कर दिया था। भीड़ के सदस्यों ने उषा मार्टिन के डंपर का शीशा तोड़ दिया। डंपर पर लदा कोयला वहाँ बिखरा पाया गया था। किसी प्रकार, अवरोध हटाया जा सका था।

3. याची द्वारा दाखिल पूरक शपथ पत्र के साथ संलग्न अवर न्यायालय के संपूर्ण ऑर्डरशीट से यह प्रतीत होता है कि दिनांक 24.12.2013 को मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, डालटेनगंज के समक्ष प्राथमिकी प्रस्तुत की गयी थी और तत्पश्चात मामला अभिलेख न्यायिक दंडाधिकारी के न्यायालय को अंतरित किया गया था और दिनांक 12.5.2014 के ऑर्डरशीट से यह प्रतीत होता है कि न्यायालय ने फाइनल फॉर्म की प्रतीक्षा करते हुए अगली तिथि दिनांक 2.9.2014 नियत किया था। दिनांक 2.9.2014 को, जैसा प्रतीत होता है, कोई ऑर्डरशीट नहीं रखा गया था। अगली तिथि पर ही अर्थात् दिनांक 20.3.2015 को याची एवं अन्य अभियुक्तों की गिरफ्तारी वारंट के निष्पादन रिपोर्ट के साथ संहिता की धारा 82 के अधीन उद्घोषणा जारी करने की प्रार्थना के साथ क्योंकि अभियुक्तगण अपनी गिरफ्तारी से बच रहे थे, अन्वेषण अधिकारी द्वारा तलब दाखिल किया गया था और अवर न्यायालय ने उद्घोषणा जारी किया। पुनः दिनांक 16.6.2015 को संहिता की धारा 83 के अधीन अभियुक्तों की संपत्ति की कुर्की के लिए आदेशिका जारी करने की प्रार्थना के साथ उद्घोषणा के निष्पादन रिपोर्ट के साथ अन्वेषण अधिकारी द्वारा तलब दाखिल किया गया था जिसे भी न्यायालय द्वारा जारी किया गया था।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुश्री निकी सिन्हा ने अवर न्यायालय के आदेशों का विरोध करते हुए गंभीर रूप से प्रतिवाद किया कि न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना अवर न्यायालय ने यंत्रवत संहिता की धारा 82 के अधीन उद्घोषणा और उसे फरार घोषित किए बिना संहिता की धारा 83 के अधीन याची की संपत्ति की कुर्की का आदेश जारी किया। यह निवेदन भी किया गया था कि रिट आवेदन के साथ संलग्न ऑर्डरशीट के परिशीलन मात्र पर यह प्रतीत होगा कि न्यायालय द्वारा कोई गिरफ्तारी वारंट जारी करने वाला ऑर्डरशीट अभिलेख पर नहीं है और अगर इसे जारी भी किया गया था, ऑर्डरशीट में इसपर कोई चर्चा नहीं है और पश्चातवर्ती आदेश जैसे उद्घोषणा एवं कुर्की जारी करने वाले आदेश कारण रहित हैं और **रघुवंश दीवानचंद भासिन बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं एक अन्य,** (2011)4 JLJR 385 (SC) मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए आज्ञा के आलोक में अभिखंडित किए जाने के दायी हैं।

5. पूर्वोक्त निवेदनों के विरुद्ध, राज्य का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री प्राण प्रणय ने प्रतिवाद किया कि केवल अन्वेषण अधिकारी द्वारा तलब जारी किए जाने के बाद संहिता की धाराओं

82 एवं 83 के अधीन आदेशिकाएँ जारी की गयी थी क्योंकि याची गिरफ्तारी से बच रहा था। इस दशा में, आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है।

6. दोनों अधिवक्ता को सुनने एवं मामले के अभिलेख तथा विशेषत: रिट आवेदन के साथ संलग्न ऑर्डरशीट की प्रमाणित प्रति के परिशीलन के बाद, मैं पाता हूँ कि मामला भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 143, 341, 323, 353, 427, 447 एवं 290 के अधीन दर्ज किया गया है, जहाँ भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 353 के अधीन विहित महत्तम दंडादेश दो वर्ष अथवा जुर्माना अथवा दोनों है किंतु संबंधित न्यायालय ने न्यायालय को वारंट के निष्पादन रिपोर्ट के साथ अन्वेषण अधिकारी द्वारा दाखिल तलब पर संहिता की धारा 82 के अधीन उद्घोषणा जारी किया और न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना और माननीय सर्वोच्च न्यायालय की आज्ञा के उल्लंघन में संहिता की धारा 83 के अधीन आदेशिका जारी किया। ऑर्डरशीट से यह भी प्रतीत नहीं होता है कि गिरफ्तारी वारंट कब जारी किया गया था। अभियुक्तों की उपस्थिति के लिए समन एवं जमानती वारंट जारी करने के लिए कदम नहीं उठाया गया था।

7. इंदर मोहन गोस्वामी एवं एक अन्य बनाम उत्तरांचल राज्य एवं अन्य, 2008 (1) JLJR 82 (SC), मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने ऐसी ही स्थिति पर विचार करते हुए पैराग्राफों 50 से 55 में निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

> *"50. xjrekurh okjaVk dk tkjh fd;k tkuk futh Lor=rk e gLr{ki vrxLr djrk gA fxj¶rkjh ,o dkjkokl dk vFk g 0;fDr d lokfèkd cgeY; vfèkdkj dk opu fd;k tkukA vr%] U;k;ky;k dk xjrekurh fxj¶rkjh okjaV tkjh dju d igy vR;Ur lkoèkku gkuk gkxkA***
>
> *51. ftl çdkj Lor=rk 0;fDr d fy, cgeY; g] mlh çdkj fofèk 0;oLFkk cuk, j[ku e lekt dk fgr cgeY; gA lH; lekt dh mUkjrhfork d fy, nkuk vR;Ur egRoi.k gA dHkh&dHkkj turk ,o jkT; d 0;kid fgr e dfri; vofèk d fy, 0;fDr dh Lor=rk de djuk fcydy vfuok;; cu tkrk g] doy rc xj&tekurh okjaV dk tkjh fd;k tkuk pkfg,A*
>
> ***xj&tekurh okjaV dc tkjh fd;k tkuk pkfg,A***
>
> *52. 0;fDr dk U;k;ky; yku d fy, xj&tekurh okjaV tkjh fd;k tkuk pkfg, tc leu vFkok tekurh okjaV dk bfPNr ifj.kke nu dh lHkkouk ugh gA ;g rc gk ldrk g tc(*
>
> *● ;g fo'okl djuk ;fDr;Dr g fd 0;fDr LoPNkiod U;k;ky; e mifLFkr ugh gkxk(vFkok*
>
> *● ifyl çkfèkdkjh ml ij leu rkehy dju d fy, 0;fDr dk iku e v{ke g(vFkok*
>
> *● ;g ekuk tkrk g fd 0;fDr fdlh dk gkfu igpk,xk ;fn ml rjUr vfHkj{kk e ugh fy;k tkrk gA*
>
> *53. tgk rd lHko gk] ;fn U;k;ky; dk er g fd U;k;ky; e 0;fDr dk mifLFkr djoku e leu i;kIr gkxk] leu vFkok tekurh okjaV dk çkFkfedrk nh tkuh pkfg,A rF;k d lefpr loh{k.k vkj food d i.k bLreky d fcuk vR;Ur xHkhj ifj.kkek ,o çHkkok tk okjaV tkjh dju ij gkr g d dkj.k okjaV] tekurh vFkok xj&tekurh tkjh ugh fd;k tkuk pkfg,A U;k;ky; dk vR;Ur lkoèkkuhiod ijh{k.k djuk gkxk fd D;k nkfMd ifjokn vFkok çkFkfedh çPNUu gr d lkFk nkf[ky fd;k x;k g ;k ughA*

54. ifjokn ekeyk e] igyh ckj] U;k;ky; dk ifjokn dh çfr d lkFk leu rkehy dju dk fun'k nuk pkfg,A ;fn vfHk;Dr leu l cprk çrhr gkrk g] U;k;ky; dk nljh ckj e tekurh okjUV tkjh djuk pkfg,A rhljh ckj e] tc U;k;ky; i.krh lr"V g fd vfHk;Dr vk'k;iod U;k;ky; dh dk;okgh l cp jgk g] xj&tekurh okjUV tkjh dju dh çfØ;k dk lgkjk fy;k tkuk pkfg,A futh Lor=rk lokifj g] vr% ge U;k;ky;k dk igyh ,o nljh ckj e xj&tekurh okjUV tkjh dju l ijgt dju d fy, lrd djr gA

*55. 'kfDr d Lofoodh gku d ukr vR;Ur lrdrk ,o lkoèkkuh d lkFk U;k;kfpr :i l bldk ç;kx djuk gkxkA U;k;ky; dk okjUV tkjh dju d igy futh Lor=rk ,o lekt d fgr dk lefpr :i l lrfyr djuk pkfg,A okjUV tkjh dju d fy, dkb dBkj Qkeyk ugh gk ldrk g fdr lkekU; fu;e d :i e tc rd vfHk;Dr dk t?kU; vijkèk dh dkfjrk d fy, vkjkfir ugh fd;k tkrk g vkj bldk Hk; g fd mld lk{; d lkFk NMNkM dju vFkok bl fou"V dju dh lHkkouk g vFkok mld fofèk dh çfØ;k l cp fudyu dh lHkkouk g] xj&tekurh okjUV tkjh dju l cpuk pkfg,A***

8. पूर्वोक्त मामले में दिये गये मार्गदर्शकों के आलोक में, बेहतर मूल्यांकन के लिए, संहिता की धारा 73 का एक संदर्भ जो वारंट निर्गत किये जाने का वर्णन करता है, आवश्यक है, जो निम्नवत् पठित है:–

"èkkjk 73. okj.V fdlh Hkh 0;fDr dk fufn"V gk ldx-*&(1) e[; U;kf;d eftLVV ;k çFke ox eftLVV fdlh fudy Hkkx fl)nk"k] mn?kkf"kr vijkèkh ;k fdlh ,l 0;fDr dh tk fdlh vtekurh; vijkèk d fy, vfHk;Dr g vkj fxj¶rkjh l cp jgk g] fxj¶rkjh dju d fy, okj.V viuh LFkkuh; vfèkdkfjrk d vUnj d fdlh Hkh 0;fDr dk fufn"V dj ldrk gA*

(2) ,l 0;fDr okj.V dh çkfIr dk fyf[kr :i e vfHkLohdkj djxk vkj ;fn og 0;fDr] ft ldh fxj¶rkjh d fy, okj.V tkjh fd;k x;k g] mld Hkkj lkèku d vèkhu fdlh Hkfe ;k vU; lifUk e g ;k ço'k djrk g rk og ml okj.V dk fu"iknu djxkA

*(3) tc og 0;fDr] ft ld fo:) ,lk okj.V tkjh fd;k x;k g] fxj¶rkj dj fy;k tkrk g] rc og okj.V lfgr fudVre ifyl vfèkdkjh d goky dj fn;k tk,xk] tk ;fn èkkjk 71 d vèkhu çfrHkfr ugh yh xb g rk] ml ml ekey e vfèkdkfjrk j[ku oky eftLVV d le{k fHkt ok,xkA***

9. उक्त धारा के कोरे परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि यह व्यक्तियों की तीन कोटियों अर्थात (i) फरार दोषसिद्ध, (ii) उद्घोषित अपराधी और (iii) व्यक्ति जो गैर जमानती अपराध का अभियुक्त है और गिरफ्तारी से बच रहा है पर गिरफ्तारी वारन्ट जारी करने के लिए दंडाधिकारी को कर्तव्य प्रदत्त करती है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **रघुवंश दीवानचंद भसिन बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं एक अन्य (ऊपर)** के मामले में गैर-जमानती वारन्ट के निष्पादन के विवाद्यक पर पैराग्राफ 9 में विचार किया जिसका पठन निम्नलिखित है:-

"9. bl ij 'kk;n gh tkj nu dh vko';drk g pfd xj tekurh okjUV dk fu"iknu 0;fDr dh Lor=rk de djuk vrxLr djrk g] fxj¶rkjh okjUV ;kf=d :i l tkjh ugh fd;k tk ldrk g] cfYd doy ;g lrf"V nt dju d ckn fd ekey d rF;k ,o ifjfLFkfr;k e] ;g vko';d cu x;k gA U;k;ky;k dk xj&tekurh okjUV tkjh dju dk fun'k nr g, vR;Ur lrd ,o lkoèkku jguk gkxk] ugh rk nk"ki.k fujèk Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 21 e ifjdfYir

*loèkkfud vkKk l budkj d rY; gkxkA lkFk gh] bl l budkj ugh fd;k tk ldrk g fd 0;fDr d dY;k.k ij lekt dk dY;k.k vfHkHkkoh gkxkA vr%] fofèk 0;oLFkk cuk, j[ku d fy, vkj lekt e fØ;k'khy lketL; cuk, j[ku d fy, ,d vkj 0;fDr rFkk nl jh vkj jkT; d vfèkdkj] Lor=rk ,o fo'k"kkfèkdkj d chp lryu LFkkfir djuk vko';d gA okLro e] ;g ,d tfVy dk; gA tlk U;k;efr dkjnktk dgr g] ^^,d vkj lkekftd vko';drk g fd vijkèk dk neu djuk gkxkA nljh vkj] lkekftd vko';drk g fd in d vgdkj }kjk fofèk dk mYy?ku ugh fd;k tk,xkA fdlh Hkh fodYi e [krjk gA** pkg tk Hkh gk] U;k;ky; tk ;g fofuf'pr dju d Lofood l ifji.k g fd D;k vfHk;Dr dh mifLFkfr tekurh vFkok xj&tekurh okjUV }kjk lfuf'pr dh tk ldrh g] dk ,d vkj fofèk çoru dh vko';drk vkj nljh vkj fofèk çoru ,tfl;k d gkFkk fujd'krk l ukxfjdk d lj{k.k d chp lryu LFkkfir djuk gA ekey dh luokbZ dh frfFk ij U;k;ky; e mifLFkr gku e mldh foQyrk ij vfHk;Dr d fo:) lefpr okjUV tkjh dju dh U;k;ky; dh vfèkdkfjrk ,o 'kfDr dk fookfnr ugh fd;k tk ldrk gA fQj Hkh] ,lh 'kfDr dk ç;kx vU; ckrk d lkFk vrxLr vijkèk dh çÑfr ,o xHkhjrk] vfHk;Dr d foxr vkpj.k] mldh vk; rFkk mld Qjkj gku dh lHkkouk dk è;ku e j[kdj U;k;kfpr :i l vkj u fd eueku :i l djuk gkxkA***

10. प्रकटत: अवर न्यायालय ने उक्त दो निर्णयों में दी गयी आज्ञा पर विचार नहीं किया है और न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना और मार्गदर्शक सिद्धांतों का अनुसरण किए बिना और कोई कारण दर्शाए बिना एवं कोई संतुष्टि दर्ज किए बिना संहिता की धाराओं 82 एवं 83 के अधीन क्रमश: उद्घोषणा एवं संपत्ति की कुर्की का आदेश जारी किया। राज्य के प्रतिनिधित्व कर रहे विद्वान अधिवक्ता का निवेदन कि यह दर्शाते हुए कि याची गिरफ्तारी से बच रहा था, अन्वेषण अधिकारी द्वारा दाखिल तलब पर उद्घोषणा एवं आदेशिका जारी की गयी थी, मैं उनके निवेदन में सार नहीं पाता हूँ। अत: मैं यह अभिनिर्धारित करने के लिए मजबूर हूँ कि आक्षेपित आदेश द्वारा उद्घोषणा एवं संपत्ति की कुर्की जारी करने वाले आदेश अपास्त किए जाने के दायी हैं।

11. परिणामस्वरुप, पूर्वोक्त रिट याचिका (दां०) अनुज्ञात की जाती है। उद्घोषणा एवं आदेशिका जारी करते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 20.3.2015 एवं 16.6.2015 के आदेश अभिखंडित किए जाते हैं। अवर न्यायालय को विधिक अनुरुप अग्रसर होने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; vferkHk dekj xlrk] U;k;efr

राजेश नायक एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 633 of 2015. Decided on 9th September, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 363 एवं 366—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 227—लड़की का अपहरण— उन्मोचन याचिका का अस्वीकरण–आरोप विरचित किया जा सकता है यदि मजबूत संदेह है–समस्त अभियुक्तों को याची द्वारा पीड़ित लड़की के अपहरण के संबंध में जानकारी थी–भा० दं० सं० की धाराओं 363 एवं 366 के अधीन अपराध से उन्मोचन

के लिए याची की प्रार्थना खारिज की गयी–अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 323, 504 एवं 506 के अधीन प्रथम दृष्टया मामला बनाने के लिए अभिलेख पर तात्विक साक्ष्य मौजूद है–संप्रेक्षण के साथ आवेदन निपटाया गया। (पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–M/s R.S. P. Sinha, R.K. Sinha, For the Petitioners; Mr. Ram Prakash Singh, For the State; Mr. Samir Kumar Lall, For the O.P. No.2.

आदेश

यह पुनरीक्षण एस॰ टी॰ सं॰ 94/2014 में विद्वान सत्र न्यायाधीश, सरायकेला द्वारा पारित दिनांक 18.4.2015 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 227 के अधीन उन्मोचन के लिए याचिका अस्वीकार कर दी गयी थी।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि विद्वान अवर न्यायालय यह अधिमूल्यन करने में विफल रहा है कि अधिकाधिक याची राजेश नायक के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 363 के अधीन आरोप बनता है और भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 366 के अधीन कोई अपराध नहीं बनता है, क्योंकि पीड़ित लड़की द्वारा कोई परिवर्णन अथवा बयान नहीं है कि उक्त राजेश नायक का उसके साथ शारीरिक संबंध था। आगे यह निवेदन किया गया है कि अवर न्यायालय यह अधिमूल्यन करने में विफल रहा है कि अन्य याचीगण अर्थात् भाष्कर नायक, शिखर नायक, रतन नायक एवं शंकर नायक के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 363 एवं 366 के अधीन अपराध आकृष्ट नहीं होता है और न ही उन्हें भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 34 की मदद से भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 363 एवं 366 के अधीन आरोप के लिए प्रतिनिधिक रूप से दायी अभिनिर्धारित किया जा सकता है। कि प्राथमिकी से यह स्पष्ट होगा कि राजेश नायक ही लड़की को किराए के मकान में ले गया था और पीड़ित लड़की ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 364 के अधीन अपने बयान में कहीं पर भी यह कथन नहीं किया है कि अन्य याचीगण ने याची राजेश नायक द्वारा अपहरण में षड्यन्त्र किया था अथवा मौनानुकूल थे। यह तर्क किया गया है कि विद्वान अवर न्यायालय ने यह निष्कर्ष देकर गलती किया है कि समस्त अभियुक्तों ने याची राजेश नायक के साथ पूर्व नियोजित तरीके से पीड़ित लड़की का अपहरण किया था और उसको किराए के घर में रखा था। कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर तात्विक साक्ष्य मौजूद नहीं है कि लड़की का अपहरण समस्त याचीगण के सामान्य आशय को अग्रसर करने में किया गया था। कि यदि अभिकथनों को सत्य माना जाता है, तब भी अधिकाधिक याचीगण भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 323, 504 एवं 506 के अधीन आरोपित किए जाने के दायी हैं।

3. विद्वान अधिवक्ता की सहायता से विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पीड़ित लड़की के बयान से यह स्पष्ट होगा कि याची राजेश नायक द्वारा उसको (पीड़ित) को लाने एवं किराए के घर में उसको रखने के बाद अगले दिन राजेश नायक का पिता एवं चाचा याची शंकर नायक के साथ आया था और पीड़ित लड़की से कहा कि चूँकि राजेश ने विवाह कर लिया था, वे उसे पुत्रवधु के रूप में रखेंगे और उनको कुछ दिनों के लिए किराए के घर में रहने के लिए कहा। यह निवेदन किया गया है कि तत्पश्चात याची राजेश नायक पीड़िता को सूचक के घर ले गया और वहाँ छोड़ दिया। उसके बाद जब सूचक याची राजेश नायक के माता–पिता से मिलने गयी थी, समस्त याचीगण ने उसको फटकारा, गाली दी और उस पर प्रहार किया। कि याचीगण का यह कृत्य दर्शाता है कि उन्होंने सामान्य आशय शेयर किया था और पीड़िता का अपहरण किया गया था जिसमें वे मौनानुकूल रहे, अतः वे उक्त अपराध के लिए प्रतिनिधिक रूप से दायी हैं।

4. सुना गया। आक्षेपित आदेश एवं अभिलेख पर मौजूद सामग्री का परिशीलन किया गया। यह सुनिश्चित है कि आरोप विरचित करने के चरण पर विचारण न्यायालय को अतिगामी जाँच करने अथवा

साक्ष्य की छानबीन करने अथवा तौलने मानों यह विचारण संचालित करने के प्रयोजन से है, की आवश्यकता नहीं है। कि आरोप विरचित किया जा सकता है यदि व्यक्ति/व्यक्तियों को अभिकथित अपराध के साथ जोड़ने के लिए अभिलेख पर मौजूद सामग्री से प्रतीत होने वाले मजबूत या गंभीर संदेह हैं। प्राथमिकी में परिवर्णन से और पीड़ित लड़की के बयान से एवं केस डायरी में पैराओं 5, 6 एवं 8 में गवाहों के बयान से यह स्पष्ट है कि याची राजेश नायक द्वारा पीड़ित लड़की का अपहरण किया गया था। उक्त राजेश नायक उसको किराए के घर में ले गया था। यह अभिकथित किया गया है कि उसने उसके माथा पर सिंदूर लगाया था। अपने बयान में पीड़ित लड़की ने कथन किया कि अगले दिन याची राजेश नायक का पिता एवं चाचा याची शंकर नायक के साथ उस स्थान पर आया था और उसको आश्वासन दिया था कि वे उसको पुत्रवधु के रूप में रखेंगे क्योंकि याची राजेश नायक ने उसके साथ विवाह किया है। पीड़ित लड़की के बयान का अर्थ इस अर्थ में नहीं लगाया जा सकता है कि समस्त याचीगण ने सामान्य आशय शेयर किया था अथवा सहअभियुक्त राजेश नायक के साथ उसका अपहरण करने में सामान्य आशय अग्रसर करने में कृत्य किया था। कि विद्वान सत्र न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया है कि अभिलेख पर मौजूद सामग्री दर्शाती है कि समस्त अभियुक्तों को राजेश नायक द्वारा पीड़ित लड़की के अपहरण के संबंध में जानकारी थी। विद्वान सत्र न्यायाधीश के ऐसे संप्रेक्षण का समर्थन किसी गवाह द्वारा नहीं किया गया है। इन तथ्यों एवं परिस्थितियों में, याचीगण अर्थात् भाष्कर नायक, शिखर नायक, रतन नायक और शंकर नायक को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 363 एवं 366 के अधीन आरोप से उन्मोचित किया जाता है। किंतु, उनके विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 323, 504 एवं 506 के अधीन प्रथम दृष्टया मामला बनाने के लिए अभिलेख पर तात्विक साक्ष्य मौजूद हैं। भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 363 एवं 366 के अधीन अपराध याची राजेश नायक के विरुद्ध प्रथम दृष्टया बनाया गया है। तद्नुसार, भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 363 एवं 366 के अधीन अपराध के लिए राजेश नायक की प्रार्थना एतद् द्वारा खारिज की जाती है। किंतु, याचीगण अर्थात् भाष्कर नायक, शिखर नायक, रतन नायक एवं शंकर नायक को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 363 एवं 366 के अधीन आरोप से उन्मोचित किया जाता है।

5. उक्त संप्रेक्षण एवं निर्देश के साथ आवेदन निपटाया जाता है।

---

ekuuh; jfo ukFk oek] U;k;efr

मो॰ कलीम अंसारी उर्फ मो॰ कलीमुल्ला

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 314 of 2015. Decided on 6th October, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 375, 376, 417 एवं 420—एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989—धारा 3 (1) (xii)—बलात्कार एवं छल–उन्मोचन याचिका का अस्वीकरण–सूचक को वयस्क परिपक्व महिला होने के नाते कृत्य, जिसकी अनुमति वह याची को शारीरिक संबंध स्थापित करने के लिए दे रही थी, के महत्व एवं नैतिक गुण को समझने के लिए पर्याप्त तौर पर बुद्धिमान थी–बलात्कार का अपराध गठित करने के लिए अवयव नहीं है–किंतु, छल का अपराध गठित करने के लिए अवयव है–यह याची के उन्मोचन के लिए सुयोग्य मामला नहीं है–याची के विरुद्ध अग्रसर होने के लिए मामला संबंधित न्यायालय के पास वापस भेजा गया। (पैराएँ 8 से 10)

निर्णयज विधि.–(2003) 4 SCC 46—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Nilesh Kumar, Amit Kumar Sinha, For the Petitioner; Mr. Shekhar Sinha, For the State; Mr. S.S. Choudhary, For the O.P. No. 2.

आदेश

याची विशेष (एस॰ सी॰/एस॰ टी॰) मामला सं॰ 1 वर्ष 2013 में अपर सत्र न्यायाधीश I–सह–विशेष न्यायाधीश, दुमका द्वारा पारित दिनांक 13.2.2015 के आदेश की वैधता को चुनौती देता है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन याची द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'संहिता') की धारा 227 के अधीन दाखिल याचिका अस्वीकार कर दी गयी है।

2. अनावश्यक विवरणों से रहित कथित किए जाने के लिए आवश्यक तथ्य ये हैं कि अपने पिता की मृत्यु के बाद सूचक रेणु देवी ने वर्ष 1997 में अनुकंपा आधार पर अपनी सेवा के लिए आवेदन दिया जब इस याची जो पड़ोस के घर में रह रहा था ने उसको उसकी सेवा पाने में मदद देने का आश्वासन दिया और उसे यह आश्वासन भी दिया कि वे विवाह करेंगे और आजीवन पति–पत्नी के रूप में रहेंगे। उस आश्वासन पर अभियुक्त याची ने उसके साथ शारीरिक संबंध विकसित किया किंतु परिवार के सदस्यों ने उनके संबंध का विरोध किया। इसके बाद याची उसे दुमका लाया और किराया के घर में रखा और उन्होंने अपना शारीरिक संबंध जारी रखा किंतु जब कभी भी सूचक ने उसे विवाह करने के लिए कहा, याची किसी न किसी बहाने इससे बचता रहा। यह भी अभिकथित किया गया है कि याची ने उसे आश्वासन दिया कि सेवा पाने के बाद वह उसके साथ विवाह करेगा किंतु दिनांक 9.6.2003 को काम पाने के बाद भी उसने उससे विवाह नहीं किया और अंत में उसके साथ रहने से इनकार कर दिया। याची ने झूठा वादा करके सदैव उसकी वेतन राशि उद्दापित किया। याची ने उसे भयभीत किया और एक लाख रुपये की मांग की और यदि राशि का भुगतान नहीं किया जाता है, उसने अपने यौन संबंध की पोर्न नंविडियोग्राफी तैयार करने और उसके परिवार के सदस्यों तथा उसके कार्यालय को विडियो भेजने की धमकी दी। भयभीत होकर उसने दिनांक 25.10.2011 को सेंट्रल कोऑपरेटिव बैंक, दुमका से इसे निकालकर साठ लाख रुपयों का भुगतान किया। तब भी याची उसको उसके मोबाइल फोन पर धमकी भरा एस॰ एम॰ एस॰ भेजा करता था।

3. उक्त सूचना के आधार पर, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 376/384 के अधीन एवं अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3 (xii) के अधीन भी दुमका टाउन पी॰ एस॰ केस सं॰ 67 वर्ष 2012 संस्थित किया गया था। पुलिस ने सम्यक् अन्वेषण के बाद पूर्वोक्त धाराओं में याची के विरुद्ध आरोप–पत्र दाखिल किया जिसके बाद मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था। सत्र न्यायालय के समक्ष, याची ने संहिता की धारा 227 के अधीन अपने उन्मोचन के लिए याचिका दाखिल किया जिसे यह अभिनिर्धारित करते हुए कि अभियुक्त के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420/406/384 के अधीन अपराध और धारा 376 के अधीन भी अपराध गठित करने के लिए प्रथम दृष्टया सामग्री और अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (भ्रष्टाचार निवारण) अधिनियम की धारा 3 (1) (xii) के अधीन भी प्रथम दृष्टया सामग्री उपलब्ध है, दिनांक 13.2.2015 के आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री निलेश कुमार ने विकृत एवं विधि में दोषपूर्ण के रूप में आक्षेपित आदेश का विरोध करते हुए गंभीर रूप से प्रतिवाद किया कि सूचक को 35 वर्ष की वयस्क महिला होने के नाते और पर्याप्त बुद्धि रखने के नाते भय अथवा भ्रम के अधीन यौन संभोग की अपनी अनुमति देता हुआ नहीं कहा जा सकता है। यह भी प्रतिवाद किया गया था कि उन्होंने विवाह संपन्न

किया था यद्यपि वे दो भिन्न समुदायों के सदस्य थे और एक ही घर में रह रहे थे जो इस तथ्य से प्रतीत होगा कि सूचक की जीवन बीमा पॉलिसी में याची को नाम निर्देशिती के रूप में दर्शाया गया था और भारत के निर्वाचन आयोग द्वारा जारी पहचान पत्र में उसे इस याची की पत्नी के रूप में दर्शाया गया था। यह निवेदन भी किया गया था कि दी गयी परिस्थितियों के अधीन यदि कोई अपराध बनता भी है, यह केवल भारतीय दंड संहिता की धारा 417 के अधीन था और भ्रम के अधीन बलात्कार का एवं धन की मांग का अभिकथन याची पर दबाव डालने के लिए किया गया है जो बिल्कुल झूठा एवं आधारहीन है। विद्वान अधिवक्ता ने अपने प्रतिवाद के समर्थन में **उदय बनाम कर्नाटक राज्य, (2003)4 SCC 46,** मामले पर विश्वास किया। यह निवेदन भी किया गया था कि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम के किसी प्रावधान के अधीन याची के विरुद्ध कोई मामला नहीं बनता है और प्राथमिकी में भी उक्त अधिनियम के अधीन अपराध गठित करने के लिए अवयव नहीं हैं।

5. पूर्वोक्त निवेदनों के विपरीत, राज्य का प्रतिनिधित्व कर रहे विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय ने याची की उन्मोचन प्रार्थना अस्वीकार करते हुए सही प्रकार से अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार किया और याची के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त प्रथम दृष्टया सामग्री पाया। यह निवेदन भी किया गया था कि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम के प्रावधान के अधीन अपराध गठित करने के लिए जिम्मेदार अवयव अभिलेख पर उपलब्ध है और यह अतिगामी जाँच करने अथवा यह देखने के लिए कि क्या विचारण का अंत दोषसिद्धि अथवा दोषमुक्ति में होगा का चरण नहीं है।

6. अधिवक्ता के परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करने के पहले भारतीय दंड संहिता के प्रासंगिक प्रावधान अर्थात् धारा 375 का परीक्षण करना आवश्यक है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*"375. **cykRlx-**&tk i:"k ,rfLeui'pkr vioknfnr n'kk d flok; fdlh L=h d lkFk fuEufyf[kr Ng Hkkfr dh ifjfLFkfr;k e l fdlh ifjfLFkfr e eFku djrk gA og i:"k ^^cykRlx** djrk g] ;g dgk tkrk g%&*

igyk-&ml L=h dh bPNk d fo:)A

nljk-&ml L=h dh lEefr d fcukA

rhljk-&ml L=h dh lEefr l] tcfd mldh lEefr] ml ;k ,l fdlh 0;fDr dk] ftll og fgrc) g] eR; ;k migfr d Hk; e Mky dj vfHkikIr dh xb gA

pkFkk-&ml L=h d lEefr l] tcfd og i#"k ;g tkurk g fd og ml L=h dk ifr ugh g vkj ml L=h u lEefr blfy, nh g fd og fo'okl djrh g] fd og ,lk i#"k g ftll og fofèkiod fookfgr g ;k fookfgr gku dk fo'okl djrh gA

ikpok-&ml L=h dh lEefr l] tcfd ,lh lEefr nu d le; og foÑfrfpÙk ;k eÙkrk d dkj.k ;k ml i:"k }kjk 0;fDrxr :i e ;k fdlh vU; 0;fDr d ekè;e l dkb lKk 'kU; dkjh ;k vLokLF;dj inkFk fn, tku d dkj.k] ml ckr dh] ftld ckj e og lEefr nrh g] iÑfr vkj ifj.kkek dk le>u e vleFk gA

NBk-&ml L=h d lEefr d fcuk lEefr d tcfd og lkyg o"k l de vk; dh gA

***Li"Vhdj.k-**&cykRlx d vijkèk d fy, vko';d eFku xfBr dju d fy, io'ku i;kIr gA*

*vi**okn**-&i :"k dk viuh iRuh d lkFk eFku cykRlx ugh gA tcfd iRuh iUng o"k l de vk; dh ugh gA***

7. पूर्वोक्त प्रावधान के कोरे पठन से यह स्पष्ट है कि शब्द 'सहमति' का इस मामले में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक पर व्यापक प्रभाव है। तृतीय, चतुर्थ एवं पंचम कोटि जिन्हें उपर संगणित किया गया है स्पष्टत: उन परिस्थितियों को अनुबंधित करती है जिनमें सूचक पीड़िता द्वारा दी गयी सहमति दूषित हो जाती है और विधि में सहमति के तुल्य नहीं है। यद्यपि शब्द सहमति को भारतीय दंड संहिता में कहीं भी परिभाषित नहीं किया गया है किंतु भारतीय दंड संहिता की धारा 90 भय अथवा तथ्य के भ्रम के अधीन दी गयी सहमति पर विचार करती है। अत:, मामले के समुचित न्यायनिर्णयन के लिए धारा 90 निर्दिष्ट करना आवश्यक है जिसका पठन निम्नलिखित है:

*"90. **lEefr] ftld lcèk e ;g Kkr gk fd og Hk; ;k Hke d vèkhu nh xb g**-&dkb lEefr ,lh ugh g tlh bl lfgrk dh fdlh èkkjk l vk'kf;r g] ;fn og lEefr fdlh 0;fDr u {kfr] Hk; d vèkhu] ;k rF; d Hke d vèkhu nh gk] vkj ;fn dk; dju okyk 0;fDr ;g tkurk gk ;k mld ikl fo'okl dju dk dkj.k gk fd ,l Hk; ;k Hke d ifj.kkeLo:i og lEefr nh xb Fkh(vFkok*

mUeÙk 0;fDr dh lEefr

;fn og lEefr ,l 0;fDr u nh gk tk fpÙkfoÑfr ;k eÙkrk d dkj.k mI ckr dh] ftld fy, og viuh lEefr nrk g] çÑfr vkj ifj.kke dk le>u e vc vleFk gk(vFkok

f'k'k dh lEefr

*tc rd fd lnHk l rRçfrdy çrhr u gk] ;fn og lEefr ,l 0;fDr u nh gk tk ckjg o"k l de vk; dk gA***

8. वर्तमान मामले में, यह प्रतीत होता है कि सूचक पर्याप्त बुद्धि की 35 वर्षीय वयस्क परिपक्व महिला थी जो कृत्य जिसकी अनुमति वह याची को शारीरिक संबंध स्थापित करने के लिए दे रही थी, के महत्व एवं नैतिक गुण को समझती थी। साक्ष्य में भी यह आया है कि वह लंबी अवधि तक याची के साथ रही और अपना शारीरिक संबंध जारी रखा। उसने इसे गुप्त रखा और वे पति-पत्नी की तरह रहे और उसने याची की प्रवृत्ति का विरोध कभी नहीं किया और वस्तुत: उसने प्रतिरोध एवं सहमति के बीच स्वतंत्र रूप से चुनाव किया। तथ्य के भ्रम के अर्थ के अंतर्गत आने के लिए तथ्य की निकट प्रासंगिकता होनी होगी। वर्तमान मामले में, दोनों एक ही घर में अनेक वर्षों तक पति-पत्नी के रूप में रहे यद्यपि निश्चयात्मक रूप से यह सिद्ध करने के लिए साक्ष्य नहीं है कि याची सूचक से विवाह करने का आशय नहीं रखता था बल्कि यह प्रतीत होता है कि विवाह परिवार के सदस्यों के विरोध अथवा भय के कारण संपन्न नहीं किया गया था क्योंकि जातिगत विचारों के कारण विवाह मुश्किल था किंतु फिर भी उन्होंने पति-पत्नी के रूप में अपना संबंध जारी रखा। उक्त समस्त परिस्थितियाँ इस न्यायालय को इस निष्कर्ष की ओर ले जाती हैं कि उसने स्वतंत्र रूप से स्वेच्छापूर्वक और सचेत रूप से याची के साथ यौन संबंध की अनुमति दी और उसकी सहमति तथ्य के किसी भ्रम का परिणाम नहीं थी। **उदय बनाम कर्नाटक राज्य (ऊपर)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने लगभग समरुप स्थिति पर विचार करते हुए पैराग्राफ 21 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

^^vr% ;g çrhr gkrk g fd U;kf;d er dh lolEefr bl nf"Vdk.k d i{k e g fd vfHk;kD=h }kjk mI 0;fDr d lkFk ftld lkFk og xgu çe djrh Fkh] bl oknk ij fd og ckn dh frfFk ij mll fookg djxk] ;ku lHkkx dju d fy,

*nh x;h lgefr rF; d Hke d vèkhu ugh nh tk ldrh gA >Bk oknk lfgrk d vFk d vrxr rF; ugh gA ge bl nf"Vdk.k d lkFk lger gku d bPNd g fdr ge tkMuk gkxk fd ;g fofuf'pr dju d fy, dBkj Qkeyk ugh g fd D;k ;ku lHkkx d fy, vfHk;kD=h }kjk nh x;h lgefr LofPNd g vFkok bl rF; d Hke d vèkhu fn;k x;k gA vfre fo'y"k.k e] U;k;ky;k }kjk vfèkdfFkr ijh{kk, vfèkdkfèkd lgefr d ç'u ij fopkj djr g, U;kf;d food d fy, ekxn'kd g] fdr U;k;ky; dk çR;d ekey e viu le{k iLrr lk{; vkj bn&fxn dh ifjfLFkfr;k ij fdlh fu"d"k ij vku d igy fopkj djuk gkxk D;kfd çR;d ekey d viu fofp= rF; gkr g ft ldk bl ç'u ij çHkko gk ldrk Fkk fd D;k lgefr LofPNd Fkh vFkok rF; d Hke d vèkhu nh x;h FkhA bl bl rF; dk nf"V e j[kr g, fd vijkèk d çR;d vo;o] lgefr dh vuifLFkfr mue l ,d g] dk fl) dju dk Hkkj vfHk;ktu ij g] lk{; dk Hkh rkyuk gkxkA***

9. उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में मैं पाता हूँ कि अभियोक्त्री के पास वयस्क महिला होने के कारण इसका महत्व समझने की पर्याप्त बुद्धि थी और वह शारीरिक संबंध स्थापित करने में याची के प्रति सहमतिपूर्ण पक्ष थी। अत:, मैं भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के अधीन अपराध गठित करने के लिए कोई अवयव नहीं पाता हूँ। किंतु, याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 415 के अधीन छल का अपराध गठित करने वाले अवयव प्रतीत होता हैं जो भारतीय दंड संहिता की धारा 417 के अधीन दंडनीय हैं। जहाँ तक अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम के अधीन उद्यापन एवं छल के अभिकथनों का संबंध है, मेरे मत में अवर न्यायालय द्वारा दर्ज निष्कर्ष में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

10. तथ्यों एवं परिस्थितियों को ध्यान में रखकर, मैं इसे संहिता की धारा 227 के अधीन याची को उन्मोचित करने के लिए सुयोग्य मामला नहीं पाता हूँ। अत: उपर की गयी चर्चा के आलोक में विधि के अनुरुप अभियुक्त याची के विरुद्ध अग्रसर होने के लिए मामला संबंधित न्यायालय को वापस भेजा जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

रंजीत कुमार सिन्हा एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 1566 of 2013 with I.A. No. 4657 of 2015. Decided on 15th September, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406, 417, 419, 420, 467, 471, 120B एवं 34—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग, छल, कूटरचना एवं षडयन्त्र—मामला पक्षों के बीच व्यावसायिक संव्यवहार से उद्भूत होता है—याचीगण के विरुद्ध व्यवसाय में भाग लेने का कोई अभिवचन नहीं है—याचीगण का अभियोजन बिल्कुल अनावश्यक है और विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है—दांडिक कार्यवाही अभिखंडित। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.—M/s Mahesh Prasad Sinha, Sumit Subhash Sinha, For the Petitioners; Mr. Priyadarshi, For the State; Mr. M.B. Lal, For the O.P. No. 2.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याचीगण ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 417, 419, 420, 467, 471, 120B एवं 34 के अधीन अभिकथित अपराध के लिए धनबाद पी॰ एस॰ केस सं॰ 392 वर्ष 2012 जी॰ आर॰ सं॰ 1581 वर्ष 2012 के तत्सम, में उनके विरुद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए यह आवेदन दाखिल किया है।

3. धनबाद पी॰ एस॰ केस सं॰ 392 वर्ष 2012 में प्राथमिकी अभिलेख पर लायी गयी, जो दर्शाती है कि मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद के न्यायालय में विरोधी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा दाखिल परिवाद मामले के आधार पर पुलिस मामला संस्थित किया गया था। परिवाद मामले में, यह अभिकथित किया गया है कि परिवादी ने सह-अभियुक्त आलोक राज के साथ संविदा किया जिसे कुछ खुदाई काम के लिए किसी रॉयल इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड, बरकाकाना द्वारा कार्य आदेश आवंटित किया गया था। चूँकि उक्त आलोक राज को निधि की कमी थी, यह अभिकथित किया गया है कि आलोक राज ने याचीगण सहित अभियुक्तों के साथ उक्त व्यवसाय में धन का निवेश करने के लिए उससे अनुरोध करने के लिए परिवादी के पास गया। परिवाद याचिका में यह अभिकथन भी किया गया है कि उनलोगों ने इसके लिए एक करार किया तथा कुल 8,00,000/- रुपये पक्षों के बीच करार के बाद भागीदारी में व्यवसाय करने के लिए उक्त आलोक राज को धन दिया गया था और उक्त आलोक राज ने उसको दी गयी अग्रिम राशि के लिए प्रतिभूति के रूप में चार चेक भी दिया था। परिवाद याचिका में अभिकथित किया गया है कि काम निष्पादित किया गया था और आलोक राज को धन का भुगतान किया गया था, किंतु परिवादी के हिस्सा का भुगतान नहीं किया गया था और तद्नुसार, परिवाद याचिका दाखिल की गयी थी, जिसे सी॰ पी॰ केस सं॰ 737 वर्ष 2012 के रूप में दर्ज किया गया था। उक्त परिवाद मामला पुलिस मामला के संस्थापन के लिए भेजा गया था, जिसके आधार पर धनबाद पी॰ एस॰ केस सं॰ 392 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ सं॰ 1581 वर्ष 2012 के तत्सम, संस्थित किया गया था। परिवाद याचिका स्पष्टत: दर्शाती है कि दोनों याचीगण सगे भाई हैं और उनमें से एक मुख्य अभियुक्त आलोक राज का साला/बहनोई है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याचीगण को इस मामले में झूठा आलिप्त किया गया है और उनका आलोक राज के व्यवसाय के साथ कोई संबंध नहीं है। यह निवेदन भी किया गया है कि मुख्य अभियुक्त का साला/बहनोई होने के नाते इस मामले में याचीगण को झूठा आलिप्त किया गया है। विद्वान अधिवक्ता ने खुदाई के उक्त काम के निष्पादन के लिए आलोक राज एवं परिवादी के बीच करार तथा उनके बीच भागीदारी विलेख अभिलेख पर यह दर्शाने के लिए लाया है कि याचीगण करार अथवा भागीदारी विलेख के पक्ष नहीं हैं। इन दस्तावेजों से यह भी इंगित किया गया है कि इन याचीगण ने गवाहों के रूप में भी इन दोनों दस्तावेजों पर हस्ताक्षर नहीं किया है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि जो भी अभिकथन है, वह केवल आलोक राज के विरुद्ध है और याचीगण को झूठा आलिप्त करते हुए याचीगण को इस मामले में अभियुक्त बनाया गया है। यह निवेदन भी किया गया है कि अन्यथा भी, अभिकथन पक्षों के बीच व्यावसायिक संव्यवहार से संबंधित हैं और पक्षों के बीच विवाद, यदि हो, सिविल प्रकृति का है और तद्नुसार, यह याचीगण के विरुद्ध संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित करने योग्य मामला है।

5. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता एवं विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि परिवाद याचिका में याचीगण के विरुद्ध अभिकथनों की दृष्टि में याचीगण के विरुद्ध स्पष्टत: अपराध बनाया गया है और इस चरण पर याचीगण के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है।

6. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि इस मामले में अभिकथन केवल अभियुक्त आलोक राज के विरुद्ध है। परिवाद याचिका स्पष्टत: दर्शाती है कि व्यवसाय करने के लिए जो भी करार था, वह परिवादी एवं आलोक राज के बीच था जिसके साथ भागीदारी विलेख भी था। परिवादी ने केवल आलोक राज के साथ भागीदारी व्यवसाय में धन का निवेश किया था और धन भी केवल उसको अभिकथित रूप से दिया गया था। याचीगण न तो करार के पक्ष हैं और न ही भागीदारी विलेख के और उन्होंने गवाहों की हैसियत में भी इन दस्तावेजों पर हस्ताक्षर नहीं किया है। मामले की उस दृष्टि में, चूँकि मामला पक्षों के बीच संव्यवहार से उद्भूत होता है, जिसमें याचीगण के विरुद्ध व्यवसाय में भाग लेने का कोई अभिकथन नहीं है, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याचीगण का दांडिक अभियोजन बिल्कुल अनावश्यक है और विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

7. पूर्वोक्त कारणों से, धनबाद पी॰ एस॰ केस सं॰ 392 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ सं॰ 1581 वर्ष 2012 के तत्सम, में केवल याचीगण के प्रति संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

8. इस दांडिक विविध याचिका को अनुज्ञात किया जाता है। परिणामस्वरुप, पूर्वोक्त अंतर्वर्ती आवेदन भी निपटाया जाता है।

---

ekuuh; vferkHk dekj xlrk] U;k;efr

मनीष मित्तल

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1627 of 2014. Decided on 7th October, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406/34—एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989—धारा 3 (x) सहपठित एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ नियमावली, 1995 का नियम 7—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—जाति नाम से गाली–याची के विरुद्ध अभिकथित अपराधों के अवयव निर्मित होते हैं–दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन अंतर्निहित अधिकारिता के प्रयोग में न्यायालय अभियुक्त के बचाव पर विचार अथवा अभियोग के गुणागुण के संबंध में जाँच अथवा लघु विचारण नहीं कर सकता है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 3 से 5)

अधिवक्तागण.–M/s. Talat Parween & Shish Alam, For the Petitioner; APP., For the State; M/s M. Khan, Amit Kumar, Ajay Kumar, For the O.P. No. 2.

आदेश

यह आवेदन धनबाद पी॰ एस॰ केस सं॰ 915/2013 (जी॰ आर॰ सं॰ 3863/2013) के संबंध में भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 406/34 एवं अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धाराओं 3 (x)/4 के अधीन प्राथमिकी के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि प्राथमिकी के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि विवाद सिविल प्रकृति का है क्योंकि मजदूरी का भुगतान न किये जाने पर वर्तमान मामला संस्थित किया

गया है। कि घटना दिनांक 10.9.2012 को हुई थी जबकि प्राथमिकी दिनांक 11.9.2013 को दर्ज की गयी थी और विलंब के लिए स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है। यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान मामला मजदूरी का भुगतान करने के लिए याची पर दबाव डालने के लिए संस्थित किया गया है और इस न्यायालय ने दिनांक 3.12.2014 के आदेश द्वारा याची को ब्याज के साथ कुल देयों का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था और याची ने इस न्यायालय के रजिस्ट्रार जेनरल के समक्ष सूचक के नाम में डिमांड ड्राफ्ट के रूप में 1,50,000/- रुपया जमा किया था। कि वर्तमान मामले में सिविल विवाद को दांडिक अपराध का रंग दिया जा रहा है और इस प्रकार के मामलों का संस्थापन विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग है। कि सिविल विवाद सुलझाने के लिए शार्टकट पद्धति के रूप में दांडिक कार्यवाही का सहारा नहीं लिया जा सकता है और ऐसा दांडिक मामला अभियुक्त जिसने आदेश का अनुपालन किया है की स्वतंत्रता का अतिलंघन करते हुए न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के तुल्य होगा।

याची के विद्वान अधिवक्ता का दूसरा तर्क यह है कि प्राथमिकी ए॰ एस॰ आई॰ श्रेणी के पुलिस अधिकारी द्वारा दर्ज की गयी थी जो अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) नियमावली, 1995 के नियम 7 के निबंधनानुसार सक्षम नहीं है। इस आधार पर भी प्राथमिकी अभिखंडित किए जाने योग्य है।

3. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ की सहायता से विपक्षी पक्षकार की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री मुख्तार खान ने निवेदन किया है कि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 9 के मुताबिक राज्य सरकार राज्य सरकार के किसी अधिकारी पर शक्ति प्रदत्त कर सकती है यदि यह व्यक्तियों की गिरफ्तारी, अन्वेषण एवं किसी विशेष न्यायालय के समक्ष अभियोजन के संबंध में इसे आवश्यक अथवा समीचीन समझती है और उक्त शक्ति के अनुसरण में राज्य सरकार ने दिनांक 24.11.2012 की अधिसूचना द्वारा इंस्पेक्टर एवं ए॰ एस॰ आई॰ को अधिनियम की धारा 9 के निबंधनानुसार मामलों का अन्वेषण एवं अभियोजन करने के लिए सशक्त बनाया है। यह प्रतिवाद किया गया है कि प्राथमिकी के परिवर्णन से यह स्पष्ट है कि इस याची ने सार्वजनिक स्थल अर्थात न्यायालय परिसर में सूचक को उसके जाति नाम से गाली दिया है और मजदूरी का भुगतान नहीं किया है, तद्नुसार, भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 406, 323, 341 एवं 34 तथा अधिनियम की धारा 3 (x) के अधीन याची के विरुद्ध अपराध के अवयव निर्मित होते हैं और ऐसी परिस्थिति में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन शक्ति का अवलंब नहीं लिया जा सकता है।

4. सुना गया। अभिलेख पर मौजूद सामग्री एवं विपक्षी पक्षकार के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत अधिसूचना का परिशीलन किया गया। दिनांक 24.11.2012 की अधिसूचना के मुताबिक, इंस्पेक्टर, एस॰ आई॰ एवं ए॰ एस॰ आई॰ की श्रेणी के अधिकारी पर अधिनियम के अधीन मामलों का अन्वेषण एवं अभियोजन करने के लिए एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम की धारा 9 के अधीन शक्ति प्रदत्त की गयी है। प्राथमिकी दिनांक 11.9.2013 को दर्ज की गयी थी। यह सुनिश्चित है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन शक्ति का प्रयोग किफायत से एवं सतर्कतापूर्वक करना होगा। प्राथमिकी में विवरण के मुताबिक यह स्पष्ट है कि भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 406, 323, 341 एवं 34 के अधीन और एस॰ सी॰/एस॰ टी॰ अधिनियम की धारा 3 (x) के अधीन याची के विरुद्ध अपराध के अवयव बनाए गए हैं। किंतु, अधिनियम की धारा 4 के अधीन अपराध प्रयोज्य नहीं है। यह भी सुनिश्चित है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन अंतर्निहित अधिकारिता के प्रयोग में अभियुक्त के बचाव पर विचार अथवा अभियोग के गुणागुण के संबंध में जाँच अथवा लघु विचारण अथवा इस चरण पर अतिगामी जाँच करना न्यायालय के लिए समुचित नहीं है।

5. इन तथ्यों एवं परिस्थितियों में, आवेदन संपोषनीय नहीं है और इसे एतद्द्वारा खारिज किया जाता है।

6. रजिस्ट्रार जनरल इस मामले के सूचक के पक्ष में याची द्वारा इस प्रकार जमा की गयी राशि निर्मुक्त करेंगे।

ekuuh; jfo ukFk oek] U;k;efr

नन्हकू गंझू

cuke

झारखंड राज्य

W.P. (Cr.) No. 272 of 2015. Decided on 2nd September, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 414—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 73, 82 एवं 83—चुरायी गई संपत्ति पर कब्जा–गिरफ्तारी वारंट, उद्घोषणा एवं संपत्ति की कुर्की–समन एवं जमानती वारंट जारी करने के लिए कदम नहीं उठाया गया–गैर जमानती वारंट, उद्घोषणा एवं संपत्ति की कुर्की जारी करने वाले आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने के दायी हैं–अवर न्यायालयों को विधि के अनुरुप अग्रसर होने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 6, 10 एवं 11)

निर्णयज विधि.–2012 (1) JLJ 156 (SC) : 2011 (4) JLJR 385 (SC); 2008 (1) JLJR 82 (SC)—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s M.K. Sinha & Amit Sinha, For the Petitioners; Mr. Abhay Kumar Mishra, For the State.

आदेश

याची ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब लेकर अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, लातेहार द्वारा पारित दिनांक 31.1.2015, 20.2.2015 एवं 17.4.2015 के आदेशों की वैधता को चुनौती दिया है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन याची के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 414 के अधीन संस्थित चंदवा पी॰ एस॰ केस सं॰ 110 वर्ष 2014 से उद्भूत होने वाले जी॰ आर॰ केस सं॰ 802 वर्ष 2014 के संबंध में दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'संहिता') की धाराओं 73, 82 एवं 83 के अधीन गिरफ्तारी वारंट, उद्घोषणा एवं संपत्ति की कुर्की की प्रक्रिया/आदेशिका जारी की गयी है।

2. अभियोजन मामला जो इस रिट आवेदन में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक के न्यायनिर्णयन के लिए प्रासंगिक है संक्षेप में यह है कि ग्राम निन्द्रा, पी॰ एस॰ चंदवा के किसी चौकीदार की प्रेरणा पर पूर्वोक्त मामला इस अभिकथन के साथ संस्थित किया गया था कि न्यायालय की आदेशिका के निष्पादन के लिए जब वह दिनांक 17.10.2014 को किसी अभियुक्त बिरसाई जी उर्फ बिरसाई गंझू उर्फ उमेश गंझू उर्फ कमलेश गंझू के घर गया था, उसने अभियुक्त बिरसाई जी के घर के बगल में अवस्थित किसी नन्हकू गंझू के घर में रखे गये काठ के 20 टुकड़ों को पाया। पूछने पर, किसी ने कोई संतोषजनक उत्तर नहीं दिया किंतु किसी तरह उसे पता चला कि जंगल से अवैध रूप से पेड़ों को काटने के बाद याची नन्हकू गंझू ने काठ के इन प्लैंक को तैयार किया था।

3. अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि दिनांक 21.10.2014 को अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, लातेहार के समक्ष प्राथमिकी दर्ज की गयी थी और ऑर्डरशीट रखने के बाद मामले में अंतिम फॉर्म दाखिल करने के लिए नियत तिथि दिनांक 15.12.2014 थी किंतु यह प्रतीत होता है कि न्यायालय ने दिनांक 15.12.2014 का कोई ऑर्डरशीट नहीं रखा है और अगली तिथि पर अर्थात् दिनांक 31.1.2015 को अन्वेषण अधिकारी द्वारा दाखिल तलब पर इस याची के विरुद्ध गैर जमानती गिरफ्तारी वारंट जारी किया गया था। पुनः दिनांक 20.2.2015 को संहिता की धारा 82 के अधीन उद्घोषणा जारी करने की प्रार्थना के साथ अन्वेषण अधिकारी द्वारा गिरफ्तारी वारंट के निष्पादन रिपोर्ट के साथ नया तलब दाखिल किया

गया था। दिनांक 17.4.2015 को धारा 83 के अधीन आदेशिका जारी करने के लिए उद्घोषणा के निष्पादन रिपोर्ट के साथ अन्वेषण अधिकारी द्वारा पुनः तलब दाखिल किया गया था जिसे न्यायालय द्वारा जारी किया गया था।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री एम॰ के॰ सिन्हा ने अवर न्यायालय के आदेशों का विरोध करते हुए प्रतिवाद किया कि न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना अवर न्यायालय ने यांत्रिक रूप से गिरफ्तारी वारंट जारी किया जिसका अनुसरण संहिता की धारा 82 के अधीन उद्घोषणा द्वारा और संहिता की धारा 83 के अधीन फरार याची की संपत्ति के कुर्की के आदेश द्वारा किया गया था। यह निवेदन भी किया गया था कि रिट आवेदन के साथ संलग्न ऑर्डरशीट के परिशीलन मात्र पर यह प्रतीत होगा कि गिरफ्तारी वारंट जारी करने का आदेश और दो पश्चातवर्ती आदेश अर्थात् उद्घोषणा एवं कुर्की जारी करने वाले आदेश कारण रहित हैं और **रघुवंश दीवान चंदभासिन बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं एक अन्य,** (2011)4 JLJR 385 (SC) **[2012 (1) JLJ 156 (SC)]** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दी गयी आज्ञा के आलोक में अभिखंडित किए जाने के दायी हैं।

5. पूर्वोक्त निवेदनों के विपरीत, राज्य का प्रतिनिधित्व कर रहे विद्वान स्थायी अधिवक्ता श्री अभय कुमार मिश्रा ने प्रतिवाद किया कि केवल अन्वेषण अधिकारी द्वारा तलब दाखिल किए जाने के बाद गिरफ्तारी वारंट जारी किया गया था क्योंकि याची गिरफ्तारी से बच रहा था और गिरफ्तारी वारंट के निष्पादन रिपोर्ट की प्रस्तुति के बाद संहिता की धाराओं 82 एवं 83 के अधीन आदेशिकाओं को जारी करने पश्चातवर्ती आदेशों को जारी किया गया था। इस दशा में, आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है।

6. दोनों अधिवक्ता को सुनने के बाद और मामले के अभिलेख विशेषतः रिट आवेदन के साथ संलग्न ऑर्डरशीट की प्रमाणित प्रति का परिशीलन करने के बाद, मैं पाता हूँ कि मामला केवल भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 414 के अधीन दर्ज किया गया है और इस अपराध के लिए विहित महत्तम दंडादेश तीन वर्ष का कारावास अथवा जुर्माना अथवा दोनों है किंतु संबंधित न्यायालय ने समन एवं जमानती वारंट जारी करने के लिए कोई कदम उठाए बिना माननीय सर्वोच्च न्यायालय की आज्ञाओं का अनुसरण किए बिना अन्वेषण अधिकारी द्वारा दाखिल तलब पर याचीगण के विरुद्ध गैर जमानती गिरफ्तारी वारंट जारी किया और अगली तिथि पर ही जब अन्वेषण अधिकारी ने न्यायालय को वारंट का निष्पादन रिपोर्ट दिया और संहिता की धारा 82 के अधीन उद्घोषणा जारी करने के लिए प्रार्थना किया, न्यायिक विवेक के इस्तेमाल के बिना उद्घोषणा जारी किया गया और अगली तिथि पर ही संहिता की धारा 83 के अधीन आदेशिका भी जारी की गयी थी।

7. इंदर मोहन गोस्वामी एवं एक अन्य बनाम उत्तरांचल राज्य एवं अन्य, 2008 (1) JLJR 82 (SC), मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने ऐसी ही स्थिति पर विचार करते हुए पैराग्राफों 50 से 55 में निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

> *"50. xjtekurh okjUVk dk tkjh fd;k tkuk futh Lor=rk e gLr{ki vrxLr djrk gA fxj¶rkjh ,o dkjkokl dk vFk g 0;fDr d lokfèkd cgeY; vfèkdkj dk opu fd;k tkukA vr%] U;k;ky;k dk xjtekurh fxj¶rkjh okjUV tkjh dju d igy vR;Ur lkoèkku gkuk gkxkA***
>
> *51. ftl çdkj Lor=rk 0;fDr d fy, cgeY; g] mlh çdkj fofèk 0;oLFkk cuk, j[ku e lekt dk fgr cgeY; gA lH; lekt dh mÙkjthfork d fy, nkuk vR;Ur egRoi.k gA dHkh&dHkkj turk ,o jkT; d 0;kid fgr e dfri; vofèk*

d fy, 0;fDr dh Lor=rk de djuk fcydy vfuok;] cu tkrk g] doy rc xj&tekurh okjUV dk tkjh fd;k tkuk pkfg,A

xj&tekurh okjUV dc tkjh fd;k tkuk pkfg,A

52. 0;fDr dk U;k;ky; yku d fy, xj&tekurh okjUV tkjh fd;k tkuk pkfg, tc leu vFkok tekurh okjUV dk bfPNr ifj.kke nu dh lHkkouk ugh gA ;g rc gk ldrk g tc(

● ;g fo'okl djuk ;fDr;Dr g fd 0;fDr LoPNkiod U;k;ky; e mifLFkr ugh gkxk(vFkok

● ifyl çkfèkdkjh ml ij leu rkehy dju d fy, 0;fDr dk iku e v{ke g(vFkok

● ;g ekuk tkrk g fd 0;fDr fdlh dk gkfu igpk,xk ;fn ml rjUr vfHkj{kk e ugh fy;k tkrk gA

53. tgk rd lHko gk] ;fn U;k;ky; dk er g fd U;k;ky; e 0;fDr dk mifLFkr djoku e leu i;kIr gkxk] leu vFkok tekurh okjUV dk çkFkfedrk nh tkuh pkfg,A rF;k d lefpr loh{k.k vkj food d i.k bLreky d fcuk vR;Ur xHkhj ifj.kkek ,o çHkkok tk okjUV tkjh dju ij gkr g d dkj.k okjUV] tekurh vFkok xj&tekurh tkjh ugh fd;k tkuk pkfg,A U;k;ky; dk vR;Ur lkoèkkuhiod ijh{k.k djuk gkxk fd D;k nkfMd ifjokn vFkok çkFkfedh çPNUu gr d lkFk nkf[ky fd;k x;k g ;k ughA

54. ifjokn ekeyk e] igyh ckj] U;k;ky; dk ifjokn dh çfr d lkFk leu rkehy dju dk fun'k nuk pkfg,A ;fn vfHk;Dr leu l cprk çrhr gkrk g] U;k;ky; dk nljh ckj e tekurh okjUV tkjh djuk pkfg,A rhljh ckj e] tc U;k;ky; i.kr% lr"V g fd vfHk;Dr vk'k;iod U;k;ky; dh dk;okgh l cp jgk g] xj&tekurh okjUV tkjh dju dh çfØ;k dk lgkjk fy;k tkuk pkfg,A futh Lor=rk lokifj g] vr% ge U;k;ky;k dk igyh ,o nljh ckj e xj&tekurh okjUV tkjh dju l ijgt dju d fy, lrd djr gA

55. 'kfDr d Lofoodh gku d ukr vR;Ur lrdrk ,o lkoèkkuh d lkFk U;k;kfpr :i l bldk ç;kx djuk gkxkA U;k;ky; dk okjUV tkjh dju d igy futh Lor=rk ,o lekt d fgr dk lefpr :i l lrfyr djuk pkfg,A okjUV tkjh dju d fy, dkb dBkj Qkeyk ugh gk ldrk g fdr lkeU; fu;e d :i e tc rd vfHk;Dr dk t?kU; vijkèk dh dkfjrk d fy, vkjkfir ugh fd;k tkrk g vkj bldk Hk; g fd ml ld lk{; d lkFk NMNkM dju vFkok bl fou"V dju dh lHkkouk g vFkok ml fofèk dh çfØ;k l cp fudyu dh lHkkouk g] xj&tekurh okjUV tkjh dju l cpuk pkfg,A**

8. पूर्वोक्त मामले में दिये गये मार्गदर्शकों के आलोक में, बेहतर मूल्यांकन के लिए, संहिता की धारा 73 का एक संदर्भ जो वारंट निर्गत किये जाने का वर्णन करता है, आवश्यक है, जो निम्नवत् पठित है:–

"ekkjk 73. okj.V fdlh Hkh 0;fDr dk fufn"V gk ldx-&(1) e[; U;kf;d eftLVV ;k çFke ox eftLVV fdlh fudy Hkkx fl)nk"k] mn?kkf"kr vijkèkh ;k fdlh ,l 0;fDr dh tk fdlh vtekurh; vijkèk d fy, vfHk;Dr g vkj fxj¶rkjh l cp jgk g] fxj¶rkjh dju d fy, okj.V viuh LFkkuh; vfèkdkfjrk d vUnj d fdlh Hkh 0;fDr dk fufn"V dj ldrk gA

(2) ,l 0;fDr okj.V dh çkfIr dk fyf[kr :i e vfHkLohdkj djxk vkj ;fn og 0;fDr] ft ldh fxj¶rkjh d fy, okj.V tkjh fd;k x;k g] mld Hkkj lkèku d vèkhu fdlh Hkfe ;k vU; lifUk e g ;k ço'k djrk g rk og ml okj.V dk fu"iknu djxkA

*(3) tc og 0;fDr] ft ld fo:) ,lk okj.V tkjh fd;k x;k g] fxj¶rkj dj fy;k tkrk g] rc og okj.V lfgr fudVre ifyl vfèkdkjh d goky dj fn;k tk,xk] tk ;fn èkkjk 71 d vèkhu çfrHkfr ugh yh xb g rk] ml ml ekey e vfèkdkfjrk j[ku oky eftLVV d le{k fHktok,xkA***

9. उक्त धारा के कोरे परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि यह व्यक्तियों की तीन कोटियों अर्थात (i) फरार दोषसिद्ध, (ii) उद्घोषित अपराधी और (iii) व्यक्ति जो गैर-जमानती अपराध का अभियुक्त है और गिरफ्तारी से बच रहा है पर गिरफ्तारी वारन्ट जारी करने के लिए दंडाधिकारी को कर्तव्य प्रदत्त करती है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **रघुवंश दीवानचंद भसिन बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं एक अन्य (ऊपर)** के मामले में गैर-जमानती वारन्ट के निष्पादन के विवाद्यक पर पैराग्राफ 9 में विचार किया जिसका पठन निम्नलिखित है:-

*"9. bl ij 'kk;n gh tkj nu dh vko';drk g pfd xj&tekurh okjUV dk fu"iknu 0;fDr dh Lor=rk de djuk vrxLr djrk g] fxj¶rkjh okjUV ;kf=d :i l tkjh ugh fd;k tk ldrk g] cfYd doy ;g lrf"V nt dju d ckn fd ekey d rF;k ,o ifjfLFkfr;k e] ;g vko';d cu x;k gA U;k;ky;k dk xj&tekurh okjUV tkjh dju dk fun'k nr g, vR;Ur lrd ,o lkoèkku jguk gkxk] ugh rk nk"ki.k fujkèk Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 21 e ifjdfYir loèkkfud vkKk l budkj d rY; gkxkA lkFk gh] bll budkj ugh fd;k tk ldrk g fd 0;fDr d dY;k.k ij lekt dk dY;k.k vfHkHkkoh gkxkA vr% fofèk 0;oLFkk cuk, j[ku d fy, vkj lekt e fØ;k'khy lketL; cuk, j[ku d fy, ,d vkj 0;fDr rFkk nljh vkj jkT; d vfèkdkj] Lor=rk ,o fo'k"kkfèkdkj d chp lryu LFkkfir djuk vko';d gA okLro e] ;g ,d tfVy dk; gA tlk U;k;efr dkjnktk dgr g] ^^,d vkj lkekftd vko';drk g fd vijkèk dk neu djuk gkxkA nljh vkj] lkekftd vko';drk g fd in d vgdkj }kjk fofèk dk mYy?ku ugh fd;k tk,xkA fdlh Hkh fodYi e [krjk gA** pkg tk Hkh gk] U;k;ky; tk ;g fofuf'pr dju d Lofood l ifji.k g fd D;k vfHk;Dr dh mifLFkfr tekurh vFkok xj&tekurh okjUV }kjk lfuf'pr dh tk ldrh g] dk ,d vkj fofèk çoru dh vko';drk vkj nljh vkj fofèk çoru ,tfl;k d gkFkk fujd'krk l ukxfjdk d lj{k.k d chp lryu LFkkfir djuk gA ekey dh luokb dh frfFk ij U;k;ky; e mifLFkr gku e mldh foQyrk ij vfHk;Dr d fo:) lefpr okjUV tkjh dju dh U;k;ky; dh vfèkdkfjrk ,o 'kfDr dk fookfnr ugh fd;k tk ldrk gA fQj Hkh] ,lh 'kfDr dk ç;kx vU; ckrk d lkFk vrxLr vijkèk dh çÑfr ,o xHkhjrk] vfHk;Dr d foxr vkpj.k] mldh vk; rFkk mld Qjkj gku dh lHkkouk dk è;ku e j[kdj U;k;kfpr :i l vkj u fd eueku :i l djuk gkxkA***

10. प्रकटत: अवर न्यायालय ने उक्त दो निर्णयों में दी गयी आज्ञा पर विचार नहीं किया है और न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना और मार्गदर्शक सिद्धांतों का अनुसरण किए बिना अथवा कोई कारण दर्शाए अथवा कोई संतुष्टि दर्ज किए बिना गैर-जमानती वारंट जारी किया और बाद में संहिता की धाराओं 82 एवं 83 के अधीन क्रमश: उद्घोषणा एवं संपत्ति की कुर्की का आदेश पारित किया। विद्वान स्थायी अधिवक्ता श्री मिश्रा का निवेदन कि यह दर्शाते हुए कि याची गिरफ्तारी से बच रहा था, अन्वेषण

अधिकारी द्वारा दाखिल तलब पर वारन्ट एवं पश्चातवर्ती उद्घोषणा एवं आदेशिका जारी किया गया था, मैं उनके निवेदन में सार नहीं पाता हूँ। अतः, मैं यह अभिनिर्धारित करने के लिए मजबूर हूँ कि आक्षेपित आदेश द्वारा संहिता की धाराओं 73, 82 एवं 83 के अधीन गैर-जमानती वारन्ट, उद्घोषणा एवं संपत्ति की कुर्की के आदेश अपास्त किए जाने के दायी हैं।

11. परिणामस्वरुप, उक्त रिट याचिका(दां॰) अनुज्ञात की जाती है। गैर-जमानती वारंट जारी करने वाला दिनांक 31.1.2015 का आदेश तथा उद्घोषणा एवं आदेशिका जारी करने वाले क्रमशः दिनांक 20.2.2015 एवं दिनांक 17.4.2015 के पश्चातवर्ती आदेश जिन्हें अपर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, लातेहार द्वारा पारित किया गया था, एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है। अवर न्यायालय को विधि के अनुरुप अग्रसर होने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn ,o çeFk iVuk;d] U;k;efrx.k

भीख राम ओराँव

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (D.B.) No. 1355 of 2004. Decided on 1st September, 2015.

सत्र विचारण सं॰ 226 वर्ष 2003 में विद्वान अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश (फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ II) गुमला द्वारा पारित दिनांक 2.6.2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 3.6.2004 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302 एवं 448/342—गृह अतिचार एवं हत्या–दोषसिद्धि–सूचक का साक्ष्य विश्वास उत्पन्न नहीं करता है–अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य विश्वसनीय नहीं हैं–घटनास्थल विश्वासोत्पादक रूप से स्थापित नहीं किया गया–अपीलार्थी संदेह का लाभ पाने योग्य हैं–दोषसिद्धि एवं दंडादेश अपास्त। (पैराएँ 13 से 17)

अधिवक्तागण.–Mr. Akhouri Anjani Kumar, For the Appellant; M/s Rajeev Anand & Asif Khan, For the State.

न्यायालय द्वारा.–अपीलार्थी का सत्र विचारण सं॰ 226 वर्ष 2003 में मृतक बुधेश्वर ओराँव के घर में घुसने और उसे घसीटकर किसी गंगाराम के त्यागे गए गृह में ले जाने और वहाँ उसकी हत्या करने के अभियोग पर विचारण किया गया था। न्यायालय ने अपीलार्थी को दोषी पाने पर उसको दिनांक 2.6.2004 के अपने निर्णय के तहत भारतीय दंड संहिता की धाराओं 448/342 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए उसे दोषसिद्ध किया और दिनांक 3.6.2004 के अपने निर्णय के तहत उसको भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया। किंतु, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 448/342 के अधीन अपराधों के लिए कोई पृथक दंडादेश पारित नहीं किया गया था।

2. अभियोजन का मामला यह है कि दिनांक 9.6.2003 को अपराह्न लगभग 6 बजे जब मृतक बुधेश्वर ओराँव चारपाई पर सो रहा था, अपीलार्थी पिछले दरवाजा से उसके घर में घुसा और उस पर प्रहार करने लगा। तत्पश्चात्, अपीलार्थी बुधेश्वर ओराँव (मृतक) को घसीट कर गंगाराम के त्यागे गए घर में ले गया और वहाँ उसने उसकी गर्दन के इर्द-गिर्द लुंगी लपेटकर इसको बांधा और तब मुक्कों-थप्पड़ों से उसके छाती पर प्रहार किया। जब अपीलार्थी ने शंकर ओराँव (अ॰ सा॰ 4), बुधराम ओराँव (अ॰ सा॰

5) एवं मंसू ओराँव (अ॰ सा॰ 6) को घटना स्थल पर आते देखा, अपीलार्थी घटनास्थल से चला गया। जब सूचक महादेव ओराँव (अ॰ सा॰ 7), मृतक का भाई, अन्य के साथ वहाँ आया, उन्होंने मृतक को हाँफते पाया। तत्पश्चात, वे मृतक को अस्पताल ले जाने का प्रबंध करने लगे, किंतु इस बीच उसकी मृत्यु हो गयी।

3. अगले दिन अर्थात् दिनांक 10.6.2003 को प्रातः 6 बजे जब सिसई पुलिस थाना का ए॰ एस॰ आई॰ माशूक अली सूचक महादेव ओराँव (अ॰ सा॰ 7) के घर आया, उसने सूचक का फर्दबयान (प्रदर्श 3) दर्ज किया। इस पर औपचारिक प्राथमिकी (प्रदर्श 4) लिखी गयी थी।

4. सिसई पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी राज देव सिंह (अ॰ सा॰ 9) द्वारा मामले का अन्वेषण किया गया था, जिसने मृतक के मृत शरीर का मृत्यु समीक्षा किया और मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श 5) तैयार किया। उसने विश्वनाथ जायसवाल के निर्जन घर से अर्थात् घटनास्थल से लुंगी भी जब्त किया।

5. इस बीच, मृत शरीर शव परीक्षण के लिए भेजा गया था जिसे डॉ॰ कृष्ण प्रसाद (अ॰ सा॰ 8) द्वारा किया गया था। शव परीक्षण करने पर डॉक्टर ने निम्नलिखित उपहतियों को पाया:–

1. ck,¡ dkguh ij [kjkp 1" x 1"

2. Nkrh d ck,¡ Hkkx ij [kjkp 1/2" x 1/2"

3. Nkrh d Åijh ck,¡ Hkkx ij [kjkpA nlji] rhlji ,o pkFkh Fkkjkfld ilfy;k VV x;h Fkh tk gek&FkkjDl dh vkj tkrh FkhA

4. xnu d lkeu oky Hkkx ij [kjkp] çR;d 1" x 1/2"

डॉक्टर ने इस मत के साथ शव परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 2) जारी किया कि मृत्यु उपहति सं॰ 3 जो गंभीर थी और प्रकृति के सामान्य क्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी, के कारण हेमरेज एवं आघात के कारण हुई थी।

6. इस बीच, आई॰ ओ॰ ने गवाहों का बयान दर्ज किया। अन्वेषण पूरा करने के बाद, जब आरोप–पत्र दाखिल किया गया था, अपीलार्थी के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया गया था।

7. सम्यक् क्रम में, जब मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था, अपीलार्थी का विचारण किया गया था जिसके दौरान अभियोजन ने कुल नौ गवाहों का परीक्षण किया। उनमें से, मृतक की पत्नी श्रीमती विमला देवी (अ॰ सा॰ 1) ने परिसाक्ष्य दिया था कि जब वह पशुओं को चराने के बाद लौटी, उसने अपने घर पर भीड़ जमा पाया और अनेक लोग वहाँ थे। पूछे जाने पर, उसके पति ने उसे बताया कि अपीलार्थी ने उसे लुंगी से बांधा था और तब मुक्कों–थप्पड़ों से उस पर प्रहार किया था। सूचक के पुत्र अ॰ सा॰ 2 रति राम ओराँव ने परिसाक्ष्य दिया था कि अपीलार्थी पिछले दरवाजा से घर में घुसा था और तब उसने अपीलार्थी को मृतक को घसीटते हुए गंगाराम के निर्जन घर में ले जाते देखा जहाँ अपीलार्थी ने मृतक पर प्रहार किया। अपीलार्थी को मृतक पर प्रहार करते हुए देखने पर, वह और उसका पिता सूचक महादेव ओराँव (अ॰ सा॰ 7), शंकर ओराँव (अ॰ सा॰ 4) एवं बुधराम ओराँव (अ॰ सा॰ 5) वहाँ आए किंतु उस समय तक अपीलार्थी वहाँ से भाग गया था। अ॰ सा॰ 3 जगरनाथ ओराँव अनुश्रुत गवाह है जिसे सूचक (अ॰ सा॰ 7) से घटना की जानकारी हुई। अ॰ सा॰ 4 शंकर ओराँव, अ॰ सा॰ 5 बुधराम ओराँव एवं अ॰ सा॰ 6 मनसु ओराँव को पक्षद्रोही घोषित किया गया है। अ॰ सा॰ 7 महादेव ओराँव सूचक है। उसके अनुसार,

अपीलार्थी पिछले दरवाजा से मृतक के घर में घुसा और तब उसने मृतक की गर्दन के इर्द-गिर्द लुंगी बांधा और तब उसको घसीटते हुए विश्वनाथ अग्रवाल के निर्जन घर में ले गया जहाँ अपीलार्थी ने मृतक पर प्रहार किया।

8. अभियोजन साक्ष्य बंद करने के बाद जब अपीलार्थी से उसके विरुद्ध सामने आने वाले अपराध में फँसाने वाले साक्ष्य/सामग्री के बारे में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन पूछा गया था, उसने इनकार किया।

9. इस पर, विचारण न्यायालय ने अ॰ सा॰ 1 श्रीमती विमला देवी, अ॰ सा॰ 2 रतिराम ओराँव और अ॰ सा॰ 7 महादेव ओराँव के साक्ष्य पर अपना अंतर्निहित विश्वास करके अपीलार्थी को मृतक बुधेश्वर ओराँव की हत्या करने का दोषी पाया और तद्नुसार, अपीलार्थी के विरुद्ध दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज किया जो चुनौती के अधीन है।

10. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अखौरी अंजनी कुमार निवेदन करते हैं कि यद्यपि गवाह अ॰ सा॰ 1 श्रीमती विमला देवी ने स्वयं मृतक से घटना के बारे में जानकारी पाने का दावा किया है किंतु वह विश्वसनीय प्रतीत नहीं होती है क्योंकि ऐसा प्रकटीकरण उसके द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 161 के अधीन अपने बयान में नहीं नहीं किया था और कि किसी भी गवाह ने परिसाक्ष्य नहीं दिया है कि मृतक बोलने की हालत में था। इसी प्रकार से, अ॰ सा॰ 7 भी विश्वसनीय नहीं है, क्योंकि यदि उसका परिसाक्ष्य संपूर्णता में लिया जाता है, यह प्रतीत होगा कि वह घटना के समय पर उपस्थित नहीं था बल्कि वह समय के बाद के बिंदु पर घटना स्थल पहुँचा था और तद्द्वारा केवल एक गवाह अ॰ सा॰ 2 शेष रहता है, जिसने परिसाक्ष्य दिया है कि उसने अपीलार्थी को मृतक को घसीटते हुए गंगाराम के निर्जन घर में ले जाते देखा था किंतु आई॰ ओ॰ के साक्ष्य के अनुसार घटना स्थल विश्वनाथ अग्रवाल का निर्जन घर था और तद्द्वारा, उसे पूर्णत: विश्वसनीय नहीं माना जा सकता है और इसलिए, विचारण न्यायालय को किसी भी गवाह पर विश्वास नहीं करना चाहिए था, बल्कि उन तीन गवाहों पर विश्वास करके विचारण न्यायालय ने निश्चय ही अवैधता किया है और तद्द्वारा, दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश अपास्त किए जाने योग्य है।

11. इसके विरुद्ध, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ श्री राजीव आनन्द निवेदन करते हैं कि यदि क्षणभर के लिए यह स्वीकार भी किया जाता है कि अ॰ सा॰ 1 एवं अ॰ सा॰ 7 के पास वास्तविक घटना को देखने का अवसर नहीं था, किंतु अ॰ सा॰ 2 जिसने अपीलार्थी को मृतक को घटना स्थल तक घसीट कर ले जाते देखा था जहाँ मुक्कों-थप्पड़ों से मृतक पर प्रहार किया गया था, पूर्णत: विश्वसनीय प्रतीत होता है भले ही घटनास्थल को लेकर कुछ अंतर है।

12. इस संबंध में, यह निवेदन किया गया था कि यह सत्य है कि आई॰ ओ॰ के साक्ष्य के मुताबिक घटनास्थल विश्वनाथ अग्रवाल का निर्जन घर था, किंतु गवाह ने परिसाक्ष्य दिया है कि उसने अपीलार्थी को मृतक को घसीटते हुए गंगाराम के निर्जन घर में ले जाते देखा था किंतु वह गहरे भ्रम में ऐसा कहता हुआ प्रतीत होता है जो वस्तुत: इस कारण से हुआ कि गंगाराम एवं विश्वनाथ अग्रवाल के निर्जन घर अगल-बगल थे और तद्द्वारा उक्त कारण से अभियोजन पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा और कि अ॰ सा॰ 2 का परिसाक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य से संपुष्टि पाता है।

13. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिलेख का परिशीलन करने पर, हम पाते हैं कि मामला जिसे सूचक अ॰ सा॰ 7 द्वारा आरंभ में अपने फर्दबयान में बनाया गया है यह था कि उसने

अपीलार्थी को पिछले दरवाजा से मृतक के घर में घुसते और तब मृतक के गर्दन के इर्द-गिर्द लुंगी बांधते और तब उसको घसीटते हुए गंगाराम के निर्जन घर में ले जाते देखा था जहाँ अपीलार्थी ने मुक्कों-थप्पड़ों से मृतक पर उसकी मृत्यु कारित करते हुए प्रहार किया। अ॰ सा॰ 7 ने अपने साक्ष्य के दौरान इसी तरीके का परिसाक्ष्य दिया किंतु इस अंतर के साथ कि अपीलार्थी मृतक को घसीटते हुए विश्वनाथ जायसवाल के निर्जन घर में ले गया था।

आगे, हम पाते हैं कि उसने अपने प्रतिपरीक्षण में परिसाक्ष्य दिया है कि जब वह घटना स्थल पर पहुँचा, 15-20 लोग पहले से वहाँ एकत्रित थे, जो स्पष्टत: सुझाता है कि वह वो व्यक्ति नहीं था जिसने घटना देखा था। समरुप स्थिति मृतक की विधवा अ॰ सा॰ 1 की है जिसने परिसाक्ष्य दिया है कि जब वह घर आयी, उसके पति ने बताया कि अपीलार्थी ने उस पर प्रहार किया था, किंतु वह विश्वसनीय प्रतीत नहीं होती है, क्योंकि आई॰ ओ॰ के मुताबिक उक्त तथ्य उसके द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 161 के अधीन अपने पूर्व बयान में कभी नहीं बताया गया था।

इसके अतिरिक्त किसी भी गवाह ने, न तो अ॰ सा॰ 2 और न ही अ॰ सा॰ 7 ने परिसाक्ष्य दिया है कि मृतक कुछ बोलने की अवस्था में था और, तद्द्वारा, अ॰ सा॰ 2 एवं अ॰ सा॰ 7 विश्वास किए जाने के लिए विश्वास उत्पन्न नहीं करते हैं।

14. अ॰ सा॰ 2 रतिराम ओराँव (सूचक का पुत्र) के परिसाक्ष्य पर आते हुए, जिसने अपने साक्ष्य में अपीलार्थी को मृतक को गमछा के सहारे घसीटते हुए गंगाराम के निर्जन घर में ले जाते देखने का दावा किया जहाँ अपीलार्थी ने मृतक पर प्रहार किया। इस प्रकार, हम पाते हैं कि उसके अनुसार घटना स्थल गंगाराम का निर्जन घर था। हमने आई॰ ओ॰ के साक्ष्य से पहले ही गौर किया है कि घटनास्थल विश्वनाथ जायसवाल का निर्जन घर था।

आगे यह गौर किया जाए कि गवाहों ने अभिसाक्ष्य दिया है कि अपीलार्थी ने मृतक की गर्दन के इर्द-गिर्द गमछा लपेटा था जबकि अ॰ सा॰ 7 ने लुंगी के बारे में कहा है, जो वस्तुत: आई॰ ओ॰ द्वारा घटनास्थल के निरीक्षण के समय पर बरामद किया गया प्रतीत होता है।

15. राज्य की ओर से तर्क किया गया था कि अ॰ सा॰ 2 ने शायद अत्यन्त भ्रम में ऐसा कहा हो क्योंकि गंगाराम एवं विश्वनाथ जायसवाल के निर्जन घर एक दूसरे के अगल-बगल अवस्थित थे। राज्य की ओर से प्रस्तुत स्पष्टीकरण स्वीकार्य नहीं है क्योंकि यह स्पष्ट मामला है जैसा अ॰ सा॰ 2 द्वारा परिसाक्ष्य दिया गया है कि यह गंगाराम का घर था जहाँ अपीलार्थी मृतक को ले गया था। ऐसा नहीं है कि उसने अभिसाक्ष्य दिया कि उसने अपीलार्थी को गंगाराम अथवा विश्वनाथ जायसवाल के निर्जन घरों की ओर जाते देखा था। इस प्रकार, हम अ॰ सा॰ 2 को भी पूर्णत: विश्वसनीय नहीं पाते हैं। इन परिस्थितियों के अधीन, अपीलार्थी संदेह के लाभ के योग्य है।

16. इस स्थिति के अधीन, विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

17. परिणामस्वरुप, अपीलार्थी को आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है और तुरन्त निर्मुक्त किए जाने का निर्देश दिया जाता है, यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

18. तद्नुसार, यह अपील अनुज्ञात की जाती है।

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

मो॰ सलीम

cuke

मो॰ अलताव एवं अन्य

S.A. No. 53 of 1994 (R). Decided on 9th October, 2015.

बेदखली अभिधान अपील सं॰ 5 वर्ष 1985 में तृतीय अपर जिला न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 12 मई, 1994 के निर्णय एवं दिनांक 30 मई, 1994 की डिक्री के विरुद्ध।

अभिधृति–बेदखली–मकान मालिक की निजी आवश्यकता–वादी के पक्ष में अवर न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्ष हैं–प्रतिवादी को वर्ष 1978 में वाद परिसर में किराएदार के रूप में प्रवेश दिया गया था और वादी तथा किराएदार के बीच मकान-मालिक एवं किराएदार का संबंध विद्यमान है–यह तथ्य का शुद्ध प्रश्न है जिसे अवर न्यायालयों द्वारा समवर्ती रूप से विनिश्चित किया गया है–सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 100 के अधीन दाखिल द्वितीय अपील में साक्ष्य का पुनर्अधिमूल्यन करके आगे निष्कर्ष निकालना वांछनीय नहीं है–अपील खारिज।

(पैराएँ 15, 20 एवं 24)

निर्णयज विधि.–(2012) 4 SCC 344—Relied; AIR 1998 Patna 1; AIR 2012 Jhr. 39; AIR 2002 SC 136; 2001 (2) JCR 32 (SC); 2001 (2) JCR 527 (SC); 2006 (3) JCR 105 (Jhr)—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. J.P. Jha, For the Appellant; Mr. Amar Kumar Sinha, For the Respondents.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–यह अपील प्रतिवादी/अपीलार्थी द्वारा बेदखली अभिधान अपील सं॰ 5 वर्ष 1985 में विद्वान तृतीय अपर जिला न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा पारित एवं हस्ताक्षरित दिनांक 12 मई, 1994 के निर्णय एवं दिनांक 30 मई, 1994 की डिक्री के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा अभिधान वाद सं॰ 108 वर्ष 1981 में विद्वान मुंसिफ, हजारीबाग द्वारा पारित एवं हस्ताक्षरित दिनांक 21 दिसंबर, 1984 का निर्णय एवं दिनांक 10 जनवरी, 1985 की डिक्री मान्य ठहरायी गयी है जिसके द्वारा प्रतिवादी को डिक्री की तिथि से दो माह के भीतर वाद परिसर खाली करने का निर्देश दिया गया है जिसका अनुपालन करने में विफल रहने पर वादी न्यायालय की प्रक्रिया के माध्यम से वाद परिसर खाली करवाने और किराया के बकाया के रूप में 360/- रुपयों की राशि की डिक्री का हकदार होगा और वादी कब्जा के परिदान की तिथि तक भावी किराया का भी हकदार है।

2. विधि के निम्नलिखित सारवान प्रश्नों को विनिश्चित करने के लिए अपील दिनांक 22 नवंबर, 1994 को ग्रहण की गयी थी:–

(a) D;k vpy lifÙk ekf[kd :i ls nu ekgj e nh tk ldrh g vkj D;k ,l vrj.k dk vrfjrh ij dkb vfHkèkku lftr djr g, dkb fofèkd çHkko gk ldrk g

(b) D;k vpy lifÙk;k dh cn[kyh dk ,lk vrj.k jftLVM foy[k }kjk fd;k tkuk gkxk

(c) D;k egj dt d cny viu ifr dh lifÙk ij foèkok dk dCtk vU; mÙkjkfèkdkfj;k d vfHkèkku d çfr çfrdy :i ls ml lifÙk dk li.k Lokeh cukrk g vkj@vFkok D;k foèkok dk ,lk dCtk leLr mÙkjkfèkdkfj;k d dCtk d :i e ekuk tk,xk

(d) D;k cn[kyh dh fMØh ikfjr dh tk ldrh g tgk edkuekfyd ,o fdjk,nkj dk lcèk LFkkfir ugh fd;k x;k g vkj le; d fdlh fcn ij fdjk;k dk Hkxrku LFkkfir ugh fd;k x;k g

3. जमीला खातून मूल वादी है जिसने निजी आवश्यकता के आधार पर और इस आधार पर भी कि प्रतिवादी किराया का भुगतान करने में व्यतिक्रमी बन गया है, वाद परिसर से उसको बेदखल करने के लिए प्रतिवादी/अपीलार्थी के विरुद्ध वाद लाया था।

4. वाद पत्र के अनुसार, जमीला खातून वादपत्र की अनुसूची A में अधिक पूर्णत: वर्णित मोहल्ला कलाल टोला, आजाद रोड अवस्थित हजारीबाग टाउन के अंतर्गत हजारीबाग नगरपालिका के अधीन धृति सं॰ 1135, वार्ड सं॰ 14 (पुराना), वार्ड सं॰ 17 (नया) की स्वामी एवं मकानमालकिन थी। यह प्रकट किया गया है कि इलाही मियाँ ने अपने जीवकाल के दौरान हजारीबाग नगरपालिका के वार्ड सं॰ 17 के अधीन भूखंड सं॰ 1134 और 1135 अपनी पत्नी मंगरी को देन मेहर में दिया और उसके बाद उसने संपत्ति अर्जित किया और संपूर्ण स्वामी बन गयी। उसकी मृत्यु वर्ष 1958 में अपने पीछे अपनी एकमात्र जीवित पुत्री नसीबन को छोड़ते हुए हो गयी और उक्त नसीबन ने संपत्ति विरासत में पाया था और वह काबिज हुई और हजारीबाग नगरपालिका के अभिलेख में अपना नाम नामांतरित करवाया और, तत्पश्चात्, उसने भूखंड सं॰ 1135 को 5000/- रुपया के नगद प्रतिफल के भुगतान पर दिनांक 6 जून 1972 की सं॰ 13080 वाले रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के फलस्वरुप अपनी एकमात्र पुत्री जमीला खातून (वादी) को बेचा और उसके बाद जमीला खातून ने हजारीबाग नगरपालिका के अभिलेख में अपना नाम नामांतरित करवाया।

आगे यह प्रकट किया गया है कि भूखंड सं॰ 1134 पुन: जमीला खातून एवं उसके पुत्र अल्ताफ के नाम में अंतरित किया गया था और, तत्पश्चात्, वादी तब के बिहार राज्य को नियमित रूप से लगान एवं हजारीबाग नगरपालिका को नगरपालिका कर का भुगतान कर रहा था।

5. अगस्त, 1978 में प्रतिवादी किराया पर उसको घर देने के लिए वादी के पास आया और इस प्रकार किया गया अनुरोध स्वीकार किया गया था और वाद परिसर अंग्रेजी कैलेन्डर के अनुसार 30/- रुपया प्रतिमाह के मासिक किराया पर प्रतिवादी को दिया गया था और किराया प्रत्येक माह की पाँच तारीख को भुगतेय था। प्रतिवादी आगे नोटिस की प्राप्ति की तिथि से एक पखवारा के भीतर वाद परिसर खाली करने के लिए सहमत हुआ जब और जैसे वादी के उपयोग एवं अधिभोग के लिए इसकी आवश्यकता होगी। प्रतिवादी नियमित रूप से किराया का भुगतान कर रहा था और अगस्त, 1980 से इसका भुगतान किया गया था, परंतु तत्पश्चात् उसने सितम्बर, 1980 के महीने से किराया का भुगतान करने में व्यतिक्रम किया और वह दो माह से अधिक के लिए किराया का भुगतान करने में व्यतिक्रमी बन गया था और, इसलिए, वह उससे बेदखल किए जाने का दायी था।

6. वादी ने आगे मामला बनाया कि उसे स्वयं अपने उपयोग एवं अधिभोग के लिए युक्तियुक्त रूप से और सद्विश्वास में वाद परिसर की आवश्यकता थी, क्योंकि उसका पति तब बेरोजगार था और वह वाद परिसर में मोटर मरम्मती दुकान खोलना चाहता था। वादी ने अनेक बार प्रतिवादी से किराया के बकाया का भुगतान करने एवं वाद परिसर खाली करने का अनुरोध किया क्योंकि वादी को स्वयं अपने उपयोग एवं अधिभोग के लिए इसकी आवश्यकता है, किंतु प्रतिवादी ने अनुरोध पर कोई ध्यान नहीं दिया था, जिसके परिणामस्वरुप वाद परिसर से प्रतिवादी को बेदखल करने के लिए और वादकालीन तथा भावी किराया के बकाया की डिक्री की प्रार्थना के साथ अभिधान वाद सं॰ 108 वर्ष 1981 लाया गया था।

7. प्रतिवादी उपस्थित हुआ और उसमें यह कथन करते हुए लिखित कथन दाखिल किया कि बिहार भवन (पट्टा, किराया एवं बेदखली) नियंत्रण अधिनियम, 1977 (संक्षेप में 'बी॰ बी॰ सी॰ अधिनियम') के

अधीन अथवा संपत्ति अंतरण अधिनियम के किसी प्रावधान के अधीन वाद पोषणीय नहीं है। वाद आवश्यक पक्षों के असंयोजन के कारण दोषपूर्ण है क्योंकि स्वर्गीय बीबी रसूलन के पुत्र आवश्यक पक्ष हैं और उनको पक्ष के रूप में पक्षकार बनाए बिना वाद अग्रसर नहीं हो सकता है। वादी वाद संपत्ति पर किसी अधिकार, अभिधान, हित एवं कब्जा के बिना बेदखली वाद के रूप में हजारीबाग नगरपालिका के वार्ड सं॰ 17 के अंतर्गत अवस्थित भूखंड सं॰ 1135 पर खड़े घर का अविधिपूर्ण कब्जा लेना चाहता है। प्रतिवादी ने आगे मकानमालिक–किराएदार संबंध से इनकार किया है।

8. प्रतिवादी ने मामला बनाया है कि शेख इलाही मियाँ के पिता शेख बदलू मियाँ ने रजिस्टर्ड पट्टा के फलस्वरुप हजारीबाग नगरपालिका के अंतर्गत बौडम बाजार, अब आजाद रोड, पर कलाल टोली के नगरपालिका का भूखंड सं॰ 54 की बंदोबस्ती करवाया और प्रत्येक लगभग समान क्षेत्रफल वाले दो पृथक घरों का निर्माण किया और इसे बाद में हजारीबाग नगरपालिका द्वारा नगरपालिका भूखंड सं॰ 1134 एवं 1135 में संपरिवर्तित किया गया था। भूखंड सं॰ 1134 घर के पश्चिमी भाग का प्रतिनिधित्व करता है और भूखंड सं॰ 1135 घर के पूर्वी भाग का प्रतिनिधित्व करता है। शेख बदलू अपनी प्रथम पत्नी एवं पुत्र इलाही मियाँ के साथ भूखंड सं॰ 1134 में निवास कर रहा था, जबकि भूखंड सं॰ 1135 पर निर्मित दूसरा घर बदलू की दूसरी पत्नी महताब के कब्जे में था एवं उसके पुत्र मीर अली शेख बदलू तथा पुत्र शेख इलाही पेशे से राजमिस्त्री थे एवं, अतएव, वे अपने रोजगार के संबंध में हजारीबाग से बाहर रह रहे थे।

यह प्रकट किया गया है कि महताब, जिसका भूखंड सं॰ 1135 पर कब्जा था ने इसे अपने पुत्र मीर अली के नाम में नामांतरित करवा दिया, किंतु मीर अली की मृत्यु के बाद वह घर से निकल गयी और किसी अन्य स्थान पर चली गयी जहाँ उसकी मृत्यु भी हो गयी। महताब और उसके पुत्र मीर अली की मृत्यु के बाद भूखंड सं॰ 1135 पुनः शेख इलाही के कब्जा में आ गया, जिसने इसे किसी नूर मोहम्मद को किराया पर दिया। इस तथ्य का लाभ लेते हुए कि शेख इलाही अधिकांश समय हजारीबाग जिला के बाहर रह रहा था, नूर मोहम्मद ने नगरपालिका के कार्यालय में अपने नाम में पट्टा दर्ज करने के लिए याचिका दाखिल किया। शेख इलाही द्वारा आपत्ति की गयी थी जिसके बाद नूर मोहम्मद द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था।

पुनः नूर मोहम्मद के परिवार के सदस्यों द्वारा संपत्ति को अपने नामों में नामांतरित करवाने के लिए प्रयास किया गया था और इस समय वे सफल हुए और इसे स्वर्गीय नूर मोहम्मद के पुत्र दुखन मियाँ के नाम में दर्ज करने की अनुमति दी गयी थी।

9. तत्पश्चात, शेख इलाही ने अभिधान वाद सं॰ 188 वर्ष 1924 दाखिल किया और वर्ष 1930 में भूखंड सं॰ 1135 पर उसके द्वारा पुनः डिक्री एवं कब्जा प्राप्त किया गया था। प्रतिवादी ने आगे कथन किया है कि शेख इलाही को एक पुत्र जहूर और चार पुत्रियाँ अर्थात् रसूलन, सलीमन, नसीबन एवं मरियम थी। जहूर की मृत्यु शेख इलाही के जीवनकाल के दौरान हो गयी। रसूलन का विवाह सफी के साथ और सलीमन का विवाह शकूर के साथ हुआ था। सलीमन की मृत्यु निःसंतान हो गयी। तब नसीबन ने शकूर के साथ विवाह किया। मरियम का विवाह किसी कबीर के साथ हुआ था, किंतु उनकी मृत्यु हो गयी। जैनूल अब्दीन एवं कमरुद्दीन बीबी रसूलन के पुत्र हैं और जमीला खातून बीबी नसीबन की पुत्री थी। शेख इलाही की मृत्यु वर्ष 1930 के उत्तरार्ध में अपनी विधवा मोस्मात मंगरी एवं दो पुत्रियों अर्थात् बीबी रसूलन एवं बीबी नसीबन और पोते–पोतियों को अपने पीछे छोड़ते हुए हो गयी। यह स्वीकार किया गया है कि शेख इलाही की मृत्यु के बाद पूर्वोक्त भूखंड सं॰ 1134 एवं 1135 मंगरी के नाम में नामांतरित किया गया।

यह प्रतिवाद किया गया है कि संव्यवहार अर्थात् दिनांक 6 जून, 1972 का विक्रय विलेख रसूलन के दोनों पुत्रों जैनूल अब्दीन एवं कमरूद्दीन को वंचित करने के लिए अपनी पुत्री जमीला खातून के पक्ष

में बीबी नसीबन द्वारा निष्पादित कपटपूर्ण दस्तावेज है। अंतरण प्रतिफल के बिना था और यह केवल कागजी अंतरण था।

10. प्रतिवादी ने आगे मामला बनाया है कि वादी ने भूखंड सं॰ 1135 पर खड़े वाद संपत्ति पर वैध अधिकार, अभिधान, हित एवं कब्जा कभी नहीं अर्जित किया था और प्रतिवादी को उसके द्वारा वाद परिसर में किराएदार के रूप में प्रवेश कभी नहीं दिया गया था। वस्तुतः, प्रतिवादी को जुलाई, 1968 में भूखंड सं॰ 1135 पर किराएदार के रूप में प्रवेश दिया गया था और वह भी जैनूल अब्दीन द्वारा और तब से प्रतिवादी वादी की जानकारी में कमरुद्दीन एवं जैनूल अब्दीन को नियमित रूप से किराया का भुगतान करके वाद परिसर में निवास कर रहा है। निर्विवादित प्रकृति के साक्ष्य हैं जो दर्शाएँगे कि वर्ष 1968 से प्रतिवादी हजारीबाग में रह रहा था। विनिर्दिष्ट मामला जिसे प्रतिवादी ने बनाया है यह है कि उसने दिनांक 28 अप्रिल, 1982 को बहुमूल्य प्रतिफल के लिए कमरुद्दीन एवं जैनुल अब्दीन द्वारा निष्पादित रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के फलस्वरुप अधिकारपूर्ण स्वामी से नगरपालिका भूखंड सं॰ 1135 उस पर खड़े घर के साथ खरीदा है और इस प्रकार, वाद परिसर पर प्रतिवादी का कब्जा किराएदार के कब्जा से अधिकारपूर्ण स्वामी के कब्जा में बदल गया है। चूँकि वादी का वाद परिसर पर अधिकार, अभिधान, हित एवं कब्जा नहीं है, किराया का भुगतान करने में व्यतिक्रम अथवा अपने उपयोग एवं अधिभोग के लिए युक्तियुक्त रूप से सद्विश्वास में वादी को वाद परिसर की आवश्यकता का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है।

11. अभिवचनों के आधार पर विद्वान विचारण न्यायालय ने निम्नलिखित विवाद्यकों को विरचित किया:–

(i) D;k okn tlk fojfpr fd;k x;k g ik"k.kh; g\

(ii) D;k oknh dk okn d fy, okn grd g\

(iii) D;k okn vko';d i{kk d vl;ktu d dkj.k nk"ki.k g\

(iv) D;k oknh okn ifjlj dk Lokeh g\

(v) D;k i{kk d chp edkuekfyd&fdjk,nkj dk lcèk g\

(vi) D;k çfroknh u dHkh oknh dk fdjk;k dk Hkxrku fd;k Fkk\

(vii) D;k vulph ^^A** lifÙk nu egj e ekLekr exjh dk nh x;h Fkh\

(viii) D;k ekLekr jlyu dh eR; ekLekr exjh d igy gk x;h\

(ix) D;k oknh dk okn ifjlj dh futh vko';drk g\

(x) D;k çfroknh fdjk;k d Hkxrku e 0;frØeh g\

(xi) D;k oknh fMØh dh gdnkj g tlk mld }kjk bfllr fd;k x;k g\

(xii) oknh fdl vurk"k vFkok vurk"kk dk Hkh gdnkj g\

12. विद्वान विचारण न्यायालय ने दोनों पक्षों द्वारा अभिलेख पर लाए गए साक्ष्यों एवं दस्तावेजों पर विचार करने के बाद वादी के पक्ष में वाद डिक्री किया। तत्पश्चात्, प्रतिवादी ने जिला न्यायाधीश, हजारीबाग के समक्ष बेदखली अभिधान अपील सं॰ 5 वर्ष 1985 दाखिल किया जिसे विद्वान तृतीय अपर जिला न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा दिनांक 12 मई, 1994 के निर्णय के तहत खारिज कर दिया गया, अतः यह द्वितीय अपील की गयी है।

13. अपीलार्थी ने दिनांक 12 मई, 1994 के आक्षेपित निर्णय का विरोध इस आधार पर किया है कि विद्वान प्रथम अपीलीय न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के गलत अधिमूल्यन पर अपील खारिज कर दिया है। दोनों अवर न्यायालयों ने इस तथ्य पर गलत रूप से विश्वास किया है कि शेख इलाही मियाँ ने वाद संपत्ति दीन मोहर में अपनी पत्नी मंगरी को दिया था और मोस्मात मंगरी ने उस मौखिक संव्यवहार के फलस्वरुप वाद संपत्ति पर अधिकार, अभिधान, हित एवं कब्जा अर्जित किया। विद्वान अवर न्यायालयों ने गलत रूप से अभिनिर्धारित किया है कि वादी एवं प्रतिवादी के बीच मकानमालिक-किराएदार का संबंध विद्यमान है। दोनों अवर न्यायालयों ने यह अभिनिर्धारित करके विधि में गलती किया कि प्रतिवादी वादी के अधीन किराएदार था और वह किराया का भुगतान करने में व्यतिक्रमी था। अपने पति की मृत्यु के बाद मोस्मात मंगरी द्वारा संपत्तियों का अर्जन उसको अन्य उत्तराधिकारियों के अभिधान के प्रति प्रतिकूल रूप से संपत्तियों का संपूर्ण स्वामी नहीं बनाता था। ऐसे प्रतिवादों के समर्थन में, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर विश्वास किया है:–

(i) ***AIR 1998 Patna 1 (#d;k cxe ,o vU; cuke Qty jgeku ,o vU;)***

(ii) ***AIR 2012 Jharkhand 39 (vej vgen [kku ,o vU; cuke 'kehe vgen [kku ,o ,d vU;)***

14. दूसरी ओर प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि इस द्वितीय अपील के ग्रहण के समय इस न्यायालय द्वारा निरुपित विधि के सारवान प्रश्न अनावश्यक थे और उनका उत्तर देने की आवश्यकता इस तथ्य की दृष्टि में नहीं है कि वादी ने बी॰ बी॰ सी॰ अधिनियम के प्रावधानों के अधीन वाद परिसर से प्रतिवादी को बेदखल करने के लिए वाद दाखिल किया था। ऐसे वाद में, किराएदार को मकानमालिक के अभिधान के विरुद्ध प्रश्न उठाने का अधिकार नहीं है यदि वादी एवं प्रतिवादी के बीच मकानमालिक-किराएदार का संबंध स्थापित किया गया है।

15. ये प्रश्न कि क्या प्रतिवादी वादी के अधीन किराएदार है या नहीं; क्या प्रतिवादी किराया का भुगतान करने में व्यतिक्रमी बन गया है या नहीं; क्या वादी को अपने निजी उपयोग एवं अधिभोग के लिए युक्तियुक्त रूप से सद्विश्वास में वाद संपत्ति की आवश्यकता है या नहीं, तथ्य के शुद्ध प्रश्न हैं और अवर न्यायालयों ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों एवं दस्तावेजों पर चर्चा करने के बाद वादी के पक्ष में वाद डिक्री किया है और इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। द्वितीय अपील में, उच्च न्यायालय काफी विरल मामलों में ही साक्ष्य का पुनर्अधिमूल्यन कर सकता है। दोनों अवर न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्ष हैं और, इसलिए, यह द्वितीय अपील गुणागुण रहित है और यह खारिज किए जाने की दायी है। उपर किए गए निवेदनों के समर्थन में प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय और इस न्यायालय के निम्नलिखित निर्णयों पर विश्वास किया है:–

(i) ***AIR 2002 SC 136 (jktUn frokjh cuke oklno çlkn ,o ,d vU;)***

(ii) ***(2012)4 SCC 344 (gjnhi dkj cuke eyfd;r dkj)***

(iii) ***2001 (2) JCR 32 (SC) (gj ukjk;.k nkxk cuke ghjkyky ,o vU;)***

(iv) ***2001 (2) JCR 527 (SC) (gehnk ,o vU; cuke ek0 [kyhy)***

(v) ***2006 (3) JCR 105 (Jhr.) (fo".k dekj pkc cuke Jherh 'kkfr noh)***

16. शीर्षक '(a), (b) एवं (c)' के अधीन विरचित विधि के सारवान प्रश्नों का उत्तर देने के लिए वादी के अभिधान से संबंधित कुछ तथ्यों जिनका वादी ने वाद पत्र में प्रकथन करके दावा किया था और

प्रतिवादी के प्राख्यान जिसके द्वारा प्रतिवादी ने इसका खंडन करने का प्रयास किया था को दोहराना वांछनीय है।

17. प्रतिवादी द्वारा स्वीकार किए गए तथ्यों के अनुसार, नगरपालिका भूखंड सं॰ 1134 एवं 1135 पर निर्मित घरों का उपभोग शेख इलाही मियाँ द्वारा अपने पिता बदलू मियाँ की मृत्यु के बाद किया जा रहा था। नगरपालिका भूखंड सं॰ 1135 पर खड़े घर के संबंध में कुछ वाद शेख इलाही मियाँ एवं मोस्मात लछुमनिया के बीच हुआ था, किंतु अंततः नगरपालिका भूखंड सं॰ 1135 पर खड़ी संपत्ति अभिधान वाद सं॰ 188 वर्ष 1924 में पारित डिक्री के फलस्वरुप शेख इलाही के कब्जा में आयी और अभिधान अपील सं॰ 123/23 वर्ष 1925 द्वारा निर्णय मान्य ठहराया गया था। तत्पश्चात, निष्पादन मामला सं॰ 423 वर्ष 1927 के फलस्वरुप शेख इलाही मियाँ ने वर्ष 1930 में किसी समय भूखंड सं॰ 1135 पर खड़े घर के कब्जा का परिदान पाया। प्रतिवादी शेख इलाही मियाँ के परिवार की संख्या के संबंध में और परिवार में हुई मृत्यु के बारे में भी अन्य तथ्यों को प्रकट करने की सीमा तक गया। वादी के अभिधान को चुनौती देने के लिए, यह निवेदन किया गया था कि शेख इलाही की मृत्यु अपने पीछे अपनी विधवा मोस्मात मंगरी एवं पुत्रियों अर्थात् बीबी रसूलन एवं बीबी नसीबन तथा उनसे हुए पोते-पोतियों को छोड़ते हुए वर्ष 1930 में हो गयी। यह विवादित नहीं किया गया है कि नगरपालिका भूखंड सं॰ 1134 एवं 1135 से संबंधित संपत्तियों को मोस्मात मंगरी के नाम में हजारीबाग नगरपालिका के कार्यालय में नामांतरित किया गया था, किंतु प्रतिवादी द्वारा यह इंगित किया गया है कि मोस्मात मंगरी ने अपना नाम झूठे प्राख्यान पर नामांतरित करवाया था कि उसने संपत्तियों को अपने स्वर्गीय पति से देन मेहर में पाया था। मौखिक संव्यवहार द्वारा अचल संपत्ति का अंतरण नहीं किया जा सकता था। मोस्मात मंगरी ने संपत्ति पर कोई अधिकार अर्जित नहीं किया था। आगे विवाद जिसे प्रतिवादी ने उठाया है यह है कि मोस्मात मंगरी की पुत्रियों में से एक बीबी रसूलन की मृत्यु अपनी माता की मृत्यु के पहले नहीं हुई थी बल्कि मोस्मात मंगरी की मृत्यु अपने पीछे अपनी दो पुत्रियों अर्थात् बीबी रसूलन एवं बीबी नसीबन को छोड़ते हुए हो गयी। यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि मोस्मात मंगरी की मृत्यु की तिथि एवं बीबी रसूलन की मृत्यु की तिथि के संबंध में विवाद्यक अवर न्यायालयों द्वारा दोनों पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्यों के आधार पर विनिश्चित किया गया है और समवर्ती निष्कर्ष दिया गया है कि बीबी रसूलन की मृत्यु मोस्मात मंगरी की मृत्यु के पहले हो गयी। मोस्मात मंगरी की मृत्यु के बाद नगरपालिका भूखंड सं॰ 1134 एवं 1135 पर खड़े दोनों घरों को एकमात्र उत्तरजीवी पुत्री बीबी नसीबन द्वारा अर्जित किया गया था और नगरपालिका प्राधिकारी के समक्ष दिए गए आवेदन के आधार पर नगरपालिका भूखंड सं॰ 1134 एवं 1135 पर खड़े पूर्वोक्त घरों को (शेख इलाही की पुत्री) बीबी नसीबन के नाम में नामांतरित किया गया था।

यह उल्लेख करना अनावश्यक है कि जाँच करने एवं आपत्तियाँ आमंत्रित करने के बाद पूर्वोक्त संपत्तियों को हजारीबाग नगरपालिका के अभिलेख में बीबी नसीबन के नाम में नामांतरित किया गया था। बीबी नसीबन ने नगरपालिका भूखंड सं॰ 1135 के संबंध में विक्रय विलेख अपनी पुत्री जमीला खातुन (वादी) के पक्ष में निष्पादित किया। विक्रय विलेख के निष्पादन के बाद नगरपालिका भूखंड सं॰ 1135 पर खड़ी संपत्ति वादी जमीला खातून के नाम में नामांतरित की गयी और वह इसके ऊपर अपने अधिकार, अभिधान, हित एवं कब्जा का उपभोग करने लगी थी। प्रतिवादी द्वारा अपने लिखित कथन में आगे स्वीकार किया गया है कि बीबी नसीबन ने भूखंड सं॰ 1134 पर खड़े घर को वादी एवं उसके पुत्र अल्ताफ के पक्ष में अंतरित किया था और ऐसे अंतरण के बाद पूर्वोक्त नगरपालिका भूखंड सं॰ 1134 वादी एवं उसके पुत्र अल्ताफ के नाम में नामांतरित किया गया था।

इस मोड़ पर, प्रतिवादी द्वारा यह प्रतिवाद किया गया था कि बीबी नसीबन द्वारा वादी के पक्ष में हस्तांतरण विलेख का निष्पादन बीबी रसूलन के विधिक उत्तराधिकारियों का अधिकार वापस नहीं लेगा और बीबी नसीबन द्वारा वादी एवं उसके पुत्र अल्ताफ के पक्ष में इस प्रकार किया गया अंतरण प्राधिकार के बिना था। यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता था कि केवल बीबी नसीबन शेख इलाही द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति विरासत में पाएगी। प्रतिवादी ने लिखित कथन में अपने द्वारा किए गए प्रकथनों को न्यायोचित ठहराने के लिए अभिलेख पर लाया है कि उसे बीबी रसूलन के विधिक उत्तराधिकारियों जैनूल अब्दीन एवं मो॰ कमरुद्दीन द्वारा वर्ष 1968 में और न कि वादी द्वारा वर्ष 1978 में किराएदार के रूप में वाद परिसर में प्रवेश दिया गया था।

18. प्रतिवादी का आगे मामला यह है कि भूखंड सं॰ 1135 पर खड़ा घर उक्त जैनूल अब्दीन एवं मो॰ कमरुद्दीन द्वारा वर्ष 1982 में दिनांक 28 अप्रिल, 1982 को निष्पादित विक्रय विलेख के फलस्वरुप अंतरित किया गया है और, इसलिए, वाद संपत्ति पर प्रतिवादी का कब्जा समाप्त हो गया है क्योंकि वह संपत्ति का स्वामी बन गया। अवर न्यायालयों ने समवर्ती रूप से अभिनिर्धारित किया है कि वाद के लंबित रहने के दौरान वाद संपत्ति के विरुद्ध किए गए विक्रय विलेख का निष्पादन संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 52 द्वारा प्रतिकूलत: प्रभावित होता है और एक ओर जैनूल अब्दीन एवं मो॰ कमरुद्दीन और दूसरी ओर प्रतिवादी के बीच एवं द्वारा इस प्रकार किया गया संव्यवहार त्यक्त किया गया है।

19. मैं यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक महसूस करता हूँ कि समय के किसी भी बिंदु पर नगरपालिका भूखंड सं॰ 1135 से संबंधित संपत्ति बीबी रसूलन के नाम में अथवा जैनूल अब्दीन एवं मो॰ कमरुद्दीन के नाम में दर्ज कभी नहीं की गयी थी। पूर्वोक्त भवनों के संबंध में नामांतरण हजारीबाग नगरपालिका के अभिलेख में पहले मोस्मात मंगरी के नाम में उसके पति शेख इलाही के मृत्यु के बाद किया गया था और तत्पश्चात् पूर्वोक्त संपत्तियों को बीबी नसीबन के नाम में अंतरित एवं नामांतरित किया गया था और तब नगरपालिका भूखंड सं॰ 1134 वादी जमीला खातून के नाम में और नगरपालिका भूखंड सं॰ 1135 जमीला खातून एवं उसके पुत्र अल्ताफ के नाम में अंतरित एवं हस्तांतरित किया गया था।

20. तर्क के लाभ के लिए, इसे सही मानते हुए भी कि जैनूल अब्दीन एवं मो॰ कमरुद्दीन शेख इलाही की संततियाँ हैं और उनका संपत्ति में हित है, प्रतिवादी कोई लाभ नहीं पाएगा क्योंकि उसने किराएदार के कब्जा के रूप में वाद संपत्ति पर अपना कब्जा स्वीकार किया है। उसके द्वारा उठाया गया विवाद यह है कि उसे उक्त जैनूल अब्दीन एवं मो॰ कमरुद्दीन द्वारा वर्ष 1968 में और न कि वादी द्वारा वर्ष 1978 में वाद परिसर में किराएदार के रूप में प्रवेश दिया गया था। पुन: मैं संप्रेक्षित करना चाहूँगा कि अवर न्यायालयों ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों एवं दस्तावेजों के आधार पर अभिनिर्धारित किया है कि प्रतिवादी को वर्ष 1978 में के बीच मकानमालिक–किराएदार का संबंध विद्यमान है और यह भी तथ्य का शुद्ध प्रश्न है जिसे दोनों अवर न्यायालयों द्वारा समवर्ती रूप से विनिश्चित किया गया है। अत:, सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 100 के अधीन दाखिल द्वितीय अपील में साक्ष्य का पुनर्अधिमूल्यन करके आगे निष्कर्ष निकालना निश्चय ही वांछनीय नहीं है।

माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **हरदीप कौर (ऊपर)** मामले में पैराओं 10 एवं 11 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"10. lh0 ih0 lh0 dh èkkjk 100 d vèkhu f}rh; vihy luu e mPp U;k;ky; dh vfèkdkfjrk vud volj ij bl U;k;ky; d le{k fopkjkFk vk;h gA ekeyk dh ych ifDr e bl U;k;ky; u nkgjk;k g fd f}rh; vihy luu d igy fofèk d lkjoku ç'u dk fu#fir dju mPp U;k;ky; dk dr0; gA fofèk

d ekey d :i e] mPp U;k;ky; dk vkjfHkd pj.k ij f}rh; vihy e vrxLr fofèk d lkjoku ç'u dk fu#fir dju dh vko';drk g ;fn ;g lr"V g fd ekeyk xg.k fd, tku ;kX; g vkj f}rh; vihy dk fofèk d , l lkjoku ç'u ij luuk ,o fofuf'pr djuk gkxkA bl lcèk e] bl U;k;ky; d nk fu.k; g(f{kfr'k pn ijdr cuke lrk"k dekj ijdr rFkk nU;kukck Hkkmjko 'ken cuke ekjkfr Hkkmjko ekjukjA

*11. bl rjUr Li"V dju dh vko';drk g fd èkkjk 100 dh mièkkjk (5) dh nf"V e] f}rh; vihy dh luokb d le; ij] mPp U;k;ky; dk fofèk d lkjoku ç'uk dk iufu#fir dju vFkok fofèk d u, lkjoku ç'uk dk fu#fir dju vFkok ;g vfHkfuèkkfjr dju fd fofèk dk lkjoku ç'u vrxLr ugh g] dh NV gA bl U;k;ky; u ckj&ckj dgk g fd mPp U;k;ky; }kjk lh0 ih0 lh0 dh èkkjk 100 d vèkhu mle vrfo"V çfØ;k dk vulj.k fd, fcuk fn;k x;k fu.k; lkf"kr ugh fd;k tk ldrk gA fd mPp U;k;ky; lh0 ih0 lh0 dh èkkjk 100 d vèkhu mle vrfo"V çfØ;k dk vulj.k fd, fcuk fn;k x;k fu.k; lkf"kr ugh fd;k tk ldrk gA fd mPp U;k;ky; lh0 ih0 lh0 dh èkkjk 100 e vrfo"V çkoèkkuk d vkykd e fofèk dk lkjoku ç'u fu#fir fd, fcuk f}rh; vihy dk luu d fy, vxlj ugh gk ldrk g] ikp xkiky c#vk cuke me'k pn xkLokeh('khy pn cuke çdk'k pn(dUgkb yky xjkjh cuke ejkjh xkxyh(b'oj nkl tu cuke lkgu yky(#i flg cuke jke flg(lrk"k gtkjh cuke i#"kkÙke frokjh(p<r flg cuke cgknj jke('kf'k dekj cuke dUuFk pYyliu uk;j(lh0 ,0 lyeku cuke LVV cd vkQ Vkoudkj(ckDdk lCck jko cuke dDdyk ckykÑ".kk(ukjk;.ku jkt Unu cuke y{eh ljkftuh ,o uxjikfydk dfeVh] gkf'k;kjij cuke itkc ,l0 b0 ch0 e nkgjk;k x;k gA***

21. सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 100 की उपधारा (5) का पठन निम्नलिखित है:–

(5) vihy bl çdkj cuk, x, ç'u ij luh tk,xh vkj çfroknh dk vihy dh luokb e ;g rd dju dh vuKk nh tk,xh fd ,l ekey e ,lk ç'u vUrofyr ugh gh

*ijUr bl èkkjk dh fdlh ckr d ckj e ;g ugh le>k tk,xk fd og] fofèk d fdlh vU; ,l lkjoku ç'u ij tk U;k;ky; d }kjk ugh cuk;k x;k g] U;k;ky; dk ;g lekèkku gk tku ij fd ml ekey e ,lk ç'u vUrofyr g] U;k;ky; dh dkj.kk dk y[kc) djd vihy luu dh 'kfDr okil yrh g ;k ml U;u djrh gA***

सी॰ पी॰ सी॰ की धारा 100 की उपधारा (5) में अंतर्विष्ट प्रावधानों और **हरदीप कौर (ऊपर)** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा किए गए संप्रेक्षणों की दृष्टि में और इस तथ्य की दृष्टि में कि वादी ने बी॰ बी॰ सी॰ अधिनियम के प्रावधानों के अधीन प्रतिवादी को बेदखल करने के लिए वाद लाया है और उपर की गयी चर्चा के आलोक में भी मुझे यह अभिनिर्धारित करने में संकोच नहीं है कि विधि के सारवान प्रश्न, जैसा इस न्यायालय द्वारा इस अपील को ग्रहण करने के समय पर शीर्षक (a), (b) एवं (c) के अधीन विरचित किया गया है, इस अपील के न्यायोचित निर्णय के लिए उत्तर दिए जाने के लिए विधि के सारवान प्रश्न नहीं हैं।

22. शीर्षक '(d)' के अधीन विरचित विधि का चतुर्थ सारवान प्रश्न शुद्धत: तथ्यों पर आधारित प्रश्न है और दोनों अवर न्यायालयों द्वारा समवर्ती रूप से उसका उत्तर दिया गया है।

23. प्रत्यर्थी द्वारा उद्धृत निर्णय की दृष्टि में, द्वितीय अपील में तथ्य का प्रश्न विनिश्चित करने के लिए साक्ष्य का पुनर्अधिमूल्यन अनावश्यक है। मैंने पहले ही पूर्ववर्ती पैराग्राफों में निर्दिष्ट किया है कि

अभिलेख पर उपलब्ध समवर्ती निष्कर्ष कि वादी एवं प्रतिवादी के बीच मकान-मालिक-किराएदार का संबंध विद्यमान है और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य स्पष्टत: उपदर्शित करते हैं कि प्रतिवादी सितंबर, 1980 से किराया का भुगतान करने में व्यतिक्रमी बन गया और किराया के बकाया की वसूली के लिए वाद डिक्री भी किया गया है।

24. उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं इस अपील में कोई गुणागुण नहीं पाता हूँ। विद्वान अवर न्यायालयों द्वारा पारित डिक्री एवं निर्णय एतद् द्वारा मान्य ठहराया जाता है और तद्नुसार अपील खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn ,o çeFk iVuk;d] U;k;efrx.k

सुदर्शन सिंह (409 में)

दीनानाथ सिंह एवं अन्य (421 में)

बालेश्वर सिंह (537 में)

जय प्रताप सिंह उर्फ पप्पू (693 में)

cuke

झारखंड राज्य (सभी में)

Cr. Appeal (D.B.) Nos. 409, 421, 537 with 693 of 2006. Decided on 4th August, 2015.

सत्र विचारण सं॰ 303 वर्ष 1996 में विद्वान 18वें अपर न्यायिक आयुक्त, राँची द्वारा पारित दिनांक 20.3.2006 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 24.3.2006 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302, 147, 148, 149 एवं 120B—आयुध अधिनियम, 1959—हत्या एवं षडयन्त्र—दोषसिद्धि—अ॰ सा॰ के साक्ष्य अभियोजन मामले का समर्थन नहीं करते हैं—सर्वाधिक सक्षम गवाह को रोकने के लिए अभियोजन मामले की ओर प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जा सकता है—अभियोजन द्वारा आई॰ ओ॰ का परीक्षण नहीं किया गया है—अभियोग इस कारण से विचार का भाग निर्मित नहीं कर सकते हैं कि ऐसा साक्ष्य जो अपीलार्थियों को अपराध में फँसाने वाला था, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अपीलार्थियों के समक्ष कभी नहीं रखा गया था—अपलार्थीगण दोषमुक्त। (पैराएँ 20 से 29)

निर्णयज विधि.—M/s A.K. Kasyap, Anurag Kashyap, S. Dayal. (in 693, 409); M/s Rajiv Ranjan, Bhola Nath Ojha. (in 421, 537), For the Appellants; M/s Amaresh Kumar, Krishna Shankar, Shekhar Sinha, R. Anand, For the State.

न्यायालय द्वारा.—एक ही निर्णय एवं आदेश से उद्भूत पूर्वोक्त समस्त चारों दांडिक अपीलों को साथ सुना गया था और एक ही निर्णय द्वारा निपटाया जा रहा है।

2. समस्त सातों अपीलार्थियों का विधिविरुद्ध जमाव निर्मित करके घटनास्थल पर आने के अभियोग पर भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149, 302 एवं 120B के अधीन आरोपों का सामना करने के लिए विचारण किया गया था। जहाँ उनमें से एक अर्थात् जय प्रताप सिंह उर्फ पप्पू ने अपने सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में मृतक शत्रुघ्न राय की गोली मारकर हत्या कर दिया।

3. विचारण न्यायालय ने एस॰ टी॰ सं॰ 303 वर्ष 1996 में दिनांक 20 मार्च, 2006 के अपने निर्णय के तहत उनको दोषी पाने पर उन्हें भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149 एवं 302 तथा 120B

के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और आगे अपीलार्थी जय प्रताप सिंह उर्फ पप्पू को आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन दोषसिद्ध किया और उनमें से प्रत्येक को दिनांक 24.3.2006 के अपने आदेश के तहत भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/149 सहपठित भा॰ दं॰ सं॰ की धारा–120B के अधीन अपराध के लिए आजीवन कारावास भुगतने तथा 5000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश दिया। आगे उन्हें क्रमश: भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 147 एवं 148 के अधीन अपराध के लिए एक वर्ष एवं दो वर्ष का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था। अपीलार्थी जय प्रताप सिंह उर्फ पप्पू का आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन अपराध के लिए पाँच वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था। समस्त दंडादेशों को समवर्ती रूप से चलने का आदेश दिया गया था।

4. विचारण से सामने आने वाला अभियोजन मामला यह है कि वर्ष 1994 में सुदर्शन सिंह (अपीलार्थी) के पुत्र की हत्या की गयी थी जिसमें मृतक शत्रुघ्न राय चश्मदीद गवाह था। बाद में, मृतक के भाई किसी प्रकाश राय को उस मामले में अभियुक्त बनाया गया था। उस स्थिति में, मृतक अभियोजन के पक्ष में साक्ष्य देने का आशय नहीं रखता था, अत:, अपीलार्थियों द्वारा उसकी हत्या की गयी थी।

फर्दबयान (प्रदर्श 1) में बनाया गया मामला यह है कि दिनांक 18.11.1995 को प्रात: लगभग 6 बजे सूचक अ॰ सा॰ 4 राघो राय का भतीजा मृतक शत्रुघ्न राय टहलने गया था। कुछ देर बाद, सूचक भी डॉ॰ कामता प्रसाद शर्मा (अ॰ सा॰ 6) के साथ टहलने घर से निकला। उस क्रम में, जब वे 'बिरसा चौक' के निकट आए, उसने अपने भतीजा शत्रुघ्न राय (मृतक) को रामानुज सिंह (परीक्षण नहीं किया गया) के साथ चाय की दुकान पर चाय पीते देखा। इस बीच, उसने तीन अपीलार्थियों अर्थात् सुदर्शन सिंह, बालेश्वर सिंह एवं पप्पू सिंह को एक ओर से आते देखा जबकि अन्य व्यक्ति राजेन्द्र सिंह, राजू मिश्रा एवं काना राजू को दूसरी ओर से आते देखा। उन सबों ने मृतक को घेर लिया और इस पर सुदर्शन सिंह एवं बालेश्वर सिंह ने अन्य को उसकी हत्या करने का आदेश दिया और तब अपीलार्थी जय प्रताप सिंह उर्फ पप्पू ने मृतक पर गोली चलाया। इस बीच, राजू मिश्रा एवं राजेन्द्र सिंह ने भी उस पर गोली चलाया जिसके परिणामस्वरुप वह गिर गया और तब समस्त अभियुक्तगण वहाँ से भाग गए। इस पर, जब रामानुज सिंह ने मृतक के परिवार के सदस्यों को घटना के बारे में सूचित किया, परिवार के सदस्य वहाँ आए और तब वे उसे ऑटो रिक्शा पर अस्पताल ले गए, किंतु रास्ते में मृतक की मृत्यु हो गयी और, इसलिए, वे उसे घर लाए जहाँ अपीलार्थीगण धर्मेन्द्र कुमार सिंह, गुड्डू सिंह, दीनानाथ सिंह एवं संतोष कुमार सिंह आए और गोली चलाने लगे।

ऐसी सूचना प्राप्त करने पर जब जगतनाथपुर पुलिस थाना का एस॰ आई॰ ए॰ के॰ सिंह मृतक के घर आया, उसने प्रात: लगभग 8 बजे राघो राय (अ॰ सा॰ 4) का फर्दबयान दर्ज किया जिसमें सूचक ने उक्त घटना के बारे में बताया, जैसा उपर कथन किया गया है और यह कथन भी किया कि अभियुक्तों ने अपराध किया, क्योंकि मृतक उस मामले में साक्ष्य देने का आशय नहीं रखता था जिसमें रामानुज सिंह का पुत्र बच्चू सिंह और मृतक का भाई प्रकाश राय अभियुक्त थे।

5. मामले का अन्वेषण किया गया था। अन्वेषण के दौरान, आई॰ ओ॰ ने मृतक के मृत शरीर का मृत्यु समीक्षा किया और मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार किया। तत्पश्चात, मृत शरीर शव परीक्षण के लिए भेजा गया था जिसे डॉ॰ अजित कुमार चौधरी (अ॰ सा॰ 8) द्वारा संचालित किया गया था। मृतक के मृत शरीर का शव परीक्षण करने पर, डॉक्टर ने निम्नलिखित उपहतियों को पाया:–

(1) ço'k dk t[e-&ck, Hkkx d ikLVhfj;j Hkkx ij eLrd d ck, ijkbVy {k= d mij 3½ x 3cm., ç{kikL= ck, ijkbVy vfLFk l gkdj xtjrk g vkj nk VdMk e fo#fir cyV cu eVj e ?kIk ik;k x;k FkkA t[e dk jkLrk dV;TM ,o fonh.k FkkA

(2) ço'k dk t[e-&4 x 4 cm {k= d mij dkykiu ,o VVbx d lkFk ck, ik'o xnu d mij 2 x 1cm, ç{kikL= lk¶V fV'k l gkdj xtjrk g vkj ck, Hkkx d efMcy vfLFk rhlj lokbdy oVhck dk rkMr g, vkj nk, efMcy {k=] Hkhrjh Hkkx d Åij 4 x 2cm t[e d ekè;e l ckgj tkrk gA t[e dk jkLrk dV;TM ,o fonh.k FkkA

(3) ço'k dk t[e-&ck, iV d ik'o Hkkx d Åij 6 x 2cm, ç{kikL= frjN :i l Åij dh vkj ck, l nk, lk¶V fV'k d ekè;e l xtjrk gA ço'k d t[e l 17cm nj lk¶V fV'k ij cyV ?kIk ik;k x;k gA t[e dk jkLrk dV;TM ,o fonh.kA

डॉक्टर ने इस मत के साथ शव परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 2) जारी किया कि समस्त उपहतियाँ आग्नेयास्त्र द्वारा कारित मृत्यु पूर्व प्रकृति की थी जिस कारण मृतक की मृत्यु हुई।

6. इस बीच, आई॰ ओ॰ ने गवाहों का बयान दर्ज किया। अन्वेषण पूरा करने के बाद, एक अभियुक्त राजू मिश्रा को मृत दर्शाते हुए अपीलार्थियों के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था। जिस पर अपीलार्थियों के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया गया था। इस पर मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था। आरोप विरचित किए जाने के समय तक अन्य अभियुक्त काना राजू की भी मृत्यु हो गयी।

7. जब अपीलार्थियों का विचारण किया गया था, अभियोजन ने अपना मामला सिद्ध करने के लिए कुल नौ गवाहों का परीक्षण किया उनमें से,

अ॰ सा॰ 1 परमेश्वर साहू चाय की दुकान का मालिक है जहाँ घटना हुई। उसके अनुसार, जब मृतक उसकी दुकान में था, उस पर तीन गोलियाँ चलायी गयी थी किंतु वह हमलावरों को नहीं देख सका था बल्कि उसे जानकारी हुई कि किसी राजू मिश्रा ने मृतक की गोली मार कर हत्या कर दी थी। इस गवाह को इस कारण पक्षद्रोही घोषित किया गया है कि वह दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 161 के अधीन दिए गए अपने बयान में यह कथन करता प्रतीत होता है कि उसने राजू मिश्रा को गोली चलाते देखा था।

अ॰ सा॰ 2 हुमेर सिंह स्वतंत्र चश्मदीद गवाह है जिसने परिसाक्ष्य दिया है कि जब वह बिरसा चौक के निकट आया, उसने तीन व्यक्तियों राजू मिश्रा, काना राजू एवं मुन्ना सांगा को मृतक पर गोली चलाते देखा था।

अ॰ सा॰ 3 राम शंकर प्रसाद अनुश्रुत गवाह है, जिसने परिसाक्ष्य दिया है कि उसे प्रकाश से जानकारी हुई कि राजू मिश्रा एवं काना राजू ने मृतक पर गोली चलायी थी।

अ॰ सा॰ 4 सूचक राघो राय ने लगभग उसी तरीके का परिसाक्ष्य दिया है जैसा उसने फर्दबयान में बयान दिया था **अ॰ सा॰** 5 पप्पू कुमार (सूचक का पुत्र) ने परिसाक्ष्य दिया है कि उसे रामानुज सिंह से जानकारी हुई कि बालेश्वर सिंह एवं राजू मिश्रा तथा अन्य ने मृतक पर गोली चलाया था जबकि **अ॰ सा॰ 7** नंद किशोर राय मृतक के भाई ने परिसाक्ष्य दिया कि उसे भी उक्त रामानुज सिंह से घटना के बारे में पता चला कि पप्पू सिंह, बालेश्वर सिंह, सुदर्शन सिंह, राजेन्द्र सिंह एवं राजू मिश्रा ने मृतक पर गोली दागी थी।

अ॰ सा॰ 6 डॉ॰ कामता प्रसाद स्वतंत्र गवाह है जिसने परिसाक्ष्य दिया है कि जब वह बिरसा चौक पर था, वहाँ खलबली मची थी जब गोली चलायी गयी थी

जिसमें शत्रुघ्न राय (मृतक) की मृत्यु हुई थी, किंतु वह यह नहीं कह सकता है कि किसने गोली चलायी थी।

अ॰ सा॰ 9 नागेन्द्र राय, मृतक का सगा भाई, ने उसी तरीके का परिसाक्ष्य दिया है कि जैसा परिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 4 द्वारा दिया गया है कि सुदर्शन सिंह, बालेश्वर सिंह एवं पप्पू कुमार एक ओर से आए थे जबकि राजेन्द्र सिंह, राजू मिश्रा एवं काना राजू दूसरी ओर से आए और तब पप्पू सिंह, राजेन्द्र सिंह एवं राजू मिश्रा ने मृतक पर गोली चलाया था जब उन्हें बालेश्वर सिंह द्वारा मृतक की हत्या करने के लिए उकसाया गया था जिसके परिणामस्वरुप उसकी मृत्यु हो गयी।

साथ ही, अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 5 एवं अ॰ सा॰ 9 ने भी परिसाक्ष्य दिया है कि गोली मारने से हुई उपहति पाकर मृतक गिर गया और उसे ऑटो रिक्शा पर अस्पताल ले जाया गया था, किंतु रास्ते में उसकी मृत्यु हो गयी। ज्योंही वे मृत शरीर को उसके घर लाए, अपीलार्थियों संतोष कुमार सिंह, राकेश कुमार सिंह उर्फ गुड्डू, दीनानाथ सिंह एवं धर्मेन्द्र कुमार सिंह ने वहाँ आकर गोली चलाया, किंतु सौभाग्यवश घर के किसी अधिभोगी को आग्नेयास्त्र उपहति नहीं आयी।

8. अभियोजन मामला बंद करने के बाद, अपीलार्थियों से उनके विरुद्ध सामने आने वाले अपराध में फँसानेवाले साक्ष्यों के बारे में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन प्रश्न पूछे गए थे जिनसे उन्होंने इनकार किया।

9. इस पर, विचारण न्यायालय ने अनुश्रुत गवाह अ॰ सा॰ 7 से और चिकित्सीय साक्ष्य से भी संपुष्टि पाने वाले चश्मदीद गवाहों अ॰ सा॰ 4 एवं 9 के परिसाक्ष्य पर अपना अंतर्निहित विश्वास करके समस्त अपीलार्थियों को दोषी पाया और तद्नुसार पूर्वोक्तानुसार दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज किया जो इन अपीलों में चुनौती के अधीन है।

10. दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 693 एवं 1409 वर्ष 2006 के अपीलार्थियों के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ कश्यप निवेदन करते हैं कि इस मामले में अपीलार्थियों को झूठा आलिप्त किया गया है और वस्तुतः, उन्होंने ऐसी घटना में भाग नहीं लिया था जो गवाहों अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2 एवं अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्यों से स्पष्ट होगा जिन्होंने इन अपीलार्थियों को हमलावरों के रूप में नामित नहीं किया है बल्कि उन्होंने राजू मिश्रा, काना राजू एवं मुन्ना सांगा को हमलावरों के रूप में नामित किया था और उनमें से अ॰ सा॰ 2 स्वतंत्र गवाह है जिसके परिसाक्ष्य पर सम्यक विचार करने की आवश्यकता है क्योंकि उसके परिसाक्ष्य को त्यक्त करने के लिए कुछ भी नहीं है किंतु विचारण न्यायालय ने अ॰ सा॰ 2 सहित उन समस्त गवाहों के परिसाक्ष्य पर सम्यक विचार नहीं किया था बल्कि अ॰ सा॰ 4 जो मृतक का चाचा है और मृतक के सगे भाई अ॰ सा॰ 9 जो घटना का चश्मदीद गवाह होने का दावा करता है जैसे चश्मदीद गवाहों के परिसाक्ष्य पर सम्यक् विचार किया किंतु इस मामले में सामने आने वाले तथ्यों एवं परिस्थितियों में वे चश्मदीद गवाह प्रतीत नहीं होते हैं।

11. इस संबंध में, यह प्रकाशमान किया गया था कि अ॰ सा॰ 4 के परिसाक्ष्य के मुताबिक, जब वह बिरसा चौक आया, उसने तीन व्यक्तियों पप्पू सिंह, राजू मिश्रा एवं राजेन्द्र सिंह को मृतक पर गोली चलाते देखा था। किंतु, उसने अपने फर्दबयान में कथन किया था कि वह डॉ॰ कामता प्रसाद के साथ टहलने बाहर आया था, किंतु उक्त डॉ॰ कामता प्रसाद ने परिसाक्ष्य नहीं दिया है कि अ॰ सा॰ 4 कभी भी उसके साथ था जब वह घर से बाहर आया था।

इसी प्रकार से, अ॰ सा॰ 2 स्वतंत्र गवाह जो घटनास्थल पर उपस्थित था ने भी परिसाक्ष्य दिया है कि अ॰ सा॰ 4 घटनास्थल पर उपस्थित नहीं था और तद्द्वारा, अ॰ सा॰ 4 के पास किसी भी हमलावर को

देखने का अवसर नहीं था, फिर भी उसने स्वयं का चश्मदीद गवाह होने का दावा किया, अत: उसका साक्ष्य अस्वीकार किए जाने योग्य है।

इसी प्रकार से, अ॰ सा॰ 9 (मृतक का भाई) भी घटनास्थल पर उपस्थित नहीं था। इस संबंध में, यह निवेदन किया गया था कि पुलिस के समक्ष उसने बयान दिया था कि जब वह अपने घर में था, रामानुज सिंह आया और घटना के बारे में सूचित किया, किंतु उसने अपने साक्ष्य में स्वयं का चश्मदीद गवाह होने का दावा किया और इसलिए, उसका ध्यान दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 161 के अधीन दिए गए उसके पूर्व बयान की ओर आकृष्ट किया गया था जिससे उसने इनकार किया।

12. इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 4 ने भी अपने साक्ष्य में अ॰ सा॰ 9 की उपस्थिति के बारे में नहीं कहा है और न ही उसका नाम फर्दबयान में उल्लेख पाता है। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 2 एवं अ॰ सा॰ 6 जैसे स्वतंत्र गवाहों ने भी घटनास्थल पर उसकी उपस्थिति के बारे में कुछ नहीं कहा है और तद्द्वारा, उसका परिसाक्ष्य अस्वीकार किए जाने योग्य है।

13. आगे यह निवेदन किया गया था कि कोई रामानुज सिंह, सूचक द्वारा फर्दबयान में दिए गए बयान के मुताबिक घटना के समय पर मृतक के साथ उपस्थित था, किंतु केवल अभियोजन को ज्ञात कारणों से उसका परीक्षण नहीं किया गया था और तद्द्वारा अभियोजन मामले के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाए क्योंकि वह घटना के बारे में बोलने वाला सर्वाधिक सक्षम गवाह था।

14. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि चश्मदीद गवाहों एवं अ॰ सा॰ 5 एवं अ॰ सा॰ 7 जैसे अनुश्रुत गवाहों का परिसाक्ष्य अस्वीकार किए जाने योग्य है क्योंकि वे विश्वसनीय प्रतीत नहीं होते हैं।

15. दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 421 एवं 537 वर्ष 2006 में अपीलार्थियों के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री राजीव रंजन ने अन्य अपीलार्थियों की ओर से किए गये तर्कों को अपनाकर निवेदन किया कि जहाँ तक अपीलार्थी बालेश्वर सिंह का संबंध है, वह घटना के समय पर 75 वर्ष का वृद्ध था और उसकी काफी आयु के कारण उससे घटना में भाग लेने की उम्मीद नहीं की जाती है, फिर भी उसे अभियुक्त बनाया गया है किंतु उसे झूठा आलिप्त किया जाना इन तथ्यों से स्पष्ट है जिसे अन्य अपीलार्थियों की ओर से प्रकाशमान किया गया था।

16. आगे यह निवेदन किया गया था कि जहाँ तक दूसरी घटना का संबंध है, यह कहा गया है कि चार अपीलार्थी संतोष कुमार सिंह, राकेश कुमार सिंह उर्फ गुड्डू, दीनानाथ सिंह एवं धर्मेन्द्र कुमार सिंह अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 5, अ॰ सा॰ 7 एवं अ॰ सा॰ 9 के साक्ष्य के मुताबिक मृतक के घर आए थे जब मृतक को वापस लाया गया था और गोली चलाने लगे थे, किंतु अभियोग सिद्ध किया गया नहीं पाया गया है क्योंकि ऐसा कोई संपुष्टकारी साक्ष्य अथवा आई॰ ओ॰ का स्वतंत्र निष्कर्ष नहीं था कि गोली चलायी गयी थी।

17. इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 6 स्वतंत्र गवाह है जिसने परिसाक्ष्य दिया है कि जब वह मृतक के घर आया, किसी ने उसे दूसरी घटना के बारे में सूचित नहीं किया था और आगे स्वयं अ॰ सा॰ 5 ने अपने प्रति परीक्षण में स्वीकार किया है कि मृतक के घर पर गोली चलाए जाने का कोई संकेत नहीं था और न ही कोई खाली कारतूस वहाँ पाया गया था और इन परिस्थितियों के अधीन, इस संबंध में गवाहों का परिसाक्ष्य अस्वीकार किया जाए।

18. इसके विरुद्ध, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यह सत्य है कि अ॰ सा॰ 2 स्वतंत्र गवाह ने इन अपीलार्थियों को कभी नहीं देखा है बल्कि उसने तीन व्यक्तियों राजू मिश्रा,

काना राजू एवं मुन्ना सांगा को हमलावरों के रूप में नामित किया है, किंतु यदि हम सावधानीपूर्वक अ॰ सा॰ 2 के परिसाक्ष्य का परिशीलन करते हैं, यह प्रतीत होगा कि केवल तब जब पहली गोली चलायी गयी थी, गवाहों का ध्यान मृतक की ओर आकृष्ट किया गया था और तब उसने दो व्यक्तियों राजू मिश्रा एवं काना राजू को गोली चलाते पाया था और व्यक्ति जिसने पहली गोली चलायी थी केवल पप्पू सिंह हो सकता था जिसे अ॰ सा॰ 4 द्वारा मृतक पर गोली चलाते देखा गया था। उसके (अ॰ सा॰ 4) के अनुसार, राजू मिश्रा एवं राजेन्द्र सिंह द्वारा आगे दो गोली चलायी गयी थी। उसका परिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 9 के परिसाक्ष्य से और चिकित्सीय साक्ष्य से भी संपुष्टि पाता है क्योंकि डॉक्टर ने मृतक के शरीर पर गोली लगने से हुई उपहतियों को पाया था और तद्द्वारा, विचारण न्यायालय दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज करने में बिल्कुल न्यायोचित था जिसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

19. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिलेख के परिशीलन पर हम पाते हैं कि अभियोजन ने अपना मामला सिद्ध करने के लिए कुल नौ गवाहों का परीक्षण किया है। उनमें से, अ॰ सा॰ 2 स्वतंत्र गवाह है जबकि अ॰ सा॰ 4 एवं अ॰ सा॰ 9 क्रमश: मृतक के चाचा एवं भाई हैं जिन्होंने स्वयं का चश्मदीद गवाह होने का दावा किया है, किंतु चश्मदीद गवाह अ॰ सा॰ 2 का परिसाक्ष्य अन्य चश्मदीद गवाहों अर्थात् अ॰ सा॰ 4 एवं अ॰ सा॰ 9 के परिसाक्ष्य से बिल्कुल भिन्न है।

20. इस संबंध में, यह ध्यान देने योग्य है कि अ॰ सा॰ 2 अपने साक्ष्य के मुताबिक घटना के समय पर घटनास्थल पर उपस्थित था और तीन व्यक्तियों को मृतक पर गोली चलाते देखा था और अ॰ सा॰ 2 के मुताबिक वे राजू मिश्रा, काना राजू एवं मुन्ना सांगा थे। समरुप परिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 3 का है जो अनुश्रुत गवाह है, किंतु अनुश्रुत गवाह होने के नाते अ॰ सा॰ 3 का साक्ष्य ग्राह्य नहीं है किंतु इसका संकेत है कि घटनास्थल पर, राजू मिश्रा, काना राजू तथा मुन्ना सांगा मौजूद थे। साथ ही, अभियोजन अ॰ सा॰ 4 के साक्ष्य के रूप में एक अन्य विवरण के साथ आया जिसने परिसाक्ष्य दिया है कि जब वह घटना स्थल पर था, उसने मृतक शत्रुघ्न राय को अ॰ सा॰ 1 की दुकान पर चाय पीते पाया, जिस दौरान अपीलार्थीगण बालेश्वर सिंह, सुदर्शन सिंह एवं जय प्रताप सिंह उर्फ पप्पू एक ओर से आए और तीन अन्य व्यक्ति काना राजू, राजू मिश्रा एवं राजेन्द्र सिंह दूसरी ओर से आए और तब पप्पू सिंह ने मृतक पर गोली चलाया और इस पर राजू मिश्रा एवं राजेन्द्र सिंह ने गोली चलाया। इस प्रकार, पूर्वोक्त परिस्थितियों में, प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या अ॰ सा॰ 4 का परिसाक्ष्य विश्वसनीय है?

इस संबंध में, यह कथन किया जाए कि अ॰ सा॰ 4 ने अपने प्रति परीक्षण में परिसाक्ष्य दिया है जो फर्दबयान में दिए गए उसके बयान में भी है कि वह किसी डॉ॰ कामता प्रसाद के साथ घर के बाहर आया था किंतु उक्त डॉ॰ कामता प्रसाद अ॰ सा॰ 6 ने अपने साक्ष्य में नहीं कहा है कि अ॰ सा॰ 4 उसके साथ कभी भी घटनास्थल पर था। उसने बिल्कुल स्पष्ट रूप से कहा कि वह अकेले टहलने घर के बाहर आया था और कि अ॰ सा॰ 4 घटना स्थल पर नहीं था।

इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 2 स्वतंत्र गवाह ने भी परिसाक्ष्य दिया है कि सूचक घटना के समय पर घटना स्थल पर उपस्थित नहीं था।

21. इन परिस्थितियों के अधीन, मामले के पूर्वोक्त पहलू तथा स्वतंत्र गवाह अ॰ सा॰ 2 के परिसाक्ष्य जिसमें उसने भिन्न व्यक्तियों को हमलावरों के रूप में नामित किया है, को दृष्टि में रखते हुए हम अ॰ सा॰ 4 को विश्वसनीय नहीं पाते हैं।

समरुप स्थिति अ॰ सा॰ 9 के संबंध में है बल्कि स्थिति और भी बुरी है क्योंकि उसने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 161 के अधीन दिए गए अपने बयान में स्वयं का चश्मदीद गवाह होने का दावा कभी नहीं किया था बल्कि उसने किसी रामानुज सिंह से घटना की जानकारी पाया था।

22. इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 4 ने भी घटना स्थल पर उसकी उपस्थिति के बारे में परिसाक्ष्य नहीं दिया है। यदि अ॰ सा॰ 9 घटना के समय पर उपस्थित होता, उसका नाम भी फर्दबयान में उल्लिखित किया गया होता किंतु यह न तो अ॰ सा॰ 4 के फर्दबयान में है और न ही अ॰ सा॰ 2 के परिसाक्ष्य में है। इन परिस्थितियों के अधीन, हम उसे भी विश्वसनीय नहीं पाते हैं और तद्नुसार उसका साक्ष्य अस्वीकार किए जाने योग्य है।

23. जहाँ तक गवाहों अ॰ सा॰ 5 एवं अ॰ सा॰ 7 (अ॰ सा॰ 4 का पुत्र और मृतक का भाई) का संबंध है, उनके साक्ष्य अनुश्रुत प्रकृति के हैं। तद्द्वारा, यह ग्राह्य नहीं है क्योंकि व्यक्ति अर्थात् रामानुज सिंह जिससे उन्होंने घटना की जानकारी पायी, का परीक्षण नहीं किया गया है। उक्त रामानुज सिंह सर्वाधिक सक्षम गवाह प्रतीत होता है, किंतु किसी तर्कपूर्ण कारण के बिना अभियोजन द्वारा उसे रोका गया है और तद्द्वारा ऐसे गवाह को वापस रोके जाने के कारण अभियोजन मामले की ओर प्रतिकूल निष्कर्ष अच्छी तरह निकाला जा सकता है।

24. मामले में आगे जाते हुए यह कथन किया जाए कि अभियोजन इस मामले के साथ भी आगे आया है कि मृत शरीर वापस घर लाए जाने के बाद, जब मृतक को बीच रास्ते में मृत पाया गया था, चार व्यक्ति अर्थात् संतोष सिंह, गुड्डू सिंह, दीनानाथ सिंह एवं धर्मेन्द्र सिंह आए और गोली चलाया जो अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 5, अ॰ सा॰ 7 एवं अ॰ सा॰ 9 के साक्ष्य से स्पष्ट है, किंतु हम पाते हैं कि अ॰ सा॰ 5 ने अपने प्रति परीक्षण में स्वीकार किया है कि भवन पर गोली चलाने का निशाना नहीं था और न ही कोई कारतूस बरामद किया गया था।

25. केवल यही नहीं, हम अ॰ सा॰ 6 के साक्ष्य से पाते हैं कि जब वह घटना के तुरन्त बाद मृतक के घर गया, किसी ने घटना होने के बारे में नहीं कहा था।

26. इन सब से पहले, यदि आई॰ ओ॰ का परीक्षण किया गया होता, वह इस संबंध में प्रकाश डाल सकता था क्योंकि वह अन्वेषण के क्रम में गोली चलने का कोई संकेत पा अथवा नहीं पा सकता था किंतु अभियोजन ने इस मामले में आई॰ ओ॰ का परीक्षण नहीं किया है। इन परिस्थितियों के अधीन, हमारा दृष्टिकोण है कि अभियोजन अभियोग के उस भाग को भी स्थापित करने में विफल रहा है।

27. इसके अतिरिक्त, अभियोग इस कारण से विचार का भाग निर्मित नहीं कर सकता है कि उक्त साक्ष्य जो अपीलार्थियों को अपराध में फँसाने वाला था दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अपीलार्थियों के समक्ष नहीं रखा गया था।

28. उक्त कथित तथ्यों एवं परिस्थितियों में, हम पाते हैं कि अभियोजन आरोप सिद्ध करने में बिल्कुल विफल रहा है किंतु विचारण न्यायालय ने उक्त कथित मामले के इन समस्त पहलूओं को इसके सही परिप्रेक्ष्य में विचार में नहीं लिया था और तद्द्वारा इसने अपीलार्थियों के विरुद्ध दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज करने में अवैधता किया।

29. परिणामस्वरुप, समस्त अपीलार्थियों को समस्त आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है और उनके जमानत बंध पत्रों के दायित्व से उन्मोचित किया जाता है।

30. जहाँ तक अपीलार्थी जय प्रताप सिंह उर्फ पप्पू का संबंध है, वह अभिरक्षा में है और तद्द्वारा उसे तुरन्त निर्मुक्त करने का आदेश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

31. परिणामस्वरुप, इन समस्त अपीलों को अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; jkxku e[kkikè;k;] U;k;efr

बलिराम प्रसाद

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 5254 of 2006. Decided on 6th July, 2015.

सेवा विधि–दंड–विभागीय कार्यवाही में किसी व्यक्ति को दोषी पाने के लिए आरोप सिद्ध करने का भार विभाग पर है–विभाग अथवा जाँच अधिकारी को अपचारी कर्मचारी पर अपनी निर्दोषिता सिद्ध करने के भार को शिफ्ट करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है–जाँच स्वयं विकृत है एवं नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन में की गयी है–आक्षेपित आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 9, 11, 13, 16 एवं 17)

निर्णयज विधि.–(2013) 4 SCC 301; (2006) 5 SCC 88—Relied; (2011) 4 SCC 584; (2012) 2 SCC 641—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Vaibhav Kumar, For the Petitioner; Mr. Prabhat Singh, For the Respondents.

आदेश

इस रिट आवेदन में याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा पारित मेमो सं॰ 2613 में अंतर्विष्ट आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन दो वर्षों की अवधि के लिए 3050/- रुपयों के न्यूनतम मूल वेतन तक वेतन को घटाने का दंड याची को दिया गया है। याची ने मेमो सं॰ 691 में अंतर्विष्ट दिनांक 13.5.2006 के आदेश के अभिखंडन के लिए भी प्रार्थना किया है जिसके द्वारा अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा याची को दिया गया दंड मान्य ठहराया गया है।

2. याची को दिनांक 20.9.1979 को नालन्दा जिला पुलिस बल में पुलिस कॉंस्टेबल के रूप में नियुक्त किया गया था। जब याची हंसाडीह पुलिस थाना में पदस्थापित था, हंसाडीह पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी द्वारा ट्रक स्वामियों से धन के अवैध संग्रहण के संबंध में याची एवं एक अन्य व्यक्ति के विरुद्ध लिखित परिवाद किया गया था। उक्त परिवाद के अनुसरण में, याची को निलंबनाधीन किया गया था और उसको दिनांक 2.12.2004 का आरोप-पत्र दिया गया था और उसे कारण बताओ दाखिल करने का निर्देश दिया गया था जिसमें विफल होने पर याची के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही आरंभ की जाएगी। याची द्वारा कारण बताओ दाखिल किया गया था किंतु याची द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण से असंतुष्ट होकर प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा एक अन्य आरोप-पत्र जारी किया गया था जिसमें याची को सूचित किया गया था कि उसके विरुद्ध विभागीय कार्यवाही आरंभ की गयी है। विभागीय कार्यवाही के क्रम में जाँच अधिकारी ने याची के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को सिद्ध किया गया पाया और, तत्पश्चात, प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने अनुशासनिक प्राधिकारी

होने के नाते दो वर्ष की अवधि के लिए 3050/- रुपयों के न्यूनतम मूल वेतन को वेतन के समय मान में घटाने का दंड देकर दिनांक 16.12.2005 के मेमो सं॰ 261 में अंतर्विष्ट दंड का आदेश याची के विरुद्ध पारित किया। अनुशासनिक प्राधिकारी के आदेश के विरुद्ध याची द्वारा दाखिल अपील प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा अपीलीय प्राधिकारी होने के नाते दिनांक 13.5.2006 के मेमो सं॰ 691 में अंतर्विष्ट आदेश के तहत अस्वीकार कर दी गयी थी। अपीलीय प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध याची द्वारा मेमोरियल दाखिल किया गया था किंतु याची को सूचित किया गया था कि यह पोषणीय नहीं है। विधि के अधीन अपने समस्त उपचारों का इस्तेमाल करने के बाद याची दंड के आदेश और अपील की पश्चातवर्ती खारिजी को चुनौती देते हुए इस रिट आवेदन के माध्यम इस न्यायालय के पास आया था।

3. याची की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री वैभव कुमार एवं ए॰ ए॰ जी॰ के विद्वान जे॰ सी॰ श्री प्रभात सिंह सुने गए।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री वैभव कुमार ने निवेदन किया है कि संपूर्ण अनुशासनिक कार्यवाही मूल सन्नियमों एवं प्रक्रियाओं का उल्लंघन करके की गयी है। यह निवेदन किया गया है कि हंसडीह पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी द्वारा याची के विरुद्ध आरंभिक जाँच की गयी थी और विभागीय जाँच में हंसडीह पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी ने गवाह के रूप में अभिसाक्ष्य दिया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची प्रारंभिक जाँच से अवगत नहीं था क्योंकि सब कुछ नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन में आपाण के अधीन रखा गया था। याची को जाँच रिपोर्ट कभी नहीं दी गयी थी जिसने उस पर गंभीर प्रतिकूलता कारित किया क्योंकि दंड के आदेश के पहले भी याची पर कारण बताओ नोटिस तामील नहीं किया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि जाँच अधिकारी ने याची के विरुद्ध मामला सिद्ध करने के बजाए संपूर्ण भार याची पर डाल दिया जिस दृष्टिकोण को अनुशासनिक प्राधिकारी के आदेश में भी दोहराया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि चूँकि झारखंड पुलिस निर्देशिका के नियम 828 के निबंधनानुसार याची पर अधिरोपित दंड मुख्य दंड है, इस दशा में मुख्य दंड के अधिरोपण के पहले याची को कारण बताओ नोटिस जारी करना अनुशासनिक प्राधिकारी पर बाध्यकारी था। रिट आवेदन के परिशिष्ट-4 को निर्दिष्ट करते हुए याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे यह निवेदन किया गया है कि याची ने हंसडीह पुलिस थाना की अधिकारिता के अंतर्गत कुछ निवासियों का परीक्षण करने की अनुमति देने का अनुरोध करते हुए अभ्यावेदन दिया था।

5. दूसरी ओर, ए॰ ए॰ जी॰ के विद्वान जे॰ सी॰ श्री प्रभात सिंह ने निवेदन किया है कि अनुशासनिक कार्यवाही में आवश्यक प्रक्रियाओं का सम्यक रूप से अनुसरण किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि विभागीय कार्यवाही में न्यायिक पुनर्विलोकन की अत्यन्त कम गुंजाइश है। ए॰ ए॰ जी॰ के विद्वान जे॰ सी॰ आगे निवेदन करते हैं कि जाँच रिपोर्ट की गैर-आपूर्ति ने याची पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डाला है क्योंकि याची द्वारा अनुशासनिक प्राधिकारी के समक्ष अथवा इस न्यायालय के समक्ष कोई आधार नहीं दिया गया है कि किस प्रकार याची पर प्रतिकूलता कारित हुई है।

6. याची के विरुद्ध लगाए गए अभिकथनों की जाँच हंसडीह पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी द्वारा की गयी थी और उसके द्वारा लिखित रिपोर्ट भी प्रस्तुत किया गया था जैसा दिनांक 8.11.2004 के मेमो सं॰ 910/04 में अंतर्विष्ट है। स्वीकृत रूप से हंसडीह पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी द्वारा की गयी आरंभिक जाँच से याची को अवगत नहीं कराया गया था क्योंकि याची को उक्त जाँच में भाग लेने का निर्देश कभी नहीं दिया गया था और न ही याची को जाँच रिपोर्ट की प्रति दी गयी थी। हंसडीह पुलिस

थाना के प्रभारी अधिकारी का विभागीय कार्यवाही में परीक्षण किया गया था जब हंसडीह पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी की प्रेरणा पर उक्त विभागीय कार्यवाही आरंभ की गयी थी।

7. इस संदर्भ में, **निर्मला जे॰ झाला बनाम गुजरात राज्य एवं एक अन्य, (2013)4 SCC 301,** मामले को निर्दिष्ट किया जा सकता है जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया था:–

> *^^45. mDr dh nf"V e] ;g Li"V g fd vkjfHkd tkp e nt lk{; dk mi;kx fu;fer tkp e ugh fd;k tk ldrk g D;kfd vipkjh bld lkFk lc) ugh g vkj ,lh tkp e ijh{k.k fd, x, 0;fDr;k dk çfr ijh{k.k dju dk volj ugh fn;k x;k gA ,l lk{; dk mi;kx dju ulfxd U;k; d fl)kr dk mYy?ku gkxkA***

8. जाँच अधिकारी ने प्रारंभिक जाँच के संबंध में हंसडीह पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी के निष्कर्षों को अभिलेख पर लेने में घोर अवैधता किया है।

9. जाँच प्रकट करेगा कि इसे लापरवाह तरीके से संचालित किया गया था जो जाँच अधिकारी के निष्कर्षों से स्पष्ट होगा जो याची के विरुद्ध आरोप इस आधार पर सिद्ध किया गया पाता है कि याची गवाह प्रस्तुत करके अथवा विमुक्ति का मामला बना कर स्वयं को निर्दोष सिद्ध नहीं कर सका था। इस प्रकार, जाँच अधिकारी ने ट्रक स्वामियों से जबरन धन संग्रहित करने में याची की अंतर्ग्रस्तता के संबंध में किसी प्रमाण की अनुपस्थिति में याची पर प्रमाण का भार डाल दिया था। विभाग को याची के विरुद्ध लगाए गए आरोप को सिद्ध करना था किंतु जाँच अधिकारी द्वारा इस तथ्य को पूर्णरूप से अनदेखा किया गया है।

10. इस संदर्भ में, **एम॰ वी॰ बिजलानी बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2006)5 SCC 88,** मामले को निर्दिष्ट किया जा सकता है जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया था:–

> *"25. ;g lR; g fd U;kf;d iufoyksdu e U;k;ky; dh vfèkdkfjrk lhfer gA fdr] vu'kklfud dk;okgh d nkfMd ln'k çÑfr dk gku d ukr vkjki fl) dju d fy, dN lk{; gkuk pkfg,A ;|fi foHkkxh; dk;okgh e vkjki dk nkfMd fopkj.k d leku vFkkr leLr ;fDr;Dr lng d ij fl) dju dh vko';drk ugh g] ge bl rF; dk vun[kk ugh dj ldr g fd tkp vfèkdkjh U;kf;d dYi dk; dk ikyu djrk g ftl nLrkotk dk fo'y"k.k dju ij bl fu"d"k ij vkuk gkxk fd vfHky[k ij miyCèk lkexh d vkèkkj ij vkjki fl) dju d fy, vfèklHkk0;rk dh cgyrk FkhA ,lk djr g,] og fdlh vçklfxd rF; dk fopkj e ugh y ldrk gA og çklfxd rF;k ij fopkj dju l budkj ugh dj ldrk gA og çek.k dk Hkkj f'k¶V ugh dj ldrk gA og doy vuekuk ,o vVdyk d vkèkkj ij xokgk dk çklfxd ifjlk{; vLohdkj ugh dj ldrk gA og mu vfHkdFkuk dh tkp ugh dj ldrk g ftul vipkjh vfèkdkjh dk vkjkfir ugh fd;k x;k FkkA***

11. विभागीय कार्यवाही में व्यक्ति को दोषी पाने के लिए आरोप सिद्ध करने का भार विभाग पर है। विभाग अथवा जाँच अधिकारी को अपनी निर्दोषिता सिद्ध करने के लिए अपचारी कर्मचारी पर भार डालने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। जैसी चर्चा उपर की गयी है, जाँच रिपोर्ट स्वयं मनमानी लगती

है क्योंकि केवल तात्पर्यित प्रारंभिक जाँच जिसमें याची ने भाग नहीं लिया था के आधार पर और याची पर प्रमाण का भार डालकर ट्रक स्वामियों से धन का संग्रहण करने में याची की अंतर्ग्रस्तता के संबंध में किसी ठोस प्रमाण के बिना उसे विभागीय कार्यवाही में दोषी पाया गया है। अनुशासनिक प्राधिकारी दिनांक 16.12.2005 के मेमो सं॰ 2612 में अंतर्विष्ट दंड का आदेश याची पर अधिरोपित करते हुए जाँच रिपोर्ट के निष्कर्षों के साथ सहमत हुआ है और उसने भी याची पर प्रमाण का भार डाल दिया है। अनुशासनिक प्राधिकारी का आदेश पूर्णत: विवेक का गैर इस्तेमाल दर्शाता है क्योंकि यद्यपि याची पर मुख्य दंड अधिरोपित किया गया था किंतु इसे अधिरोपित करने के पहले याची को कोई कारण बताओ नोटिस नहीं दिया गया था। इसके अतिरिक्त, याची पर जाँच रिपोर्ट तामील भी नहीं किया गया था और रिट याचिका में उस संबंध में बयान का खंडन प्रत्यर्थियों द्वारा अपने प्रतिशपथ पत्र में नहीं किया गया है।

12. ए॰ ए॰ जी॰ के विद्वान जे॰ सी॰ श्री प्रभात सिंह ने **स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एन्ड जयपुर बनाम नेमी चंद नलवाया, (2011)4 SCC 584,** मामले को अपना तर्क समृद्ध करने के लिए निर्दिष्ट किया हैं कि जाँच रिपोर्ट में निष्कर्ष के संबंध में कोई न्यायिक पुनर्विलोकन नहीं हो सकता है और निर्णय का प्रासंगिक भाग यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

> *"7. vc ;g lfuf'pr g fd U;k;ky; vihyh; U;k;ky; d :i e ÑR; ugh djx vkj ?kjy tkp e fn, x, lk{; dk iuvkdyu ugh djx vkj u gh bl vkèkkj ij gLr{ki djx fd vfHky[k ij miyCèk lkefx;k ij ,d vU; nf"Vdk.k lHko gA ;fn tkp fu"i{kr% ,o lefpr :i l dh x;h g vkj fu"d"k lk{; ij vkèkkfjr g] lk{; dh i;kIrrk vFkok lk{; dh çÑfr dh fo'oluh;rk dk ç'u foHkkxh; tkpk e fu"d"kk e gLr{ki dju dk vkèkkj ugh gkxkA vr% U;k;ky; foHkkxh; tkpk e rF; d fu"d"k e gLr{ki ugh djx] flok, tgk ,l fu"d"k fdlh lk{; ij vkèkkfjr ugh g vFkok tgk o Li"Vr% foÑr gA foÑrrk dk irk yxku dh ijh{kk ;g n[kuk g fd D;k vfèkdj.k ;fDr;Dr :i l ÑR; djr g, vfHky[k ij miyCèk lkexh ij ,l fu"d"k ij vk ldrk FkkA fdr U;k;ky;k dk vu'kkIfud ekeyk e fu"d"k e gLr{ki djuk gkxk] ;fn ulfxd U;k; d fl)krk vFkok lkfofèkd fofu;euk dk mYy?ku fd;k x;k g vFkok vkn'k euekuk] ludh] vlnHkkoi.k vFkok ckâ fopkjk ij vkèkkfjr ik;k x;k gA (n[k% ch0 lh0 pronh cuke Hkkjr l?k(Hkkjr l?k cuke th0 xU;Fke(cd vkQ bfM;k cuke nxyk l;ukjk;.k vkj ckEc mPp U;k;ky; cuke 'kf'kdkr ,l0 ikfVyA***

13. चूँकि जाँच रिपोर्ट के निष्कर्ष विकृत हैं और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन में हैं और चूँकि प्रमाण का भार याची पर डाला गया है, ए॰ ए॰ जी॰ के विद्वान जे॰ सी॰ द्वारा निर्दिष्ट निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों के प्रति प्रयोज्य नहीं हैं।

14. याची के प्रतिवाद कि याची को जाँच रिपोर्ट की आपूर्ति कभी नहीं की गयी थी, के प्रत्युत्तर में ए॰ ए॰ जी॰ के विद्वान जे॰ सी॰ द्वारा **बर्दवान सेन्ट्रल को-ऑपरेटिव बैंक लिमिटेड एवं एक अन्य बनाम असीम चटर्जी एवं अन्य, (2012)2 SCC 641,** मामले को निर्दिष्ट किया गया है जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

> *"19. fdr ekey dk ,d igy g ft l vun[kk ugh fd;k tk ldrk gA ch0 d#.kkdj ekey e] ;g vfHkfuèkkfjr dju d ckotn fd vu'kkIfud dk;okgh dk lkeuk dj jg depkjh dk tkp vfèkdkjh dh fjikV dh çfr dh xj&vkifr*

ulfxd U;k; l budkj d rY; g] fu.k; d ckn d Hkkx e ;g lçf{kr fd;k x;k Fkk fd D;k oLrqr% tkp fjikV dh çfr dh xj&çLrqh d dkj.k depkjh ij çfrdyrk dkfjr gb g] bl ij çR;d ekey d rF;k e fopkj fd;k tkuk gkxkA ;g lçf{kr fd;k x;k Fkk fd tgk tkp fjikV çLrqr djuk ekey d vfre ifj.kke d çfr dkb vrj mRiUu ugh djxk] lcfèkr depkjh dk viuk dr0; xg.k dju ,o leLr ikfj.kkfed ykHkk dk iku dh vuefr nuk U;k; dh foÑrrk gkxhA

*20. ch0 d#.kkdj ekey e ;g Hkh lçf{kr fd;k x;k Fkk fd vu'kkfud dk;okgh e depkjh dk tkp vfèkdkjh dh fjikV çLrqr ugh fd, tku dh fLFkfr e ml ;g Li"V dju fd fjikV dh xj&vkifr d dkj.k ml ij dku lh çfrdyrk dkfjr gb Fkh] d fy, ml l{ke cuku d fy, bldh çfr ml miyC;k djk;h tkuh pkfg,A ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd nM dk vkn'k ;kf=d :i l bl vkèkkj ij vikLr ugh fd;k tkuk pkfg, fd tkp fjikV dh çfr dh vkifr depkjh dk ugh dh x;h FkhA***

15. अपने तर्क कि जाँच रिपोर्ट की गैर आपूर्ति ने याची पर कोई प्रतिकूलता कारित नहीं किया है, सिद्ध करने के लिए ए॰ ए॰ जी॰ के विद्वान जे॰ सी॰ द्वारा इस निर्णय को उद्धृत किया गया है।

16. चूँकि याची के पीठ पीछे की गयी आरंभिक जाँच पर किये गये विश्वास की दृष्टि में स्वयं जाँच विकृत एवं विधि की दृष्टि में अविद्यमान है और चूँकि अपनी निर्दोषिता के प्रमाण का भार याची पर डाला गया है और चूँकि अनुशासनिक प्राधिकारी का आदेश स्वयं विवेक का पूर्णत: गैर-इस्तेमाल दर्शाता है क्योंकि यह रहस्यमय है, ऐसी परिस्थितियों में यह प्रश्न कि क्या याची को जाँच रिपोर्ट की गैर-आपूर्ति ने प्रतिकूलता कारित किया था, खुला छोड़ दिया गया है।

17. उक्त निष्कर्ष की दृष्टि में, चूँकि यह अभिनिर्धारित किया गया है कि स्वयं जाँच विकृत है और विधि के अनुरुप संचालित नहीं किया गया है और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन में है जिस पर अपीलीय प्राधिकारी द्वारा विचार नहीं किया गया है, इसलिए प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा पारित मेमो सं॰ 2812 में अंतर्विष्ट दिनांक 16.12.2005 के आदेश और अपील खारिज करते हुए प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा पारित मेमो सं॰ 691 में अंतर्विष्ट दिनांक 13.5.2006 के आदेश को परिणामस्वरुप एतद् द्वारा अभिखंडित एवं अपास्त किया जाता है। चूँकि दंड का आदेश अपास्त किए जाने के कारण समस्त पारिणामिक लाभों के प्रति याची की हकदारी पर प्रत्यर्थी सं॰ 4 द्वारा विचार किया जाएगा जिसे इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से दो माह की अवधि के भीतर इस पर आवश्यक आदेश पारित करने का निर्देश दिया जाता है।

18. तद्नुसार, यह रिट आवेदन निपटाया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

फगुनी देवी एवं अन्य

cuke

रेलि महतो एवं अन्य

S.A. No. 46 of 2002. Decided on 16th September, 2015.

अभिधान अपील सं॰ 51 वर्ष 1994 में तृतीय अपर जिला न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 19 फरवरी, 2002 के निर्णय तथा 7 मार्च, 2002 के डिक्री के विरुद्ध।

हिंदू विधि–बँटवारा–उत्तरजीविता का सिद्धांत–अभिलिखित अभिधारी की विधवा ने अपने पति द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति में अधिकार, अभिधान एवं हित अर्जित नहीं किया था क्योंकि उसकी मृत्यु वर्ष 1937 के पहले हो गयी और उसकी मृत्यु के बाद संपत्ति, भले ही इसका बँटवारा हो गया हो, संयुक्त परिवार के पास वापस चली गयी–समवर्ती निष्कर्ष हैं कि वाद संपत्ति पर वादियों का अभिधान की एकता एवं कब्जा नहीं था–यदि वे अभिलिखित अभिधारी की विधवा द्वारा निष्पादित विक्रय विलेखों के आधार पर अपने अधिकार, अभिधान, हित एवं कब्जा का दावा कर रहे हैं, उन्हें अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा के लिए वाद विरचित करना चाहिए था–अभिवचनों के परे के तथ्यों को अधिमान देने की आवश्यकता नहीं है–अपील खारिज। (पैराएँ 16 से 20)

निर्णयज विधि.–(1977) 3 SCC 99—Distinguished.

अधिवक्तागण.–Mr. Ravi Ranjan Tiwari, For the Appellants; Mr. Arjun Narayan Deo, For the Respondents.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–यह अपील अभिधान अपील सं॰ 51 वर्ष 1994 में विद्वान तृतीय अपर जिला न्यायाधीश, हजारीबाग द्वारा पारित एवं हस्ताक्षरित दिनांक 19 फरवरी, 2002 के निर्णय एवं दिनांक 7 मार्च, 2002 की डिक्री के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा बँटवारा वाद सं॰ 80 वर्ष 1989 में द्वितीय अपर मुंसिफ, हजारीबाग द्वारा पारित एवं हस्ताक्षरित दिनांक 20 सितंबर, 1994 का निर्णय एवं दिनांक 30 सितंबर, 1994 की डिक्री संपुष्ट की गयी है।

2. वादीगण ने वाद पत्र में किए गए प्रकथनों के आधार पर दिनांक 17 जून, 1970, दिनांक 27 फरवरी, 1980, दिनांक 22 मई, 1967, दिनांक 7 मार्च, 1967 एवं दिनांक 14 सितंबर, 1972 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेखों के अनुसार 4.39¾ एकड़ भूमि के संबंध में अपना तख्ता पृथक करने के लिए बँटवारा वाद दाखिल किया था।

3. ग्राम चतरमांडू, पी॰ एस॰ रामगढ़, पी॰ एस॰ सं॰ 116, जिला हजारीबाग के खाता सं॰ 105 के अधीन भूमि मूलतः सुरजन महतो, फूचन महतो एवं घुजु महतो के नामों में दर्ज की गयी थी। उसी गाँव के खाता सं॰ 125 से संबंधित भूमि जीतन महतो, मिठुन महतो, बिगन महतो, बोधिया महतो, सुखन महतो एवं फुचन महतो के नामों में दर्ज की गयी थी जबकि उसी गाँव की खाता सं॰ 55 से संबंधित भूमि जीतन महतो, सुरजन महतो, फुचन महतो एवं घुजु महतो के नामों में दर्ज की गयी थी। समस्त अभिलिखित अभिधारियों की मृत्यु एक के बाद एक हो गयी। सुखन महतो की मृत्यु अपनी विधवा मोस्मात गहनी एवं पुत्री भुखली को अपने पीछे छोड़ते हुए हो गयी। सुरजन महतो अपने जीवनकाल के दौरान वादी सं॰ 2 एवं 3 के पिता को अपने घर लाया और वह घर जमाई के रूप में रहने लगे क्योंकि सुरजन महतो को पुत्र नहीं था। उसने अपनी पुत्री भुखली का विवाह वादी सं॰ 2 एवं 3 के पिता के साथ किया। वादी सं॰ 3 एवं 4 का जन्म सुरजन के घर में हुआ था। मोस्मात गहनी ने वाद पत्र की अनुसूची B में वर्णित भूमि से संबंधित अपना हिस्सा अपनी पुत्री भुखली के पक्ष में दिनांक 25 जून, 1940 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख (प्रदर्श 1/F) के फलस्वरुप अंतरित किया। विक्रय विलेख के निष्पादन के बाद, भुखली ने अपने नाम में भूमि नामांतरित करवाया और इसके उपर कब्जा का उपभोग करने लगी और सरकार को लगान का भुगतान भी करने लगी। भुखली ने वर्ष 1946 में पाँच वर्षों के लिए उत्तिम महतो के पक्ष में बंधक विलेख निष्पादित

किया। तत्पश्चात, उसने पुनः वादी सं॰ 1 एवं 2 जो और कोई नहीं बल्कि भुखली के पुत्र है के पक्ष में दिनांक 27 फरवरी, 1980 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख द्वारा अनुसूची B की खाता सं॰ 125 से संबंधित भूमि का अपना हिस्सा अंतरित किया। उन्होंने अपने नामों को नामांतरित करवाया और तत्कालीन बिहार राज्य को लगान का भुगतान करने लगे।

4. दिनांक 17 जून, 1970 को उक्त भुखली (सुरजन महतो की पुत्री) ने अपने दो पुत्रों अर्थात् वादी सं॰ 3 एवं 4 के पक्ष में उसी गाँव चतरमांडू के खाता सं॰ 125 एवं 55 से संबंधित भूमि (वाद पत्र की अनुसची C में वर्णित) में अपना हिस्सा अंतरित किया और तद्नुसार, वादी सं॰ 3 एवं 4 ने भी राजस्व अभिलेख में अपने नामों को नामांतरित करवाया और राज्य को लगान का भुगतान करने लगे।

यद्यपि वादीगण ने अभिलिखित अभिधारियों के हिस्सा के अनुसार भूमि खरीदा था, किंतु माप एवं सीमांकन द्वारा संपत्तियों का बँटवारा नहीं हुआ था और पक्षगण अपनी सुविधानुसार भूमि पर खेती कर रहे थे। चूँकि भूमि उनके संयुक्त कब्जा के अधीन थी एवं अभिधान की एकता थी, वादीगण ने इसका बँटवारा करने का सोचा।

5. अभिलिखित अभिधारी फूचन महतो के संततियों लालधारी महतो, बरकू महतो, सरखू महतो, एवं रेली महतो ने भी वादी सं॰ 3 एवं 4 के पक्ष में (वाद पत्र की अनुसूची D में वर्णित भूमि) दिनांक 7 मार्च, 1967 एवं दिनांक 22 मई, 1967 को दो विक्रय विलेखों को निष्पादित किया जिस भूमि को उन्होंने अपने नामों में नामांतरित करवाया और बिहार राज्य को लगान का भुगतान करने लगे।

जीतन महतो, मिठुन महतो, बिगन महतो एवं बोधिया महतो की संततियाँ आपस में पृथक हो गए थे और अपने पृथक कब्जावारी के अनुसार अपने-अपने हिस्सों का बँटवारा कर लिया था और इस दशा में, उन्हें वाद का पक्ष नहीं बनाया गया था। प्रतिवादी सं॰ 7 अवयस्क था जिसका प्रतिनिधित्व उसके नैसर्गिक संरक्षक उसकी माता प्रतिवादी सं॰ 6 के माध्यम से किया गया था और उसका हित अवयस्क के विरुद्ध प्रतिकूल नहीं था। वाद पत्र में यह प्रतिवाद किया गया था कि वादीगण भूमि पर खेती करने में मुश्किल एवं असुविधा महसूस करने लगे थे और, इसलिए, उन्होंने रजिस्टर्ड विक्रय विलेखों जिन्हें उनके पक्ष में निष्पादित किया गया था के अनुसार बँटवारा की मांग करने लगे, किंतु प्रतिवादीगण सहमत नहीं हुए थे और अंततः दिनांक 1 जुलाई, 1989 को संपत्ति का बँटवारा करने से इनकार कर दिया। खाता सं॰ 105, 125 एवं 55 की संपूर्ण भूमि जो अभिलिखित अभिधारियों अर्थात् सुरजन महतो, फूचन महतो एवं घुजु महतो के हिस्सा में थी, वाद पत्र की अनुसूची E में वर्णित की गयी है।

चूँकि प्रतिवादीगण ने संपत्ति का बँटवारा करने से इनकार कर दिया, जैसा दावा वादीगण द्वारा किया गया था, उन्होंने विद्वान मुंसिफ, हजारीबाग के न्यायालय में बँटवारा वाद सं॰ 80 वर्ष 1989 लाया।

6. प्रतिवादीगण/प्रत्यर्थीगण नोटिस तामील किए जाने के बाद उपस्थित हुए और अपने लिखित कथनों को दाखिल किया। प्रतिवादी सं॰ 1 से 5 प्रतिवाद करने वाले प्रतिवादीगण हैं और उन्होंने पृथक रूप से अपना लिखित कथन दाखिल किया है। दाखिल किए गए लिखित कथन की निरंतरता में, उन्होंने अतिरिक्त लिखित कथन भी दाखिल किया है। वाद के लंबित रहने के दौरान, प्रतिवादी सं॰ 2 उत्तिम महतो की मृत्यु अपने पीछे अपने विधिक उत्तराधिकारियों को छोड़ते हुए हो गयी, जिन्हें प्रतिवादी सं॰ 2 से 2 (g) के रूप में प्रतिस्थापित किया गया है और प्रतिस्थापित प्रतिवादीगण ने भी अपना लिखित कथन दाखिल किया है। विद्वान मुंसिफ दिनांक 14 नवंबर, 1990 एवं दिनांक 28 जून, 1994 को क्रमशः प्रतिवादी सं॰ 6 से 9 एवं 11 तथा प्रतिवादी सं॰ 10 के विरुद्ध एकपक्षीय रूप से अग्रसर हुए। प्रतिवादी सं॰ 15 वकालतनामा दाखिल करके उपस्थित हुआ, किंतु लिखित कथन दाखिल नहीं किया। दिनांक 28 जून, 1994 को यह दर्ज किया गया था कि प्रतिवादी सं॰ 15 के विरुद्ध मामला एकपक्षीय रूप से अग्रसर होगा।

प्रतिवादी सं॰ 17 से 21 मध्यक्षेपी हैं और उन्होंने वादीगण के मामला का समर्थन करते हुए अपना पृथक लिखित कथन दाखिल किया था। प्रतिवादी सं॰ 12, 13, 14 एवं 16 ने भी लिखित कथन दाखिल करके वादीगण के मामला का समर्थन किया था। प्रतिवादी सं॰ 2 से 2 (e) और प्रतिवादी सं॰ z(f) की ओर से लिखित कथन क्रमश: दिनांक 17 मार्च, 1993 एवं दिनांक 28 जून, 1994 को दाखिल किए गए थे। प्रतिवादी सं॰ 2 एवं 2 (g) ने प्रतिवादी सं॰ 2 उत्तिम महतो द्वारा दाखिल मूल लिखित कथन को अपनाया था।

7. प्रतिवाद कर रहे प्रतिवादी सं॰ 1 से 5 ने कथन किया है कि वाद पोषणीय नहीं है; वाद के लिए वाद हेतुक नहीं था; वादीगण का दावा परिसीमा की विधि एवं प्रतिकूल कब्जा द्वारा वर्जित था; प्रतिवादीगण ने प्रतिकूल कब्जा द्वारा भी अपना अभिधान पुख्ता किया था; वाद आवश्यक पक्षों के गैर संयोजन एवं कुसंयोजन के कारण दोषपूर्ण है और उन आवश्यक पक्षों के नामों को उनके लिखित कथन में प्रकट किया गया है। यह भी स्पष्ट किया गया था कि ललित महतो का सुखन महतो के रूप में ज्ञात पुत्र नहीं था, बल्कि उसके पुत्र का नाम सुरजन महतो था जिसकी मृत्यु वर्ष 1935 में और न कि वर्ष 1939 में हुई थी। सुरजन महतो की मृत्यु अपने पीछे अपनी विधवा गहनी एवं तीन पुत्रियों को छोड़ते हुए हो गयी। यह कहना गलत है कि सुरजन महतो की मृत्यु अपने पीछे अपनी विधवा एवं एक पुत्री को छोड़ते हुए हो गयी। भुखली सबसे छोटी पुत्री थी जिसकी मृत्यु वर्ष 1982 में हुई जबकि उसकी दो बहनों की मृत्यु क्रमश: वर्ष 1983 एवं 1988 में हुई। अन्य दो पुत्रियों की संततियों को वाद का पक्ष नहीं बनाया गया है और वाद पत्र की अनुसूची A में दी गयी वंशावली न तो सही है और न ही पूर्ण। इससे इनकार किया गया है कि वादीगण सुरजन महतो के परिवार के सदस्य अथवा संतति हैं। यह कहना भी गलत है कि सुरजन महतो वादी सं॰ 2 एवं 3 के पिता को अपने घर लाया और उसे घरजमाई के रूप में रखा और वादी सं॰ 3 एवं 4 का जन्म सुरजन महतो के घर में हुआ था। वस्तुत: सुरजन की मृत्यु के बाद भुखली का विवाह उसके चाचाओं फूचन एवं घुजु द्वारा किया गया था, जबकि अन्य दो पुत्रियों का विवाह पहले सुरजन महतो के जीवन काल के दौरान हुआ था।

8. प्रतिवाद कर रहे प्रतिवादीगण का मुख्य प्रतिवाद यह है कि सुरजन उर्फ सुखन महतो की मृत्यु वर्ष 1935 में किसी समय हुई और उसकी मृत्यु के बाद, उसकी विधवा मोस्मात गहनी ने संपत्ति में कोई अधिकार उत्तराधिकार में नहीं पाया था, बल्कि वह केवल भरण-पोषण की हकदार थी और सुरजन महतो के उत्तरजीवी भाईयों अर्थात् फूचन एवं घुजु द्वारा उसे यह प्रदान किया जाता था। मोस्मात गहनी घर में रह रही थी, जो सुरजन महतो के कब्जे में था, किंतु उसका कृषि भूमि के उपर खेतीवाला कब्जा नहीं था। सुरजन महतो की मृत्यु के बाद, संपत्ति उत्तरजीवी भाईयों फूचन एवं घुजु पर न्यागत हुई जिन्होंने संपूर्ण संपत्तियों का बँटवारा कर लिया और बँटवारा के बाद वे संपत्ति के प्रत्येक इंच पर अपने अधिकारपूर्ण कब्जा का उपभोग कर रहे थे। सुरजन के दो उत्तरजीवी भाई गहनी की देखभाल कर रहे थे और उसको भरण-पोषण प्रदान कर रहे थे जिसकी वह विधि की दृष्टि में हकदार थी। केवल यही नहीं, सबसे छोटी पुत्री भुखली का विवाह फूचन एवं घुजु ने किया था। महत्वपूर्ण बिंदु जिसे उन्होंने उठाया है यह है कि मोस्मात गहनी का संपत्ति में कोई वैध अधिकार नहीं था और इसलिए वर्ष 1940 में अपनी पुत्री भुखली के पक्ष में उसके द्वारा किया गया अंतरण, यदि हो, अवैध था और उस अंतरण द्वारा उसकी पुत्री भुखली ने संबंधित संपत्ति में वैध अधिकार, अभिधान एवं हित अर्जित नहीं किया था। पूर्वोक्त विक्रय विलेख को प्रभाव नहीं दिया गया था और न ही वादीगण मोस्मात गहनी द्वारा भुखली के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख के आधार पर अथवा पश्चातवर्ती विक्रय विलेखों जिन्हें भुखली द्वारा अपने पुत्रों के पक्ष में निष्पादित किया गया था द्वारा काबिज हुए थे।

9. अनुसूची संपत्तियाँ, जिनके लिए बँटवारा इप्सित किया गया था, बँटवारा के लिए उपलब्ध नहीं थी। अभिधान की एकता एवं कब्जा नहीं था। विरचित वाद पोषणीय नहीं है। वाद हेतुक नहीं था। अतः, वादीगण द्वारा लाए गए बँटवारा वाद को व्यय के साथ खारिज करने की आवश्यकता है।

10. विद्वान विचारण न्यायालय ने पक्षों के अभिवचनों के आधार पर निम्नलिखित विवाद्यकों को विरचित किया:–

(i) D;k okn tlk fojfpr fd;k x;k g ik"k.kh; g

(ii) D;k oknhx.k d ikl okn d fy, okn grd g

(iii) D;k okn vko';d i{kk d vl;ktu d dkj.k nk"ki.k g

(iv) D;k oknhx.k fnukd 17 tu] 1970, 27 Qjojh] 1980, 22 eb] 1967, 7 ekp] 1967 ,o 14 flrcj] 1972 d foØ; foy[kk d vkèkkj ij cVokjk dh fMØh d gdnkj g

(v) D;k ekLekr xguh d ikl fnukd 25 tu] 1940 dk Hk[kyh noh d i{k e Hkfe d vrj.k dk vfèkdkj Fkk vkj D;k ml vkèkkj ij oknhx.k d i{k e Hk[kyh noh }kjk fnukd 17 tu] 1970 ,o fnukd 27 Qjojh] 1980 d foØ; foy[k oèk g

(vi) oknhx.k fdl vurk"k] ;fn gk] d gdnkj g

11. विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अपील के विनिश्चयकरण के लिए तीन बिंदुओं को विरचित किया जो निम्नलिखित हैं:–

(i) D;k okn tlk fojfpr fd;k x;k g ik"k.kh; g

(ii) D;k i{kk d chp okn Hkfe d lcèk e vfHkèkku dh ,drk ,o dCtk Fkk

(iii) D;k ljtu mQ lq[ku dh eR; o"k 1935 e gb vFkok o"k 1939 e

12. इस न्यायालय ने अपील ग्रहण करते हुए विधि के निम्नलिखित सारवान प्रश्नों को विरचित किया था:–

(i) D;k voj vihyh; U;k;ky; u fopkj.k U;k;ky; d fu"d"kk fd mud thoudky d nkjku rhu Hkkb;k vFkkr ljtu egrk] Qpu egrk ,o ?kt egrk d chp cVokjk gvk Fkk] dk fopkj e fy, fcuk ljtu dh eR; ij mÙkjthfork ykx dju e fofèk e xyrh fd;k gA

(ii) D;k ekLekr xguh u viu ifr dh eR; d ckn viu ifr }kjk NkMh x;h lifÙk e Lor= vfèkdkj] vfHkèkku ,o fgr vftr fd;k g

13. वाद के पक्षों ने अपने दावों एवं प्रतिवादों के समर्थन में दस्तावेज प्रस्तुत किया और साक्ष्य दिया। वादीगण के अनुसार, तीन भाईयों सुरजन, फूचन एवं घुजु के बीच बँटवारा हुआ था और बँटवारा के बाद वे अपने–अपने हिस्सों का अनन्य रूप से उपभोग कर रहे थे। सुरजन की मृत्यु के बाद, उसकी विधवा मोस्मात गहनी ने उसके द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति में वैध अधिकार, अभिधान एवं हित अर्जित किया और दिनांक 25 जून, 1940 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख (प्रदर्श 1/F) के फलस्वरुप उसके द्वारा किए गए अंतरण ने भुखली देवी को उक्त संपत्ति पर पूर्ण अधिकार दिया। उक्त विक्रय विलेख के निष्पादन के बाद, भुखली ने दिनांक 17 जून, 1970 को वादी सं॰ 3 एवं 4 के पक्ष में विक्रय विलेख (प्रदर्श 1/D) निष्पादित किया।

पुनः भुखली एवं गोबर्धन ने दिनांक 27 फरवरी, 1980 को वादी सं॰ 1 एवं 2 के पक्ष में विक्रय विलेख (प्रदर्श 1/A) निष्पादित किया। जहां तक 22 मई, 1967 के विक्रय विलेख (प्रदर्श 1) का संबंध है, यह प्रतिवाद किया गया था कि उक्त विक्रय विलेख रेली महतो (मूल प्रतिवादी सं॰ 2) द्वारा वादी सं॰ 3 एवं 4 के पक्ष में निष्पादित किया गया था और दिनांक 7 मार्च, 1967 के निर्बंधित विक्रय विलेख (प्रदर्श–1/B) के संबंध में यह प्रतिवाद किया गया था कि इसे प्रतिवादी सं॰ 3 से 5 द्वारा वादी सं॰ 3 एवं 4 के पक्ष में निष्पादित किया गया था। जहाँ तक दिनांक 14 सितंबर, 1972 के विक्रय विलेख (प्रदर्श 1/C) का संबंध है, वादीगण ने कोई घोषणा नहीं किया है।

14. इस न्यायालय द्वारा विरचित विधि के सारवान प्रश्नों का उत्तर देने के लिए, मैंने अवर न्यायालय अभिलेखों एवं आक्षेपित निर्णयों का परिशीलन किया है। वादीगण ने यह मामला बनाने का प्रयास किया है कि हिंदू महिलाओं का संपत्ति में अधिकार अधिनियम, 1937 के अस्तित्व में आने के बाद वर्ष 1939 में सुरजन की मृत्यु हो गयी। सुरजन के जीवनकाल के दौरान, तीन भाईयों के बीच संपत्ति का बँटवारा हुआ था। अतः, मोस्मात गहनी ने अपने पति द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति पर वैध अधिकार, अभिधान एवं कब्जा अर्जित किया। इस संदर्भ में, विचारण न्यायालय ने सुरजन की मृत्यु की तिथि विनिश्चित करने के लिए पृथक विवाद्यक विरचित नहीं किया है। अवर अपीलीय न्यायालय ने सुरजन की मृत्यु की तिथि के संबंध में विवाद्यक पर विनिर्दिष्ट मत दिया है किंतु तथ्य बना रहता है कि विचारण न्यायालय और अवर अपीलीय न्यायालय दोनों ने दोनों पक्षों द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य को निर्दिष्ट करके मुद्दे पर चर्चा किया है। दोनों अवर न्यायालय इस निष्कर्ष पर आए हैं कि सुरजन की मृत्यु वर्ष 1935 में किसी समय हुई। सुरजन की मृत्यु की सटीक तिथि अभिलेख पर नहीं लायी गयी है, किंतु दोनों अवर न्यायालयों का समवर्ती निष्कर्ष है कि सुरजन की मृत्यु वर्ष 1937 के पहले हुई। मामले के उस दृष्टिकोण में, मोस्मात गहनी को केवल संयुक्त परिवार की संपत्तियों से अपने भरण–पोषण का हकदार अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए था।

दोनों अवर न्यायालयों के समवर्ती निष्कर्षों की दृष्टि में कि यदि सुरजन की मृत्यु वर्ष 1937 के पहले हुई थी, क्या तीनों भाईयों के बीच बँटवारा हुआ था या नहीं, अतात्विक बन जाता है। हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम के अनुसार, सुरजन की मृत्यु के बाद संपूर्ण संयुक्त संपत्तियाँ अथवा सुरजन द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति यदि उसने इसे पूर्व बँटवारा में पाया था, उत्तरजीवी दो भाईयों अर्थात् फूचन एवं घुजु पर न्यागत/वापस होनी चाहिए, क्योंकि सुरजन का कोई पुत्र नहीं था। प्रतिवादीगण ने मामला बनाया है कि सुरजन की मृत्यु के बाद मोस्मात गहनी ने सुरजन द्वारा छोड़ी गयी गृह संपत्ति अर्जित किया और उसकी मृत्यु के बाद पूर्वोक्त घर वादीगण के अधिभोग में है। यह विनिर्दिष्टतः प्रकथन किया गया है कि मोस्मात गहनी का किसी कृषि संपत्ति पर खेती वाला कब्जा नहीं था। दो शेष भाईयों अर्थात् फूचन एवं घुजु ने अपने बीच संपूर्ण संपत्ति का बँटवारा किया और उनमें से प्रत्येक ने आधा हिस्सा अर्जित किया और बँटवारा मोस्मात गहनी को उसके जीवनकाल तक भरण–पोषण प्रदान करने के अध्यधीन था जो उन्होंने किया।

15. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विधि की प्रतिपादना यह होगी कि मोस्मात गहनी ने सुरजन द्वारा छोड़ी गयी संपत्तियों में कोई अधिकार अर्जित नहीं किया था और वह किसी के पक्ष में, वर्ष 1940 में अपनी पुत्री भुखली के पक्ष में, के बारे में क्या कहा जाए, भूमि का कोई टुकड़ा अंतरित करने की हकदार नहीं थी। दोनों अवर न्यायालयों ने समवर्ती निष्कर्ष दिया है कि मोस्मात गहनी का वैध अधिकार, अभिधान एवं हित नहीं था और वह वर्ष 1940 में अपनी पुत्री भुखली के पक्ष में संपत्ति अंतरित करने की हकदार नहीं थी। विचारण न्यायालय ने इस तथ्य को ध्यान में लिया है कि हिंदू महिलाओं का संपत्ति में अधिकार अधिनियम, 1937 का अधिनियमन वादीगण की मदद नहीं करता है क्योंकि मोस्मात गहनी ने संपत्ति में वैध अधिकार अर्जित नहीं किया था। चूँकि यह विनिश्चित किया गया था कि सुरजन की मृत्यु वर्ष 1937 के पहले हुई थी, उत्तरजीविता का सिद्धांत

अभिभावी होगा और सुरजन की मृत्यु के बाद उत्तरजीवी दो भाईयों फूचन एवं घुजु ने संपूर्ण संयुक्त परिवार की संपत्ति अर्जित किया था।

16. विद्वान अधिवक्ता ने **(1977)3 SCC 99: AIR 1977 SC 1944** में प्रकाशित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 की धारा 14 (1) एवं (2) की प्रयोज्यता पर चर्चा की गयी है, उस प्रभाव का निष्कर्ष दिया गया है। उक्त निर्णय में सामने आने वाले तथ्य एवं परिस्थितियाँ वर्तमान मामले पर प्रयोज्य प्रतीत नहीं होती है, क्योंकि मोस्मात गहनी की मृत्यु वर्ष 1940 में अर्थात् हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, 1956 के प्रभाव में आने के पहले हो गयी। अतः धारा 14 (1) एवं (2) के अधीन उपदर्शित उपचार मोस्मात गहनी को उपलब्ध नहीं था।

मैंने पहले ही अभिनिर्धारित किया है कि मोस्मात गहनी ने संपत्ति में अधिकार, अभिधान एवं हित अर्जित नहीं किया था क्योंकि सुरजन की मृत्यु हिंदू महिलाओं की संपत्ति में अधिकार अधिनियम, 1937 के प्रभाव में आने के पहले हो गयी।

उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि अवर अपीलीय न्यायालय ने सुरजन की मृत्यु पर उत्तरजीविता का सिद्धांत लागू करने में गलती नहीं किया है। साथ-साथ, विचारण न्यायालय के निष्कर्ष भी सही हैं, जहाँ न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि मोस्मात गहनी ने अपने पति सुरजन द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति में अधिकार, अभिधान एवं हित अर्जित नहीं किया था क्योंकि सुरजन की मृत्यु वर्ष 1937 के पहले हो गयी थी और उसकी मृत्यु के बाद संपत्ति, अगर बँटवारा हो भी गया था, संयुक्त परिवार को वापस चली गयी।

17. यद्यपि मैंने सारवान प्रश्नों का उत्तर दिया है, किंतु कतिपय तथ्यों, जो अभिलेख पर उपलब्ध है, की भावी जटिलता से बचने के लिए आकलन करने की आवश्यकता है। यह प्रतीत होता है कि वादीगण निष्पक्ष रूप से इस न्यायालय के समक्ष नहीं आए हैं। विक्रय विलेख प्रदर्श 1/F में खाता सं॰ के स्थान पर छलसाधन किया गया है। प्रदर्श 1/F, 25 जून, 1940 को मोस्मात भूखली के पक्ष में मोस्मात गहनी द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख में, भूखंड सं॰ 105 लिप्त लेखन करने के बाद उल्लिखित किया गया था, किंतु जब साक्ष्य में रजिस्ट्री का अभिलेख लाया गया, यह इस तथ्य का उपदर्शक था कि विलेख खाता सं॰ 150 से संबंधित भूखंड के लिए निष्पादित किया गया था।

उक्त के अतिरिक्त, वादीगण द्वारा दी गयी वंशावली भी सही नहीं है क्योंकि सुरजन की मृत्यु अपने पीछे अपनी विधवा मोस्मात गहनी एवं भुखली, जो सबसे छोटी थी और जिसका विवाह सुरजन महतो के जीवनकाल के दौरान नहीं हुआ था बल्कि उसके चाचाओं अर्थात् फूचन एवं घुजु द्वारा उसका विवाह किया गया था जिन्होंने विवाह व्यय वहन किया था, सहित तीन पुत्रियों को छोड़ते हुए हो गयी थी। वादीगण ने भुखली की दो अन्य बहनों के संततियों को अभियोजित नहीं किया है, अतः, विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि वाद आवश्यक पक्षों के असंयोजन एवं कुसंयोजन के कारण दोषपूर्ण है।

18. तर्क आगे बढ़ाने के क्रम में, अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि मोस्मात गहनी आवश्यक खर्चों, उदाहरणस्वरुप, घर की मरम्मत के प्रयोजन से अथवा श्राद्ध करने अथवा अपने पति के अन्य अनुष्ठानों को करने के प्रयोजन से अथवा अन्य आवश्यक खर्चों को पूरा करने के लिए अपने स्वर्गीय पति के हिस्सा में आयी संपत्ति को बेचने की हकदार थी और, इसलिए, संपत्ति के विक्रय के लिए वाद हेतुक अच्छी तरह से वैध माना जा सकता है। मैं नहीं पाता हूँ कि इस बिंदु पर वाद पत्र में ऐसा कोई प्राख्यान किया गया है अथवा साक्ष्य दिया गया है। अभिवचनों के परे तथ्यों को अधिमान दिए जाने की आवश्यकता नहीं है, अतः, इस प्रकार किए गए तर्कों को पूरी तरह से अस्वीकार किया जाता है।

19. यह विवादित नहीं है कि सुरजन की मृत्यु पुत्र के बिना हो गयी और वादीगण ने पाँच विक्रय विलेखों अर्थात् प्रदर्श 1 से प्रदर्श 1/D के आधार पर बँटवारा का दावा किया है। प्रदर्श 1/F दिनांक 25

जून, 1940 को मोस्मात गहनी द्वारा अपनी पुत्री भुखली के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख है। समवर्ती निष्कर्ष है कि वाद संपत्ति पर वादीगण के अभिधान की एकता एवं कब्जा नहीं था। यदि वे पूर्वोक्त विक्रय विलेखों के आधार पर अपने अधिकार, अभिधान, हित एवं कब्जा का दावा कर रहे हैं, उन्हें विश्वास किए गए दस्तावेजों में वर्णित संपत्तियों पर अपने अधिकार, अभिधान, हित एवं कब्जा की संपुष्टि की घोषणा के लिए वाद विरचित करना चाहिए था। अवर न्यायालयों ने सही प्रकार से अभिनिर्धारित किया है कि वादीगण द्वारा दाखिल वाद अपने वर्तमान स्वरुप में पोषणीय नहीं था।

20. उपर की गयी चर्चा और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री की दृष्टि में, यह अपील प्रतिवाद किए जाने पर व्यय के साथ खारिज की जाती है।

---

ekuuh; çeFk iVuk;d] U;k;efr

अरुण कुमार

cuke

सिंहभूम सेन्ट्रल को-ऑपरेटिव बैंक लि॰ एवं एक अन्य

W.P. (S.) No. 6895 of 2012. Decided on 4th December, 2015.

सेवा विधि–बर्खास्तगी–बैंकिंग सेवा–याची कपटपूर्वक राशि वापस निकालने में अंतर्ग्रस्त था जो गंभीर अवचार था–याची नोटिस के बावजूद उपस्थित नहीं हुआ और एकपक्षीय जाँच की गयी थी–याची को जाँच अधिकारी द्वारा दोषी पाया गया था–याची को सेवा में बने रहने का अधिकार नहीं है–दंड सिद्ध किए गए अवचार के बिल्कुल अनुरुप है–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 9 से 11)

निर्णयज विधि.–(2008) 8 SCC 236—Referred; AIR 2003 SC 1462; 2007 (1) SCC (Cri) 621—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Ashok Kumar, Rakesh Ranjan, For the Petitioner; Mr. Mrinal Kanti Roy, For the Respondents.

आदेश

संलग्न रिट आवेदन में याची ने अन्य बातों के साथ सेवा से बर्खास्तगी से संबंधित दिनांक 7.2.2006 के मेमो के तहत प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा जारी आदेश अपास्त करने के लिए समुचित रिट जारी करने के लिए प्रार्थना किया है।

2. अनावश्यक विवरणों से रहित, रिट आवेदन में प्रकट किए गए तथ्य संक्षेप में यह है कि जब याची सिंहभूम सेन्ट्रल कोऑपरेटिव बैंक लिमिटेड की गम्हरिया शाखा में सहायक के रूप में कार्यरत था, याची के विरुद्ध कतिपय अभिकथन किए गए थे और दिनांक 26.10.2004 के मेमो के तहत निलंबनाधीन किया गया था। बैंक के लेखा परीक्षा प्रबंधक को संचालन अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया था। जब याची निलंबनाधीन था, याची पर आरोप-पत्र तामील किया गया था और उक्त आरोप पत्र पे-ऑर्डर्स क्रेडिट किए बिना पे-ऑर्डर्स से कपटपूर्वक राशि निकालने से संबंधित था। संचालन अधिकारी की अधिवर्षिता के बाद नया संचालन अधिकारी दिनांक 7.9.2005 के मेमो के तहत नियुक्त किया गया था। नए संचालन अधिकारी की नियुक्ति के बाद भी उक्त विभागीय कार्यवाही में जाँच की तिथि नियत करने वाला कोई भी नोटिस याची को जारी नहीं किया गया था। इस अवधि के दौरान याची का पिता रोगग्रस्त था, अतः वह अपने पिता की सेवा करने पटना गया था।

बाद में, याची को पता चला कि उसके चाईबासा के पता पर नोटिस जारी की गयी थी और उस नोटिस को क्षेत्र के स्थानीय समाचार पत्रों में प्रकाशित भी किया गया था, किंतु याची ने कोई नोटिस प्राप्त नहीं किया था। संचालन अधिकारी ने याची को सुने बिना बैंक में उपलब्ध दस्तावेजों के आधार पर जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत किया। जाँच रिपोर्ट की प्रस्तुति के बाद, याची को कोई द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी नहीं किया गया था और सुनवाई का अवसर दिए बिना प्रत्यर्थियों ने सेवा से बर्खास्तगी का मुख्य दंड अधिरोपित करने वाला दिनांक 7.2.2006 का मेमो जारी किया।

सेवा से बर्खास्ती के आदेश के बारे में जानकारी पाने के बाद, याची ने अन्य बातों के साथ बर्खास्तगी आदेश को अपास्त करने एवं उसे सेवा में वापस पुनर्बहाल करने की प्रार्थना करते हुए अभ्यावेदन दिया। किंतु, प्रत्यर्थियों ने उक्त अभ्यावेदन का प्रत्युत्तर नहीं दिया था।

3. प्रत्यर्थी सं० 2 द्वारा जारी दिनांक 7.2.2006 के मेमो के तहत सेवा से बर्खास्तगी के आक्षेपित आदेश से व्यथित होकर, याची ने कोई अन्य वैकल्पिक प्रभावकारी उपचार नहीं होने के कारण भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब किया है।

4. समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थियों की ओर से रिट आवेदन में किए गए प्रकथनों का खंडन करते हुए प्रति शपथ पत्र दाखिल किया गया है। प्रतिशपथ-पत्र में अन्य बातों के साथ यह निवेदन किया गया है कि आमेलन के बाद याची को गम्हरिया शाखा में पदस्थापित किया गया था किंतु गम्हरिया शाखा में अपनी पदस्थापना के तुरन्त बाद उसकी सेवा प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट-A पर संलग्न दिनांक 22.8.2000 के आदेश के तहत प्रतिनियुक्ति पर गोलमुरी शाखा को दे दी गयी थी।

5. बैंक द्वारा किए गए आवश्यक प्रयासों के बावजूद, याची संचालन अधिकारी के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ और प्रत्यर्थी बैंक ने प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट B के तहत क्षेत्र में प्रसार वाले स्थानीय समाचार पत्रों में नोटिस प्रकाशित किया। इसके अतिरिक्त, बैंक से याची के स्थायी पता पर नोटिस जारी करने की अपेक्षा नहीं की जाती थी। याची के अंतिम ज्ञात पता पर नोटिस जारी किए गए थे और कोई प्रत्युत्तर नहीं पाने पर स्थानीय समाचार पत्रों में नोटिस प्रकाशित किए गए थे। अतः, संचालन अधिकारी के पास एक पक्षीय रूप से अग्रसर होने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं था। यह निवेदन भी किया गया है कि उनके विरुद्ध भी जिन्होंने एकल हस्ताक्षर वाले चेक को मान्य किया था, विभागीय कार्यवाही किया गया है और तद्नुसार दंडित किया गया है और श्री अख्तर हुसैन, तत्कालीन शाखा प्रबंधक, गोलमुरी शाखा को भी दंडित किया गया है। चूँकि याची को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया है, प्रत्यर्थियों को सेवा में पुनर्बहाली इप्सित करने वाला याची का अभ्यावेदन ग्रहण करने का प्राधिकार नहीं था।

6. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अशोक कुमार एवं प्रत्यर्थियों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री मृणाल कांति रॉय सुने गए।

7. याची के विद्वान अधिवक्ता ने सुनवाई के दौरान दिनांक 13.5.2003 को दाखिल पूरक शपथ पत्र को निर्दिष्ट किया है जिसमें यह निवेदन किया गया है कि संचालन अधिकारी की सेवा निवृत्ति के बाद किसी श्री नागेन्द्र प्रसाद, चाईबासा के प्रभारी शाखा प्रबंधक को संचालन अधिकारी बनाया गया था और उक्त नागेन्द्र प्रसाद एक सहायक था जो प्रभारी शाखा प्रबंधक के रूप में स्थानापन्न था इस प्रकार संचालन अधिकारी याची के दर्जे का था। संचालन अधिकारी को याची की तुलना में उच्चतर श्रेणी का होना होगा। वर्तमान मामले में इस सिद्धांत का उल्लंघन किया गया है। केवल इस आधार पर संपूर्ण विभागीय कार्यवाही दूषित हो गयी है।

याची के विद्वान अधिवक्ता ने 24.7.2013 को दाखिल प्रत्युत्तर को भी निर्दिष्ट किया है जिसमें यह निवेदन किया गया है कि यदि याची को सुनवाई का अवसर दिया जाता, उसने संचालन अधिकारी के समक्ष अपना दृष्टिकोण रखा होता। सुनवाई के अवसर की अनुपस्थिति में, संचालन अधिकारी द्वारा प्रासंगिक पहलूओं पर विचार नहीं किया गया है। इसके अतिरिक्त, प्रत्युत्तर में यह निवेदन किया गया है कि श्री अख्तर हुसैन के विरुद्ध कोई विभागीय कार्यवाही आरंभ नहीं की गयी थी और न ही उनको कोई दंड दिया गया था। वस्तुतः, केवल याची को ही दंडित किया गया है।

याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि विभागीय कार्यवाही और बर्खास्तगी आदेश याची द्वारा किए गए अभिकथित अपराध के अननुपातिक है। याची के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि संपूर्ण विभागीय कार्यवाही दूषित हो गयी है क्योंकि याची को कोई कारण बताओ नोटिस जारी नहीं किया गया है और न ही दंड के अधिरोपण के पहले याची को जाँच रिपोर्ट की आपूर्ति की गयी है। याची के विद्वान अधिवक्ता आगे दोहराते हैं कि बिहार में सेन्ट्रल कोऑपरेटिव बैंक सेवा नियमावली के अधीन उसी श्रेणी का अधिकारी जाँच अधिकारी नहीं हो सकता है।

अपने निवेदन को प्रबल बनाने के लिए विद्वान अधिवक्ता ने **(2008)8 SCC 236,** में प्रकाशित निर्णय को निर्दिष्ट किया।

8. प्रत्यर्थी बैंक के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार निवेदन किया कि जब उस पर नोटिस तामील करने के बैंक के अधिकतम प्रयास के बावजूद याची संचालन अधिकारी के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ था, प्रत्यर्थी बैंक ने प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट बी० के तहत क्षेत्र में प्रसार वाले स्थानीय समाचार पत्रों में प्रकाशन करवाया। अनुशासनिक प्राधिकारी ने सेवा से बर्खास्तगी के दंड का आदेश पारित किया है जो सिद्ध किए गए आरोपों के अनुरुप है, अतः संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण अधिकारिता का अवलंब लेकर माननीय न्यायालय द्वारा इसमें हस्तक्षेप अनावश्यक है।

9. परस्पर पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुनने पर और अभिलेखों के परिशीलन पर, मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याची निम्नलिखित तथ्यों, कारणों एवं न्यायिक उद्घोषणाओं के कारण इस न्यायालय के हस्तक्षेप के लिए मामला बनाने में सक्षम नहीं हुआ है:-

(i) oreku ekey e] ;kph cd dk depkjh gku d ukr jkf'k diViod fudkyu e vrxLr Fkk tk xHkhj vopkj FkkA ukfVl d cko tn] pfd ;kph mifLFkr ugh gvk Fkk] ,d i{kh; tkp lpkfyr fd;k x;k Fkk ij tkp vfèkdkjh u vkjki fl) fd;k x;k ik;k g] rnulkj] vu'kklfud çkfèkdkjh }kjk nM dk vk{kfir vkn'k ikfjr fd;k x;k gA cd dk depkjh gku d ukr] ;kph dk fu"i{k rjhd ,o i.k 'kfprk l viu dr0; dk fuogu djuk pkfg, FkkA tkp fjikV d ifj'khyu ij] ;g fcYdy çdV g fd tkp vfèkdkjh u ;kph dk vkjki dk nk"kh ik;k gA ;kph dk lok e cu jgu dk vfèkdkj ugh g] vr% lok l ;kph dh c[kkLrxh dk vkn'k lgh çdkj l ikfjr fd;k x;k gA

(ii) tkp fjikV ,o vk{kfir vkn'k d ifj'khyu ij ;g fcYdy Li"V g fd nM ijh rjg l fl) fd, x, vopkj d vu#i g] vr% tgk rd nM dh ek=k dk lcèk g] ble bl U;k;ky; d gLr{ki dh vko';drk ugh gA nM dk vkn'k

vu'kklfud çkf/kdkjh d vuU; {k= e g vkj tc rd vk{kfir vkn'k ijh rjg vfHkdfFkr vkjki d vuuikfrd ugh g ;g U;k;ky; Hkkjr d lfo/kku d vuPNn 226 d v/khu gLr{ki ugh dj ldrk gA oreku ekey e lex nf"Vdk.k viukr g,] nM d vk{kfir vkn'k tk fl) fd, x, vkjki d fcYdy vkuikfrd g e bl U;k;ky; d gLr{ki dh vko';drk ugh gA

(iii) {k=h; çcU/kd] ;0 ih0 ,l0 vkj0 Vh0 lh0] bVkok ,o vU; cuke gkrh yky ,o ,d vU;] AIR 2003 SC 1462, ekey e ekuuh; lokPp U;k;ky; u vfHkfu/kkfjr fd;k%

^^10. blij tkj nu dh vko';drk g fd U;k;ky; vFkok vf/kdj.k dk nM dh ek=k ij fopkj djr g, dkj.k nt djuk gkxk fd D;k blu egll fd;k fd nM fl) fd, x, vkjkik d vu#i ugh FkkA tlk vud ekeyk ftudk mij fun'k fd;k x;k g e çdk'keku fd;k x;k g fd minf'kr ifjfLFkfr;k e gLr{ki dh xtkb'k vR;Ur lhfer ,o vkiokfnd ekeyk rd fucf/kr gA nHkkX;o'k] oreku ekey e] tlk mPp U;k;ky; d vkn'k l m)r m)j.k n'kk,x] dkb Hkh dkj.k minf'kr ugh fd;k x;k g fd D;k nM vuuikfrd ekuk x;k FkkA dkj.k ç'uxr fookn d çfr fu.k;drk d food ,o igp x, fu.k; vFkok fu"d"k d chp thfor dfM;k gA dkj.k nu e foQyrk U;k; l budkj d rY; gA (n[k% vyDlUMj e'khujh MMy fy0 cuke ØcVh] (1974 LCR 120) ek= ;g dFku fd ;g vuuikfrd g] i;klr ugh gkxkA u doy vrxLr ek=k cfYd ekufld <kpk] ikyu fd, x, dr0; dk çdkj vkj le#i çklfxd ifjfLFkfr;k] ; lc bl ij fopkj djr g, fu.k; yu dh çfØ;k dk vfHkUu vx g fd nM vkuikfrd g ;k vuuikfrdA ;fn vkjkfir depkjh U;kl dh voLFkk e g tgk bekunkjh ,o lR;fu"Bk dke dju dh vrfufer vko';drk g] ,l ekeyk ij ujeh l fopkj djuk lefpr ugh gkxkA ,l ekeyk e vopkj ij n<rk l fopkj djuk gkxkA tgk dkb 0;fDr ykd /ku d lkFk C;ogkj djrk g vFkok foÙkh; l0;ogkjk d dke ij yxk gvk g vFkok fo'okl dh gfl;r l ÑR; djrk g] lR;fu"Bk ,o fo'oluh;rk dh mPpre fMxh vko';d ,o vukiokfnd gA ml i"BHkfe e vkdu ij mPp U;k;ky; dh [kM U;k;ihB d fu"d"k lefpr çrhr ugh gkr gA ge bl vikLr djr g vkj c[kkLrxh vkn'k dk ekU; Bgjku oky fo}ku ,dy U;k;k/kh'k d vkn'k dk iu% LFkkfir djr gA

vkx] lj'k iFkjYyk cuke vkfj;UVy cd vkQ dkel] 2007 (1) SCC (Cri)621, ekey e ekuuh; lokPp U;k;ky; u fuEufyf[kr vfHkfu/kkfjr fd;k g%

"21. vè;{k ,o ,e0 Mh0] ;ukbVM dkef'k;y cd cuke ih0 lh0 dDdM e bl U;k;ky; u ijk 14, SCC, i"B 376-77 ij fuEufyf[kr dgk g%

14. cd vf/kdkjh dk bekunkjh ,o lR;fu"Bk d mPprj Lrjk dk ç;kx dju dh vko';drk gA og tek dju okyk ,o xkgdk d /ku d lkFk C;ogkj djrk gA cd d çR;d vf/kdkjh@depkjh dk vf/kdre bekunkjh] lR;fu"Bk] lei.k ,o ifjJe d lkFk viu dr0;k dk fuoZgu dju vkj cd d fgr e dke dju d fy, leLr lHko dne mBku vkj ,lk dN ugh dju tk fdlh cd vf/kdkjh d fy, v'kkHkuh; g dh vko';drk gA vPNk vkpj.k ,o vu'kklu cd d çR;d vf/kdkjh@depkjh d dk;Z l vfHkUUdj.kh; gA tlk bl U;k;ky;

}kjk vu'kklfud çkfèkdkjh&lg&{k=h; çcèkd cuke fudt fcgkjh iVuk;d e lçf{kr fd;k x;k Fkk] ^^;g dgu dk cpko miyCèk ugh g fd ekey e dkb gkfu&ykHk ugh gvk Fkk] tc vfèkdkjh@depkjh u çkfèkdkj d fcuk ÑR; fd;k FkkA fdlh lxBu] vfèkd fo'k"kr~h cd dk vu'kklu viu vkofVr {k= d vrxr ÑR; dju oky vfèkdkfj;k ,o bld çR;d vfèkdkfj;k ij fuHkj gA viu çkfèkdkj d ij ÑR; djuk Lo; e vu'kklu Hkx ,o vopkj gA depkjh d fo#) yxk; x; vkjki ykijokg çÑfr d ugh Fk vkj xHkhj FkA mPp U;k;ky; }kjk bu igyvk dk è;ku e fy;k x;k çrhr ugh gkrk gA**

"22. oreku ekey e vihykFkh u cd fofu;euk d Hkx e viu çkfèkdkj d ij ÑR; fd;kA cd fofu;eu dk fofu;e 3(1) vko';d cukrk g fd çR;d vfèkdkjh gj le; cd d fgr d lj{k.k d fy, vkj vfèkdre lR;fu"Bk d lkFk viu dr0;k d fuogu d fy, leLr lHko dne mBkrk g vkj ,lk dN ugh djrk g tk cd vfèkdkjh d fy, v'kkHkuh; gkxkA ;g cd }kjk vfèkdkjh e fo'okl [kk nu dk ekeyk gA ,lh fLFkfr e] ;g tkp d ckn lok l vfèkdkjh dk gVku oky vu'kklfud çkfèkdkjh d fu.k; ij fopkj djuk vkj cd dk ,l vfèkdkjh ftle cd u viuk fo'okl [kk fn;k g dk okil yu dk fun'k nuk U;kf;d iufoykdu dk fujFkd dk; gkxk] tc rd vfèkdkjh dk gVku dk fu.k; vlnHkko d lkFk dyfdr ugh g vFkok ulfxd U;k; d fl)krk d mYy?ku e ugh g vkj vfèkdkjh ij çfrdyrk dkfjr ugh gb gA oreku ekey e ,lk dkb ekeyk ugh cuk;k x;k gA**

cd vkQ bfM;k ,o ,d vU; cuke nxyk l; ukjk;.k] 1999 (5) SCC 762, ekey e ekuuh; lokPp U;k;ky; u fuEufyf[kr vfHkfuèkkfjr fd;kA

^^11. foHkkxh; tkp dk;okgh d çfr lk{; d dBkj fl)kr ç;kT; ugh gA fofèk dh ,dek= vko';drk ;g g fd vopkjh vfèkdkjh d fo#) vfHkdFku ,l lk{; }kjk LFkkfir djuk gkxk ftl ij ÑR; djr g, ;fDr;Dr 0;fDr ;fDr;Dr :i l ,o oLrijd :i l ÑR; djr g, vopkjh vfèkdkjh d fo#) vkjki dk e[; vkèkkj ekU; Bgjku oky fu"d"k ij vk ldrk gA ek= vueku vFkok vVdy foHkkxh; tkp dk;okgh e Hkh nk"k dk fu"d"k lkf"kr ugh dj ldrk gA U;kf;d iufoykdu dh vfèkdkfjrk dk ç;kx dju okyk U;k;ky; foHkkxh; tkp dk;okgh e igp x, rF; d fu"d"kk e gLr{ki ugh djxk flok, vlnHkko vFkok foÑrrk d ekeyk e vFkkr tgk fu"d"k dk leFku dju d fy, lk{; ugh g vFkok tgk fu"d"k ,lk g fd ;fDr;Dr ,o oLrijd :i l ÑR; dju okyk dkb 0;fDr ,l fu"d"k ij ugh vk ldrk FkkA U;k;ky; vihyh; çkfèkdkjh dh rjg lk{; dk iuvfèkeY;u ugh dj ldrk g vFkok bl rky ugh ldrk gA tc rd foHkkxh; çkfèkdkjh }kjk igp x, fu"d"k dk leFku dju d fy, dN lk{; g] bl lkf"kr djuk gh gkxkA Hkkjr l?k cuke ,p0 lh0 xk;y e loèkkfud U;k;ihB u fuEufyf[kr vfHkfuèkkfjr fd;k g%

^^mPp U;k;ky; tkp dj ldrk g vkj bl tkp djuk gkxk fd D;k vk{kfir fu"d"k d leFku e dkb Hkh lk{; gA nlj 'kCnk e] ;fn tkp e fn, x, li.k lk{; dk lR; Lohdkj fd;k tkrk g] D;k ;g fu"d"k vulfjr gkrk g fd ç'uxr vkjki çR;Fkh d fo#) fl) fd;k x;k g\ ;g nf"Vdk.k lk{; rkyu l cpk,xkA ;g lk{; dk mlh :i e yxk tlk ;g g vkj doy ;g ijh{k.k djxk fd D;k ml lk{; ij fofèkr~h vk{kfir fu"d"k vulfjr gkrk g ;k ughA**

*13. oreku ekey e] vu'kkklfud çkfèkdkjh d fnukd 5.1.1995 d vkn'k dk ifj'khyu n'kkrk g fd blu lk{;] tkp vfèkdkjh }kjk nt fu"d"k ,o dkj.k dk fopkj e fy;k g vkj rc tkp vfèkdkjh }kjk fy, x, nf"Vdk.k l fHkUu nf"Vdk.k yu dk dkj.k fn;k gA rc vu'kklfud çkfèkdkjh u igy l gh vu'kklfud çkfèkdkjh }kjk igp x, fu"d"k d leFku e vfHky[k ij miyCèk lk{; dk of.kr djr g, viuk fu"d"k nt fd;k gA vu'kklfud çkfèkdkjh }kjk bl çdkj nt fd, x, fu"d"k U;k;ky; dk miyCèk U;kf;d iufoykdu dh 'kfDr dh lhfer xtkb'k d vrxr gLr{ki l mUeDr FkA vr% gekjk er g fd fo}ku ,dy U;k;kèkh'k ,o mPp U;k;ky; dh [kM U;k;ihB vu'kklfud çkfèkdkjh d fu"d"k dk vikLr dju vkj tkp vfèkdkjh d fu"d"k dk iuLFkkfir dju e lgh ugh FkA mPp U;k;ky; Li"Vr% foHkkxh; vu'kklfud tkp dk;okgh d mij viuh fjV vfèkdkfjrk dk ç;kx djr g, bldk miyCèk U;kf;d iufoykdu dh 'kfDr d lhek d ij x;k g vkj blfy, ml lhek rd fo}ku ,dy U;k;kèkh'k ,o mPp U;k;ky; dh [kM U;k;ihB d fu.k;k dk fofèk e likf"kr ugh fd;k tk ldrk gA cd vkQ bfM;k }kjk nkf[ky vihy ml lhek rd vuKkr fd, tku ;kX; gA***

10. तथ्यों, कारणों एवं न्यायिक उद्घोषणाओं के समेकित प्रभाव के कारण और पूर्वोक्त पैराग्राफों में किए गए निवेदनों के तार्किक परिणाम के अनुरुप दिनांक 7.2.2006 के मेमो के तहत जारी दंड के आक्षेपित आदेश में इस न्यायालय के किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

11. तद्नुसार, यह रिट याचिका गुणागुण रहित होने के कारण खारिज की जाती है।

---

ekuuh; fojUnj flg] e[; U;k;kèkh'k ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

बुधन महतो उर्फ बुधन यादव एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (DB) No. 384 of 2015. Decided on 14th October, 2015.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 389—दंडादेश का निलंबन–अपीलार्थीगण विचारण के दौरान जमानत पर थे–अपीलार्थीगण इस आधार पर दंडादेश का निलंबन इप्सित कर रहे हैं कि चश्मदीद गवाहों का साक्ष्य परस्पर रूप से संपुष्टिकारी नहीं है और डॉक्टर जिन्होंने मृतक के मृत शरीर का शव परीक्षण किया था उसका परीक्षण नहीं किया गया था–अपीलार्थीगण अपील लंबित रहने के दौरान दंडादेश के निलंबन की रियायत के योग्य है–प्रार्थना अनुज्ञात।

(पैराएँ 1, 3 एवं 4)

अधिवक्तागण.–M/s Vishal Kr. Trivedi, For the Appellants; Mr. Rajeev Anand, For the Respondet.

वीरेन्दर सिंह, मुख्य न्यायाधीश.–तीनों अभियुक्त अपीलार्थियों जिन्हें विचारण के दौरान जमानत पर बताया गया है के प्रति दंडादेश के निलंबन की प्रार्थना करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने अभियोजन मामले में सर्वाधिक मौलिक त्रुटि–डॉक्टर जिसने मृतक के मृत शरीर का शव परीक्षण किया का गैर परीक्षण–इंगित किया। अभियोजन मामले की जड़ तक जाते हुए आगे निवेदन किया गया है कि अभियोजन ने घटना का कुल आठ तथाकथित चश्मदीद गवाह प्रस्तुत किया है और प्रत्येक गवाह जो कठघरा में आया था ने

स्पष्टत: कथन किया कि उसके सिवाए किसी अन्य ने घटना नहीं देखा था। विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि इस आधार पर भी संपूर्ण चश्मदीद गवाह विवरण अविश्वसनीय बन जाते हैं।

2. अभियोजन मामले में मुख्यत: पूर्वोक्त त्रुटियों को इंगित करते हुए, विद्वान अधिवक्ता वर्तमान हेतु अनुतोष की प्रार्थना करते हैं जिसका विरोध राज्य के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किया गया है।

3. वर्तमान मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों की संपूर्णता को दृष्टि में रखते हुए और कम से कम इस चरण पर मामले के गुणागुण पर टिप्पणी किए बिना, ताकि यह किसी पक्ष पर प्रतिकूलता कारित न कर सके, और यह तथ्य भी कि समस्त तीनों अपीलार्थीगण विचारण के दौरान जमानत पर थे, वे अपील लंबित रहने के दौरान भी दंडादेश के निलंबन की रियायत के योग्य हैं, उक्त अनुतोष की प्रार्थना एतद्द्वारा अनुज्ञात की जाती है।

4. अपीलार्थीगण (1. **बुधन महतो उर्फ बुधन यादव,** 2. **राजेन्द्र यादव** और 3. **अर्जुन यादव** को **सत्र विचारण सं॰ 149 वर्ष 2004** में विचारण न्यायालय (विद्वान जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश V गिरीडीह) की संतुष्टि हेतु प्रत्येक समान राशि की दो प्रतिभूतियों के साथ 10,000/- रुपयों का जमानत बंध पत्र प्रत्येक द्वारा प्रस्तुत करने पर अपील लंबित रहने के दौरान जमानत पर निर्मुक्त किया जाए।

---

ekuuh; jRukdj Hkxjk] U;k;efr

बिंदु साव

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal No. 128 of 2001. Decided on 13th October, 2015.

सत्र विचारण सं॰ 656 वर्ष 1998 में श्री कुमार गणेश दत्त, द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश पलामू, डालटेनगंज द्वारा पारित दिनांक 1.3.2001 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं आदेश तथा दिनांक 2.3.2001 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 498A—दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961—धारा 4—क्रूरता—दोषसिद्धि—दहेज की मांग और इसे पुरा नहीं किए जाने के लिए पीड़ित महिला के साथ क्रूरता—पीड़िता का अपहरण किया गया था और जंगल में छोड़ दिया गया था—यह जानवरों, अपराधियों अथवा प्रकृति द्वारा खतरा अथवा हानि में परिणत हो सकता था—यह भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन क्रूरता के तुल्य होगा—भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन एवं डी॰ पी॰ अधिनियम की धारा 4 के अधीन अपीलार्थी का दोष संपोषित किया गया—दंडादेश उपांतरित। (पैराएँ 16 से 23)

निर्णयज विधि.—1991(1) Cr.L.J. 639—Referred.

अधिवक्तागण.—Mr. Anurag Kashyap, For the Appellant; Mr. Krishna Shanker, For the State.

रत्नाकर भेंगरा, न्यायमूर्ति.—यह दांडिक अपील विद्वान द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, पलामू, डालटेनगंज द्वारा एस॰ टी॰ सं॰ 656 वर्ष 1998 में पारित दिनांक 1.3.2001 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 2.3.2001 के दंडादेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा उक्त नामित अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 498A निर्देशित है जिसके द्वारा उक्त नामित अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 4 के अधीन दंडनीय अपराध का दोषी पाया गया है और

तद्नुसार, उसे दोनों धाराओं के अधीन दोषसिद्ध किया गया है यद्यपि उसे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 364 एवं 302 और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 3 के अधीन दंडनीय अपराध से दोषमुक्त किया गया है और 10,000/- रुपयों के जुर्माना के साथ तीन वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है। यह संप्रेक्षित किया गया है कि यदि जुर्माना के भुगतान में व्यतिक्रम किया जाता है, वह भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन छह माह का कठोर कारावास भुगतेगा। आगे यह संप्रेक्षित किया गया था कि अपीलार्थी दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 4 के अधीन दो वर्ष का कठोर कारावास और 5000/- रुपया के जुर्माना का भुगतान करेगा और यदि जुर्माना के भुगतान में कोई व्यतिक्रम किया जाता है, वह पुनः छह माह का कठोर कारावास भुगतेगा। दोनों दंडादेशों को एक के बाद एक चलने का आदेश दिया गया था। आगे निर्देश दिया गया था कि जुर्माना राशि, यदि इसका भुगतान किया जाता है, पीड़िता महिला को दी जाएगी।

2. किसी बासुदेव साव जो इस मामले का सूचक है द्वारा दर्ज फर्दबयान के अनुसार दिनांक 2.11.1997 के धुरकी पी॰ एस॰ केस सं॰ 48 वर्ष 1997 की ओर ले जाने वाला मेरल पुलिस थाना के सब–इंस्पेक्टर द्वारा भारतीय दंड संहिता की धाराओं 364/498A के अधीन और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3 एवं 4 के अधीन भी मेरल पुलिस थाना के समक्ष दर्ज संक्षिप्त अभियोजन मामला यह है कि लगभग सात वर्ष पहले सूचक की पुत्री अर्थात् जसवंती देवी का विवाह बिन्दु साव के साथ हुआ था। विवाह के दो वर्ष बाद, जसवन्ती देवी अपने ससुराल गयी थी, जहाँ चार माह बाद बिन्दु साव, उसके माता–पिता एवं भाई 12000/- रुपया, एक गाय और एक साईकिल मांगने लगे किंतु गरीबी के कारण सूचक द्वारा इसे पूरा नहीं किया था। आगे यह अभिकथित किया गया है कि चूँकि बैशाख माह में दहेज नहीं दिया गया था, ससुराल वालों ने जसवन्ती देवी पर प्रहार करने के बाद उसको बुलका खरदाहा जंगल में फेंक दिया था, किंतु वह किसी तरह जीवित रही और खातूना बीबी के घर में रुकी थी जिसने बाद में जसवन्ती देवी को प्रातः 7 बजे उसके माएका पहुँचाया। तब बिन्दु साव का बड़ा भाई विजय साव आया, उसको देखा और चला गया। छह माह बाद पंचायती की गयी थी और तत्पश्चात जसवन्ती देवी अपने ससुराल गयी थी। आगे यह अभिकथित किया गया है कि दिनांक 30.10.1997 को बिदाई की गयी थी किंतु पुनः साइकिल एवं धन की मांग की गयी थी। तब उक्त माह के अंतिम सप्ताह में बिन्दु साव का बड़ा भाई विजय साव जसवन्ती को खोजने उसके नैहर आया, तब सूचक को संदेह हुआ और उसने उससे असफलतापूर्वक पूछताछ किया और उसको खोजने भी लगा, किंतु उसे नहीं पाया जा सका था। सूचक ने संदेह किया कि बिंदु साव और उसका मित्र रामजी साव और ससुराल वालों ने दहेज मांग के लिए जसवन्ती देवी का अपहरण एवं हत्या किया होगा। ऐसी दशा में प्राथमिकी दर्ज की गयी थी।

3. अभियोजन ने कुल 17 गवाहों का परीक्षण किया है। अ॰ सा॰ 1 मनु सिंह, अ॰ सा॰ 2 बासुदेव साव, अ॰ सा॰ 3 रामधनी साव जिसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है, अ॰ सा॰ 4 रामगति साव, जिसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है; अ॰ सा॰ 5 उपेन्द्र साव, जिसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है; अ॰ सा॰ 6 बरतू साव, जिसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है, अ॰ सा॰ 7 बिशुनधारी साव, जिसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है, अ॰ सा॰ 8 अमेरिका साव, जिसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है, अ॰ सा॰ 9 अकलू साव, जिसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है, अ॰ सा॰ 10 दशरथ साव, जिसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है; अ॰ सा॰ 11 केश्वर साव, जिसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है; अ॰ सा॰ 12 हरिहर साव, जिसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है; अ॰ सा॰ 13 मंदीप सिंह, जिसे पक्षद्रोही घोषित किया गया है; अ॰ सा॰ 14 जगदीश सिंह, अ॰ सा॰ 15 सुमन साव, अ॰ सा॰ 16 रामजी साव और अ॰ सा॰ 17 मुजीबुल्ला खान जो औपचारिक गवाह है का परीक्षण किया है।

4. इस मामले के विचारण के क्रम में संयोगवश इस मामले की पीड़िता महिला जसवन्ती देवी अपने को छुड़ाने के बाद उपस्थित हुई और ऐसी दशा में न्यायालय गवाह सं॰ 1 के रूप में उसका परीक्षण किया गया है। सी॰ डब्ल्यू॰ 2 खातूना बीबी एक अन्य न्यायालय गवाह है।

5. विद्वान विचारण न्यायालय ने परिप्रेक्ष्य एवं समग्रता तथा सुविधा के प्रयोजन से गवाहों को निम्नलिखित छह कोटियों में कोटिकृत किया है:

प्रथम कोटि में सूचक के स्थान बलिया से आने वाले गवाहों अर्थात् अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4 एवं अ॰ सा॰ 5 है जो अभियोजन के प्रति पक्षद्रोही हैं। दूसरी कोटि में गाँव बलिया से गवाह अर्थात् अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 14, अ॰ सा॰ 15 एवं अ॰ सा॰ 16 हैं जिन्हें अभियोजन द्वारा पक्षद्रोही घोषित नहीं किया गया है। तीसरी कोटि केवल सूचक अ॰ सा॰ 2 से गठित है। चौथी कोटि गाँव चुन्दी से पक्षद्रोही गवाह अर्थात् अ॰ सा॰ 6, अ॰ सा॰ 7, अ॰ सा॰ 8, अ॰ सा॰ 9, अ॰ सा॰ 10, अ॰ सा॰ 11, अ॰ सा॰ 12 एवं अ॰ सा॰ 13 है। पाँचवीं कोटि अ॰ सा॰ 17 की है जो औपचारिक गवाह है और अंतत: छठी कोटि सी॰ डब्ल्यू॰ 1 एवं सी॰ डब्ल्यू॰ 2 के साक्ष्य से गठित है। हमारे प्रयोजन से, अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 5 एवं अ॰ सा॰ 14 तथा सी॰ डब्ल्यू॰ 1 एवं सी॰ डब्ल्यू॰ 2 महत्वपूर्ण हैं।

6. अ॰ सा॰ 2 इस मामले का सूचक है और पीड़िता महिला का पिता है। उसने परिसाक्ष्य दिया था कि उसकी पुत्री विवाह से दो चार माह बाद अपने पति सहित अपने ससुराल वालों के विरुद्ध शिकायत करने लगी। उसे यातना दी गयी थी और अनेक बार पंचायती की गयी थी किंतु उसके ससुराल वाले ऐसा करते रहे। वर्तमान घटना के पहले भी उसे मृत मानते हुए बुलका खरदाहा जंगल में फेंक दिया गया था किंतु भाग्य ने उसे बचा लिया था। अनेकों बार पुन: पंचायती की गयी थी और उसे अपने पति अभियुक्त बिंदु साव के साथ ससुराल भेजा गया था। तत्पश्चात्, 15-16 दिन बीत गए और उसे सूचित किया गया था कि उसकी पुत्री अपने दांपत्य गृह से गायब है। पैरा 5 में असंदिग्धत: परिसाक्ष्य दिया गया है कि उसके ससुराल वाले निरंतर 10,000/- रुपयों की नगद राशि एवं साइकिल मांग रहे थे। उसी पैरा में आगे कथन किया गया है कि सूचक अ॰ सा॰ 2 पहले ही अपनी भूमि का बाइस कट्ठा बेचने के बाद उनको 22,000/- रुपया दिया था। पीड़िता महिला के गायब हो जाने के बाद जोरदार तलाश की गयी थी और जब उसका पता नहीं लगाया जा सका था, सूचक वर्तमान मामले के साथ आया। उसने अपना हस्ताक्षर एवं अ॰ सा॰ 1 एवं अ॰ सा॰ 5 के हस्ताक्षरों को भी सिद्ध किया है जिन्हें क्रमश: प्रदर्श 1, 1/1 एवं 1/2 के रूप में सिद्ध एवं चिन्हित किया गया है। अ॰ सा॰ 2 ने दोनों अभियुक्तों को कटघरे में पहचाना है। प्रतिपरीक्षण में सामने आया है कि अ॰ सा॰ 2 नहीं कह सकता था कि जगत साव कहाँ उसकी पुत्री से मिला। पीड़िता जसवन्ती अपने पिता अ॰ सा॰ 2 के साथ न्यायालय में आयी। अ॰ सा॰ 2 ने किसी अन्य व्यक्ति के साथ स्वेच्छापूर्वक पीड़िता के भागने के संबंध में बचाव सुझाव से इनकार किया है। चूँकि पीड़िता जसवन्ती स्वयं न्यायालय में उपस्थित हुई, जैसा अ॰ सा॰ 2 के पैरा 10 से स्पष्ट है, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन आरोप बिखर एवं भंजित हो जाता है।

7. तब यह प्रतीत होता है कि यद्यपि अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4 एवं अ॰ सा॰ 5 को अभियोजन द्वारा पक्षद्रोही घोषित किया गया है, तब भी इन समस्त तीनों गवाहों ने इस तथ्य का परिसाक्ष्य दिया है कि पीड़िता जसवन्ती देवी अपने दांपत्य गृह से गायब हो गयी। यद्यपि अ॰ सा॰ 3 ने पैरा 2 के तहत अनभिज्ञता अभिव्यक्त किया है कि किस प्रकार पीड़िता गायब हो गयी; अ॰ सा॰ 4 ने मुख्य परीक्षण के पैरा 1 में स्पष्टत: अभिसाक्ष्य दिया है कि उसके ससुराल वालों ने उसे स्थान से हटाया होगा किंतु प्रति परीक्षण के पैरा 8 में यह निकाला गया है कि गवाह अपराध करने वाले के संबंध में अनजान था। अ॰ सा॰ 3 एवं

अ॰ सा॰ 4 दोनों ने अभिसाक्ष्य दिया है कि पीड़िता जसवन्ती जीवित है, अ॰ सा॰ 5 पैरा 3 के अतिरिक्त अ॰ सा॰ 3 पैरा 7 अ॰ सा॰ 4 पैरा 9 जहाँ उसे लगभग तीन माह पहले अपने माएके में गवाहों ने देखा था। यद्यपि विचारण का सामना कर रहे अभियुक्तों की अपराधिता का संकेत इन गवाहों के साक्ष्य में नहीं दिया जा सकता था अथवा सिद्ध किया जा सकता था किंतु एकमात्र सिद्ध तथ्य जो सामने आता है यह है कि पीड़िता जसवन्ती देवी अपने दांपत्य गृह से गायब हो गयी। पीड़िता जसवन्ती देवी को उसके ससुर अभियुक्त जगत साव द्वारा उसके पिता बासुदेव साव सूचक को सौंपा गया था। अ॰ सा॰ 5 के प्रति परीक्षण का पैरा 15 प्रकट करता है कि अभियुक्त ने इस गवाह की उपस्थिति में दहेज मांग किया था और पंचायती भी की गयी थी।

8. सी॰ डब्ल्यू॰ 1 स्वयं पीड़िता जसवन्ती देवी है जिसका इस मामले में पुलिस द्वारा आरोप-पत्र दाखिल किए जाने तक एवं आरोप विरचित किए जाने तक पता नहीं लगाया जा सका था। वह अपने पिता जो इस मामले का सूचक है के साथ उपस्थित हुई जैसा अ॰ सा॰ 2 के पैरा 10 पर एवं अ॰ सा॰ 1 के पैरा 4 पर साक्ष्य से स्पष्ट है। अत:, इस मामले की पीड़िता महिला होने के नाते वह महत्वपूर्ण गवाह है और इसलिए न्यायालय गवाह के रूप में उसका परीक्षण किया गया है और उसने परिसाक्ष्य दिया है कि लगभग तीन वर्ष पहले (दिनांक 20.9.2000 को साक्ष्य दर्ज किए जाने से) वह गाँव चुन्डी में अपने दांपत्य गृह में थी और उसे धान काटने के बहाने उसके पति बिंदु साव एवं ससुर जगत साव द्वारा घर के बाहर ले जाया गया था। वह गाँव के बाहर जाने की अभ्यस्त नहीं थी। वह उन स्थानों जहाँ से वह गुजरी थी का पता ठिकाना नहीं लगा सकी थी और उसे रेलवे द्वारा किसी स्थान पर ले जाया गया था और वहाँ वह दो दिनों तक धान काटने के काम में लगी रही और तत्पश्चात उसका पति एवं ससुर उसे बिना बताए फरार हो गए और उसे अज्ञात व्यक्तियों द्वारा परिरुद्ध किया गया था जो उसे लगभग दो वर्ष तक परिरोध में रखने में सफल हुए जहाँ उससे नौकरानी का काम लिया जाता था। किसी तरह वह स्वयं को बचाने में सफल हुई और उसे गढ़वा न्यायालय को सौंपा गया था। पीड़िता ने असंदिग्ध रूप से आगे अभिसाक्ष्य दिया है कि इस घटना के पहले अभियुक्तगण उस पर प्रहार करते थे और साइकिल भी मांगते थे। पंचायती भी की गयी थी और पंचों ने उसे उसके दांपत्य गृह भेजा था। पीड़िता ने पैरा 5 में इच्छा जाहिर किया कि वह अभी भी अपने पति के साथ रह सकती थी। पीड़िता सी॰ डब्ल्यू॰ 1 को अपने पति एवं अपने ससुर द्वारा किसी अज्ञात स्थान पर ले जाने के बिंदु पर कठोर एवं विस्तृत प्रति परीक्षण के अध्यधीन किया गया है क्योंकि पीड़िता महिला द्वारा स्थान का नाम अथवा लोकेशन नहीं दिया जा सका था। पैरा 72 में निकाला गया है कि वह प्रहार एवं अपने साथ की जा रही यातना के तथ्य के अतिरिक्त दस हजार रुपयों एवं साइकिल की मांग के संबंध में अपने पिता को अपनी दुरावस्था बताया करती थी। उसने अपने ससुराल वालों के विरुद्ध स्पष्ट रूप से एवं विनिर्दिष्टत: प्रहार, यातना एवं दहेज मांग के संबंध में अभिसाक्ष्य दिया और ऐसा परिसाक्ष्य पूर्वोक्त पैरा 72 में प्रति परीक्षण में स्पष्ट है।

9. अ॰ सा॰ 14 का साक्ष्य इस तथ्य के लिए महत्वपूर्ण है कि अभिसाक्ष्य के पैरा 3 में उसने कथन किया है कि जसवन्ती देवी एवं बिन्दु साव के बीच झगड़ा के संबंध में पंचायती की गयी थी और वह पंचायती में उपस्थित था।

<u>तर्क</u>

10. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित बिंदुओं को उठाकर उसका (अपीलार्थी) बचाव किया है:

उन्होंने निवेदन किया कि फर्दबयान/प्राथमिकी में कतिपय अंतर हैं, उदाहरण स्वरुप पुत्री के पति एवं ससुराल वालों द्वारा अभिकथित मांग के संबंध में। अ॰ सा॰ 2 के फर्दबयान में मांग 12000/- रुपयों की है जबकि अभिसाक्ष्य में वह कहता है कि यह 10,000/- रुपयों की थी। इसी प्रकार से, मांग के संबंध में पीड़िता महिला के पिता अ॰ सा॰ 2 ने अपने फर्दबयान में कहा कि गाय भी मांगी गयी थी किंतु उसके अभिसाक्ष्य में गाय का उल्लेख नहीं है। ये दो अंतर दर्शाते हैं कि दहेज मांग नहीं की गयी थी।

11. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने तब पीड़ित महिला सी॰ डब्ल्यू॰ 1 का अभिसाक्ष्य पर अविश्वास करना इप्सित किया है। वह कहते हैं कि यह अविश्वसनीय है कि उसने कई वर्षों तक किसी गाँव में परिरोध अभिकथित किया है, उसने किसी व्यक्ति या व्यक्तियों का नाम उल्लिखित नहीं किया है जिसने उसे परिरुद्ध किया था और न ही गाँव का नाम। आगे, अपीलार्थी के अधिवक्ता कहते हैं कि सी॰ डब्ल्यू॰ 1 ने अपने अभिसाक्ष्य में कहा था कि उसके पति एवं ससुर उसे किसी के साथ मजदूरी करने के लिए छोड़ गए थे जबकि बासुदेव साव अपने अभिसाक्ष्य में कहता है कि वह नहीं कह सकता है कि जगत साव उसकी पुत्री को कहाँ ले गया था। अत: सी॰ डब्ल्यू॰ 1 के अभिसाक्ष्य में अंतर हैं जब बासुदेव साव के अभिसाक्ष्य से तुलना की जाती है, अत: अभियुक्त के विरुद्ध मामला नहीं बनता है।

12. मांग के संबंध में, वह कहते हैं कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A की परिधि के अंतर्गत इसे लाने के लिए जानबूझकर की गयी मांग नहीं की गयी थी। आगे, अपीलार्थी के अधिवक्ता के मुताबिक अधिकांश गवाह पक्षद्रोही हो गए, अत: संदेह के परे मामला नहीं बनता है।

13. अपीलार्थी के अधिवक्ता ने **शंकर प्रसाद साव बनाम राज्य, 1991 (1) Cr. L.J. 639,** में निर्णय पर विश्वास एवं तर्क किया है कि दहेज की मांग मात्र अपराध नहीं है, इसे वस्तुत: दिया जाना अथवा दिए जाने के लिए सहमत होना चाहिए।

14. पूर्वोक्त समस्त कारणों से अभियुक्त/अपीलार्थी के विरुद्ध निश्चयात्मक मामला नहीं बनाया गया है, अत: आरोप छोड़ देने की आवश्यकता है। अंत में, वह कहते हैं कि चूँकि अभियुक्त कारा में काफी समय बिता चुका है तथा दहेज प्रथा अधिनियम की धारा 4 के अनुसार, वह पहले ही छह माह का कारावास भुगत चुका है, अत:, नरम दृष्टिकोण लिया जा सकता है।

15. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि सूचक (अ॰ सा॰ 2) जो पीड़िता महिला का पिता है ने अपने फर्दबयान में विनिर्दिष्टत: अभियुक्त अपीलार्थी द्वारा किए गए कतिपय मांगों का कथन किया है और अपने अभिसाक्ष्य में भी पुन: प्राख्यान किया है। आगे अभिसाक्ष्य में कहा गया है कि उसे उसके पति द्वारा परेशान किया जाता था जो उसपर प्रहार भी करता था और उसे जंगल में मृत समझकर छोड़ दिया गया था किंतु किसी प्रकार वह जीवित रही। मांग के संबंध में, अभिसाक्ष्य दिया गया है कि साइकिल और 10,000/- रुपया मांगा गया था। इसके अतिरिक्त, उसने पहले ही अपनी भूमि बेचा था और उनको 22,000/- रुपया दिया था। विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने आगे कथन किया है कि सी॰ डब्ल्यू॰ 1 ने अपने अभिसाक्ष्य में साइकिल की मांग का उल्लेख भी किया है और कि सास-ससुर हर कोई उसे पीटता था और इस संबंध में पंचायती की गयी थी। उन्होंने सी॰ डब्ल्यू॰ 2 खातूना बीबी के साक्ष्य को भी निर्दिष्ट किया जिसने उसे गाँव के निकट बैठा पाया था, उसे भोजन दिया था और उसको उसके गाँव पहुँचाया था।

<u>निष्कर्ष</u>

16. अभिलेख, दोनों पक्षों के तर्कों एवं सामने आने वाले तथ्यों एवं परिस्थितियों का परिशीलन करने

पर भारतीय दंड संहिता की धारा 498A और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 4 के अधीन अपराध का अपीलार्थी का दोष संपोषित होता प्रतीत होता है।

17. अपीलार्थी द्वारा किए गए अपराध के बेहतर अधिमूल्यन के लिए प्रासंगिक भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A एवं दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 4 की सीधी सरल भाषा को देखना अच्छा होगा। इन दो धाराओं के कोरे भाषा को तथ्यों के विरुद्ध स्थापित करने पर यह स्पष्ट है कि अपराध किया गया है।

Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 498A dk iBu fuEufyf[kr g%&

*"**fdlh L=h d ifr ;k ifr d ukrnkj }kjk mld çfr Øjrk djuk**&*

tk dkb] fdlh L=h dk ifr ;k ifr dk ukrnkj gkr g,] ,lh L=h d çfr Øjrk djxk] og dkjkokl l] ftldh vofèk rhu o"k rd dh gk ldxh] nf.Mr fd;k tk,xk vkj teku l Hkh n.Muh; gkxkA

***Li"Vhdj.k**&bl èkkjk d ç;ktuk d fy,] ^^Øjrk** l fuEufyf[kr vfHkçr g%&*

(a) tkuc>dj fd;k x;k dkb vkpj.k tk ,lh çÑfr dk g ftlls mlI L=h dk vkRegR;k dju d fy, çfjr dju dh ;k mlI L=h d thou] vx ;k LokLF; dk ¼tk pkg ekufld gk ;k 'kkjhfjd½ xEHkhj {kfr ;k [krjk dkfjr dju dh lEHkkouk g½(;k

*(b) fdlh L=h dk bl nf"V l rx djuk fd mldk ;k mld fdlh ukrnkj dk fdlh lEifÙk ;k eY;oku çfrHkfr dh dkb ekx ijh dju d fy, çihfMr fd;k tk, ;k fdlh L=h dk bl dkj.k rx djuk fd mldk dkb ukrnkj ,lh ekx ijh dju e vlQy jgk gA**

ngt ifr"kèk vfèkfu;e] 1961 dh èkkjk 4 fuEuor ifBr g%&

*4. **ngt ekxu d fy, 'kkfLr**&*

^^;fn dkb 0;fDr çR;{kr% ;k ijk{kr% oj ;k oèk d ekrk&firk ;k vU; fj'rnkjk ;k ikyd l ngt ekxrk g] rk og dkjkokl l ftldh vofèk Ng ekl l de ugh gkxh fdUr tk nk o"k rd dh gk ldxh vkj teku l tk nl gtkj #i;k rd dk gk ldxk] n.Muh; gkxk%

*ijUr ;g fd U;k;ky; fu.k; e mfYyf[kr fd, tku oky i;klr rFkk fo'k"k dkj.kk l Ng ekg l de vofèk dk dkjkokl vfèkjkfir dj ldxkA**

18. भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A क्रूरता पर विचार करती है जो कोई जानबूझकर किया गया आचरण है जो ऐसी प्रकृति का है जिसकी महिला को आत्महत्या करने की ओर ले जाने अथवा महिला के जीवन, अंग एवं स्वास्थ्य को गंभीर उपहति अथवा खतरा कारित करने की संभावना है और द्वितीयत: उसको अथवा उससे संबंधित किसी व्यक्ति को किसी संपत्ति अथवा बहुमूल्य प्रतिभूति की किसी अविधिपूर्ण मांग के लिए प्रपीड़ित करने की दृष्टि से महिला को परेशान किया जाना है। डी॰ पी॰ अधिनियम की धारा 4 के संबंध में, यह दहेज मांग के लिए दंड अधिकथित करती है।

19. यहाँ पहले पंचायती को निर्दिष्ट करना समुचित होगा जिसे अ॰ सा॰ 2, सी॰ डब्ल्यू॰ 1, अ॰ सा॰ 5 एवं अ॰ सा॰ 14 सहित अनेक व्यक्तियों द्वारा निर्दिष्ट किया गया है और जिसे नकार किया गया प्रतीत नहीं होता है। अत: पंचायती की गयी थी, कुछ एजेन्डा पर भी पंचायती की गयी थी। अ॰ सा॰ 2, सी॰ डब्ल्यू॰ 1, अ॰ सा॰ 9 एवं अ॰ सा॰ 14 के संयुक्त विवरणों से यह प्रतीत होता है कि धन, गाय एवं साइकिल के लिए अपीलार्थी द्वारा की गयी मांगों के कारण पीड़ित महिला एवं उसके परिवार वालों को परेशान किया

जाता था और पति–पत्नी के बीच तनाव एवं झगड़ा होता था और एक बार नहीं बल्कि कई बार पंचायती की गयी थी।

20. अ॰ सा॰ 2 के फर्दबयान ने वस्तुओं की मांग का उल्लेख किया और वह बाद में अपने अभिसाक्ष्य में उनके बारे में संगत बना रहा है। सी॰ डब्ल्यू॰ 1 का अभिसाक्ष्य भी उसका समर्थन एवं प्रबलित करता है जो मांग के बारे में अ॰ सा॰ 2 द्वारा कहा गया है। राशि के बारे में लघु अंतर अधिक अंतर नहीं बनाते हैं अन्यथा पंचायती नहीं की गयी होगी। सी॰ डब्ल्यू॰ 2 का साक्ष्य अ॰ सा॰ 2 के विवरण का समर्थन करता है कि उसे बुलका खरदाहा जंगल में छोड़ा गया था। झारखंड में जंगल में छोड़ दिए जाने का परिणाम जानवरों, अपराधियों अथवा प्रकृति द्वारा हानि या खतरा में हो सकता था। इस प्रकार यह भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के अधीन क्रूरता के तुल्य होगा।

21. दूसरा महत्वपूर्ण समय वह है जब उसे प्रकटत: कुछ अज्ञात व्यक्तियों के साथ किसी अनजान स्थान में छोड़ दिया गया था, जहाँ उससे काम करवाया जाता था। इस आरोप के बारे में संदेह किया गया है किंतु यह क्रूरता के व्यवहार के साथ संगत प्रतीत होगा जो पंचायती का विषय वस्तु था, अत: पूर्णत: अविश्वसनीय नहीं है।

22. अत: अभिलेखों, तर्कों एवं मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों के आधार पर भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A एवं दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 4 के अधीन अपीलार्थी का दोष संपोषित किया जाता है।

23. कि यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी पहले ही अभिरक्षा में तीन वर्ष तीन माह बिता चुका है। अत: उसने भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A के दंड की अवधि पहले ही भुगत लिया है। इस प्रकार, दहेज प्रतिषेध अधिनियम, 1961 की धारा 4 के अधीन उसका दंडादेश बना रहता है। यह प्रतीत होता है कि वह पहले ही तीन अतिरिक्त माह बिता चुका है, अत: यह दृष्टि में रखते हुए कि वह पहले ही कुछ अभिरक्षा भुगत चुका है, विचारण की कठोरता का सामना किया है और पंचायती में भाग लिया है और आदतवश अपराधी प्रतीत नहीं होता है, डी॰ पी॰ अधिनियम की धारा 4 के लिए दंडादेश पहले ही भुगत ली गयी अवधि के अध्यधीन छह माह के कारावास में उपांतरित किया जाता है। विद्वान विचारण न्यायालय को डी॰ पी॰ अधिनियम, 1961 के अधीन छह माह का उपांतरित दंडादेश की शेष अवधि भुगतने के लिए अपीलार्थी की पुन: गिरफ्तारी के लिए आदेशिका जारी करने का निर्देश दिया जाता है। यदि अन्यथा अवधि पहले ही अभिरक्षा में भुगत ली गयी है, तब अपीलार्थी को उसके जमानत बंध पत्र के दायित्व से उन्मोचित किया जाएगा।

24. अत: दंडादेश में पूर्वोक्त उपांतरण के साथ यह दांडिक अपील खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn ,o çeFk iVuk;d] U;k;efrx.k

मो॰ जिलानी उर्फ जिलानी मियां

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (D.B.) No. 590 of 2013. Decided on 6th October, 2015.

एस॰ टी॰ सं॰ 359 वर्ष 1998 में अपर सत्र न्यायाधीश–I, बेरमो, तेनूघाट द्वारा पारित दिनांक 13.9.2012 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 15.9.2012 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—हत्या–सामान्य आशय–आजीवन कारावास–चश्मदीद गवाह का साक्ष्य विश्वास उत्पन्न नहीं करता है–चिकित्सीय साक्ष्य अभियोजन मामले के साथ संगत नहीं है–सूचक का साक्ष्य भी विश्वसनीय नहीं है–अपीलार्थी संदेह के लाभ के योग्य है–अपीलार्थी दोषमुक्त किया गया–अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 9 से 14)

अधिवक्तागण.–Mr. A.N. Deo, For the Appellant; Mr. Vijay Kumar Gupta, For the State.

न्यायालय द्वारा–इस अपीलार्थी का अभियुक्तगण तसलीम, दाउद एवं कयामुद्दीन के साथ रमेश मांझी की हत्या करने के अभियोग पर विचारण किया गया था। विचारण के अंतिम चरण में, अभियुक्तगण तसलीम एवं दाउद को किशोर पाया गया था और इसलिए किशोर न्याय बोर्ड द्वारा उनके मामलों का पृथक रूप से विचारण किया गया था। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, उन्हें किशोर न्याय बोर्ड द्वारा दोषमुक्त कर दिया गया है। जहाँ तक अभियुक्त कयामुद्दीन का संबंध है, विचारण के दौरान उसकी मृत्यु हो गयी। इस प्रकार केवल अपीलार्थी का विचारण किया गया। विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को आरोप का दोषी पाने पर उसको दिनांक 13.9.2012 के अपने निर्णय के तहत भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और उसको आजीवन कारावास भुगतने एवं 10,000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश दिया।

2. फर्दबयान (प्रदर्श-3) के अनुसार अभियोजन मामला यह है कि दिनांक 14.7.1998 को मध्याह्न लगभग 12 बजे अ॰ सा॰ 6 सूचक बबन मांझी के पुत्र रमेश मांझी उर्फ फागू मांझी (मृतक) को अभियुक्तों तसलीम एवं दाउद द्वारा पशु चराने जंगल ले जाया गया था। शाम में पशु घर आए किंतु जब रमेश मांझी घर नहीं आया, सूचक अ॰ सा॰ 6 उसे खोजने लगा। उस क्रम के दौरान किशुन उर्फ किशोर मांझी अ॰ सा॰ 1, शैबाल मांझी अ॰ सा॰ 3 और बुटन मांझी (परीक्षण नहीं किया गया) ने सूचक अ॰ सा॰ 6 को प्रकट किया कि उसका पुत्र रमेश मांझी इस अपीलार्थी, तसलीम, दाउद एवं कयामुद्दीन के साथ उस दिन देखा गया था। अ॰ सा॰ 6 बबन मांझी अपने पुत्र को खोजने में सफल नहीं हुआ था। किंतु, अ॰ सा॰ 4 मुंशी मांझी के पुत्र अ॰ सा॰ 8 दुर्गा मांझी ने अपने पिता को बताया कि उसने वन में रमेश मांझी का मृत शरीर देखा था। यह जानने पर अ॰ सा॰ 4 मुंशी मांझी ने दिनांक 15.7.1998 को अपराह्न लगभग 4.30 बजे अ॰ सा॰ 6 सूचक को इस तथ्य के बारे में सूचित किया। इस पर, सूचक गाँववालों के साथ सेहदा वन आया और अपने पुत्र का मृत शरीर पाया।

3. अगले दिन अर्थात् दिनांक 16.7.1998 को जब महुआटांड पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी को ऐसी घटना के बारे में जानकारी मिली, वह प्रातः 7.45 बजे घटना स्थल पर आया और अ॰ सा॰ 6 बबन मांझी का फर्द बयान (प्रदर्श 3) दर्ज किया जिसमें उसने घटना का विवरण दिया जैसा कथन उपर किया गया है। उसी समय पर, उसने यह बयान भी दिया कि अपीलार्थी सहित उन चार व्यक्तियों ने उसके पुत्र की हत्या की है क्योंकि एक अन्य अभियुक्त दाउद का दादा कयामुद्दीन सूचक के चाचा अ॰ सा॰ 2 चुन्नु मांझी के साथ बैर रखता था।

4. उक्त फर्दबयान के आधार पर मामला दर्ज किया गया था और औपचारिक प्राथमिकी (प्रदर्श 4) लिखी गयी थी। आई॰ ओ॰ ने अन्वेषण शुरु करने पर मृतक के मृत शरीर का मृत्यु समीक्षा किया और मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार किया। इस पर, मृत शरीर शव परीक्षण के लिए भेजा गया था जिसे दिनांक 16.7.1998 को अपराह्न 1.45 बजे अ॰ सा॰ 7 डॉ॰ कैलाश प्रसाद सिन्हा द्वारा किया गया था। मृत शरीर का शव परीक्षण करने पर, उन्होंने निम्नलिखित उपहतियों को पायाः–

(i) gk;;kM dkfVyt d Bhd uhp xnu d fiNy Hkkx dk dkVu okyk 6" x 3" x 4" dk dVu dk t[eA

(ii) 4" xgjk ,o 1" pkMk nk, ppd d 1" bp uhp nk, ckgjh lhek ij Hknudkjh t[eA

डॉक्टर ने इस मत के साथ शव परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 1) जारी किया कि मृत्यु उपहति सं॰ 1 के कारण हेमरेज एवं आघात के कारण कारित हुई थी।

5. इस बीच, आई॰ ओ॰ ने गवाहों का बयान दर्ज किया। अन्वेषण पूरा करने पर, जब अपीलार्थी एवं तीन अन्य अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था, उनके विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया गया था। सम्यक क्रम में, जब मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था, इस अपीलार्थी का पूर्वोक्त तीन व्यक्तियों के साथ विचारण किया गया था जिसके दौरान अभियोजन ने कुल 11 गवाहों का परीक्षण किया। उनमें से, अ॰ सा॰ 1 किशुन उर्फ किशोर मांझी ने परिसाक्ष्य दिया है कि जब वह वन में पशु चरा रहा था, उसने इस अपीलार्थी सहित समस्त अभियुक्तों को मृतक को ले जाते देखा था। अपीलार्थी के पास डाब था जबकि दाउद के पास टांगी थी। तब अपीलार्थी ने मृतका का गर्दन काट दिया। उसके अनुसार, इस पर वह गाँव आया और सूचक को इसके बारे में सूचित किया। तत्पश्चात, अगले दिन रमेश का मृत शरीर वन में पाया गया था। समरुप परिसाक्ष्य अ॰ सा॰ 3 शैबाल मांझी का है जहाँ तक यह मृतक को अपीलार्थी एवं अन्य अभियुक्तों के साथ देखने से संबंधित है। किंतु, उसने परिसाक्ष्य दिया है कि अपीलार्थी के पास डाब था जबकि दाउद के पास टांगी थी। इस गवाह ने यह भी कहा है कि जब वह गाँव वापस आया, उसने सूचक को इसके बारे में सूचित किया। अ॰ सा॰ 4 मुंशी मांझी के अनुसार, जब उसे अपने पुत्र दुर्गा मांझी अ॰ सा॰ 8 (जिसे न्यायालय द्वारा अक्षम गवाह पाया गया है) से जानकारी हुई कि मृतक का मृत शरीर वन में पड़ा है, उसने सूचक को इसके बारे में सूचित किया और तब सूचक एवं अन्य वन गए और मृतक का मृत शरीर पाया। अ॰ सा॰ 6 सूचक, जिसने अपने फर्दबयान में बयान दिया था कि उसे अ॰ सा॰ 1 एवं अ॰ सा॰ 3 द्वारा बताया गया था कि उन्होंने मृतक को अपीलार्थी के साथ देखा था, ने अपने साक्ष्य में इस तथ्य का समर्थन किया है किंतु आगे परिसाक्ष्य दिया है कि अ॰ सा॰ 4 मुंशी मांझी एवं अ॰ सा॰ 8 दुर्गा मांझी ने उसे प्रकट किया था कि अपीलार्थी ने मृतक का गर्दन काटा था। अ॰ सा॰ 9, 10 एवं 11 औपचारिक गवाह है।

6. अभियोजन मामला बंद करने पर, जब अभियुक्तों के समक्ष दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अपराध में फँसाने वाले साक्ष्य/सामग्री रखे गए थे, उन्होंने इनकार किया। यह प्रतीत होता है कि समय के उस बिंदु पर दो अन्य अभियुक्तों अर्थात् तसलीम एवं दाउद का मामला जिन्हें किशोर पाया गया था पृथक किया गया था जबकि एक अन्य अभियुक्त कयामुद्दीन की मृत्यु इसके पहले हो गयी। इस तरीके से केवल अपीलार्थी विचारण में अभियुक्त बना रहा। विचारण न्यायालय ने अ॰ सा॰ 1 एवं 3 के परिसाक्ष्य पर विश्वास करने पर पाया कि इस अपीलार्थी को अंतिम बार मृतक के साथ देखा गया था और समय के उस बिंदु पर उसके पास डाब था और कि अपीलार्थी द्वारा कारित उपहति चिकित्सीय साक्ष्य के मुताबिक मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त थी। तद्नुसार, विचारण न्यायालय ने दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज किया जो चुनौती के अधीन है।

7. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री ए॰ एन॰ देव निवेदन करते हैं कि अ॰ सा॰ 1 और 3 कभी विश्वास किए जाने योग्य नहीं है जिन्होंने साक्ष्य के दौरान इस अपीलार्थी एवं अन्य अभियुक्तों को हत्या करते देखने का दावा किया क्योंकि यदि उन्होंने अपीलार्थी को मृतक की हत्या करते देखा था,

उन्होंने इस तथ्य को अ॰ सा॰ 6 सूचक को प्रकट किया होता और सूचक ने स्वाभाविकत: फर्दबयान में ऐसा बयान दिया होता। किंतु चूँकि वे तथ्य अ॰ सा॰ 6 के फर्दबयान में नहीं है, उन्हें आसानी से इस न्यायालय के समक्ष झूठ बोलता कहा जा सकता है। इस संबंध में, आगे यह निवेदन किया गया था कि उनके अनुसार अपीलार्थी के पास डाब था जबकि अन्य अभियुक्त टांगी लिए थे। किंतु उपहतियों जिन्हें मृतक के शरीर पर पाया गया है में से एक भेदनकारी प्रकृति का जख्म है जिसे डाब या टांगी द्वारा कारित नहीं किया जा सकता था और तद्द्वारा वे दोनों गवाह अ॰ सा॰ 1 एवं 3 पूर्णत: अविश्वसनीय हैं और विचारण न्यायालय को अ॰ सा॰ 1 एवं 3 के परिसाक्ष्य पर विश्वास नहीं करना चाहिए था। किंतु, चूँकि विचारण न्यायालय ने दोष सिद्धि का आदेश एवं दंडादेश दर्ज करने के लिए इस पर विश्वास किया है, आक्षेपित निर्णय अपास्त किए जाने योग्य है।

8. इसके विरुद्ध, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री विजय कुमार गुप्ता निवेदन करते हैं कि अ॰ सा॰ 1 एवं 3 ने अपने साक्ष्य के क्रम में शायद अतिशयोक्ति किया होगा किंतु उसका अर्थ यह नहीं है कि वे पूरा झूठ बोल रहे हैं और कि अभियोजन सफलतापूर्वक इस तथ्य को सिद्ध करने में सक्षम हुआ है कि अपीलार्थी को अंतिम बार अभियुक्त के साथ देखा गया था।

9. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख के परिशीलन पर, हम पाते हैं कि मामला जिसे आरंभ में बनाया गया है जैसा सूचक अ॰ सा॰ 6 के फर्दबयान से सामने आता है यह है कि दिनांक 14.7.1998 को मध्याह्न लगभग 12 बजे अभियुक्तगण तसलीम एवं दाउद मृतक रमेश मांझी के घर आए और उसको पशु चराने अपने साथ वन ले गए। शाम में वे पशु घर वापस आए किंतु रमेश मांझी घर नहीं लौटा था। इस पर, सूचक अपने पुत्र को खोजने लगा जिस दौरान अ॰ सा॰ 1 किशुन उर्फ किशोर मांझी और अ॰ सा॰ 3 शैबाल मांझी ने उसको प्रकट किया कि उन्होंने अपीलार्थी एवं अन्य अभियुक्तों को मृतक को अपने साथ सेहदा वन ले जाते देखा था। अगले दिन अर्थात् दिनांक 15.7.1998 को जब अ॰ सा॰ 4 मुंशी मांझी को अपने पुत्र दुर्गा मांझी अ॰ सा॰ 8 से जानकारी हुई कि वन में मृत शरीर पड़ा था, उक्त मुंशी मांझी अ॰ सा॰ 4 ने सूचक अ॰ सा॰ 6 को इसके बारे में सूचित किया जो गाँव वालों के साथ वन गया और मृत शरीर पाया।

साक्ष्य के दौरान अ॰ सा॰ 6 ने यह परिसाक्ष्य देकर अपने मामले में सुधार किया है कि अगले दिन जब वह अपने पुत्र को खोज रहा था, उसे मुंशी मांझी अ॰ सा॰ 4 एवं दुर्गा मांझी अ॰ सा॰ 8 (जिसे न्यायालय द्वारा अक्षम गवाह पाया गया है) ने उसे बताया कि अपीलार्थी ने गर्दन काटा है। फर्दबयान में दिए गए बयान की दृष्टि में साक्ष्य का यह टुकड़ा स्वीकार नहीं किया जा सकता है। किंतु, साक्ष्य का वह टुकड़ा जहाँ सूचक ने परिसाक्ष्य दिया है कि अभियुक्तों तसलीम एवं दाउद द्वारा उसके पुत्र को वन ले जाया गया था, अक्षुण्ण बना रहता है। अ॰ सा॰ 1 किशुन उर्फ किशोर मांझी एवं अ॰ सा॰ 3 शैबाल मांझी के साक्ष्य पर आते हुए फर्दबयान में दिए गए बयान के मुताबिक उन्होंने केवल सूचक अ॰ सा॰ 6 जब वह अपना पुत्र खोज रहा था को सूचित किया था कि उन्होंने इस अपीलार्थी एवं अन्य अभियुक्तों को मृतक को वन ले जाते देखा था। किंतु साक्ष्य के दौरान अ॰ सा॰ 1 यह कहने की सीमा तक गया कि उसने इस अपीलार्थी को डाब के साथ और अन्य अभियुक्त दाउद को टांगी के साथ देखा था और अपीलार्थी ने मृतक का गर्दन काटा था जबकि अ॰ सा॰ 3 शैबाल मांझी ने परिसाक्ष्य दिया कि उसने इस अपीलार्थी को डाब के साथ और अन्य अभियुक्त दाउद को टांगी के साथ देखा था जो मृतक को वन ले जा रहे थे।

10. इन परिस्थितियों के अधीन, मृतक की गर्दन काटे जाने का और अपीलार्थी को डाब के साथ देखने का गवाहों का परिसाक्ष्य स्वीकार्य नहीं है। यदि उन गवाहों ने अपीलार्थी

को मृतक की गर्दन काटते देखा होता, उन्होंने उक्त तथ्य को सूचक को प्रकट किया होता और सूचक ने अपने फर्दबयान में उन समस्त तथ्यों का उल्लेख किया होता। सूचक इस बिंदु पर स्पष्ट रूप से मौन है।

11. किंतु, प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या इस प्रभाव का उनका परिसाक्ष्य कि उन्होंने अपीलार्थी एवं अन्य अभियुक्तों को मृतक को वन ले जाते देखा था, स्वीकार्य है?

12. यह कथन किया जाए कि सूचक के चाचा मुंशी मांझी अ॰ सा॰ 4 का एक अन्य अभियुक्त दाउद के दादा कयामुद्दीन के साथ बैर था और गवाह अ॰ सा॰ 1 एवं 3 सूचक से संबंधित हैं। सूचक ने अपने साक्ष्य में और फर्दबयान में दिए गए अपने बयान में भी कथन किया है कि दाउद एवं तसलीम मृतका को वन ले गए थे और न कि यह अपीलार्थी। ऐसी स्थिति में, जब दिनांक 14.7.1998 को शाम में मृतक घर नहीं लौटा था, सूचक अपने साक्ष्य के मुताबिक एवं अ॰ सा॰ 6 बबन मांझी की पत्नी अ॰ सा॰ 5 तालो बीबी के साक्ष्य के मुताबिक भी तसलीम एवं दाउद के घर मृतक का अता-पता पूछने गया था। यदि यह सत्य होता कि अ॰ सा॰ 1 एवं 3 ने अपीलार्थी को मृतक के साथ देखा भी था, सूचक आचरण के स्वाभाविक क्रम में मृतक का अता-पता जानने अपीलार्थी के घर आया होता किंतु ऐसा नहीं है। इन परिस्थितियों के अधीन, उक्त तथ्य पर अपीलार्थी को दोषसिद्ध करना सुरक्षित नहीं होगा, अत: वह संदेह के लाभ के योग्य है। तद्नुसार, विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है।

13. परिणामस्वरुप, अपीलार्थी जो अभिरक्षा में है को समस्त आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है और उसे तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

14. इस प्रकार, यह अपील अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

डॉ॰ सईद मोहम्मद जफर हसन उर्फ डॉ॰ एस॰ एम॰ जफर हसन

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 2857 of 2013. Decided on 8th October, 2015.

सेवा विधि–नियमितिकरण–नियमितिकरण नियमावली, 2011—नियम 4 (ख)–याची को अनुपस्थिति की कतिपय अवधि के सिवाए उसके संविदात्मक काम की अवधि के लिए वेतन का भुगतान किया गया है–याची को काम पर लगाए जाने, जैसा प्रत्यर्थी द्वारा स्वीकार किया गया है, को ऐसी अनुपस्थिति के कारण बीच में रूकता हुआ नहीं कहा जा सकता है–यदि उसकी सेवा दिनांक 10.5.2005 को उसके काम पर लगाए जाने की तिथि से विभाग द्वारा जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के माध्यम से किए गए नियमितिकरण तक निरन्तर थी, प्रत्यर्थी को याची को सम्यक विचार से इनकार नहीं करना चाहिए था–जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को नियमितिकरण नियमावली, 2011 के निबंधनानुसार याची के मामले पर विचार करने का निर्देश दिया। (पैराएँ 7 एवं 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Kumar Vaibhav, For the Petitioner; J.C. to A.G., For the Resp.-State; Mr. Sanjoy Piprawall, For the J.P.S.C..

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. दिनांक 10 मई, 2005 के मेमो सं॰ 489 वाले आदेश (परिशिष्ट 1) द्वारा प्रत्यर्थी स्वास्थ्य, आयुर्विज्ञान शिक्षा एवं परिवार कल्याण विभाग के अधीन नियुक्ति पर दिनांक 10 मई, 2005 से जिसे तत्पश्चात समय-समय पर बढ़ाया गया है चिकित्सा अधिकारी के रूप में संविदात्मक आधार पर अभी भी कार्यरत याची दिनांक 12 अगस्त, 2011 को प्रत्यर्थी विभाग द्वारा अधिसूचित नियमितिकरण नियमावली, 2011 (परिशिष्ट 2) के निबंधनानुसार सेवा में नियमितिकरण इप्सित कर रहा है। नियम 4 (ख) के अधीन पात्रता शर्तों ने विनिर्दिष्ट किया कि ऐसे किसी संविदात्मक चिकित्सा अधिकारी को अपने नियमितिकरण की तिथि तक 5 वर्षों से अधिक के लिए निरंतर संविदात्मक सेवा में होना चाहिए। याची का नाम जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को भी भेजा गया था जब ऐसा कार्य प्रत्यर्थी विभाग द्वारा किया गया था जैसा जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के प्रतिशपथ पत्र के पैराग्राफ 9 से स्पष्ट है। किंतु, जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ ने दिनांक 4 सितंबर, 2012 को पत्र सं॰ 2565 के माध्यम से दिए गए प्रोफॉर्मा में आरक्षण कोटि के मुताबिक उम्मीदवारों की अधिप्रमाणीकृत सूची एवं आवेदनों को भेजने का अनुरोध किया। दिनांक 10 नवंबर, 2012 के पत्र सं॰ 603 के माध्यम से विभाग का उत्तर उक्त सूची में याची का नाम अंतर्विष्ट नहीं करता था यद्यपि यह कुछ छोड़ दिए गए उम्मीदवारों का नाम अंतर्विष्ट करता है। अत: प्रत्यर्थी जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ ने अप्रिल, 2013 में अनेक तिथियों पर किए गए साक्षात्कार के लिए याची को नहीं बुलाया था जैसा उनके प्रतिशपथ पत्र के पैराओं 10 एवं 11 में उनका दृष्टिकोण है। प्रत्यर्थी विभाग प्रतिशपथ पत्र के पैरा 23 में स्वीकार करता है कि सिविल सर्जन, कोडरमा के प्रमाण पत्र जिसे उन्होंने अनवधानी के चलते नहीं भेजा था की अनुपस्थिति के कारण याची की उम्मीदवारी पर विचार नहीं किया गया था जैसा दिनांक 25 अप्रिल, 2013 के मेमो सं॰ 598, रिट आवेदन का परिसाक्ष्य 7 से स्पष्ट है। किंतु प्रत्यर्थियों ने भिन्न-भिन्न अवधियों के लिए विभाग द्वारा बुलाए जाने पर भी याची की अनुपस्थिति का अभिवचन किया है जैसा दिनांक 3 अगस्त, 2013 के पत्र सं॰ 901(3) के माध्यम से सिविल सर्जन, कोडरमा द्वारा संसूचित किया गया है। सिविल सर्जन दिनांक 8 अगस्त, 2013 के सं॰ 1128 वाले पत्र के माध्यम से (परिशिष्ट-C) विभिन्न अवधियों के लिए याची को संविदात्मक भत्ता का भुगतान और अनुपस्थिति की अवधि के लिए कटौती को निर्दिष्ट किया है। दिनांक 7 सितंबर, 2013 के पत्र सं॰ 1307 के माध्यम से याची की अनुपस्थिति एवं उसको संविदात्मक भत्ता का भुगतान के संबंध में सिविल सर्जन, कोडरमा से पुन: विस्तृत रिपोर्ट मांगी गयी थी। परिशिष्ट E एवं F के तहत दिनांक 5 जुलाई, 2013 का पत्र और तत्पश्चात भेजी गयी रिपोर्ट अपर पी॰ एच॰ सी॰, कोडरमा के रूप में अपनी पद स्थापना के स्थान से जून, 2005 माह में एवं जुलाई, 2005 में 17 दिनों की अनुपस्थिति चार भिन्न माहों में 19 दिन के लिए मार्च, 2007 से अक्टूबर, 2008 तक की कतिपय अवधि के लिए अनुपस्थिति और भिन्न माहों में मार्च, 2010 से फरवरी, 2013 तक अनुपस्थिति की कतिपय अवधि उपदर्शित करता है। उक्त रिपोर्ट को निर्दिष्ट करके प्रत्यर्थी विभाग ने निवेदन किया है कि उसकी संविदात्मक सेवा 2011 नियमावली के नियम 4 (ख) के निबंधनानुसार निरंतर नहीं थी। ये याची के गैर नियमितिकरण के कारण है।

3. याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची का मामला आरंभ में केवल सिविल सर्जन, कोडरमा के प्रमाण पत्र की कमी के कारण जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को अनुशंसित नहीं किया गया था। बाद में, परिशिष्ट 7 के माध्यम से इसकी सम्यक आपूर्ति की गयी थी, जहाँ प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा स्पष्टत: कथन किया गया है कि याची कोडरमा जिले में विभिन्न प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों में दिनांक 10.5.2005 से नियमित रूप से चिकित्सा अधिकारी के रूप में संविदात्मक आधार पर कार्यरत रहा है। उसके विरुद्ध कोई

विभागीय कार्यवाही नहीं की गयी थी। अनवधानीपूर्ण गलती के कारण पहले अनुशंसा प्रमाण पत्र नहीं भेजा जा सका था। सिविल सर्जन, कोडरमा ने उसके नियमितिकरण की अनुशंसा भी की। यह निवेदन किया गया है कि विभाग ने सात वर्षों की अवधि में वितरित कतिपय दिनों के लिए तब तक सात वर्ष की संविदात्मक सेवा करिअर में याची की अनुपस्थिति से संबंधित कतिपय रिपोर्टों को संलग्न करके प्रतिशपथ पत्र के माध्यम से कारणों को पूरित करना इप्सित किया है। समय के किसी भी बिंदु पर, ऐसी अनुपस्थिति के लिए याची पर कोई कारण बताओ नोटिस तामील नहीं किया गया था और न ही समय के किसी बिंदु पर उसकी संविदात्मक सेवा पृथक कर दी गयी थी। वस्तुत:, वह आज की तिथि तक संविदात्मक सेवा में कार्यरत है। प्रत्यर्थियों ने नियमितिकरण नियमावली, 2011 के प्रावधानों के निहितार्थ का अनुसरण नहीं किया है और वस्तुत: यह निष्कर्षित करने के लिए कि वह प्रत्यर्थी विभाग में अनुशंसित एवं नियमित किए जाने के लिए निरंतर सेवा की आवश्यकता परिपूर्ण नहीं करता है, उसकी संपूर्ण संविदात्मक सेवा में कतिपय दिनों अथवा अवधि के लिए अनुपस्थिति के अमान्य अति तकनीकी आधारों का सहारा लिया है। यह प्रार्थना की गयी है कि प्रत्यर्थी विभाग एवं जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को नियमावली 2011 के अनुरुप स्वयं इसके अपने गुणागुण पर याची के मामले पर विचार करने का और विभाग के अधीन उसकी सेवा नियमित करने का समुचित निर्देश जारी किया जा सकता है क्योंकि वह नियमावली के अधीन आवश्यक आज्ञापक शर्तों को पूरा करता है।

4. प्रत्यर्थी राज्य के अधिवक्ता ने प्रत्युत्तर में प्रतिशपथ पत्र के विषयवस्तु पर विश्वास किया जिसके विवरणों को पहले ही निर्णय के पूर्वोक्त पैराग्राफों में निर्दिष्ट किया गया है। वह यह निवेदन भी करते हैं कि उसकी अनुपस्थिति के कारण, उसे नियमितिकरण का हकदार होने के लिए पाँच वर्ष से अधिक के लिए निरंतर सेवा में बना नहीं माना जा सकता है। किंतु वह यह विवाद करने की अवस्था में नहीं हैं कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 सिविल सर्जन, कोडरमा ने स्पष्टत: यह कथन करते हुए कि उसको काम पर लगाए जाने की अवधि के लिए उसके विरुद्ध अभिकथित किसी आरोप के बिना विभिन्न पी॰ एच॰ सी॰ में उक्त जिला में वह संविदात्मक डॉक्टर के रूप में निरंतर सेवा में रहा है, याची के पक्ष में प्रमाण पत्र, परिशिष्ट 7, जारी किया है।

5. जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि इसकी भूमिका प्रत्यर्थी विभाग द्वारा अनुशंसित ऐसे डॉक्टरों की सूची पर आधारित भरती प्रक्रिया का अनुसरण करने तक सीमित है। चूँकि याची के पक्ष में अनुशंसा नहीं की गयी थी, जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ पर याची के मामले पर विचार नहीं करने का अभियोग नहीं लगाया जा सकता है। प्रत्यर्थी विभाग ने उसका नाम अनुशंसित नहीं करने के कारणों में से एक के रूप में उसकी सेवा को निरंतर नहीं पाया है।

6. याची के अधिवक्ता ने **डॉ॰ राहुल बनाम झारखंड राज्य, डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6641 वर्ष 2013** दिनांक 12 मई, 2015 मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है। वह निवेदन करते हैं कि उक्त मामले में भी अनुपस्थिति की कतिपय अवधि के लिए प्रत्यर्थी विभाग द्वारा उक्त संविदात्मक डॉक्टर को नियमित नहीं किया गया था। उसका नाम जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा अनुशंसित किया गया था और उसका साक्षात्कार भी किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि इस न्यायालय ने नियम 4 (ख) के प्रावधानों की व्याख्या किया था और इस दृष्टिकोण पर आया कि चूँकि ऐसे अवकाश अथवा अनुपस्थिति के कारण संविदात्मक सेवा में भी विभाग एवं उक्त डॉक्टर के बीच नियोक्ता कर्मचारी संबंध का विच्छेद नहीं था, प्रत्यर्थीगण नियमितिकरण से इनकार करने के लिए उसकी सेवा को नियमित नहीं मानने में न्यायोचित नहीं थे। यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान याची की अनुपस्थिति की अवधि ऐसी अवधि के लिए है जब संविदात्मक डॉक्टरों ने हड़ताल का सहारा लिया था और याची भी उनमें से एक था। किंतु, वह निवेदन करते हैं कि चूँकि प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने स्पष्टत: याची के पक्ष में निरंतर सेवा का प्रमाणपत्र

दिया है और प्रत्यर्थी जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को उसका नाम नहीं भेजने का एकमात्र कारण उक्त प्रमाण पत्र की अनुपस्थिति था, अनुपस्थिति के अन्य आधारों को उसको नियमितिकरण से इनकार करने का आधार नहीं बनाया जाना चाहिए जब वह किसी शिकायत के बिना सरकार में अभी भी सेवारत है।

7. मैंने पक्षों के निवेदनों पर विचार किया है और अभिलेख पर मौजूद प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। यहाँ उपर ध्यान में लिया गया मामले का ताथ्यिक आधार इस धारणा की ओर ले जाता है कि आरंभ में नियंत्रक प्राधिकारी प्रत्यर्थी सं॰ 5 के प्रमाण पत्र की अनुपस्थिति के कारण याची का मामला नियमितिकरण के लिए अनुशंसित नहीं किया गया था। किंतु तत्पश्चात यह पाया गया था कि याची 2012 तक सात वर्षों की कुल सेवा में कतिपय दिनों के लिए विभिन्न अवधियों के दौरान अनुपस्थित रहा था। ऐसी अनुपस्थिति के लिए उस पर आरोप-पत्र जारी नहीं किया गया था। वस्तुतः, यह दर्शाने के लिए आदेश नहीं है कि ऐसी अनुपस्थिति के कारण याची की संविदात्मक सेवा समाप्त की गयी थी। याची को अनेक दिनों के लिए अनुपस्थिति की कतिपय अवधियों के सिवाए अपनी संविदात्मक सेवा की अवधि के लिए वेतन का भुगतान किया गया है। किसी भी स्थिति में, याची की सेवा, जैसा प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा स्वीकार किया गया है, ऐसी अनुपस्थिति के कारण बीच में रोक दी गयी नहीं कही जा सकती है। यदि उसकी सेवा दिनांक 10 मई, 2005 को उसको काम पर लगाए जाने की तिथि से जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के माध्यम से प्रत्यर्थी विभाग द्वारा किए गए नियमितिकरण तक निरंतर जारी थी, इसका कोई कारण नहीं है कि क्यों प्रत्यर्थी द्वारा याची के मामले पर सम्यक विचार करने से इनकार किया जाए। अतः प्रत्यर्थी द्वारा लिया गया आधार स्वीकार्य नहीं है।

8. पूर्वोक्त तथ्यों पर विचार करने पर याची का मामला **डॉ॰ राहुल बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य (ऊपर)** मामले के समरुप प्रतीत होता है।

9. उपर की गयी चर्चा एवं यहाँ उपर दर्ज किए गए कारणों से याची का मामला नियमितिकरण के लिए विचार किए जाने योग्य है। प्रत्यर्थी विभाग चार सप्ताह की अवधि के भीतर ऐसे विचार किए जाने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा जारी प्रमाण पत्र, परिशिष्ट 7, जैसा विहित फॉर्मेट में आवश्यक है जिसे याची द्वारा पहले ही परिपूर्ण करता बताया गया है, सहित समस्त आवश्यक दस्तावेजों के साथ जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को याची का मामला अग्रसारित करेगा। प्रत्यर्थी जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ तत्पश्चात 4 सप्ताह की अवधि के भीतर के भीतर नियमितिकरण नियमावली, 2011 के निबंधनानुसार याची के मामले पर विचार करेगा। ऐसे विचार किए जाने पर निर्भर, यदि याची का मामला नियमावली 2011 के अधीन समस्त निबंधनों में योग्य एवं पात्र पाया जाता है, तब विधि के अनुरुप याची के नियमितिकरण के लिए अंतिम आदेश पारित करने के लिए प्रत्यर्थी विभाग, स्वास्थ्य, आयुर्विज्ञान शिक्षा एवं परिवार कल्याण, झारखंड सरकार को समुचित अनुशंसा करेगा। यह कहना अनावश्यक है कि तत्पश्चात चार सप्ताह की अवधि के भीतर प्रत्यर्थीगण ऐसी अनुशंसा पर निर्णय लेंगे।

10. तद्नुसार, यहाँ उपर उपदर्शित सीमा एवं तरीके तक रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn ,o çeFk iVuk;d] U;k;efrx.k

अमरनाथ महतो

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (D.B.) No. 596 of 2013. Decided on 12th October, 2015.

एस॰ टी॰ केस सं॰ 514 वर्ष 2012 में अपर सत्र न्यायाधीश VI-सह-फास्ट ट्रैक कोर्ट, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 15.4.2013 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 17.4.2013 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 376—बलात्कार–दोषसिद्धि–अपीलार्थी का कृत्य सहमति से किया गया था क्योंकि पीड़िता द्वारा हल्ला नहीं किया गया था–रेडियोलॉजिकल रिपोर्ट के आधार पर पीड़िता की आयु 18 वर्ष पायी गयी थी–दोषसिद्धि एवं दंडादेश अपास्त किया गया–अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 11 से 16)

अधिवक्तागण.–M/s Mahesh Tewari, Pankaj Kumar Dubey, For the Appellants; Mr. Krishna Shankar, For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.–अपीलार्थी का पीड़िता के साथ बलात्कार करने के अभियोग पर विचारण किया गया था। न्यायालय ने आरोप सिद्ध किया गया पाए जाने पर अपीलार्थी को दिनांक 15.4.2013 के अपने निर्णय के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दोषसिद्ध किया और उसको दस वर्षों का कठोर कारावास भुगतने और 20,000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने और व्यतिक्रम में एक वर्ष का सामान्य कारावास भुगतने का दंडादेश दिया।

2. अभियोजन मामला, जैसा लिखित रिपोर्ट (प्रदर्श 2) में बनाया गया है, यह है कि दिनांक 26.7.2012 को जब पीड़िता (अ॰ सा॰ 3) की माता चिरनी देवी (अ॰ सा॰ 2) और परिवार के अन्य सदस्य विवाह समारोह में शामिल होने गाँव लिलोरी गए थे, पीड़िता घर में अकेली थी। अपराह्न 6 बजे पड़ोस में रहने वाला और सी॰ आर॰ पी॰ एफ॰ में कार्यरत यह अपीलार्थी, पीड़िता का कजिन, उसके घर आया और उससे बात किया। उस दौरान, उसने उसे बताया कि वह घर में अकेली है क्योंकि उसकी माता एवं परिवार के अन्य सदस्य विवाह में शामिल होने दूसरे गाँव गए हैं। जब वह घर के अंदर आयी, अपीलार्थी भी उसके पीछे गया। अचानक अपीलार्थी ने उसे पकड़ लिया और चारपाई पर गिरा दिया और तब उसका बलात्कार किया। उस दौरान, पीड़िता की माता चिरनी देवी (अ॰ सा॰ 2) घर पहुँची और दरवाजा खटखटाया किंतु वह उत्तर नहीं दे सकी थी, क्योंकि वह दर्द में थी। इस बीच, अपीलार्थी ने दरवाजा खोला और भाग गया। जब उसकी माता कमरा के अंदर आयी, उसने अपनी माता को घटना के बारे में बताया। तत्पश्चात, उसकी माता उसे अपीलार्थी के घर ले गयी और अपीलार्थी की माता को इसके बारे में सब कुछ बताया, जो इसे सुनने पर उसको गाली देने लगी और किसी को नहीं बताने की धमकी दी। अगले दिन अर्थात् दिनांक 27.7.2012 को प्रातः 6 बजे अपीलार्थी की माता और उसके दो पुत्र आए और पुनः धमकी दी।

3. दिनांक 28.7.2012 को पीड़िता की माता चिरनी देवी (अ॰ सा॰ 2) उसे मुखिया के घर ले गयी जो किसी नरेश कुमार महतो के साथ पुलिस थाना गया जहाँ मुखिया को लिखित रिपोर्ट (प्रदर्श 2) तेतुलमारी पुलिस थाना 7 के प्रभारी अधिकारी को दिया गया था। उक्त लिखित रिपोर्ट मामले के संस्थापन के लिए कतरास पुलिस थाना को अग्रसारित की गयी थी जिस पर भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन कतरास (तेतुलमारी) पी॰ एस॰ केस सं॰ 181 वर्ष 2012 दर्ज किया गया था। मामले का अन्वेषण किया गया था, आरंभ में किसी अन्य अधिकारी द्वारा, जिसे बाद में राम निवास सिंह अ॰ सा॰ 6 द्वारा किया गया था जिसने अभिग्रहण सूची (प्रदर्श 3) के अधीन पीड़िता का जंघिया जब्त किया।

4. आई॰ ओ॰ ने डॉ॰ सुधा सिंह (अ॰ सा॰ 1) द्वारा पीड़िता का परीक्षण करवाया, जिन्होंने पीड़िता का परीक्षण करने पर हायमन फटा पाया। योनि में दो उंगलियों का प्रवेश था। कोई उपहति नहीं पायी

गयी थी। वीर्य नहीं पाया गया था। रेडियोलॉजिकल परीक्षण पर, पीड़िता की आयु 18 वर्ष पायी गयी थी। कोई बाह्य उपहति नहीं पायी गयी थी। किंतु, इस प्रभाव का मत दिया गया था कि यौन संभोग किया गया प्रतीत होता है। डॉक्टर की रिपोर्ट को प्रदर्श 1 के रूप में साक्ष्य में ग्रहण किया गया है।

5. इस बीच, आई॰ ओ॰ ने गवाहों का बयान दर्ज किया। अन्वेषण पूरा करने पर, आरोप-पत्र दाखिल किया गया था, जिस पर अपराध का संज्ञान लिया गया था। सम्यक क्रम में, जब अपीलार्थी का विचारण किया गया था, अभियोजन ने छह गवाहों का परीक्षण किया। उनमें से, अ॰ सा॰ 2 (चिरनी देवी) पीड़िता की माता है जिसने परिसाक्ष्य दिया है कि गाँव लिलोरी में विवाह में शामिल होने के बाद, जब वह घर लौटी, उसने घर का दरवाजा बंद पाया। उसने दरवाजा खोलने के लिए अपनी पुत्री को बुलाया, किंतु अंदर से कोई जवाब नहीं आया था। जब वह दरवाजा के निकट खड़ी थी, उसने अपीलार्थी को दरवाजा खोलते एवं भागते देखा। जब वह कमरा के अंदर आयी, पीड़िता ने उसे बताया कि इस अपीलार्थी ने उसका मुँह दबाने के बाद उसके साथ बलात्कार किया। तुरन्त तत्पश्चात, वह अपनी पुत्री को इस अपीलार्थी की माता के पास ले गयी और उसको घटना के बारे में बताया किंतु वह उसको गाली देने लगी। इस पर, उसी रात वे मुखिया के पास गए और तब दिनांक 28.7.2012 को मामला दर्ज किया गया था। अ॰ सा॰ 3 पीड़िता ने परिसाक्ष्य दिया है, यद्यपि प्राथमिकी में दिए गए बयान के साथ काफी अंतर के साथ, कि जब वह शाम की पूजा करने घर में जा रही थी, अपीलार्थी पीछे से आया और उसको कमरा में ले गया और उसको चारपाई पर पटक दिया और दरवाजा बंद करने के बाद उसके साथ बलात्कार किया। जब उसकी माता ने दरवाजा खटखटाया, अपीलार्थी ने दरवाजा खोला और भाग गया। इस पर, जब उसकी माता कमरा में आयी, उसने उसे अपीलार्थी द्वारा जबरन अपने साथ बलात्कार किए जाने के बारे में बताया। अ॰ सा॰ 4 चोना कुमारी, पीड़िता की बड़ी बहन, ने भी परिसाक्ष्य दिया है कि वह अपनी माता के साथ विवाह में भाग लेने गयी थी और जब वे वापस लौटे, उन्होंने दरवाजा बंद पाया और तब उसकी माता ने पीड़िता को दरवाजा खोलने के लिए कहा, किंतु इसे नहीं खोला गया था। कुछ समय बाद, अपीलार्थी कमरा के बाहर आया और भाग गया और जब वह अपनी माता के साथ कमरा के अंदर आयी, उन्हें पीड़िता द्वारा अपीलार्थी द्वारा बलात्कार किए जाने के बारे में बताया गया था। अ॰ सा॰ 5 कैलाश महतो, पीड़िता का पिता अनुश्रुत गवाह है जिसको पीड़िता से घटना के बारे में जानकारी हुई।

6. अभियोजन मामला बंद करने के बाद, जब अपीलार्थी से उसके विरुद्ध सामने आने वाले अपराध में फँसाने वाले साक्ष्यों के बारे में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन पूछा गया था, अपीलार्थी ने इनकार किया।

7. तत्पश्चात्, विचारण न्यायालय ने अ॰ सा॰ 2 (चिरनी देवी) एवं अ॰ सा॰ 4 (चोना कुमारी) के परिसाक्ष्य से और चिकित्सीय साक्ष्य से भी संपुष्टि पाने वाले पीड़िता अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य पर अंतर्निहित विश्वास करने के बाद अपीलार्थी को दोषी पाया और, तद्नुसार, दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज किया जो चुनौती के अधीन है।

8. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री महेश तिवारी निवेदन करते हैं कि यदि संपूर्ण तथ्यों एवं परिस्थितियों को विचार में लिया जाता है, कोई भी इस निष्कर्ष पर आएगा कि यह पीड़िता के साथ जबरन बलात्कार का मामला नहीं हो सकता था जिसने स्वयं का 13 वर्ष का होने का दावा किया किंतु उसकी आयु डॉक्टर (अ॰ सा॰ 1) द्वारा 18 वर्ष पायी गयी है बल्कि अपीलार्थी का कृत्य, जैसा अभिकथित किया गया है, अभियोक्त्री (अ॰ सा॰ 3) की सहमति के साथ हुआ प्रतीत होता है और तद्द्वारा, अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन अपराध करता हुआ नहीं कहा जा सकता

है, किंतु विचारण न्यायालय ने उन समस्त परिस्थितियों को विचार में नहीं लिया था और मामले को सहमतिपूर्ण कृत्य होने का सुझाव दिया और तद्द्वारा, विद्वान विचारण न्यायालय ने दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज करने में अवैधता किया जो अपास्त किए जाने योग्य है।

9. इसके विरुद्ध, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ श्री कृष्ण शंकर निवेदन करते हैं कि पीड़िता के विवरण पर अविश्वास करने का कारण नहीं है क्योंकि कोई पीड़िता इस झूठे मामले के साथ नहीं आएगी कि उसके साथ किसी ने बलात्कार किया है। यहाँ, वर्तमान मामले में, पीड़िता ने स्पष्टतः परिसाक्ष्य दिया है कि अपीलार्थी ने उसके साथ बलात्कार किया और पीड़िता की माता चिरनी देवी अ॰ सा॰ 2 द्वारा और बड़ी बहन चोना कुमारी अ॰ सा॰ 4 द्वारा भी अपीलार्थी को कमरा से बाहर आते और भागते देखा गया था और इसके अतिरिक्त गवाहों का परिसाक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य से संपुष्टि पाता है क्योंकि डॉक्टर ने मत दिया था कि संभोग हुआ प्रतीत होता है। आगे यह इंगित किया गया था कि अगर यह पाया भी जाता है कि अपीलार्थी का कृत्य पीड़िता की सहमति से था, यह अपीलार्थी को दायित्व से विमुक्त नहीं करेगा क्योंकि गवाहों के मुताबिक पीड़िता की आयु 16 वर्ष से न्यून थी। इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि विचारण न्यायालय दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज करने में पूर्णतः न्यायोचित था जिसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

10. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिलेख का परिशीलन करने पर, हम पाते हैं कि अभियोजन मामला, जैसा पीड़िता अ॰ सा॰ 3 द्वारा परिसाक्ष्य दिया गया है, यह है कि जब वह अपने घर में अकेली थी और शाम की पूजा करने घर के अन्दर जा रही थी, अपीलार्थी अचानक वहाँ आया और उसको चारपाई पर गिरा दिया और दरवाजा बंद करने के बाद उसके साथ बलात्कार किया। किंतु साक्ष्य का यह टुकड़ा लिखित रिपोर्ट में दिए गए बयान के साथ संगत प्रतीत नहीं होता है जिसमें यह कथन किया गया है कि जब अ॰ सा॰ 3 अपने घर में अकेली थी क्योंकि उसकी माता एवं परिवार के अन्य सदस्य लिलोरी गाँव गए हुए थे, अपीलार्थी आया और उससे बात किया जिसको उसने बताया कि घर में कोई नहीं है। अपीलार्थी उसके पीछे घर के अंदर गया और तब अपीलार्थी ने उसे चारपाई पर गिरा दिया और तब बलात्कार किया। प्राथमिकी में दिए गए बयान से तथ्य यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी जबरन कमरा में नहीं गया था बल्कि पीड़िता द्वारा कोई आपत्ति किए बिना वह कमरा में गया और तब अपीलार्थी की ओर से यौन कृत्य किया गया था जो इस तथ्य के कारण सहमतिपूर्ण प्रतीत होता है कि जब चिरनी देवी (अ॰ सा॰ 2), अपीलार्थी की माता आयी और पीड़िता को दरवाजा खोलने को कहा, कुछ समय के लिए दरवाजा नहीं खोला गया था और न ही पीड़िता ने अंदर से कोई शोर मचाया था।

11. आगे, अ॰ सा॰ 4 (चोना कुमारी) के साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि जब अ॰ सा॰ 2 (चिरनी देवी) ने पीड़िता को दरवाजा खोलने के लिए कहा, न तो दरवाजा खोला गया था और न ही अंदर से कुछ भी कहा गया था। कुछ समय बाद, दरवाजा खोला गया था और अपीलार्थी वहाँ से भाग गया। अभियोक्त्री का मामला यह है कि वह हल्ला नहीं कर सकी थी क्योंकि हाथों से उसका मुँह बंदकर दिया गया था जिसे स्वीकार करना मुश्किल है क्योंकि बलात्कार के कृत्य की कारिता की पूरी अवधि के दौरान मुँह बंद करना अपीलार्थी के लिए संभव नहीं था।

12. आगे, यदि अपीलार्थी का कृत्य पीड़िता की सहमति के साथ संगत नहीं होगा, पीड़िता ने शोर किया होता ज्योंही अपीलार्थी कमरा के अंदर आया था।

13. इन परिस्थितियों के अधीन, जो चित्र सामने आता है वह यह है कि अपीलार्थी का कृत्य सहमतिपूर्ण था और जब उस अवधि के दौरान माता चिरनी देवी (अ॰ सा॰ 2) और बहन चोना कुमारी (अ॰ सा॰ 4), जो विवाह में शामिल होने दूसरे गाँव गयी थी, घर पहुँची, अ॰ सा॰ 3 ने बिल्कुल भिन्न विवरण दिया जिसके द्वारा पीड़िता इस मामले के साथ आयी कि उसके साथ जबरन बलात्कार किया गया था किंतु उक्त कथित कारणों से यह स्वीकार्य नहीं है।

14. राज्य की ओर से किए गए अन्य निवेदनों पर आते हुए कि पीड़िता 16 वर्ष से कम आयु की थी क्योंकि उसकी आयु लिखित रिपोर्ट में 13 वर्ष दर्ज की गयी थी और न्यायालय द्वारा भी उसके साक्ष्य के दौरान 13 वर्ष निर्धारित की गयी थी। यह सत्य है कि ऐसी स्थिति है किंतु आयु के प्रमाण में अभियोजन की ओर से कुछ भी नहीं प्रस्तुत किया गया है बल्कि डॉक्टर किसी अन्य सामग्री की अनुपस्थिति में, जिन्होंने रेडियोलॉजिकल रिपोर्ट के आधार पर पीड़िता की आयु 18 वर्ष निर्धारित किया, का साक्ष्य अनदेखा नहीं किया जा सकता है और तद्द्वारा पीड़िता की आयु 18 वर्ष स्वीकार करनी होगी।

15. इन परिस्थितियों के अधीन, हम पाते हैं कि विचारण न्यायालय ने दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज करने में अवैधता किया, अतः, इसे एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

16. परिणामस्वरुप, अपीलार्थी को आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है। अपीलार्थी जो जमानत पर है को उसके जमानत बंध पत्र के दायित्व से उन्मोचित किया जाता है।

17. तद्नुसार, अपील अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

फिलबियुस बरला

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

WP(S) No. 4636 of 2011. Decided on 4th December, 2015.

सेवा विधि–विभागीय कार्यवाही–अभिकथन उपायुक्त की अनुमति प्राप्त किए बिना खास महल के नवीकरण से संबंधित काम के निष्पादन में मंजूरी एवं अनुमोदन प्रदान करने के मामलों में याची के अवचार से संबंधित है–विभागीय कार्यवाही आरंभ करने का निर्णय सक्षम प्राधिकारी द्वारा लिया गया है–विभागीय कार्यवाही आरंभ करने का निर्णय पहले ही लिए गए निर्णय के पुनर्विलोकन के तुल्य नहीं है–आक्षेपित कार्यवाही को चुनौती देने के आधार पूर्णतः साररहित हैं–रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 7 से 10)

निर्णयज विधि.–(2009) 1 SCC 180—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. V.P. Singh, For the Petitioner; M/s Abhay Kumar Mishra, B.N. Ojha, Forthe Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची, झारखंड प्रशासनिक सेवा का सदस्य, के विरुद्ध भू राजस्व उपसमाहर्ता, सदर चाईबासा के रूप में उसकी पदस्थापना से संबंधित कतिपय आरोपों के लिए दिनांक 13.6.2011 के संकल्प सं॰

3166, वर्तमान आक्षेपित संशोधित रिट याचिका का परिशिष्ट–2, के तहत विभागीय कार्यवाही में अग्रसर हुआ गया था। आरोप–पत्र प्रत्यर्थीगण के दिनांक 6.1.2012 के प्रतिशपथ पत्र के साथ संलग्न है। अभिकथन उपायुक्त की अनुमति प्राप्त किए बिना और पूछे जाने पर भ्रामक उत्तर देते हुए खास महल के नवीकरण से संबंधित काम के निष्पादन में राजस्व कर्मचारी एवं अमीन की कतिपय प्रतिनियुक्ति पर मंजूरी एवं अनुमोदन प्रदान करने के मामलों में याची के अवचार से संबंधित हैं।

3. दूसरा आरोप कतिपय क्वार्टरों के आवंटन के लिए आवेदन के संबंध में उच्चतर प्राधिकारी अर्थात उपायुक्त, चाईबासा के साथ अनुचित व्यवहार से संबंधित है। तीसरा आरोप याची की ओर से अनुशासनहीनता के तुल्य अनावश्यक पत्राचारों में लिप्त होते हुए याची द्वारा सब–डिविजनल अधिकारी, सदर, चाईबासा द्वारा जारी विधि–व्यवस्था कर्तव्य के लिए प्रतिनियुक्ति पर निर्देश की अवज्ञा अभिकथित करता है। अगला आरोप भी सब–डिविजनल अधिकारी सदर, चाईबासा को दरकिनार करते हुए प्रत्यक्षत: उपायुक्त को अनुशंसा भेजने के मामले में खासमहल के नवीकरण के मामले में नियमावली का उल्लंघन अभिकथित करता है। अन्य तीन आरोप स्थानीय नगर निकाय चुनाव में प्रेक्षक को आवंटित क्वार्टरों का अप्राधिकृत अधिभोग; नगरपालिका से विशेष अधिकारी, चाईबासा की अपनी हैसियत में वेतन के रूप में अग्रिम की उगाही और उपायुक्त को प्रस्तुत उत्तर में प्रयुक्त असंसदीय भाषा के कृत्य अभिकथित करते हैं। याची ने जाँच अधिकारी द्वारा जारी दिनांक 26 अप्रिल, 2012 के पत्र सं॰ 156 और दिनांक 14 मई, 2012 के पत्र सं॰ 185 का भी विरोध किया है जिसके अधीन उसे उपस्थित होने एवं अपना बचाव प्रस्तुत करने के लिए कहा गया था। विभागीय कार्यवाही के आरंभ को चुनौती मुख्यत: इस आधार पर दी गयी है कि प्रत्यर्थी विभाग ने पहले ही समेकित प्रभाव के साथ एक वेतनवृद्धि वापस रोकने का दंड अधिरोपित करने का निर्णय लिया है जैसा सचिव, कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग द्वारा प्रस्तावित किया गया था, किंतु तत्पश्चात मुख्य दंड अधिरोपित करने के लिए आक्षेपित कार्यवाही आरंभ की गयी है, जो अधिकारितावहीन एवं विधि में असंपोषणीय है। सक्षम प्राधिकारी द्वारा याची को लघु दंड से दंडित करने का निर्णय पहले ही लिया जा चुका है और उन्हें तत्पश्चात स्वयं अपने निर्णय का पुनर्विलोकन करने से वर्जित किया गया है जो आक्षेपित कार्यवाही के आरंभ की ओर ले गया।

4. याची के विद्वान वरीय अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि संलग्न फाइल पर नोटिंग्स दर्शाते हैं कि पूर्णत: भ्रामक धारणा पर समेकित प्रभाव के साथ एक वेतन वृद्धि वापस रोकने का दंड मुख्य दंड माना जाता है और विभाग याची पर मुख्य दंड अधिरोपित करने के लिए नियमित विभागीय कार्यवाही आरंभ करने के लिए अग्रसर हुआ है। समेकित प्रभाव के साथ एक वेतन वृद्धि वापस रोकना लघु दंड की प्रकृति का है और प्रत्यर्थी प्राधिकारीगण उपायुक्त, चाईबासा द्वारा याची के विरुद्ध लगाए गए आरोपों पर सम्यक विचार–विमर्श पर ऐसे निष्कर्ष पर पहुँचता प्रतीत होता है। तत्पश्चात, आक्षेपित कार्यवाही आरंभ किया जाना शक्ति के मनमाने प्रयोग में याची के पीड़ितकरण की ओर ले जाएगा।

5. विद्वान वरीय अधिवक्ता सूचित करते हैं कि इस न्यायालय द्वारा प्रदान किए गए अंतरिम संरक्षण के कारण यद्यपि कार्यवाही जारी रही है किंतु अंतिम निर्णय नहीं लिया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता यह निवेदन भी करते हैं कि प्रत्यर्थी प्राधिकारियों की याची के विरुद्ध पूर्वाग्रहग्रस्त तरीके

से अग्रसर होने की संभावना है। पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों में, आक्षेपित कार्यवाही हस्तक्षेप किए जाने की दायी है।

6. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने इसपर विवाद करने के लिए नोटिंग्स जो याची के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन का आधार निर्मित करते हैं पर विश्वास किया है कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा लघु दंड अधिरोपित करने का निर्णय पहले ही लिया जा चुका है। मुख्य सचिव को विभागीय सचिव के दिनांक 28 जनवरी, 2011 की नोटिंग्स एवं तत्पश्चात राज्य के मुख्य सचिव के साथ किए गए विचार-विमर्श को भी निर्दिष्ट किया गया है। उन्होंने विभागीय सचिव की ओर से दिनांक 27 नवंबर, 2015 को दाखिल पूरक प्रतिशपथ पत्र के पृष्ठ 39 पर नोटिंग्स और राज्य के मुख्य सचिव के माध्यम से सक्षम प्राधिकारी द्वारा दिनांक 1.3.2011 को लिए गए निर्णय को भी निर्दिष्ट किया है। यह निवेदन किया गया है कि फाइल पर नोटिंग्स निर्णय के तुल्य नहीं होगी जैसा याची द्वारा अभिकथित किया गया है और केवल याची जैसे झारखंड प्रशासनिक सेवा से आने वाले अधिकारियों के मामलों में सक्षम प्राधिकारी अर्थात राज्य के माननीय मुख्यमंत्री द्वारा लिए गए निर्णय पर सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) नियमावली, विनिर्दिष्टत: नियम 5 के अधीन शक्ति के प्रयोग में कार्यवाही आरंभ करने का औपचारिक संकल्प जारी किया गया है। यह निवेदन किया गया है कि आक्षेपित कार्यवाही किसी अधिकारिता वाली गलती से पीड़ित नहीं है और आरोप पत्र में अंतर्विष्ट अभिकथनों की नियमित विभागीय कार्यवाही में जाँच करने की आवश्यकता है जिसके बाद विधि, नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत एवं ऐसी कार्यवाही के संचालन के लिए आवश्यक प्रक्रिया के अनुरुप सक्षम प्राधिकारी द्वारा समुचित निर्णय लिया जाएगा। अत:, हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है। राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने **सेठी ऑटो सर्विस स्टेशन एवं एक अन्य बनाम दिल्ली विकास प्राधिकरण एवं अन्य, (2009)1 SCC 180,** पैराग्राफ 12, मामले में निर्णय पर भी यह निवेदन करने के लिए विश्वास किया है कि अधिकारी का नोटिंग केवल विषय पर उसके दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति है। यह निवेदन किया गया है कि फाइल में नोटिंग्स पक्षों के अधिकार को प्रभावित करते हुए निष्पादनीय आदेश में केवल तब समाप्त होता है जब अंतिम निर्णय लेने की प्रक्रिया में यह पहुँचता है, उसका अनुमोदन पाता है और अंतिम आदेश संबंधित व्यक्ति को संसूचित किया जाता है।

7. मैंने अभिवचन किए गए मामले के ताथ्यिक मैट्रिक्स में पक्षों के निवेदनों पर विचार किया है। प्रासंगिक तथ्यों एवं तात्विक तथ्यों तथा पक्षों द्वारा विश्वास किए गए नोटिंग्स के परिशीलन पर और उन पर विचार करने पर, यह नहीं कहा जा सकता है कि विभागीय सचिव की दिनांक 28 जनवरी, 2011 की नोटिंग याची की ओर से एक वेतनवृद्धि रोकने के दंड के अधिरोपण के प्रश्न पर अंतिम निर्णय के तुल्य होगी जैसा अभिकथित किया गया है। फाइल पर विचार-विमर्श दर्शाता है कि अभिकथित आरोप पर विभागीय कार्यवाही आरंभ करने का निर्णय सक्षम प्राधिकारी द्वारा लिया गया है जो अभिलेख का भाग निर्मित करता है जिस पर अधिकारियों के अधिक्रम ने फाइल की यात्रा पर नोटिंग्स के रूप में अपना मत दिया है। ऐसी परिस्थितियों में, याची का प्रतिवाद कि विभागीय कार्यवाही आरंभ करने का निर्णय पहले ही लिए जा चुके निर्णय के पुनर्विलोकन के तुल्य है, न्यायोचित नहीं है। केवल विषय पर विचार-विमर्श एवं विवेक के इस्तेमाल के बाद अंतिम रूप से लिया गया सक्षम प्राधिकारी का निर्णय आक्षेपित संकल्प के आरंभ की ओर ले गया है। ऐसी परिस्थितियों में, आक्षेपित कार्यवाही को चुनौती देने के आधार पूर्णत: सारहीन हैं जिसमें भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय की शक्ति के प्रयोग में हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

8. जैसा प्रतीत होता है कि यद्यपि कार्यवाही जारी रखने की अनुमति दी गयी थी किंतु दिनांक 18.2.2013 के अंतरिम आदेश के फलस्वरुप, प्रत्यर्थियों को याची के विरुद्ध कोई अंतिम आदेश पारित करने से अवरुद्ध किया गया था। प्रत्यर्थीगण प्राथमिकत: इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से 16 सप्ताह की अवधि के भीतर, युक्तियुक्त अवधि के भीतर नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत एवं अधिकथित प्रक्रिया के अनुपालन के बाद विधि के अनुरुप विभागीय कार्यवाही समाप्त करेंगे।

9. याची कार्यवाही में सहयोग करेगा और यदि वह ऐसा करने में विफल होता है, प्रत्यर्थियों को एकपक्षीय तरीके से भी विधि के अनुरुप इसे समाप्त करने की छूट होगी। किंतु, यह स्पष्ट किया जाता है कि यहाँ उपर की गयी चर्चा एवं संप्रेक्षण किसी तरीके से पक्षों के मामले पर प्रतिकूलता कारित नहीं करेंगे।

10. यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn ,o çeFk iVuk;d] U;k;efrx.k

जोतो बोदरा

cuke

झारखंड राज्य

Cr. (Jail) Appeal (D.B.) No. 665 of 2008. Decided on 14th October, 2015.

सत्र मामला सं॰ 40 वर्ष 2003 में सत्र न्यायाधीश, सिमडेगा द्वारा पारित दिनांक 16.3.2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 18.3.2004 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या–आजीवन कारावास–मामला दर्ज करने में तीन दिन का विलंब अभियोजन द्वारा स्पष्ट किया गया है–अपीलार्थी को झूठा आलिप्त करने का कारण नहीं था–अ॰ सा॰ के परिसाक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य से संपुष्टि पाते हैं–अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे अपना मामला स्थापित करने में सक्षम हुआ है–दोषसिद्धि एवं दंडादेश अभिपुष्ट। (पैराएँ 11 से 13)

अधिवक्तागण.–Mr. Herdeo Prasad Singh, *Amicus Curiae,* For the Appellant; Mrs. Vandana Bharti, A.P.P., For the State.

न्यायालय द्वारा.–अपीलार्थी जोतो बोदरा का विचारण मृतक निरल बोदरा की हत्या करने के अभियोग पर किया गया था। विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को आरोप का दोषी पाने पर उसे सत्र विचारण सं॰ 40 वर्ष 2003 में पारित दिनांक 16.3.2004 के अपने निर्णय के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और दिनांक 18.3.2004 के आदेश के तहत उसे आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया।

2. सूचक बसंती बोदरा (अ॰ सा॰ 1) के फर्दबयान (प्रदर्श 2) से सामने आने वाला अभियोजन का मामला यह है कि दिनांक 8.9.2002 को सूचक का पति निरल बोदरा अपना बैल चराने वन गया था। शाम में, जब निरल बोदरा 4 बजे घर आया, उसकी आँखों के पास उपहति थी। निरल बोदरा ने अपनी पत्नी को बताया कि इसे अपीलार्थी द्वारा कारित किया गया है जिसको वह नहीं छोड़ेगा। ऐसा कहते हुए

निरल बोदरा 'टांगी' लेकर घर के बाहर आया। ज्योंही वह घर के बाहर आया, उसकी मुलाकात अपीलार्थी और अपीलार्थी की माता से हुई जो अपने साथ 'टांगी' लिए वहाँ आए थे। वहाँ अपीलार्थी निरल बोदरा (मृतक) पर अंधाधुंध प्रहार किया जिसके परिणामस्वरुप उसकी मृत्यु हो गयी।

घटना के तीन दिन बाद अर्थात दिनांक 11.9.2002 को जब बानो पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी ब्रजकिशोर कुमार ने प्रातः लगभग 8.30 बजे सूचना प्राप्त किया कि ग्राम ओल्हन में कुछ घटना हुई थी, उसने इसे थाना डायरी में प्रविष्ट किया और घटनास्थल की ओर अग्रसर हुआ जहाँ वह पूर्वाह्न लगभग 11.30 बजे पहुँचा और मृतक की पत्नी सूचक बसन्ती बोदरा (अ॰ सा॰ 1) का फर्दबयान (प्रदर्श 2) दर्ज किया जिसमें उसने घटना के बारे में विवरण दिया जैसा कथन उपर किया गया है। उसने आगे कथन किया कि चूँकि उसके पति के बैलों ने अपीलार्थी का कुछ धान खा लिया था, उसके पति एवं अपीलार्थी के बीच झगड़ा हुआ जिस क्रम में अपीलार्थी द्वारा उसके पति पर प्रहार किया गया था।

ऐसे फर्दबयान के आधार पर, औपचारिक प्राथमिकी (प्रदर्श 3) लिखी गयी थी और अपीलार्थी के विरुद्ध मामला दर्ज किया गया था और मामले का अन्वेषण किया गया था जिसके दौरान अन्वेषण अधिकारी ने मृतक के मृत शरीर का मृत्यु समीक्षा किया और मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार किया और केवल दिनांक 16.9.2002 को फर्दबयान दर्ज किए जाने की तिथि से लगभग पाँच दिन बाद, मृत शरीर शव परीक्षण के लिए भेजा जिसके लिए अभियोजन द्वारा कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है और न ही बचाव पक्ष से कुछ निकाला जा सका था। किंतु डॉ॰ तुलसी महतो अ॰ सा॰ 4 ने मृतक के मृत शरीर जो अत्यन्त विघटित था का शव परीक्षण करने पर पाया कि मृत शरीर में कीड़े पड़े हुए हैं। कीड़ों द्वारा अधिकांश अंगों को खा लिया गया है। फ्रंटल हड्डी का अग्रमस्तक क्षेत्र गायब था। किंतु, डॉक्टर ने पॉस्टीरियर भाग के बाएँ पेराइटल हड्डी का क्रेक फ्रैक्चर पाया। ऑक्सीपीटल स्काल्प के मुलायम टिशु में और फ्रैक्चर हुए भाग पर हड्डियों वाले उत्तक में रक्त एवं रक्ता का थक्का था। दायीं दूसरी से नौंवी एवं बायीं दूसरी से छठी पसली का फ्रैक्चर था। थोरेक्स कैविटी पर रक्त एवं रक्त का थक्का पाया गया था।

3. डॉक्टर ने इस मत के साथ शव परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 4) जारी किया कि मृत्यु मस्तक उपहति के कारण कारित हुई थी। मृत्यु के समय से बीता समय शव परीक्षण के समय से 5 से 10 दिन के भीतर था।

इस बीच अन्वेषण अधिकारी ने घटनास्थल का निरीक्षण किया और गवाहों का बयान लिया।

4. अन्वेषण पूरा होने पर, जब अन्वेषण अधिकारी ने अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया, अपराध का संज्ञान लिया गया था और सम्यक क्रम में जब मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था, अपीलार्थी का विचारण किया गया था।

5. विचारण के दौरान, अभियोजन ने अपना मामला सिद्ध करने के लिए कुल पाँच गवाहों का परीक्षण किया। उनमें से, अ॰ सा॰ 1 बसन्ती बोदरा (मृतक की पत्नी) एवं रुथ बोदरा अ॰ सा॰ 2 (मृतक की पुत्री) चश्मदीद गवाह हैं जिन्होंने परिसाक्ष्य दिया कि निरल बोदरा (मृतक) अपने बैलों को चराने जंगल गया था। जब वह घर लौटा, उन्होंने उसकी आँख के निकट उपहति पाया। पूछे जाने पर, निरल बोदरा (मृतक) ने अपनी पत्नी को बताया कि अपीलार्थी द्वारा उस पर प्रहार किया गया है क्योंकि उसके बैलों ने अपीलार्थी का फसल खा लिया था। इस बीच, अपीलार्थी मृतक के घर के आंगन में आया और 'टांगी' से निर्ममतापूर्वक उस पर प्रहार किया जिसके परिणामस्वरुप उसकी मृत्यु हो गयी।

6. अभियोजन मामला बंद करने के बाद, जब अपीलार्थी से उसके विरुद्ध सामने आने वाले अपराध में फँसाने वाले साक्ष्यों के बारे में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन पूछा गया था, उसने इनकार किया।

7. इस पर, विचारण न्यायालय ने चिकित्सीय साक्ष्य से संपुष्टि पाने वाले चश्मदीद गवाहों अ॰ सा॰ 1 एवं अ॰ सा॰ 2 के परिसाक्ष्य पर अपना अंतर्निहित विश्वास करके अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध का दोषी पाया और तद्नुसार, अपीलार्थी के विरुद्ध दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज किया जो चुनौती के अधीन है।

8. न्यायमित्र के रूप में नियुक्त विद्वान अधिवक्ता श्री हरदेव प्रसाद सिंह निवेदन करते हैं कि प्राथमिकी दर्ज करने में अत्यधिक विलंब हुआ है जो अभियोजन मामला संदेहास्पद बनाता है कि क्या घटना उस तरीके से हुई थी जैसा फर्दबयान में कथन किया गया है अथवा अन्यथा और कि सूचक अ॰ सा॰ 1 अपने साक्ष्य के क्रम में फर्दबयान में दिए गए अपने पूर्व बयान से विपथित हो गयी है और तद्द्वारा इन स्थितियों में विचारण न्यायालय को चश्मदीद गवाहों के परिसाक्ष्य पर विश्वास नहीं करना चाहिए था किंतु विचारण न्यायालय ने दोनों चश्मदीद गवाहों के परिसाक्ष्य पर विश्वास करके पूर्वोक्त परिस्थितियों को ध्यान में लिए बिना दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज करने में अवैधता किया और इसलिए अपीलार्थी के विरुद्ध दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश अपास्त किए जाने योग्य है।

9. इसके विरुद्ध, राज्य के विद्वान अधिवक्ता श्रीमती वंदना भारती निवेदन करती हैं कि यह सत्य है कि मामला घटना के तीन दिन बाद दर्ज किया गया था पर इतने विलंब से मामला दर्ज करने का कारण प्रतीत होता है क्योंकि सूचक अ॰ सा॰ 1 अपने साक्ष्य के मुताबिक, पहले से बीमार थी और सूचक अ॰ सा॰ 1 और उसकी पुत्री अ॰ सा॰ 2 की ओर से अपीलार्थी को झूठा आलिप्त करने का कोई कारण नहीं है और तद्द्वारा विचारण न्यायालय के पास चश्मदीद गवाहों के परिसाक्ष्य को स्वीकार करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था, जिसके द्वारा विचारण न्यायालय ने चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य पर विश्वास करके अपीलार्थी को दोषी पाया और इसलिए इसने सही प्रकार से अपीलार्थी के विरुद्ध दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज किया जिसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

10. पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिलेखों का परिशीलन करने पर, हम पाते हैं कि अभियोजन का मामला, जैसा सूचक अ॰ सा॰ 1 द्वारा परिसाक्ष्य दिया गया है और फर्दबयान में दिए गए बयान के अनुसार यह है कि दिनांक 8.9.2002 को सूचक अ॰ सा॰ 1 का पति निरल बोदरा (मृतक) अपने बैलों को चराने वन गया था। वहाँ उस पर अपीलार्थी द्वारा प्रहार किया गया था जो तथ्य मृतक द्वारा सूचक अ॰ सा॰ 1 को प्रकट किया गया था जब मृतक घर लौटा था। इस बीच, अपीलार्थी मृतक के घर के सामने आया और जब मृतक घर के बाहर आया, अपीलार्थी द्वारा 'टांगी' से उसकी मृत्यु में परिणत होने वाली उपहतियों को कारित करते हुए मृतक पर प्रहार किया गया था। मृतक की पुत्री अ॰ सा॰ 2 द्वारा इस तथ्य का समर्थन किया गया है।

11. इसके अतिरिक्त, उसने अपने प्रति परीक्षण में परिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थी की माता जो अपीलार्थी के साथ आयी थी भी जमीन पर गिर गयी थी। अ॰ सा॰ 2 ने केवल अपीलार्थी की माता के जमीन पर गिरने के बारे में कहा है किंतु जमीन पर उसके गिरने के कारण के बारे में उससे कुछ भी निकाला गया प्रतीत नहीं होता है और तद्द्वारा अभिलेख पर कुछ भी प्रस्तुत नहीं किया जा सका था कि क्या उसने (अपीलार्थी की माता) ने उपहति पायी थी। यदि बचाव इस संबंध में अभिलेख पर कुछ भी

लाने में सक्षम हुआ होगा, अभियोजन मामले का रंग पूरी तरह बदल गया होता किंतु ऐसा नहीं हुआ और तद्द्वारा इस संबंध में किसी साक्ष्य की अनुपस्थिति में, हमारे पास अ॰ सा॰ 1 एवं अ॰ सा॰ 2 के परिसाक्ष्य को स्वीकार करने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं है जो चिकित्सीय साक्ष्य से भी संपुष्टि पाता है, क्योंकि डॉक्टर ने अ॰ सा॰ 1 एवं 2 के साक्ष्य के मुताबिक मृतक के मस्तक, छाती, हाथों आदि पर प्रहार किए जाने के कारण फ्रंटल हड्डी और पसलियों का भी फ्रैक्चर था।

12. इस प्रकार, हम पाते हैं कि अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे अपना मामला सिद्ध करने में सक्षम हुआ है और तद्द्वारा विचारण न्यायालय अपीलार्थी के विरुद्ध दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज करने में बिल्कुल न्यायोचित था।

13. तद्नुसार, अपीलार्थी के विरुद्ध पारित दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश एतद् द्वारा अभिपुष्ट किया जाता है।

14. परिणामस्वरुप, यह अपील खारिज की जाती है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o jRukdj Hkxjk] U;k;efrx.k

श्रीमती सावित्री मंडल

cuke

श्री नकुल मंडल

F.A. No. 54 of 2007. Decided on 18th August, 2015.

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955—धारा 13B—आपसी सहमति से तलाक–विवाह वर्ष 1957 में संपन्न किया गया था और विवाह से आठ पुत्रियों का जन्म हुआ था–तलाक के लिए पूर्व आवेदन प्रत्यर्थी द्वारा वापस ले लिया गया था–अपीलार्थी तलाक की डिक्री के लिए सहमति आवेदन पर अपना हस्ताक्षर विवादित कर रही है–तलाक डिक्री अभिखंडित। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Manoj Tandon, For the Appellant; Mr. Nityanand Pd. Choudhary, For the Respondent.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि इस वाद के पक्षों के बीच मार्च, 1957 में विवाह हुआ था और इस वाद के पक्षों के बीच विवाह से आठ पुत्रियों का जन्म हुआ था। अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि दिनांक 7 अगस्त, 1995 को प्रत्यर्थी पति द्वारा तलाक के लिए आवेदन तलाक वाद सं॰ 8 वर्ष 1995 मुख्यत: क्रूरता के आधार पर दिया गया था। उक्त तलाक वाद में दिनांक 21 मई, 1996 को इस अपीलार्थी द्वारा लिखित कथन दाखिल किया गया था। तत्पश्चात, उक्त तलाक वाद सं॰ 8 वर्ष 1995 में प्रत्यर्थी पति द्वारा दिनांक 18 अप्रिल, 2002 को वाद वापस लेने के लिए आवेदन दाखिल किया गया था और यह आवेदन विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 24 सितंबर, 2002 के आदेश के तहत 5000/- रुपयों के व्यय के साथ अनुज्ञात किया गया था। इस व्यय का भुगतान नहीं किया गया था जैसा अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा कथन किया गया है और पुन: दिनांक 30 सितंबर, 2002 को मामला सुना गया था जिसमे यह अपीलार्थी दिनांक 24 मार्च, 2003 को उपस्थित हुई और तत्पश्चात यह अपीलार्थी कभी नहीं उपस्थित हुई।

2. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी पति ने पुन: झूठे रूप से एवं कपटपूर्वक यह कथन करते हुए कि अपीलार्थी ने भी तलाक के लिए सहमति दिया है,

तलाक की सहमति डिक्री के लिए हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13B के अधीन तलाक के लिए आवेदन दिया। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि न तो इस अपीलार्थी ने कोई सहमति दिया था और न ही वह संबंधित तलाक डिक्री के लिए न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुई है और न ही इस अपीलार्थी ने कभी किसी दस्तावेज पर हस्ताक्षर किया है और इस अपीलार्थी की ओर से वकालतनामा हस्ताक्षरित एवं दाखिल किया गया है। इस प्रकार, उसी तलाक वाद सं॰ 8 वर्ष 1995 में, जिसे विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा निपटाया गया था, पुन: दिनांक 17 मार्च, 2004 को तलाक की सहमति डिक्री के लिए प्रत्यर्थी पति द्वारा आवेदन दिया गया था जिसे विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 28 सितंबर, 2004 के आदेश के तहत अनुज्ञात किया गया था जिसके विरुद्ध मूल प्रत्यर्थी पत्नी द्वारा वर्तमान प्रथम अपील दाखिल की गयी है।

3. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रत्यर्थी द्वारा कपट किया गया है क्योंकि अपीलार्थी द्वारा कोई आवेदन कभी नहीं दाखिल किया गया है और न ही इस पर हस्ताक्षर किया गया है, न ही अपीलार्थी कभी उपस्थित हुई है, न ही कोई वकालतनामा हस्ताक्षरित किया गया है, न ही किसी अधिवक्ता को काम पर लगाया गया है। तलाक वाद सं॰ 8 वर्ष 1995 में प्रत्यर्थी पति द्वारा सबकुछ कपटपूर्वक प्रस्तुत किया गया है।

4. प्रत्यर्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि दिनांक 17 मार्च, 2004 को अपीलार्थी की सहमति से तलाक आवेदन दाखिल किया गया था और यदि अपीलार्थी निवेदन कर रही है कि सहमति नहीं थी, आगे साक्ष्य लेने के लिए और पक्षों के बीच विवाद में नया निर्णय के लिए मामला विद्वान विचारण न्यायालय के पास वापस भेजा जाए। तर्कपूर्ण एवं विश्वासोत्पादक साक्ष्य लेने के बाद विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अपीलार्थी का हस्ताक्षर सत्यापित किया जा सकता है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि प्रत्यर्थी द्वारा कभी कोई कपट नहीं किया गया था, फिर भी प्रत्यर्थी द्वारा भी आवश्यक साक्ष्य लिया जाएगा। जो विचारण न्यायालय में मूल आवेदक है जिसने तलाक वाद सं॰ 8 वर्ष 1995 दाखिल किया है।

5. दोनों पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं पूर्वोक्त तथ्य को देखते हुए कि पक्षों के बीच वर्ष 1957 में विवाह हुआ था और इस विवाद के पक्षों के बीच विवाह से आठ पुत्रियों का जन्म हुआ था और इस तथ्य को भी देखते हुए कि तलाक के लिए पूर्व आवेदन प्रत्यर्थी द्वारा वापस ले लिया गया था, किंतु व्यय अधिरोपित किया गया था और 5000/- रुपयों के व्यय का भुगतान नहीं किया गया था, पुन: ''कमोबेश निपटाया गया मामला पुनर्जीवित किया गया था'' और तलाक की सहमति डिक्री के लिए हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13B के अधीन आवेदन दाखिल करके प्रत्यर्थी द्वारा पर्याप्त लाभ लिया गया है।

6. मामले के तथ्यों से आगे प्रतीत होता है कि अपीलार्थी हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13B के अधीन तलाक की डिक्री के लिए सहमति आवेदन पर अपना हस्ताक्षर विवादित कर रही है। वह निरक्षर महिला है और उक्त आवेदन पर ''बंगाली भाषा'' में हस्ताक्षर है। इसके अतिरिक्त, वह विचारण न्यायालय के समक्ष कभी उपस्थित नहीं हुई है और विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा सहमति डिक्री प्रदान किया गया था। इस मामले में प्रतिरूपण भी हुआ है। परिस्थितियों की संपूर्णता को देखते हुए, हम एतद् द्वारा तलाक वाद सं॰ 8 वर्ष 1995 (259 वर्ष 2003) में प्रमुख न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, दुमका द्वारा पारित आदेश एवं दिनांक 28 सितंबर, 2004/18 अक्टूबर, 2004 की तलाक डिक्री अपास्त एवं अभिखंडित करते हैं।

7. विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा अभिलेख पर मौजूद साक्ष्यों के आधार पर और कपट के बारे में इस अपीलार्थी द्वारा किए गए अभिवचनों के आधार पर स्वयं इसके अपने गुणागुण पर मामला विनिश्चित किया जाएगा। अपीलार्थी द्वारा सहमति से तलाक डिक्री आदि के लिए आवेदन पर हस्ताक्षर नहीं किया जाने का अधिमूल्यन विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा किया जाएगा और विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित पूर्व आदेश द्वारा प्रभावित हुए बिना अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर पक्षों के बीच विवाद विधि के अनुरुप विनिश्चित किया जाएगा।

8. पूर्वोक्त सीमा तक प्रथम अपील अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vfer kHk dekj xlrk] U;k;efr

बिलेन्द्र साहू उर्फ बिरेन्द्र यादव उर्फ बिरेन्द्र कुमार साहू

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 589 of 2012. Decided on 22nd September, 2015.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 125—भरण-पोषण—अपनी पत्नी एवं अवयस्क पुत्री को 1500/- रुपया प्रतिमाह का भुगतान करने का निर्देश देते हुए कुटुम्ब न्यायालय द्वारा पारित आदेश को चुनौती—जब याची के पास डी॰ एन॰ ए॰ परीक्षा के व्यय का भुगतान करने का साधन है, उपधारणा की जाती है कि उसके पास पर्याप्त आय है यद्यपि उसने वास्तविक आय प्रकट नहीं किया है—याची अपनी पत्नी एवं अवयस्क पुत्री को सहारा देने के अपने विधिक एवं नैतिक जिम्मेदारी से पल्ला नहीं झाड़ सकता है—भरण-पोषण की मात्रा मान्य ठहरायी गयी।

(पैराएँ 5, 8 एवं 9)

निर्णयज विधि.—(2015) 5 SCC 705—Relied.

अधिवक्तागण.—M/s Rajiv Ranjan Tiwary, For the Petitioner; APP., For the State; Mr. K.L. Ojha, For the O.P. No. 2.

आदेश

यह पुनरीक्षण भरण-पोषण मामला सं॰ 9/2005 में विद्वान प्रमुख न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, राँची द्वारा पारित दिनांक 29.2.2012 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा याची को ओ॰ पी॰ सं॰ 2 तथा उसकी अवयस्क पुत्री प्रत्येक को 1500/- रुपया प्रतिमाह भरण-पोषण भुगतान करने का निर्देश दिया गया था।

2. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित निर्णय को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया है कि स्वयं विद्वान अवर न्यायालय ने पैरा 37 में अभिनिर्धारित किया है कि ओ॰ पी॰ का अभिवचन त्रुटिपूर्ण है जहाँ तक भरण-पोषण का संबंध है और अभिवचन के त्रुटिपूर्ण होने के बावजूद, विचारण न्यायालय ने अटकलों एवं अनुमानों पर आक्षेपित आदेश पारित किया है। यह निवेदन किया गया है कि विद्वान प्रमुख न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया है कि याची की आय के निर्धारण के लिए कोई भी दस्तावेज अथवा साक्ष्य नहीं दिया गया है। यह निवेदन किया गया है कि विचारण न्यायालय ने इस तथ्य पर विचार करते हुए कि याची की आय दर्शाने के लिए अभिलेख पर कोई साक्ष्य नहीं लाया गया था, संप्रेक्षित किया है कि मजदूर भी 125/- रुपया रोज कमाता है। यह निवेदन किया गया है कि अगर 125/- प्रतिदिन पर भी आय निर्धारित किया जाता है, तब याची की मासिक आय 3750/- रुपया होगी। परिणामस्वरुप, 3000/- रुपया प्रतिमाह (अर्थात् प्रत्येक ओ॰ पी॰ को 1500/- रुपया प्रतिमाह) का भरण-पोषण प्रदान करता आदेश

अत्यधिक है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची अभी भी ओ॰ पी॰ और उसकी अवयस्क पुत्री को पूर्ण मर्यादा एवं सम्मान के साथ रखने के लिए तैयार एवं इच्छुक है। कि याची पर अपने माता-पिता एवं परिवार के अन्य सदस्यों का भरण-पोषण प्रदान करने की जिम्मेदारी है। तद्नुसार, यह आग्रह किया गया है कि अधिनिर्णीत भरण-पोषण राशि अपास्त की जाए और याची के दायित्वों तथा विचारण न्यायालय द्वारा आय के निर्धारण को विचार में लेते हुए युक्तियुक्त राशि तक घटाया जाए।

3. विपक्षी पक्षकार पत्नी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया है कि याची अभिकथन कर रहा है कि विपक्षी पक्षकार पत्नी जारकर्म में रह रही थी। याची ने अपनी अवयस्क पुत्री का पिता होने से भी इनकार किया है। कि अ॰ सा॰ 5 जिसका परीक्षण गवाह के रूप में किया गया था ने कथन किया है कि याची ऑटो रिक्शा चलाता है और उसको कृषि से आय है और याची की लगभग मासिक आय 10,000/- से 12,000/- रुपया प्रतिमाह है जिसका समर्थन अ॰ सा॰ 6 द्वारा भी किया गया है। कि विद्वान प्रमुख न्यायाधीश ने संप्रेक्षित किया है कि अ॰ सा॰ 6 साक्षर व्यक्ति है जो हिन्दी एवं संस्कृत जानता है तथा अपने पूर्व बयान कि याची किराया पर ऑटो रिक्शा चलाता है से इनकार करके शपथ पत्र पर अपने पूर्व बयान को वापस ले लिया है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद एवं तर्क किया कि विद्वान प्रमुख न्यायाधीश ने गवाहों के साक्ष्य पर विचार किया है और अ॰ सा॰ 5 के साक्ष्य पर अविश्वास किया है क्योंकि किसी अन्य गवाह द्वारा संपुष्टि नहीं की गयी है कि याची ऑटो रिक्शा चलाता है अथवा ऐसे स्त्रोत से उसे आय है।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिलेख का परिशीलन करने पर, यह प्रकट है कि याची ने दिनांक 25.3.2015 को सुनवाई के क्रम में स्पष्टत: कथन किया था कि वह विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 की पुत्री का जैविक पिता नहीं है और अपने व्यय पर डी॰ एन॰ ए॰ परीक्षा करवाने के लिए प्रार्थना किया था। डी॰ एन॰ ए॰ परीक्षा की रिपोर्ट अभिलेख पर मौजूद है जिसमें यह स्थापित किया गया है कि याची विपक्षी पक्षकार सं॰ 2 की पुत्री का जैविक पिता है। याची का आचरण निंदनीय है क्योंकि उसने स्वयं अपनी पुत्री की पैतृकता को चुनौती दिया है। इसके अतिरिक्त, याची ने डी॰ एन॰ ए॰ परीक्षा का व्यय जमा किया था और विपक्षी पक्षकार तथा उसकी पुत्री के आवागमन के लिए भी खर्च दिया था। यह स्वयं इस तथ्य को स्थापित करता है कि याची के पास आय का पर्याप्त साधन है और इस चरण पर इस तथ्य का न्यायिक ध्यान लिया गया है विशेषकर जब स्वयं याची द्वारा ऐसी प्रार्थना की गयी थी। याची की आय के साधन का गैर अभिवचन भरण-पोषण से इनकार करने का आधार नहीं हो सकता है क्योंकि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 125 के प्रावधान को आश्रितों जो स्वयं का भरण-पोषण करने में अक्षम हैं को सामाजिक न्याय का प्रयोजन पूरा करने के लिए सामाजिक विधान के रूप में सम्मिलित किया गया है। याची स्वस्थ व्यक्ति है और अपनी पत्नी एवं अवयस्क पुत्री का भरण-पोषण प्रदान करने के लिए उसके पास पर्याप्त साधन है और विधि की आज्ञा के मुताबिक ओ॰ पी॰ पत्नी एवं अवयस्क पुत्री को भरण-पोषण प्रदान करके अपनी सामाजिक बाध्यता परिपूर्ण करना उसका नैतिक एवं विधिक कर्तव्य है।

6. इस मोड़ पर **शमीमा फारुकी बनाम शाहिद खान, (2015)5 SCC 705,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को ध्यान में लेना उपयुक्त है जिसमें पैरा 15 पर सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित मत एवं संप्रेक्षण दिया है:-

*"15.... ble dkb lng ugh gk ldrk g fd nO çO lO dh èkkjk 125 d vèkhu vkn'k ikfjr fd;k tk ldrk g ;fn dkbZ 0;fDr i;kIr lkèku gku d ckotn viuh iRuh dk Hkj.k&ik"k.k dju e mi{kk djrk g vFkok blI budkj djrk gA dHkh&dHkkj ifr }kjk vfHkopu fd;k tkrk g fd mld ikl Hkxrku dju dk lkèku ugh g D;kfd mld ikl ukdjh ugh g vFkok mldk 0;olk; vPNh rjg ugh py jgk gA ; doy dkj cgku g vkj oLrr% fofèk e budh Lohdk;rk ugh gA ;fn ifr LoLFk g] og viuh iRuh dk lgkjk nu dh fofèkd ckè;rk d vèkhu g D;kfd nO çO lO dh èkkjk 125 d vèkhu Hkj.k&ik"k.k çkIr dju dk iRuh dk vfèkdkj] tc rd vufgr ugh fd;k tkrk g] lI.k vfèkdkj g---------**"*

7. पूर्वोक्त मामले में **चंदर प्रकाश बोधराज बनाम शीला रानी चन्दर प्रकाश** के मामले में माननीय दिल्ली उच्च न्यायालय के संप्रेक्षणों को भी निर्दिष्ट किया गया था जिसमें यह मत दिया गया है:–

*^^,d LoLFk 0;fDr dk i;kIr èku vftr dju ;kX; mièkkfjr djuk gkxk rkfd og viuh iRuh ,o lrku dk Hkj.k&ik"k.k dju e ;fDr;Dr :i l l{ke gk vkj mlI ;g dgrk g, ugh luk tk ldrk g fd og ifjokj d Lrj d vulkj mudk Hkj.k&ik"k.k dju e l{ke gku d fy, i;kIr vtu dju dh voLFkk e ugh gA ,l LoLFk 0;fDr dk U;k;ky; dk ;g vfHkfuèkkfjr dju d fy, rdi.k vkèkkj n'kkuk g fd og fu;=.k d ij dkj.kk l viuh iRuh ,o lrku dk Hkj.k&ik"k.k dju dh viuh fofèkd ckè;rk dk mUekpu dju d fy, i;kIr vtu dju e v{ke gA tc ifr U;k;ky; dk viuh vk; dh lVhd jkf'k çdV ugh djrk g] mld fo#) mièkkj.kk vkIkuh l vuK; gkxhA**"*

8. न्यायालयों के संप्रेक्षणों की दृष्टि में सुनिश्चित सिद्धांत को दृष्टि में रखते हुए उपर की गयी चर्चा से यह पर्याप्त रूप से स्पष्ट है कि जब याची के पास डी॰ एन॰ ए॰ परीक्षा का व्यय देने के लिए साधन था, उपधारणा की जाती है उसके पास पर्याप्त आय है यद्यपि उसने वास्तविक आय प्रकट नहीं किया है। चाहे जो भी हो, वह विपक्षी पक्षकार पत्नी एवं उसकी अवयस्क पुत्री को भरण–पोषण राशि का भुगतान करके उनको सहारा देने के अपने विधिक एवं नैतिक जिम्मेदारी से पल्ला नहीं झाड़ सकता है।

9. उपर की गयी चर्चा की पृष्ठभूमि में, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा प्रदान की गयी भरण–पोषण की मात्रा न्यायोचित एवं युक्तियुक्त है और इस न्यायालय द्वारा इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। याची को इस आदेश की तिथि से दो माह के भीतर भरण–पोषण राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है जैसा विचारण न्यायालय द्वारा आदेश दिया गया है।

10. तद्नुसार, यह पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn ,o çeFk iVuk;d] U;k;efrx.k

श्रीमती लालवती देवी

cuke

झारखंड राज्य

Cr. (Jail) Appeal (D.B.) No. 1226 of 2006. Decided on 13th October, 2015.

सत्र विचारण सं॰ 272 वर्ष 2005 में अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ सं॰ I, गुमला द्वारा पारित दिनांक 31.5.2006 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 1.6.2006 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—हत्या–आजीवन कारावास–अ॰ सा॰ के साक्ष्य परस्पर रूप से संपुष्टिकारी हैं एवं विश्वास उत्पन्न करने वाला है–अभियोजन मामला चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा समर्थित किया गया–यदि अन्य भाई-बहन उस कमरे में नहीं सो रहे थे जहाँ घटना हुई, उन व्यक्तियों के गैर परीक्षण के कारण अभियोजन मामला शायद ही प्रभावित होता है–अपील खारिज। (पैराएँ 10 से 12)

अधिवक्तागण.–Ms. Alpana Verma, For the Appellant; Mr. Pankaj Kumar, For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.–अपने पति सोमा लोहरा की हत्या करने के अभियोग पर अपीलार्थी का विचारण किया गया था। विचारण न्यायालय ने समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे आरोप सिद्ध किए जाने पर अपीलार्थी को दिनांक 31.5.2006 के अपने निर्णय के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया और दिनांक 1.6.2006 के अपने आदेश के तहत उसे आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया।

2. अभियोजन मामला यह है कि घटना के दिन मृतक का पुत्र अ॰ सा॰ 1 संतोष कुमार लोहरा अपने पिता सोमा लोहरा (मृतक) और माता लीलावती देवी के साथ कमरा में सोया हुआ था। झगड़ा की आवाज सुनने पर, वह जग गया और उसने अपनी माता को टांगी से अपने पिता पर प्रहार करते देखा। उसके पिता के अपने मुँह, गर्दन एवं बाएँ हाथ पर उपहतियाँ आयी जिसके परिणामस्वरुप उसकी मृत्यु हो गयी। उक्त संतोष कुमार लोहरा अ॰ सा॰ 1 तुरन्त अपीलार्थी की बहन जट्टी देवी अ॰ सा॰ 6 को सूचित करने दौड़ा। जट्टी देवी यह सुनने पर सोमा लोहरा के घर आयी और उसे मृत पाया।

3. बसिया पुलिस थाना में पुलिस के एस॰ आई॰ के रूप में पदस्थापित किसी राम अवध पासवान अ॰ सा॰ 8 को जब उक्त घटना की जानकारी हुई, वह मृतक के घर आया और जट्टी देवी अ॰ सा॰ 6 का फर्दबयान (प्रदर्श 6) दर्ज किया जिसमें उसने घटना के बारे में विवरण दिया जैसा कथन उपर किया गया है। तत्पश्चात, उसने अन्वेषण शुरु किया जिसके दौरान उसने मृत शरीर का मृत्यु समीक्षा किया और मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श 7) तैयार किया। आई॰ ओ॰ ने उक्त कमरे जहाँ घटना हुई थी से अधिग्रहण सूची (प्रदर्श 8) के अधीन टांगी भी जब्त किया।

4. इस बीच, आई॰ ओ॰ ने मृत शरीर शव परीक्षण के लिए भेजा जिसे डॉ॰ मानवेन्द्र कुमार सिंह अ॰ सा॰ 5 द्वारा किया गया था जिन्होंने शव परीक्षण करने पर निम्नलिखित उपहतियों को पाया था:–

(i) efUMcy d ck, Hkkx dk vrxLr djr g, xnu d nk, Hkkx ij rt èkkjnkj gfFk;kj l dVu dh migfr vkdkj 5" x 2" x 2½" dk.k d fudV efUMcy ijh rjg dVk gvkA xnu d nk, Hkkx ij leLr egRoi.k jDr ufydk, ijh rjg dVh ik;h x;h FkhA

(ii) nk, eLVok;M ,fUV;e ,o vkDlhiV dk vrxLr djr g, nk, fiUuk d fupy ykc d uhp vkdkj 3" x 1" x vfLFk rd xgjk rt èkkjnkj gfFk;kj l dVu dk t[eA nk;k eLVk;M ,fUV;e ,o vkDlhiV vfLFk dVh gb FkhA

*(iii) ck;h gFkyh d fFkuj ,feul ij vkdkj 1¼" x 1/4" x 1/2" dk dVu dk t[eA***

डॉक्टर ने इस मत के साथ शव परीक्षण की रिपोर्ट (प्रदर्श 3) जारी किया कि मृत्यु पूर्वोक्त उपहतियों के कारण हेमरेज एवं आघात के कारण कारित हुई थी।

5. अन्वेषण पूरा करने पर जब आरोप-पत्र दाखिल किया था, न्यायालय ने अपीलार्थी के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया। मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किए जाने पर अपीलार्थी का विचारण किया गया था।

6. विचारण के दौरान, अभियोजन ने कुल नौ गवाहों का परीक्षण किया। उनमें से, अ॰ सा॰ 1 संतोष कुमार लोहरा चश्मदीद गवाह है जिसने परिसाक्ष्य दिया कि जब वह कमरा में अपने माता-पिता के साथ सो रहा था, वह झगड़ा की आवाज सुनकर जग गया और अपनी माता को अपने पिता पर टांगी से प्रहार करते पाया जिसके परिणामस्वरुप उसके पिता को अपने मुँह, गर्दन एवं बाएँ हाथ पर उपहति आयी जिससे उसकी मृत्यु हो गयी। अपीलार्थी के भाई अ॰ सा॰ 2 जगरनाथ लोहरा ने परिसाक्ष्य दिया है कि यह जानने पर कि सोमा लोहरा की हत्या कर दी गयी है, जब वह घर गया उसने अपीलार्थी को उपस्थित पाया, जिसने उसके समक्ष संस्वीकार किया कि उसने अपने पति की हत्या की है। अ॰ सा॰ 3 रासू लोहरा, अ॰ सा॰ 6 श्रीमती जट्टी देवी (सूचक), अ॰ सा॰ 7 हरमन मुंडा अनुश्रुत गवाह है जिन्होंने संतोष कुमार लोहरा अ॰ सा॰ 1 अथवा अन्य व्यक्ति से घटना के बारे में जानकारी पाया।

7. अभियोजन मामला बंद करने पर, जब अपीलार्थी से उसके विरुद्ध सामने आने वाले अपराध में फँसाने वाले साक्ष्य के बारे में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन प्रश्न पूछा गया था, उसने इनकार किया। तत्पश्चात् विचारण न्यायालय ने चिकित्सीय साक्ष्य से और अ॰ स॰ 2 जगरनाथ लोहरा जिसके समक्ष अपीलार्थी ने न्यायिकेतर संस्वीकृति किया के साक्ष्य से भी संपुष्टि पाने वाले अपीलार्थी के पुत्र संतोष कुमार लोहरा अ॰ सा॰ 1 के परिसाक्ष्य पर अंतर्निहित विश्वास करते हुए अपीलार्थी को दोषी पाया और तद्नुसार दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज किया जो चुनौती के अधीन है।

8. न्यायमित्र के रूप में नियुक्त विद्वान अधिवक्ता सुश्री अल्पना वर्मा निवेदन करती हैं कि यह सत्य है कि अपीलार्थी और कोई नहीं बल्कि मृतक की पत्नी है, जिसे अपने पति की हत्या करता अभिकथित किया गया है और अ॰ सा॰ 1 संतोष कुमार लोहरा ने अपीलार्थी को अपने पति की हत्या करते देखा था क्योंकि अ॰ सा॰ 1 संतोष कुमार लोहरा अपने माता-पिता के साथ सोने का दावा कर रहा है, किंतु उसके अतिरिक्त, मृतक एवं अपीलार्थी की अन्य संतानें भी थी जो अ॰ सा॰ 1 संतोष कुमार लोहरा के साक्ष्य के मुताबिक घर में सो रहे थे, किंतु एक भी गवाह ने उनकी उपस्थिति के बारे में चर्चा नहीं किया है और यह इस संदेह की ओर ले जाता है कि अ॰ सा॰ 1 संतोष कुमार लोहरा को मामले में दिलचस्पी रखने वाले किसी व्यक्ति द्वारा सिखाया पढ़ाया गया हो और तद्द्वारा, न्यायालय को दोषसिद्धि का आदेश एवं दंडादेश दर्ज करने के लिए इस गवाह के एक मात्र परिसाक्ष्य पर विश्वास नहीं करना चाहिए था।

9. इसके विरुद्ध, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ श्री पंकज कुमार निवेदन करते हैं कि अ॰ सा॰ 1 संतोष कुमार लोहरा के साक्ष्य के मुताबिक वह अपने माता-पिता के साथ सो रहा था। यह हो सकता है कि उसके अन्य भाई-बहन हो जो अ॰ सा॰ 1 के साक्ष्य के मुताबिक उस कमरे में नहीं सो रहे थे जिसमें वह अपने माता-पिता के साथ सोया था और तद्द्वारा वे कभी तात्विक गवाह प्रतीत नहीं होते हैं और ऐसी दशा में उनका गैर परीक्षण किसी भी तरीके से प्रतिकूल रूप से अभियोजन मामले को प्रभावित कभी नहीं करता है और कि अ॰ सा॰ 1 संतोष कुमार लोहरा का परिसाक्ष्य त्यक्त करने का कारण नहीं है जो मृतक और अपीलार्थी का पुत्र है और कि घटना देखने के बाद वह तुरन्त अ॰ सा॰ 6 जट्टी देवी के पास गया था जो अ॰ सा॰ 1 संतोष कुमार लोहरा की मौसी है और इन परिस्थितियों के अधीन, विचारण न्यायालय दोषसिद्धि का आदेश एवं दंडादेश दर्ज करने में बिल्कुल न्यायोचित था।

10. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर हम राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए निवेदन को स्वीकार करते हैं क्योंकि मृतक

एवं अपीलार्थी के पुत्र संतोष कुमार लोहरा अ॰ सा॰ 1 से कुछ भी नहीं निकाला गया है जो उसके साक्ष्य की विश्वसनीयता पर तनिक भी संदेह सृजित कर सके। अ॰ सा॰ 1 संतोष कुमार लोहरा बिल्कुल स्पष्ट है कि जब वह अपने माता-पिता के साथ सो रहा था, वह झगड़ा की आवाज सुनकर जग गया और अपीलार्थी को टांगी से मृतक पर प्रहार करते देखा जिसके परिणामस्वरुप मृतक ने अपने मुँह, गर्दन एवं हाथ पर उपहतियाँ पायी। मृतक की मृत्यु तुरन्त हो गयी। तत्पश्चात, अ॰ सा॰ 1 संतोष कुमार लोहरा ने अपीलार्थी की बहन अ॰ सा॰ 6 जट्टी देवी को सूचित किया जो आयी और मृतक को मृत पाया और तब अपना फर्दबयान दिया।

11. इन परिस्थितियों के अधीन, अ॰ सा॰ 1 संतोष कुमार लोहरा के परिसाक्ष्य पर विश्वास करने का कोई कारण प्रतीत नहीं होता है जिसका परिसाक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य से संपुष्टि पाता है क्योंकि डॉक्टर ने गर्दन, मुँह एवं हाथ पर उपहति पाया था और इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 1 का साक्ष्य आगे अ॰ सा॰ 2 के साक्ष्य से समर्थन पाता है जिसने परिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थी ने उसके समक्ष संस्वीकार किया कि उसने अपने पति की हत्या की है। जहाँ तक अपीलार्थी की ओर से किए गए निवेदन का संबंध है, हम इसमें कोई गुणागुण नहीं पाते हैं क्योंकि किसी भी गवाह से ऐसा कुछ भी नहीं निकाला गया है कि अ॰ सा॰ 1 से भिन्न अ॰ सा॰ 1 के अन्य भाई-बहन भी उस कमरा में सो रहे थे। यदि भाई-बहन उस कमरा में नहीं सो रहे थे जहाँ घटना हुई, उन व्यक्तियों के गैर परीक्षण के कारण अभियोजन मामला शायद ही प्रभावित होता है।

12. इस प्रकार, हम पाते हैं कि विचारण न्यायालय दोषसिद्धि का आदेश एवं दंडादेश दर्ज करने में बिल्कुल न्यायोचित था और इसलिए, एतद् द्वारा इसे संपुष्ट किया जाता है।

13. परिणामस्वरुप, यह अपील खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn ,o çeFk iVuk;d] U;k;efrx.k

रामजीत ओराँव उर्फ हीरा पन्ना

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (D.B.) No. 1002 of 2010. Decided on 5th October, 2015.

विशेष केस सं॰ 86 वर्ष 2002 (पी॰) में न्यायिक आयुक्त, राँची-सह-विशेष न्यायाधीश, पोटा द्वारा पारित दिनांक 13.9.2010 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 15.9.2010 के दंडादेश के विरुद्ध।

आतंकवाद निवारण अधिनियम, 2002—धाराएँ 3 (2), 20 एवं 22—भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—आतंकवादी गतिविधि–हत्या–दोषसिद्धि–यह सुझाने के लिए कि मृतक की हत्या करने के लिए कोई षड्यन्त्र किया गया था, इकबालिया बयान में कुछ भी नहीं है–यह प्रतीत नहीं होता है कि अभियुक्तगण मृतक की हत्या करने का सामान्य आशय रखते थे–पोटा की धारा 20 अथवा 22 के अधीन दंडनीय अपराध स्थापित करने के लिए अभियोजन द्वारा साक्ष्य नहीं दिया गया–अपीलार्थी दोषमुक्त। (पैराएँ 11 से 13)

अधिवक्तागण.–Mr. Jitendra S. Singh, For the Appellant; Mr. Sanjay Kr. Srivastava, For the State.

न्यायालय द्वारा.—अपीलार्थी रामजीत ओराँव उर्फ हीरा पन्ना का पंचम नगेसिया एवं उल्फत अंसारी के साथ अपने सामान्य आशय को अग्रसर करते हुए किसी कुणाल सिंह की हत्या करने के अभियोग पर एवं आतंकवाद निवारण अधिनियम, 2002 (पोटा) की धाराओं 3 (2), 20 एवं 22 के अधीन अपराध करने के लिए भी विचारण किया गया था। विचारण न्यायालय ने दिनांक 13.9.2010 के निर्णय के तहत दो अन्य अभियुक्तों को दोषसिद्ध करते हुए इस अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन और पोटा की धाराओं 3 (2), 20 एवं 22 के अधीन भी दोषसिद्ध किया और अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन और पोटा की धारा 3 (2) के अधीन भी प्रत्येक अपराध के लिए आजीवन कारावास भुगतने एवं व्यतिक्रम खंड के साथ प्रत्येक अपराध के लिए 3000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश दिया। आगे, अपीलार्थी को पोटा की धारा 20 एवं 22 के अधीन क्रमशः 7 वर्ष एवं 10 वर्ष का कारावास भुगतने और व्यतिक्रम खंड के साथ पोटा की धारा 20 के अधीन अपराध के लिए 2000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश दिया गया था।

2. अभियोजन मामला यह है कि दिनांक 7.2.2002 को सूचक अमिया कुमार गुप्ता उर्फ सीता राम गुप्ता अ॰ सा॰ 1 अजय सिंह, छोटू ओराँव अ॰ सा॰ 12 एवं कयामुद्दीन अंसारी अ॰ सा॰ 10 तथा फिदू के साथ अनेक मजदूरों, जिन्हें पुलिया निर्माण करने के काम में लगाया गया था जो काम ठेकेदार कुणाल सिंह (मृतक) को दिया गया था, की मजदूरी का भुगतान करने मृतक कुणाल सिंह के घर आया। सूचक अ॰ सा॰ 1 अमिया कुमार गुप्ता द्वारा एवं अजय सिंह द्वारा भी निर्माण कार्य चलाया जा रहा था। मजदूरों को मजदूरी संवितरित करने के बाद, वे खाना पकाने लगे। इस बीच, प्रतिबंधित संगठन के 20-25 अपराधी कुणाल सिंह (मृतक) के घर उसको खोजने आए। उन्होंने बल लगाकर दरवाजा खुलवाया और घर में घुसे और सूचक एवं अन्य प्रहार करने लगे। दुष्ट मृतक सहित समस्त व्यक्तियों को घर के बाहर ले गए और तब मृतक से पूछा कि काम नहीं करने के लिए कहे जाने के बावजूद वे निर्माण कार्य क्यों कर रहे थे। मृतक ने काम करने का स्पष्टीकरण दिया किंतु यह दुष्टों को स्वीकार्य नहीं था। इस पर, वे सूचक अमिया कुमार गुप्ता अ॰ सा॰ 1, अजय सिंह (परीक्षण नहीं किया गया) और मृतक कुणाल सिंह को खलिहान ले गए जहाँ दुष्टों ने गोली मारकर कुणाल सिंह की हत्या कर दी। इस पर, दुष्ट उनको धमकी देते हुए घटनास्थल से चले गए।

3. इस पर, लोहरदग्गा में मुख्यालय को टेलीफोन पर और सनहा पुलिस थाना को भी इस प्रभाव की सूचना दी गयी थी। आरक्षी अधीक्षक, लोहरदग्गा ने ऐसी सूचना पाने पर इसे प्रासंगिक समय पर पद स्थापित डी॰ एस॰ पी॰ अ॰ सा॰ 8 प्रसन्न कुमार खलखो को दिया। ऐसी सूचना पाने पर अ॰ सा॰ 8 अन्य पुलिस अधिकारियों के साथ हेसवे गाँव आया जहाँ उसने सूचक का फर्दबयान (प्रदर्श 1) दर्ज किया।

4. उक्त फर्दबयान के आधार पर औपचारिक प्राथमिकी (प्रदर्श 5) लिखी गयी थी। अ॰ सा॰ 8 ने स्वयं मामले का अन्वेषण किया, जिस दौरान उसने मृतक के मृत शरीर का शव परीक्षण किया और मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार किया। इस पर, मृत शरीर शव परीक्षण के लिए भेजा गया था जिसे डॉ॰ हेमन्त कुमार अ॰ सा॰ 23 द्वारा किया गया था, जिन्होंने मृत शरीर का शव परीक्षण करने पर निम्नलिखित उपहति पाया:—

^^migfr lO 1.*—ço'k dk t[e ,o fudkl dk t[e*

(a) ço'k dk t[e&nk, vk[k d yxHkx 1" x 1½" ik'o pgj d nk, ftxkefVd çkfeul ij yxHkx 1/2" x 1/2" dk vkdkj orkdkj Fkk] ekftu buoVM FkkA ekftu d bn&fxn Ropk dkyh iM x;h FkhA

(b) fudkl dk t[e&ck,] vkDlhihVy {k= ,o mijh xnu d ck,] Hkkx ij yxHkx 4" x 3" dk, vkdkj vfu;fer Fkk] ekftu buoVM FkkA

foPNnu dju ij&,] lkQxl ,o cu dh fonh.krk d lkFk vkDlhihVy vfLFk dk ÝDpj] ufydkvk d fonh.krk d lkFk ck,] ftxkefVd vfLFk dk ÝDpj] vèkke[kh ekli'kh] ufydkvk dh fonh.krkA

migfr lO 2–vkXu;kL= t[e&

(a) ço'k dk t[e&migfr lO 1d 1" uhp pgj d nk,] Hkkx ij yxHkx 1/2" x 1/2" dk oÙkkdkj] buoVM ekftu] ekftu d bn&fxn Ropk dkyh iM x;h FkhA

*(b) **fudkl dk t[e**&pgj d ck;] ftxkefVd ikfeul ij yxHkx 1½" x ½" vkdkj dk vkdkj vfu;fer FkkA ekftu buoVM FkkA*

foPNnu dju ij&vMjykbx ekili'kh dh fonh.krk Fkh ,o ufydk,] ik;h x;h FkhA lkFk gh ck,] ftxkefVd vfLFk dk ÝDpj gvk FkkA

migfr lO 3–dVu dk t[e&vkdkj 1" x 1/4" x nk,] fiUuk d Åij dkfVyt rd xgjk

migfr lO 4–dVu dk t[e] vkdkj 3/4" x 1/3" x 1/4" ck,] furEc ij

migfr lO 5–dVu dk t[e] vkdkj 3/4" x 1/2" x 1/4" ?kVuk d mij nk;h tk?k ij

migfr lO 6—vud [kjkp vkdkj 3" x 1" l 1" x 1/2" rd nk,] ,o ck, dèk vkj nk;h mijh Nkrh d mijA

डॉक्टर ने इस मत के साथ शव परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 9) जारी किया कि मृत्यु आग्नेयास्त्र द्वारा कारित उपहति सं॰ 1 एवं 2 के कारण आघात एवं हेमरेज के कारण कारित हुई थी जबकि उपहति सं॰ 3, 4 एवं 5 तेज धार वाले हथियार द्वारा कारित की गयी थी और उपहति सं॰ 6 कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित की गयी थी।

5. इस बीच, आई॰ ओ॰ ने घटनास्थल से खाली कारतूस एवं रक्तरंजित मिट्टी को जब्त किया और इसे अभिग्रहण सूची (प्रदर्श 7) के तहत जब्त किया। जब मामला अन्वेषण के अधीन था, आई॰ ओ॰ ने सूचना पाया कि अपीलार्थी को कुडु पुलिस थाना के पुलिस अधिकारी द्वारा गिरफ्तार किया गया था। ऐसी सूचना पाने पर, आई॰ ओ॰ ने अभियुक्त को अभिरक्षा में लिया जिसका इकबालिया बयान दिनांक 30.7.2002 को एस॰ पी॰, लोहरदग्गा द्वारा दर्ज किया गया था। बाद में, अन्य दो अभियुक्तों, जिन्हें न्यायालय द्वारा दोषमुक्त किया गया है को भी गिरफ्तार किया गया था और तब एस॰ पी॰ लोहरदग्गा ने पंचम नगेसिया का इकबालिया बयान भी दर्ज किया जबकि उल्फत अंसारी का इकबालिया बयान सेनहा पुलिस थाना के प्रभारी अधिकारी द्वारा दर्ज किया गया था। इसके काफी समय बाद, दिनांक 21.1.2003 को दंडाधिकारी अ॰ सा॰ 7 प्रदीप कुमार शुक्ला द्वारा अपीलार्थी का टी॰ आई॰ परेड किया गया था जिस दौरान अपीलार्थी को अ॰ सा॰ 1 अमिया कुमार गुप्ता द्वारा पहचाना गया था जिसकी पहचान पोटा की धारा 30 के प्रावधानों को दृष्टि में रखते हुए टी॰ आई॰ चार्ट (प्रदर्श 3) में प्रकट नहीं की गयी थी। अन्वेषण बंद होने के बाद आई॰ ओ॰ ने सक्षम प्राधिकारी से मंजूरी आदेशों (प्रदर्शों 10 से 10/2) को प्राप्त किया

और इस अपीलार्थी एवं उक्त नामित दो अन्य व्यक्तियों के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया। जिस पर उनके विरुद्ध पूर्वोक्तानुसार अपराध का संज्ञान लिया गया था। बाद में, उनका विचारण किया गया था जिस दौरान अभियोजन ने अपना मामला सिद्ध करने के लिए कुल 27 गवाहों का परीक्षण किया।

6. उनमें से अ॰ सा॰ 1 अमिया कुमार गुप्ता सूचक ने लगभग उसी तरीके का परिसाक्ष्य दिया है जैसा बयान उसने अपने फर्दबयान में दिया था। अ॰ सा॰ 1 ने अपने साक्ष्य के क्रम में अपीलार्थी को पहचाना। अ॰ सा॰ 5 दिनेश कुमार, अ॰ सा॰ 9 शिव प्रसाद साहू, अ॰ सा॰ 12 छोटू ओराँव ने यद्यपि जिस तरीके से घटना हुई और मृतक की हत्या के बारे में परिसाक्ष्य दिया है किंतु उन्होंने अपीलार्थी को अपराधियों में से एक के रूप में नहीं पहचाना है अथवा नामित नहीं किया है। अ॰ सा॰ 10, 13, 15, 16, 17, 18, 19, 20, 21, 24 एवं 26 को पक्षद्रोही घोषित किया गया है जबकि अ॰ सा॰ 6 को प्रति परीक्षण के लिए बुलाया गया है। अ॰ सा॰ 11, 14, 22 एवं 27 अनुश्रुत गवाह हैं, जिन्होंने अपीलार्थी के विरुद्ध कुछ नहीं कहा है। अ॰ सा॰ 2 एवं 3 वे गवाह हैं जिनकी उपस्थिति में आई॰ ओ॰ ने मृतक के मृत शरीर का मृत्यु समीक्षा किया। अ॰ सा॰ 4 रक्त रंजित मिट्टी की जब्ती का गवाह है।

7. अभियोजन मामला बंद होने पर आने वाले जब अपीलार्थी से उसके विरुद्ध सामने आते अपराध में फँसाने वाले साक्ष्य के बारे में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन पूछा गया था, अपीलार्थी एवं अन्य अभियुक्त ने इनकार किया।

8. इस पर, विचारण न्यायालय ने इस तथ्य को विचार में लेते हुए कि अपीलार्थी ने अपना दोष संस्वीकार किया जो पोटा की धारा 32 के अधीन ग्राह्य है और इस तथ्य को भी विचार में लेते हुए कि अपीलार्थी को अ॰ सा॰ 1 द्वारा न केवल टी॰ आई॰ परेड में बल्कि न्यायालय में पहचाना गया था, अपीलार्थी को आरोपों का दोषी पाया जबकि दो अन्य अपीलार्थियों जिन्होंने भी अपना दोष संस्वीकार किया था किंतु जिन्हें पहचाना नहीं गया था को दोषमुक्त किया गया था जबकि अपीलार्थी को पूर्वोक्तानुसार दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया गया था जो चुनौती के अधीन है।

9. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री जितेन्द्र एस॰ सिंह ने निवेदन करते हैं कि पूर्वोक्त दो सामग्रियों जिस पर न्यायालय ने विश्वास किया है में से किसी पर विचारण न्यायालय द्वारा कृत्य नहीं किया जाना चाहिए था क्योंकि यद्यपि अपीलार्थी को अपना दोष संस्वीकार करता बताया गया है जिसे प्रदर्श 8 के रूप में लेखबद्ध किया गया था किंतु इसे विधि के अनुरुप सिद्ध किया गया नहीं कहा जा सकता है क्योंकि न तो एस॰ पी॰ लोहरदग्गा जिन्होंने अपीलार्थी का इकबालिया बयान दर्ज किया का परीक्षण किया गया था और न ही उस व्यक्ति जिसने इकबालिया बयान टंकित किया था का परीक्षण किया गया था और तद्द्वारा उक्त दस्तावेज अर्थात् इकबालिया बयान साक्ष्य का ग्राह्य टुकड़ा नहीं है।

आगे, अपीलार्थी की ओर से निवेदन किया गया था कि अपीलार्थी को दिनांक 29.7.2002/ 30.7.2002 को गिरफ्तार किया गया था किंतु लगभग छह माह बाद दिनांक 21.1.2003 को उसका टी॰ आई॰ परेड करवाया गया था और यह तथ्य अभियोजन मामले के उस भाग को स्वीकार नहीं करने के लिए अवर न्यायालय के लिए पर्याप्त था क्योंकि अपीलार्थी को पहचानना अ॰ सा॰ 1 के लिए संभव नहीं हुआ होता किंतु विचारण न्यायालय ने मामले के इन समस्त पहलुओं को ध्यान में नहीं लिया था और तद्द्वारा दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज करने में अवैधता किया।

10. इसके विरुद्ध, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यह सत्य है कि एस॰ पी॰ लोहरदग्गा जिन्होंने अपीलार्थी का इकबालिया बयान दर्ज किया, का परीक्षण नहीं किया गया है और न ही उस व्यक्ति जिसने इकबालिया बयान टंकित किया का परीक्षण नहीं किया गया है किंतु यह कोई अंतर नहीं बनाता है क्योंकि अपीलार्थी ने समय के प्रासंगिक बिंदु पर दस्तावेज अर्थात् इकबालिया

बयान (प्रदर्श 8) की ग्राह्यता पर कोई आपत्ति कभी नहीं किया है और इसलिए इस संबंध में किया गया कोई निवेदन स्वीकार करने योग्य नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया था कि यह भी सत्य है कि उसकी गिरफ्तारी के छह माह बाद अपीलार्थी का टी॰ आई॰ परेड किया गया था किंतु वह स्वयं अ॰ सा॰ 1 द्वारा अपीलार्थी की पहचान किए जाने का महत्व नहीं खोता है और इन परिस्थितियों के अधीन विचारण न्यायालय ने निश्चय ही दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज करने में कोई अवैधता नहीं किया।

11. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिलेख का परिशीलन करने पर हम पाते हैं कि विचारण न्यायालय ने निम्नलिखित दो सामग्रियों पर अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया है:–

(i) कि अपीलार्थी ने आरक्षी अधीक्षक, लोहरदग्गा के समक्ष अपना दोष संस्वीकार किया जो पोटा की धारा 32 के अधीन ग्राह्य है;

(ii) कि अपीलार्थी को न्यायालय में अपराधियों में से एक के रूप में पहचाना गया था जिसने घटना में भाग लिया था जिसके दौरान मृतक कुणाल सिंह की हत्या की गयी थी।

इकबालिया बयान (प्रदर्श 8) के परिशीलन से, हम पाते हैं कि इकबालिया बयान के संबंध में पुलिस अधिकारी द्वारा जिन रक्षोपायों को अपनाने की आवश्यकता थी, उन्हें अपनाया गया है किंतु, अभियोजन द्वारा आरक्षी अधीक्षक का परीक्षण नहीं किया गया था। उसके बावजूद, इकबालिया बयान साक्ष्य में लिया गया है और प्रदर्श 8 के रूप में चिन्हित किया गया है। यह गौर करना महत्वपूर्ण होगा कि दस्तावेज साक्ष्य में लिए जाने के समय पर अपीलार्थी ने दस्तावेज की ग्राह्यता पर कोई आपत्ति कभी नहीं किया था। ऐसी स्थिति में, अपीलार्थी को इस चरण पर यह विवाद्यक उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इकबालिया बयान का परिशीलन करने पर, हम पाते हैं कि अपीलार्थी ने अपने इकबालिया बयान में उस स्थिति के बारे में कथन किया है जिसमें वह प्रतिबंधित संगठन एम॰ सी॰ सी॰ का सदस्य बन गया। उसने विभिन्न प्रकार की घटना में अपनी अंतर्ग्रस्तता के संबंध में भी संस्वीकार किया है। इसी समय पर, अपीलार्थी ने घटना से संबंधित कतिपय प्रकटीकरण भी किया है जिसमें उसने कथन किया है कि किसी और दिन जब समूह में पहाड़ी पर थे, किसी दीपक ने उमेश को बुलाया और उसे कुणाल सिंह की निगरानी करने कहा ताकि ज्योंही वह गाँव आए, वह उन्हें सूचित कर सके। इस पर, उक्त उमेश सिंह शाम में आया और दीपक को सूचित किया कि कुणाल सिंह गाँव आ गया है। इस पर, उमेश ने कुणाल सिंह को पकड़ने के लिए अन्य को गाँव आने कहा और तब वे गाँव की ओर अग्रसर हुए। इकबालिया बयान के अनुसार, जब वे गाँव में विद्यालय के निकट आए, उमेश एवं दीपक ने अपीलार्थी और एक अन्य को वहाँ रुकने के लिए कहा और अन्य आगे अग्रसर हुए। पुनः महाराज और मुनेश्वर को रुकने के लिए कहा गया था और तब अन्य अर्थात् दीपक, उमेश, रविन्द्र एवं रमेश कुणाल सिंह के घर आए और दरवाजा खुलवाया। वे सूचक अ॰ सा॰ 1 अमिय कुमार गुप्ता, कुणाल सिंह (मृतक) एवं अजय सिंह को घर के बाहर ले गए और उनको खलिहान लाए जहाँ उन पर प्रहार किया गया था और तब उसने बंदूक की गोली चलने की आवाज सुनी। बाद में, उसे जानकारी हुई कि रविन्द्र ने कुणाल सिंह की हत्या कर दी है।

इकबालिया बयान का परिशीलन करने से, यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी मृतक के गाँव की ओर अग्रसर हुआ था जब उसे एवं अन्य को बताया गया था कि उन्होंने कुणाल सिंह को पकड़ लिया था। इकबालिया बयान में यह सुझाने के लिए कुछ भी नहीं है कि मृतक की हत्या करने के लिए कोई

षड्यन्त्र रचा गया था। आगे, हम पाते हैं कि जब अपीलार्थी एवं अन्य यह कहे जाने पर कि उनका मृतक को पकड़ना था, वे गाँव के लिए अग्रसर हुए। अपीलार्थी एवं एक अन्य रास्ते में रुक गए और अन्य आगे गये। उनमें से दो और व्यक्ति रास्ते में रुक गए और केवल चार व्यक्ति अर्थात् दीपक, उमेश, रविन्द्र एवं रमेश मृतक के घर आए और दरवाजा खुलवाने के बाद घर में घुसे और तब वे मृतक कुणाल सिंह, अ॰ सा॰ 1 अमिया कुमार गुप्ता और अजय कुमार सिंह को घर के बाहर ले आए जिनको खलिहान लाया गया था जहाँ समस्त व्यक्तियों पर प्रहार किया गया था और गोली मार कर मृतक की हत्या कर दी गयी थी। जैसा ऊपर कथन किया गया है, घटनाओं के क्रम में यह कभी प्रतीत नहीं होता है कि अभियुक्तगण मृतक की हत्या करने का सामान्य आशय शेयर कर रहे थे। आगे, इकबालिया बयान से यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी मृतक के घर कभी नहीं आया था और न ही वह खलिहान में था। ऐसी स्थिति में, अ॰ सा॰ 1 का परिसाक्ष्य स्वीकार करना मुश्किल है, जो मृतक के घर पर अथवा खलिहान में था, जहाँ इकबालिया बयान के मुताबिक अपीलार्थी कभी नहीं था और इस दशा में अ॰ सा॰ 1 के पास अपीलार्थी को देखने का अवसर भी नहीं रहा होगा। इसके अतिरिक्त, अपराह्न 7.30 बजे जब घटना हुई बतायी गयी है, अवश्य उस समय अंधेरा रहा होगा क्योंकि यह फरवरी माह था। उस स्थिति में, अगर अ॰ सा॰ 1 के पास अपीलार्थी के निकट आने का मौका भी था, वह प्रकाश के किसी स्रोत की अनुपस्थिति में इस अपीलार्थी को पहचानने की अवस्था में नहीं होगा। ऐसी स्थिति में, टी॰ आई॰ परेड में अथवा न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी को पहचानने का अ॰ सा॰ 1 का कोई दावा उस पर विश्वास करने लायक विश्वास उत्पन्न नहीं करता है। इन परिस्थितियों के अधीन, हम पाते हैं कि अपीलार्थी द्वारा दिया गया इकबालिया बयान अपीलार्थी की अपराधिता के बारे में कभी प्रकट नहीं करता है। जहाँ तक भागीदारों में से एक के रूप में अपीलार्थी को पहचानने का अ॰ सा॰ 1 द्वारा किए गए दावा का संबंध है, उक्त कथित तथ्यों एवं परिस्थितियों में यह स्वीकार्य नहीं है।

12. मामले में आगे जाते हुए, यह कथन किया जाए कि अपीलार्थी को प्रतिबंधित संगठन का सदस्य होने और कतिपय अपराध करने के संबंध में अपीलार्थी द्वारा किए गए प्रकटीकरण के आधार पर पोटा की धाराओं 20 एवं 22 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए भी दोषसिद्ध किया गया है। किंतु इकबालिया बयान के सिवाए अपीलार्थी के प्रतिबंधित संगठन का सदस्य होने अथवा प्रतिबंधित संगठन का सदस्य होने के नाते अपराध करने के संबंध में साक्ष्य नहीं है। आई॰ ओ॰ अ॰ सा॰ 8 प्रसन्न कुमार खालखो ने स्पष्ट रूप से अपने साक्ष्य में स्वीकार किया है कि उसने उस मामले का अन्वेषण नहीं किया था। समरुप स्थिति में, जहाँ उनके प्रतिबंधित संगठन के सदस्य होने के नाते अन्य अभियुक्तों के संबंध में इकबालिया बयान थे, उन्हें दोषमुक्त किया गया है। न्यायालय ने सही प्रकार से उक्त इकबालिया बयान पर कृत्य नहीं किया था क्योंकि किसी अन्य साक्ष्य की अनुपस्थिति में व्यक्ति को दोषी अभिनिर्धारित करने के लिए इकबालिया बयान पर्याप्त नहीं हो सकता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांत यह है कि पहले व्यक्ति की आपराधिकता दर्शाने के लिए साक्ष्य देना होगा और तब अपीलार्थी द्वारा दिए गए इकबालिया बयान को मामले का समर्थन करने के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। जैसा ऊपर कथन किया गया है, यहाँ स्वीकृत रूप से पोटा की धारा 20 अथवा 22 के अधीन दंडनीय अपराध स्थापित करने के लिए अभियोजन द्वारा कोई भी साक्ष्य नहीं दिया गया है और तद्द्वारा विचारण न्यायालय ने पोटा की धारा 20 एवं 22 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश दर्ज करने में गलती किया। इस प्रकार, हम पाते

हैं कि विचारण न्यायालय किसी भी अपराध जिनके अधीन अपीलार्थी को दोषी पाया गया था, अपीलार्थी के विरुद्ध दोषसिद्धि का आदेश एवं दंडादेश दर्ज करने में न्यायोचित नहीं था और तद्द्वारा दोषसिद्धि का आदेश एवं दंडादेश अपास्त किया जाता है।

13. परिणामस्वरुप, अपीलार्थी को समस्त आरोपों से दोषमुक्त किया गया है। परिणामस्वरुप, अपीलार्थी जो अभिरक्षा में है को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

14. इस प्रकार, यह अपील अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o jRukdj Hkxjk] U;k;efrx.k

चंद्र प्रकाश सिंह

cuke

भारत संघ एवं एक अन्य

L.P.A. Nos. 378 of 2015 with I.A. No. 4642 of 2015. Decided on 7th September, 2015.

सेवा विधि–सेवा समाप्ति–केंद्रीय सिविल सेवा (अस्थायी सेवा) नियमावली, 1965 का नियम 5—अपीलार्थी को परिवीक्षा पर नियुक्त किया गया था और वह दांडिक मामले में अंतर्ग्रस्त था–उसकी सेवा नोटिस अवधि के वेतन के भुगतान के बाद समाप्त की गयी है–भरती के समय पर सूचना आपूर्ति करने में तथ्य दबाए गए थे–तात्विक तथ्यों का दमन एवं झूठी सूचना देना स्वयं में नैतिक अधमता के तुल्य है–एल॰ पी॰ ए॰ खारिज। (पैराएँ 11 एवं 12)

निर्णयज विधि.–(2000) 3 SCC 239; (2011) 4 SCC 644—Distinguished; (2013) 9 SCC 363—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Yogendra Prasad, For the Appellant; M/s Rajiv Sinha, B.K. Prasad, For the Respondents.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–

आई॰ ए॰ सं॰ 4642 वर्ष 2015

यह वर्तमान अंतर्वर्ती आवेदन इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को दाखिल करने में दो दिनों का विलंब माफ करने के लिए परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अधीन दाखिल किया गया है।

2. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और इस अंतर्वर्ती आवेदन में कथित कारणों को देखते हुए इस अपील को दाखिल करने में विलंब माफ करने के लिए युक्तियुक्त कारण है। अत:, हम लेटर्स पेटेन्ट अपील सं॰ 378 वर्ष 2015 दाखिल करने में विलंब माफ करते हैं।

3. आई॰ ए॰ सं॰ 4642 वर्ष 2015 अनुज्ञात की जाती है एवं निपटायी जाती है।

एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 378 वर्ष 2015

4. यह लेटर्स पेटेन्ट अपील डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6828 वर्ष 2013 में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 19 मई, 2015 को पारित निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी (मूल याची) द्वारा दाखिल की गयी है जिसके द्वारा इस अपीलार्थी द्वारा दाखिल याचिका खारिज कर दी गयी है और, इसलिए, इस अपीलार्थी (मूल याची) ने वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपील दाखिल किया है।

5. अपीलार्थी के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि कोई नोटिस नहीं दिया गया है, कोई आरोप–पत्र नहीं दिया गया है, किसी प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया गया है, अत:, इस अपीलार्थी की सेवाओं की समाप्ति का दिनांक 31 अगस्त, 2013 का आदेश अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है।

6. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा किए गए निर्णयों पर विश्वास किया है:–

(a) (2000)3 SCC 239 vkj

(b) (2011)4 SCC 644

पूर्वोक्त निर्णयों सहपठित केंद्रीय सिविल सेवा (अस्थायी सेवा) नियमावली, 1965 (संक्षिप्तता के लाभ के लिए इसमें इसके बाद ''नियमावली 1965" के रूप में निर्दिष्ट) के आधार पर अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी को सुनवाई का पर्याप्त अवसर दिए बिना और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के भंग में अपीलार्थी की सेवा समाप्त नहीं की जा सकती है। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मामले के इन पहलूओं का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है, अत:, डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6828 वर्ष 2013 में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 19 मई, 2015 का निर्णय एवं आदेश अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है।

7. प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित भारत के सहायक सॉलिसिटर जनरल श्री राजीव सिन्हा ने निवेदन किया कि अपीलार्थी को दिनांक 2 मई, 2012 के प्रभाव से केंद्रीय रिजर्व पुलिस बल में कॉंस्टेबुल के रूप में नियुक्त किया गया था और वह परिवीक्षा पर था और इसलिए, नियमावली, 1965 के नियम 5 के परन्तुक के अधीन दिनांक 31 अगस्त, 2013 के आदेश के तहत परिवीक्षा अवधि के दौरान उसकी सेवा समाप्त की गयी है।

8. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि यह अपीलार्थी दांडिक मामले में भी अंतर्ग्रस्त था जिसे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 452, 308, 323, 325, 504, 506 एवं 427 के अधीन बलिया पुलिस थाना (उत्तर प्रदेश) में दांडिक मामला सं॰ 454 वर्ष 2010 के रूप में दर्ज किया गया था। इन तथ्यों का दमन किया गया था, जब उसने कॉंसटेबल के पद के लिए फॉर्म भरा और प्रत्यर्थीगण के साथ कपट करके नियुक्ति पाया।

9. प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि दांडिक मामले का परिणाम दोषसिद्धि अथवा दोषमुक्ति में हो सकता है, किंतु, कॉंस्टेबल के रूप में नियोजन पाने के पहले इस अपीलार्थी द्वारा भरे जाने वाले फॉर्म में लिखित में दांडिक मामले के दमन का लाभ प्रत्यर्थीगण के साथ कपट करने के तुल्य है क्योंकि तात्विक तथ्य का जानबूझकर दमन किया गया है और अन्यथा भी, अस्थायी सेवावधि के दौरान नियमावली, 1965 के नियम 5 के परन्तुक के मुताबिक इस अपीलार्थी की सेवा नोटिस अवधि के वेतन के भुगतान द्वारा समाप्त की जा सकती है। अत:, यह सेवा समाप्ति मात्र है और दंडात्मक प्रकृति का नहीं है। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मामले के इन पहलूओं का समुचित रूप से अधिमूल्यन किया गया है।

10. प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित अधिवक्ता **(2013)9 SCC 363** में प्रकाशित माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास कर रहे हैं। इस निर्णय के आधार पर, प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि यह तात्विक नहीं है कि क्या इस अपीलार्थी के विरुद्ध दर्ज अपराध मुख्य था या लघु, किंतु, तथ्य बना रहता है कि उसने तात्विक तथ्यों का दमन किया था जब उसने कॉंस्टेबल

के पद पर नियुक्ति के लिए फॉर्म भरा था। उसके द्वारा इन तथ्यों को दबाया नहीं जा सकता था। मामले के इस पहलू का विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा रिट याचिका खारिज करते हुए समुचित रूप से अधिमूल्यन किया गया है, अत:, इस न्यायालय द्वारा यह लेटर्स पेटेन्ट अपील ग्रहण नहीं किया जा सकता है।

कारण

11. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर एवं इस मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए मुख्यत: निम्नलिखित तथ्यों एवं कारणों से हम **इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को ग्रहण करने का कारण नहीं देखते हैं:–**

(i) bl vihykFkh dk fnukd 2 eb] 2012 d çHkko l dnh; fjto ifyl cy e dkLVcy d in ij fu;Dr fd;k x;k FkkA ml ifjo{kk ij fu;Dr fd;k x;k Fkk vkj dnh; flfoy lok (vLFkk;h lok) fu;ekoyh] 1965 d fu;e 5(1) dk iBu fuEufyf[kr g%

*"5. **vLFkk;h lok dh lekfIr**&(i) (a) vLFkk;h ljdkjh lod dh lok ljdkjh lod }kjk fu;Dr dju oky çkfèkdkjh dk vFkok fu;fDr dju oky çkfèkdkjh }kjk ljdkjh lod dk fyf[kr e nh x;h ukfVl }kjk fdlh le; ij lekIr fd, tku dh nk;h gkxh***

(ii) bl vihykFkh d fo#) nkfMd ekeyk l0 454 o"k 2010 nt fd;k x;k Fkk tk bld fopkj.k d fy, yfcr gA cfy;k ifyl Fkkuk e bl vihykFkh d fo#) fd, x, vfHkdFku Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjkvk 147, 452, 308, 323, 323, 325, 504, 506 ,o 427 d vèkhu gA bl ekey e vkjki i= Hkh nkf[ky fd;k x;k gA bl çdkj] ifyl vUo"k.k d erkfcd] nkfMd ekey e bl vihykFkh dh vrxLrrk gA Hkjrh d le; ij lpuk vkifr dju e bu rF;k dk neu fd;k x;k FkkA

(iii) bl ekey d rF;k l çrhr gkrk g fd ;g vijkèk] fo'k"kr% Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 308 d vèkhu] lkr o"k d nM l nMuh; gA ;g y?k vijkèk ugh gA

(iv) ekey d rF;k l çrhr gkrk g fd dUnh; flfoy lok (vLFkk;h lok) fu;ekoyh] 1965 d fu;e 5(1) d vèkhu ukfVl vofèk d oru d Hkxrku d ckn mldh lok lekIr dh x;h gA

(v) ;g çrhr gkrk g fd çR;Fkhx.k dk bl vihykFkh dh lok lekIr dju dh leLr 'kfDr ,o vfèkdkfjrk gA fjV ;kfpdk e çR;Fkhx.k }kjk nkf[ky çfr'kiFk i= d ijkxkQ l0 4 e ;g dFku fd;k x;k g fd lh0 vkj0 ih0 ,Q0 Qke l0 25 fo'k"kr% mld ijk 3 (lR;kiu jky ifjf'k"V B) d erkfcd ;fn mDr Qke e dfFkr rF; >Bh lpuk ik;h tkrh g vkj ;fn lR;kiu jky e rkfF;d lpuk dk dkb neu çR;Fkhx.k d è;ku e vkrk g] fdlh Hkh le; ij mldh lok lekIr dh tk ldrh gA iokDr nkfMd vijkèk d fy,] >Bh lpuk nh x;h Fkh fd mld fo#) nkfMd ekeyk yfcr ugh g tcfd vkt d fnu ij Hkh bl vihykFkh d fo#) iokDr ekeyk yfcr gA

(vi) fu;fDr i= e Hkh] tk fnukd 29 ekp 2012 dk g (fjV ;kfpdk e nkf[ky çfr'kiFk i= dk ifjf'k"V C)] ;g bfxr fd;k x;k g fd ;fn rkRod rF; dk dkb neu ik;k tkrk g] mudh lok lekIr fd, tku dh nk;h gA bld vfrfjDr] bl vihykFkh dh lok 'k) r% vLFkk;h çÑfr dh FkhA

(vii) çR;Fkhx.k }kjk nkf[ky çfr'kiFk i= d ijkxkQ l0 6 l ;g çrhr gkrk g fd ftyk nMkfèkdkjh] cfy;k (;0 ih0) u fnukd 29 tuojh] 2013 d viu i= l0 4007/DA2 U;k; u lfpr fd;k g fd Hkkjrh; nM lfgrk dh iokDr èkkjkvk d vèkhu nkfMd ekeyk l0 454 o"k 2010 bl vihykFkh d fo#) nt fd;k x;k FkkA bl çdkj çR;Fkhx.k dk nkfMd ekey d ckj e tkudkjh gbA bl çdkj] ;g çrhr gkrk g fd bl vihykFkh u rkfRod rF; dk neu fd;k g vkj viu }kjk Hkj tku oky lh0 vkj0 ih0 ,Q0 Qke l0 25 d dkye l0 12 (fjV ;kfpdk e nkf[ky çfr'kiFk i= dk ifjf'k"V&B) e >Bh lpuk fn;k gA rkfRod rF; dk ;g neu vkj mld }kjk nh x;h >Bh lpuk tkuc>dj fd;k x;k ç;kl gA ;fn doy [kkyh Qke gkrk vFkok dkye l0 12 d lkeu [kkyh LFkku NkMk x;k gkrk] ;g bl vihykFkh dk mi{kkoku jo;k gk ldrk g] fdUr] lh0 vkj0 ih0 ,Q0 Qke l0 25 d dkye l0 12 d lkeu mlu Li"Vr% ^^ugh** 'kCn dk dFku fd;k gA ;g dkye nkfMd ekey e vrxLrrk d ckj e gA bl çdkj] u doy rkfRod rF;k dk neu dk cfYd çR;Fkhx.k dk >Bh lpuk nu dk bl vihykFkh dh vkj l tkuc>dj ç;kl fd;k x;k gA ;g èkk[kk gA èkk[kk dk irk yxku e dN le; yxrk gA tc ftyk nMkfèkdkjh] cfy;k] (;0 ih0) u i= fy[kk] çR;Fkhx.k dk lgh rF;k d ckj e tkudkjh gbA bl chp] ;g vihykFkh dkLVcy cuk jgk vkj blfy, fu;ekoyh] 1965 d fu;e 5 (1) d vèkhu mldh lok, lekIr dh x;h gA

(viii) noUn dekj cuke mÙkjkpy jkT; ,o vU;] (2013)9 SCC 363 e ijkxkQ l0 12, 13, 20, 23, 24, 25 ,o 26 ij ekuuh; lokPp U;k;ky; u fuEufyf[kr vfHkfuèkkfjr fd;k g%

"12. tgk rd n0;in'ku }kjk fu;fDr çkIr dju d fook|d dk lcèk g] ;g vc vfu.khr ugh gA ç'u ;g ugh g fd D;k vkond in d fy, mi;Dr gA nkfMd ekey@dk;okgh dk yfcr jguk ,l yfcr jgu dh lpuk d neu l fHkUu gA

0;fDr d fo#) ekey dk yfcr jguk lHkor% ufrd mèkerk vxxLr u dj ij bl lpuk dk nck;k tkuk gh viu vki e ufrd vèkerk d rY; gA oLrr% **fu;kDrk }kjk bfIlr dh x;h lpuk] ;fn bl çdV ugh fd;k tkrk g tlk vko';d g] fu'p; gh rkfRod lpuk d neu d rY; gkxkA ml fLFkfr e lok lekIr fd, tku dh nk;h cu tkrh g Hky gh vkx dkb fopkj.k ugh fd;k x;k Fkk vFkok lcfèkr 0;fDr nk"keDr@mUekfpr dj fn;k x;k FkkA**

13. ;g fofèk dh lfuf'pr çfriknuk g fd tgk vkond rF;k dk n0;in'ku }kjk vFkok l{ke çkfèkdkjh d lkFk diV djd in ikrk g] ,l vkn'k fofèk dh nf"V e lkf"kr ugh fd;k tk ldrk gA ^^diV** leLr U;kf;d ÑR;k] lklkfjd vFkok èke lcèkh] l cprk gA** (n[k% ,l0 ih0 pxyok;k uk;M cuke txUukFk) ykt kjl ,LVl fy0 cuke ch tyh e U;k;ky; u Li"V :i l lçf{kr fd;k% (QB i"B 712)

^^fdlh U;k;ky; d fu.k; vFkok fdlh e=h dk vkn'k cjdjkj jgu ugh nh tk ldrh g ;fn bl diV }kjk çkIr fd;k x;k g D;kfd diV lc dN çdV djrk gA**

20. dnh; fo|ky; lxBu cuke jke jru ;kno rFkk ,0 ih0 ykd lok vk;kx cuke dkurh odVkLo#y] e bl U;k;ky; u le#i ekey dk ijh{k.k fd;k ft le fu;fDr d le; ij rkfRod rF; dk neu djd fu;ktu çkIr fd;k

x;k FkkA U;k;ky; u depkjh }kjk fd;k x;k vfHkopu fd Qke vxth e efnr Fkk vkj og ml Hkk"kk dk ugh tkurk Fkk] vkj blfy,] og le> ugh ldk Fkk fd D;k lpuk bfllr dh x;h Fkh] vLohdkj dj fn;kA bl U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k fd pfd mlu Qke Hkju d le; ij lgh :i l lpuk çLrr ugh fd;k Fkk] mld fo#) nt nkfMd ekey dk ckn e okil fy;k tkuk vFkok vijkèkk dh çÑfr vrkfRod FkhA ^^vuçek.k Qke d dkye 12,o 13 dk Hkju dh vko';drk vuçek.k Qke dk Hkju dh frfFk ij depkjh d pfj= ,o iooÙk d lR;kiu d ç;ktu l FkhA **rkfRod lpuk dk neu ,o >Bk c;ku nu dk depkjh d pfj= ,o iooÙk ij lok e mld cu jgu d lcèk e Li"V çHkko gA**

23. vkj0 jkèkkÑ".k cuke MhO thO ifyl e bl U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k fd fu;fDr bfllr djr g, mEehnokj }kjk xyr lpuk çLrr djuk ml fu;fDr d fy, vui;Dr cukrk g vkj gVk, tku@lekflr dk nk;h ;fn mlu xyr lpuk çLrr fd;k tc mDr lpuk fu;fDr djuoky çkfèkdkjh }kjk fofufn"Vr% bfllr dh x;h FkhA

24. oreku ekey e] mPp U;k;ky; u çFke fu;fDr ij ljdkjh lod d pfj= d lR;kiu l lcfèkr fnukd 28.4.1958 d ljdkjh vkn'k ij fo'okl fd;k g ftle 0;fDr dk u;h fu;fDr;k d nkfMd iooÙk d ckj e lpuk çLrr dju dh vko';drk g vkj ;fn **inèkkjh dk bl lcèk e >Bk c;ku djrk gvk ik;k tkrk g] og fdlh vU; dkjokb ftl l{ke çkfèkdkjh }kjk vko';d ekuk tk ldrk g ij fdlh çfrdyrk d fcuk rjUr mUekfpr fd, tku dk nk;h gA ,lh lpuk bfllr dju dk ç;ktu vijkèk dh xHkhjrk vFkok çÑfr vFkok nkfMd ekey d vfre ifj.kke dk irk yxkuk ugh g cfYd ,lh lpuk ukdjh [kktu oky d pfj= ,o iooÙk dk vkdu vFkok lok e cu jgu dh mi;Drrk dh nf"V l bfllr dh tkrh gA** ,lh rkfRod lpuk jkduk vFkok >Bk 0;in'ku djuk Lo; ufrd vèkerk d rY; g vkj mldh ryuk e fcYdy lfHkUu ,o iFkd ekeyk g tk nkfMd ekey e vrxLr gA

25. bld vfrfjDr] ;fn vkjfHkd dkjokb fofèk d vudy ugh g] i{k dk i'pkrorh vkpj.k bl ifo= ugh dj ldrk gA ^^uho gVk, tku ij vfèkljpuk èoLr gk tkrh gA** **xyrh dj yu ij 0;fDr Lo; viuh xyrh dk ykHk ugh y ldrk g vkj l{ke U;k;ky; }kjk fofèki.k fopkj.k foQy dju d fy, fdlh fofèk dh otuk dk vfHkopu ugh dj ldrk gA** ,l ekey e fofèkd lfDr nullus commodum capere potest de injuria-sua propria ykx gkrh gA fofèk dk mYy?ku dju oky 0;fDr dk ;g vkxg dju dh vuefr ugh nh tk ldrh g fd mldk vijkèk tkp] fopkj.k vFkok vUo"k.k d vè;ènu ugh fd;k tk ldrk gA (n[kh Hkkjr l?k cuke etj tujy enu yky ;kno vj fyfy Fkke l cuke Hkkjr l?k) u gh dkb 0;fDr Lo; viu xyr dke l mnHkr gku oky fdlh vfèkdkj dk nkok dj ldrk gA (Jus ex injuria non oritur)

26. voj U;k;ky;k u rF; dk fu"d"k nt fd;k g fd vihykFkh u fu;kDrk }kjk bfllr rkfRod lpuk dk neu fd;k fd D;k og dHkh Hkh fdlh nkfMd ekey

e vrxLr FkkA fu;kDrk }kjk bfllr rkfRod lpuk dk neu vFkok >Bh lpuk çLrr djuk Lo; e ufrd vèkerk d rY; g vkj nkfMd ekey e vrxLrrk l iFkd ,o lfHkUu gA mDr dh nf"V e] vihy fdlh x.kkx.k l jfgr g vkj rnulkj [kkfjt dh tkrh gA (tkj fn;k x;k)

(ix) bl çdkj] iokDr fu.k; dh nf"V e ,lh lpuk bfllr dju dk ç;ktu vijkèk dh çÑfr vFkok xHkhjrk dk irk yxkuk vFkok nkfMd ekey d vfre ifj.kke irk yxkuk ugh g cfYd **,lh lpuk doy dke iku u vFkok ljdkjh lok e cu jgu dh mldh mi;Drrk dk irk yxku d fy, mEehnokj d pfj= ,o iooÙk dk irk yxku d fy, bfllr dh x;h gA rkfRod rF;k dk neu vkj >Bh lpuk nuk Lo; e ufrd vèkerk d rY; gA** bl vihykFkh }kjk nkf[ky fjV ;kfpdk dk [kkfjt djr g, fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk ekey d bl igy dk lefpr :i l vfèkeY;u fd;k x;k gA

(x) vihykFkh d vfèkoDrk u (2000)3 SCC 239 e ekuuh; lokPp U;k;ky; }kjk fn, x, fu.k; ij fo'okl fd;k g vkj vkx (2011)4 SCC 644 e çdkf'kr fu.k; ij fo'okl fd;k g] tk oreku ekey d rF;k l rkfF;d :i l fHkUu g tlk ;gk mij dFku fd;k x;k gA ,d ekey e lok lekfIr ek= vFkok nMkRed lok lekfIr d ckj e fookn Fkk vkj ,d vU; ekey e ;g ekeyh foodghurk d ckj e Fkk vkj fd ekey e lyg gvk FkkA ; rF; vihykFkh d vfèkoDrk }kjk m)r iokDr çdkf'kr fu.k;k d rF; gA o oreku ekey d rF;k l rkfRod :i l fHkUu gA bl vihykFkh d fo#) nt nkfMd ekey dk ekeyh foodghurk d :i e ugh ekuk tk ldrk gA Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 308 lkr o"k rd d dkjkokl dk nM nrh gA vihykFkh vu'kklr cy e dk;jr FkkA tc mEehnokj l fofufn"V lpuk bfllr dh tkrh g] ml lR; ,o lgh rF;k dh vkifr djuh FkhA oreku ekey d rF;k e bl vihykFkh u rkfRod rF; dk neu fd;k g vkj bl rF; d lkFk >Bh lpuk fd ml 'k)r% vLFkk;h vkèkkj ij fu;Dr fd;k x;k Fkk vkj mldh lok dnh; flfoy lok (vLFkk;h lok) fu;ekoyh] 1965 d fu;e 5 d vèkhu ukfVl vofèk d cny e oru ndj lekIr dh x;h gA ; rF; oreku ekey dk vihykFkh d vfèkoDrk }kjk m)r iokDr nk fofuf'pr ekeyk l fHkUu cukr gA bld vfrfjDr] bu fLFkfr;k e] fdlh ukfVl vFkok vkjki&i= vFkok vulj.k dh tku okyh fdlh vU; çfØ;k dh vko';drk ugh g D;kfd ml vLFkk;h vkèkkj ij fu;Dr fd;k x;k FkkA fjV ;kfpdk [kkfjt djr g, fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk ekey d bu igyvk dk lefpr :i l vfèkeY;u fd;k x;k gA ge fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk fy, x, nf"Vdk.k l fHkUu nf"Vdk.k yu dk dkj.k ugh ikr gA vr%] ge MCY;O ihO (,lO) lO 6828 o"k 2013 e fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk fnukd 19 eb] 2015 dk fn;k x;k fu.k; ekU; Bgjkr gA

12. पूर्वोक्त तथ्यों, कारणों, एवं न्यायिक उद्घोषणाओं के परिणामस्वरुप इस लेटर्स पेटेन्ट अपील में सार नहीं है और इसे खारिज किया जाता है।

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

मो॰ हाशिम (262 में)

मो॰ इफ्तिकार आलम उर्फ मो॰ इफ्तिखार आलम (272 में)

सुश्री नमिता सिंह (390 में)

श्री अमित केजरीवाल (391 में)

श्री वरूण कुमार सिंह (399 में)

मेसर्स जगदीश इंटरप्राईजेज (406 में)

श्री प्रमोद कुमार सिंह (410 में)

मेसर्स मिलेज कॉम (प्राइवेट) लिमिटेड (456 में)

श्री अरूण कुमार अग्रवाल (457 में)

cuke

झारखंड राज्य, सी॰ बी॰ आई॰ के माध्यम से (सभी में)

Cr.M.P Nos. 262, 272, 390, 391, 399, 406, 410, 456 with 457 of 2015. Decided on 10th December, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 120B, 409, 420, 468, 471 एवं 477A सहपठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराएँ 13 (2) एवं 13 (1) (d)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग, छल, षड्यंत्र एवं कूटरचना—संज्ञान—अस्वीकृत कोयला/स्लरी अधिक मात्रा में उठाया जाना—सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा याचियों के विरुद्ध साक्ष्य संग्रहित नहीं किया गया है और फाइनल फॉर्म दाखिल किया गया था किंतु फिर भी, अवर न्यायालय ने याचियों की ओर से आपराधिकता दर्शाने वाली किसी सामग्री के बिना अपराधों का संज्ञान लिया—आक्षेपित आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 9 से 11)

निर्णयज विधि.—(2015) 4 SCC 609—Referred.

अधिवक्तागण.—M/s Anil Kumar Sinha, Md. M. Khan, For the Petitioners; Mr. K.P. Deo, For the C.B.I.

आदेश

एक ही आक्षेपित आदेश से उद्भूत होने वाले समस्त मामलों को साथ सुना गया था और एक ही आदेश द्वारा इन्हें निपटाया जा रहा है।

2. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता एवं सी॰ बी॰ आई॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

3. इन समस्त आवेदनों को इन याचीगण द्वारा आर॰ सी॰ केस सं॰ 6(A)/2013-D के संबंध में विद्वान प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश-सह-विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 21.1.2015 के आदेश, जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन विद्वान अवर न्यायालय ने इन याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 120B, 409, 420, 468, 471 एवं 477A के अधीन एवं भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13 (2) सहपठित धारा 13 (1) (c) एवं (d) के अधीन भी अपराध का संज्ञान लिया, सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

4. अभियोजन मामला यह है कि किसी शैलेन्द्र सिंह, वरीय प्रबंधक (सुरक्षा), सेन्ट्रल कोल फील्ड्स लिमिटेड, राँची ने आरक्षी अधीक्षक, सी॰ बी॰ आई॰ के समक्ष लिखित परिवाद उसमें यह अभिकथन करते

हुए दाखिल किया कि कतिपय फर्मों एवं कंपनियों द्वारा कतिपय अस्वीकृत कोयला/स्लरी की अच्छी मात्रा खरीदी गयी थी। इसकी खरीद के बाद फर्मों एवं कंपनियों ने कोलियरी से अस्वीकृत कोयला/स्लरी उठाने के लिए परिवाहकों को नियुक्त किया। परिवाहकों ने जितना कोयला खरीदा गया था जिसकी कीमत का भुगतान किया गया था की तुलना में अत्यधिक कोयला उठाया था और तद्द्वारा अभिकथन किया गया था कि फर्मों/कंपनियों के स्वत्वधारियों/निर्देशकों ने परिवाहकों एवं सेन्ट्रल कोल फील्ड्स लिमिटेड के अधिकारियों के साथ मौनानुकूलता से अस्वीकृत खरीदे गए कोयला/स्लरी की तुलना में अधिक कोयला उठवाया।

5. ऐसे लिखित परिवाद पर सी॰ बी॰ आई॰ ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 120B, 409, 420, 468, 471, 477A एवं भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराओं 13 (2) सहपठित धारा 13 (1) (c) एवं (d) के अधीन आर॰ सी॰ केस सं॰ 6 (A)/2013-D दिनांक 25.5.2013 को दर्ज किया।

6. मामले का अन्वेषण किया गया था। अन्वेषण के दौरान अन्वेषण एजेन्सी ने पाया कि परिवाहकों एवं सी॰ सी॰ एल॰ के अधिकारियों तथा याचियों के एजेन्टों जो एक दूसरे के साथ जुड़े थे की ओर से आपराधिता थी, क्योंकि अन्वेषण के दौरान यह पता चला कि परिवाहकों ने अन्य की मौनानुकूलता से उसकी तुलना में अधिक अस्वीकृत कोयला/स्लरी खरीदा था जिसे इन याचीगण द्वारा अर्थात् मेसर्स जी॰ जी॰ एन॰ कंस्ट्रक्शन, कथरा द्वारा अपने स्वत्वधारी मो॰ हाशिम के माध्यम से, मेसर्स बी॰ डी॰ इंटरप्राइजेज कथरा द्वारा अपने स्वत्वधारी मो॰ इफ्तिकार आलम के माध्यम से, मेसर्स नमिता सिंह, धनरुआ, औरंगाबाद द्वारा अपने स्वत्वधारी श्रीमती नमिता सिंह के माध्यम से, मेसर्स अमित केजरीवाल, कथरा द्वारा अपने स्वत्वधारी श्री अमित केजरीवाल के माध्यम से, मेसर्स बरुण कुमार सिंह, राँची द्वारा अपने स्वत्वधारी श्री प्रमोद कुमार सिंह के माध्यम से, मेसर्स जगदीश इंटरप्राइजेज, राँची द्वारा अपने स्वत्वधारी श्री सुनील कुमार केजरीवाल के माध्यम से, मेसर्स प्रमोद कुमार सिंह, बोकारो द्वारा अपने स्वत्वधारी श्री प्रमोद कुमार सिंह के माध्यम से, मेसर्स माइलेज कॉम (प्रा॰) लि॰, हजारीबाग द्वारा अपने निदेशक श्री राकेश सोंधी उर्फ पिंकू सोंधी के माध्यम से और मेसर्स अरुण कुमार अग्रवाल हजारीबाग द्वारा अपने स्वत्वधारी श्री अरुण कुमार अग्रवाल के माध्यम से इन याचियों की किसी सहमति अथवा जानकारी के बिना खरीदा गया था और तद्द्वारा, सी॰ बी॰ आई॰ ने 17 व्यक्तियों के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल करते हुए इन याचियों को विचारण के लिए नहीं भेजा था, किंतु अवर न्यायालय ने इन समस्त तथ्यों को विचार में लिए बिना इन व्यक्तियों जिन्हें विचारण के लिए कभी नहीं भेजा गया था के विरुद्ध अपराधों का संज्ञान लिया।

7. याचियों के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री अनिल कुमार सिन्हा एवं श्री मो॰ एम॰ खान निवेदन करते हैं कि स्वीकृत रूप से सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा इन याचियों के विरुद्ध मामलों के अन्वेषण के दौरान अपराधिता नहीं पायी गयी है, जिन्हें विचारण के लिए कभी नहीं भेजा गया था, किंतु अवर न्यायालय ने कोई भी कारण दिए बिना इन याचियों के विरुद्ध अपराधों का संज्ञान लिया और, तद्द्वारा, इसने **सुनील भारती मित्तल बनाम केंद्रीय जाँच ब्यूरो, 2015 (4) SCC 609** में दिए गए निर्णय की दृष्टि में गलती किया और इसलिए, दिनांक 21.1.2015 का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है जहाँ तक इन याचियों का संबंध है।

8. इसके विरुद्ध, सी॰ बी॰ आई॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री के॰ पी॰ देव पूर्वोक्त मामले में दाखिल प्रतिशपथ पत्र में दिए गए बयानों को निर्दिष्ट करके निवेदन करते हैं कि सी॰ बी॰ आई॰ ने अन्वेषण के दौरान पाया था कि विक्रय आदेश के अधीन सी॰ सी॰ एल॰ के अधिकारियों द्वारा दिए गए प्राधिकार के आधार पर 2010-11 की अवधि के दौरान अत्यधिक मात्रा में अस्वीकृत कोयला/स्लरी उठाया

है, किंतु सी॰ बी॰ आई॰ ने उक्त नामित इन याचियों के विरुद्ध साक्ष्य नहीं पाया था। किंतु, यह निवेदन किया गया था कि चूँकि इन याचियों के विरुद्ध अपराधों का संज्ञान लेते हुए अवर न्यायालय द्वारा आदेश में कारण नहीं दिया गया है, जिन्हें विचारण के लिए कभी नहीं भेजा गया था, अत: मामला अवर न्यायालय के पास वापस भेजा जाए ताकि अवर न्यायालय कारण देने के बाद आदेश पारित कर सके।

9. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर मैं पाता हूँ कि आरंभ में परिवादी ने अस्वीकृत कोयला/स्लरी उठाने के मामले में उनकी मौनानुकूलता के संबंध में इन याचियों के विरुद्ध कुछ अभिकथन लांछित किया जिन अभिकथनों को इस आधार पर किया गया था कि फर्मों/कंपनियों ने जितना खरीदा गया था, उसकी तुलना में अधिक मात्रा में अस्वीकृत कोयला/स्लरी उठाने में परिवाहकों एवं सेन्ट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड के अधिकारियों के साथ दुरभिसंधि किया होगा किंतु अन्वेषण के दौरान, जैसा प्रतिशपथ पत्र में कथन किया गया है, इन याचियों के मामले में कोई प्रत्यक्ष साक्ष्य संग्रहित नहीं किया गया था और उस स्थिति में सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा इन याचियों को विचारण के लिए कभी नहीं भेजा गया था। ऐसी स्थिति में, नया आदेश पारित करने के लिए मामले को अवर न्यायालय के पास वापस भेजना निरर्थक होगा।

10. स्वीकृत रूप से, सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा इन याचियों के विरुद्ध साक्ष्य संग्रहित नहीं किया गया है और तद्द्वारा फाइनल फॉर्म दाखिल किया गया था, किंतु फिर भी अवर न्यायालय ने याचियों की ओर से अपराधिता दर्शाने वाली किसी सामग्री के बिना अपराध का संज्ञान लिया।

11. इन परिस्थितियों के अधीन, दिनांक 21.1.2015 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है जहाँ तक इन याचियों का संबंध है।

12. परिणामस्वरुप, ये आवेदन अनुज्ञात किए जाते हैं।

---

ekuuh; jfo ukFk oek] U;k;efr

निर्मला देवी एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 833 of 2009. Decided on 26th October, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 498A—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—क्रूरता—संज्ञान—पक्षों ने न्यायालय के बाहर अपना विवाद सुलझा लिया है और संयुक्त सुलह याचिका दाखिल की गयी है—वैवाहिक विवादों का वास्तविक समाधान प्रोत्साहित करना न्यायालय का कर्तव्य है—विपक्षी पक्षकार को याचीगण के विरुद्ध शिकायत नहीं है और वह इस मामले की कार्यवाही जारी रखना नहीं चाहती है—पक्षों को अपराध उपशमनित करने की अनुमति दी गयी—दांडिक कार्यवाही अभिखंडित। (पैराएँ 8 से 10)

निर्णयज विधि.—(2003) 4 SCC 675; (2012) 10 SCC 303—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Prabir Chatterjee, For the Petitioners; Mr. M.K. Sinha, For the State; Mr. Kalkyan Banerjee, For the O.P. No. 2.

आदेश

दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में ''संहिता'') की धारा 482 के अधीन इस न्यायालय की अंतर्निहित शक्ति का अवलंब लेते हुए याचीगण ने सी॰ पी॰ केस सं॰ 2405 वर्ष 2008 में श्री वी॰ के॰ तिवारी, न्यायिक

दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 17.4.2009 के आदेश जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया है और समन जारी किया गया है सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है।

2. तथ्यों का विवरण यहाँ उद्धृत करने की आवश्यकता नहीं है बल्कि तथ्यों का संक्षिप्त बयान इस मामले में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक के न्याय निर्णयण के लिए पर्याप्त होगा:

सुधा कुमारी की प्रेरणा पर वर्तमान याचीगण और एक और याची अर्थात् मदन प्रसाद तिवारी जिसकी मृत्यु इस दांडिक विविध याचिका के लंबित रहने के दौरान हो गयी जिसके बाद उसका नाम दिनांक 11.9.2015 के आदेश द्वारा विलोपित किया गया था, के विरुद्ध परिवाद इस अभिकथन के साथ दाखिल किया गया था कि उसका विवाह दिनांक 18.6.2006 को वर्तमान याची सं॰ 2 मृत्युंजय कुमार तिवारी के साथ हुआ था और विवाह में याचीगण को पर्याप्त दहेज दिया गया था और परिवादी अपने दांपत्य गृह आयी और याचीगण के साथ रही किंतु केवल एक सप्ताह बाद याचीगण परिवादी को पर्याप्त दहेज नहीं लाने के लिए यातना देने लगे। समस्त याचीगण द्वारा उसको शारीरिक एवं मानसिक रूप से यातना दी जाती थी। उसके जेठ धनंजय कुमार तिवारी एवं जेठानी श्रीमती निशु तिवारी और अंतत: उसे उसके पिता के साथ उसके दांपत्य गृह से निकाल दिया गया था।

3. सत्यनिष्ठ प्रतिज्ञान पर परिवादी के बयान और संहिता की धारा 202 के अधीन अन्य गवाहों के परीक्षण के बाद अवर न्यायालय ने पर्याप्त सामग्री पाते हुए अपराध का संज्ञान लिया और समन जारी करने का निर्देश दिया। अत: यह याचिका दाखिल की गयी है।

4. इस याचिका के लंबित रहने के दौरान, दिनांक 10.3.2015 को संयुक्त सुलह याचिका इस प्रार्थना के साथ दाखिल की गयी थी कि पक्षों ने किसी प्रपीड़न और अनुचित प्रभाव के बिना न्यायालय के बाहर अपना विवाद सुलझा लिया है और वे अपनी अवयस्क पुत्री के साथ विगत चार वर्ष से दुर्गापुर में साथ रह रहे हैं और किसी भी पक्ष को एक-दूसरे के विरुद्ध कोई शिकायत नहीं है। इस दशा में, उन्होंने संपूर्ण दांडिक कार्यवाही उपशमनित करने की अनुमति प्रदान करने की प्रार्थना की है और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 परिवादी मामले के साथ अग्रसर होना नहीं चाहती है।

5. अभिलेख से प्रतीत होता है कि नोटिस के बाद विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता श्री कल्याण बनर्जी उपस्थित हुए और उक्त संयुक्त सुलह याचिका दाखिल की गयी थी। दोनों पक्षों को व्यक्तिगत तौर पर न्यायालय में उपस्थित होने का निर्देश दिया गया था और उसके अनुपालन में वे न्यायालय में उपस्थित थे। पूछने पर विरोधी पक्षकार सं॰ 2-परिवादी ने निवेदन किया कि उसकी अपने पति अथवा अपने ससुराल के किसी अन्य सदस्य के विरुद्ध शिकायत नहीं है और उसे समस्त याचीगण के विरुद्ध मामला शमनित करने की अनुमति दी जा सकती है। पति याची सं॰ 2 एवं परिवादी विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने आगे न्यायालय को सूचित किया कि वे विगत चार वर्षों से पति-पत्नी के रूप में रह रहे हैं और उनके विवाह से एक पुत्री का जन्म हुआ है।

6. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री चटर्जी ने **बी॰ एस॰ जोशी एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं एक अन्य, (2003)4 SCC 675,** मामले पर विश्वास करते हुए निवेदन किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन समस्थित मामले में सुलह के बाद माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया कि अति तकनीकी दृष्टिकोण प्रति–उत्पादक होगा और स्त्री के हित के विरुद्ध और उद्देश्य जिसके लिए प्रावधान जोड़ा गया था के विरुद्ध कृत्य करेगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि वैवाहिक विवादों के वास्तविक समाधान को प्रोत्साहित करना न्यायालय का कर्तव्य बन जाता है। यह निवेदन भी किया गया था कि यद्यपि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 498A संहिता की धारा 320 की अनुसूची में सम्मिलित नहीं की गयी है किंतु उक्त निर्णय की दृष्टि में पक्षों को मामले में सुलह करने की अनुमति दी जा सकती है।

विद्वान अधिवक्ता ने आगे एक अन्य मामले **गियान सिंह बनाम पंजाब राज्य एवं एक अन्य, (2012)10 SCC 303,** पर विश्वास करते हुए निवेदन किया कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विस्तार व्यापक बनाया है और अभिनिर्धारित किया है कि सिविल, मर्केन्टाइल, वाणिज्यिक, वित्तीय, भागीदारी अथवा ऐसे समान संव्यवहारों से उद्भूत होने वाले मुख्यत: सिविल स्वरुप वाले अपराध अथवा विवाह विशेषत: दहेज से संबंधित विवाद अथवा पारिवारिक विवाद जहाँ मूलत: पीड़िता के विरुद्ध अपराध किया जाता है और अपराधी तथा पीड़ित ने मित्रतापूर्वक अपने बीच समस्त विवादों को सुलझा लिया है को इस तथ्य को ध्यान में लिए बिना कि ऐसे अपराध शमनीय नहीं बनाए गए हैं, उच्च न्यायालय अपनी अंतर्निहित शक्ति के ढाँचे के अंतर्गत दांडिक कार्यवाही अथवा दांडिक परिवाद अथवा प्राथमिकी अभिखंडित कर सकता है यदि यह संतुष्ट है कि ऐसे समाधान को देखते हुए अपराध को दोषसिद्ध करने की शायद ही कोई संभावना है। यह निवेदन भी किया गया था कि चूँकि पक्षों ने मामले में सुलह कर लिया है और न्यायालय में व्यक्तिगत तौर पर उपस्थित हैं, न्याय मांग करता है कि प्राथमिकी एवं संज्ञान लेने वाला पश्चातवर्ती आदेश अभिखंडित किया जाए। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि परिवर्तित परिस्थितियों में अगर विचारण न्यायालय में कार्यवाही जारी रखने की अनुमति दी भी जाती है, दोषसिद्धि का लगभग कोई अवसर नहीं होगा और यह न्यायालय के बहुमूल्य समय को बिल्कुल व्यर्थ करना होगा।

7. विरोधी पक्षकार सं॰ 2 का प्रतिनिधित्व कर रहे विद्वान अधिवक्ता ने भी निष्पक्षत: निवेदन किया कि पक्षों ने अपना विवाद सुलझा लिया है और इस मामले में उस सीमा तक संयुक्त सुलह याचिका भी दाखिल की गयी है और न्याय के हित में तथा परिवार को बचाने के लिए उसे आपत्ति नहीं है, यदि संपूर्ण कार्यवाही एवं संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किया जाता है।

8. बी॰ एस॰ जोशी एवं अन्य (ऊपर) में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन संस्थित मामले से उद्भूत होने वाली समरुप स्थिति पर विचार करते हुए पैराग्राफ 14 पर निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

> *"14. ble dkb lng ugh g fd Hkkjrh; nM lfgrk e èkkjk 498A vrfo"V dju oky vè;k; XX-A dk ij%LFkkfir dju dk mí'; mld ifr }kjk vFkok mld ifr d lcfèk;k }kjk L=h dk ;kruk nu l jkduk FkkA èkkjk 498A ifr vFkok mld lcfèk;k] tk ngt dh vfofèki.k ekx ijk dju d fy, ml vFkok mld lcfèk;k dk çihfMr dju d fy, iRuh dk ij'kku djr g vFkok ;kruk nr g] dk nM nu dh nf"V l tkMh x;h FkhA vfr rduhdh nf"Vdk.k çfr&mRiknd gkxk vkj L=h d fgr d fo#) vkj mí'; ftld fy, çkoèkku tkMk x;k Fkk d fo#) ÑR; djxkA çR;d lHkkouk g fd U;k; dk mí'; ijk dju d fy, dk;okgh vfHk[kfMr dju dh vrfufgr 'kfDr dk xj ç;kx fL=;k dk igy gh ekeyk ly>ku l jkdxkA ;g Hkkjrh; nM lfgrk d vè;k; XX-A dk mí'; ugh gA"*

संहिता की धारा 320 विभिन्न तालिकाओं में अपराधों का विवरण वर्णित करती है, जो पक्षों द्वारा शमनीय है और जो न्यायालय की अनुमति से शमनीय है। नि:संदेह, भारतीय दंड संहिता की धारा 498A संहिता की धारा 320 की उक्त सूची में सम्मिलित नहीं की गयी है किंतु उक्त **बी॰ एस॰ जोशी (ऊपर)** में विनिश्चय आधार की दृष्टि में वैवाहिक विवादों के वास्तविक समाधान को प्रोत्साहित करना न्यायालय का कर्तव्य बन जाता है।

गियान सिंह बनाम पंजाब राज्य (ऊपर) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैराग्राफ 51 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

*"51. lfgrk dh ekkjk 320 vijkèkk d 'keu d lcèk e ykduhfr dk Loj nrh gA ;g Hkk0 n0 l0 d vèkhu nMuh; vijkèk lphc) djrh g ftUg U;k;ky; dh vuefr d fcuk i{kk }kjk 'kefur fd;k tk ldrk g vkj U;k;ky; dh vuefr l dfri; vijkèkk dk 'keu fd;k tk ldrk gA fo'k"k lfofèk;k d vèkhu nMuh; vijkèk ekkjk 320 }kjk vkPNkfnr ugh gA tc ekkjk 320 d vèkhu vijkèk 'keuh; g] ,l vijkèk vFkok ,lk vijkèk dju d ç;kl dk mi'keu vFkok tgk vfHk;Dr Hkk0 n0 l0 dh ekkjk 34 vFkok 149 d vèkhu nk;h g tl vijkèk dk Hkh blh rjhd l mi'kefur fd;k tk ldrk gA 0;fDr tk 18 o"k l de vk; dk g vFkok e[k vFkok ikxy g] vijkèk dk 'keu dju d fy, l{ke ugh g fdr bl mldh vkj l U;k;ky; dh vuefr l fd;k tk ldrk gA ;fn vijkèk 'kefur dju d fy, vU;Fkk l{ke 0;fDr dh eR; gk x;h g] mld fofèkd çfrfufèk U;k;ky; dh vuefr l vijkèk 'kefur dj ldr gA tgk vfHk;Dr dk fopkj.k d fy, lin fd;k x;k g vFkok ml nk"kfl) fd;k x;k g vkj vihy yfcr g] doy ml U;k;ky; ft ldk ml lin fd;k x;k g dh vuefr l vFkok vihy U;k;ky; dh vuefr l] ;Fkk fLFkfr] mi'keu fd;k tk ldrk gA iujh{k.k U;k;ky; Hkh fdlh 0;fDr tk 'keu dju d fy, l{ke g dk fdlh vijkèk dk 'keu dju dh vuefr n ldrk gA vijkèk d mi'keu dk ifj.kke vfHk;Dr dh nk"kefDr gA èkkjk 320 dh mièkkjk (9) vkKk nrh g fd tk bl èkkjk }kjk çkoèkkfur fd;k x;k g] mld flok, vijkèk 'kefur ugh fd;k tk,xkA Li"Vrh] mldh nf"V e vijkèk dk mi'keu èkkjk 320 d lkFk lxr gkuk gkxk vkj u fd fdlh vU; rjhd lA***

9. उक्त निर्दिष्ट मामलों में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णयाधार विनिश्चित करते हुए पक्षों को अपराध का शमन करने की अनुमति दिया है कि जब पक्षों ने इस तथ्य को ध्यान में लिए बिना कि ऐसे अपराध शमनीय नहीं बनाए गए हैं, अपने बीच समस्त विवादों को मित्रतापूर्वक सुलझा लिया है, उच्च न्यायालय को अपने अंतर्निहित शक्ति के ढाँचे के अंतर्गत दांडिक कार्यवाही एवं प्राथमिकी अभिखंडित करने की प्रत्येक अधिकारिता है। विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने संयुक्त सुलह याचिका में स्पष्टत: प्रकथन किया है कि उसे इन याचीगण के विरुद्ध शिकायत नहीं है और वह इस मामले की कार्यवाही जारी रखना नहीं चाहती है। इस प्रकार, इन तथ्यों एवं परिस्थितियों में पक्षों को अपराधों का शमन करने की अनुमति दी जाती है।

10. अत: उक्त निर्दिष्ट दो मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विनिश्चित निर्णयाधार के आलोक में श्री वी॰ के॰ तिवारी, न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, धनबाद के न्यायालय में लंबित सी॰ पी॰ केस सं॰ 2405 वर्ष 2008 में दिनांक 17.4.2009 के संज्ञान लेने वाले आदेश सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

11. तद्नुसार, यह दांडिक विविध याचिका एतद्द्वारा अनुज्ञात की जाती है।

ekuuh; vferkHk dekj xIrk] U;k;efr

मो॰ तसलीम उर्फ तसलीम

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 775 of 2015. Decided on 19th November, 2015.

किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) नियमावली, 2007—नियम 12 (3) (b)—किशोर अपचारी की आयु का चिकित्सीय विनिश्चयकरण–यदि किशोरिता का दावा किया जाता है और उपलब्ध साक्ष्य पर यदि दो दृष्टिकोण संभव है, न्यायालय को सीमांत मामलों में अपराधी को किशोर अभिनिर्धारित करने के पक्ष में झुकना होगा–याची को घटना की अभिकथित तिथि पर किशोर घोषित किया गया। (पैराएँ 4 से 6)

निर्णयज विधि.–2009 (3) JLJR (SC) 123; 2015 (1) JLJR 414 (SC)—Relied; 2011 (3) JLJR 355; 2011 (2) East Cr. C. 87 (Jhr); (2007) 1 JLJR 427—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Pratiush Lala; For the Petitioner; Mr. Rakesh Kumar, For the State.

आदेश

वर्तमान पुनरीक्षण एस॰ टी॰ केस सं॰ 127 वर्ष 2015 में अपर सत्र न्यायाधीश VIII, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 10.6.2015 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा याची का किशोरिता का अभिवचन अस्वीकार किया गया है।

2. विद्वान अधिवक्ता का प्रतिवाद यह है कि आक्षेपित आदेश से यह स्पष्ट होगा कि किशोर न्याय (बालकों की देखरेख एवं संरक्षण) नियमावली, 2007 के नियम 12 (3) (b) के निबंधनानुसार गठित मेडिकल बोर्ड द्वारा आयु के विनिश्चयकरण के लिए याची का परीक्षण किया गया था क्योंकि किशोरिता का अभिवचन करने के लिए कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया था जैसा नियमावली, 2007 के नियम 12 (3) (a) के अधीन विहित किया गया है।

यह निवेदन किया गया है कि अवर न्यायालय ने कोई कारण दिए बिना अभिनिर्धारित किया है कि घटना के दिन पर अर्थात् दिनांक 22.12.2014 को याची 18 वर्ष से अधिक आयु का था। यह तर्क किया गया है कि विचारण न्यायालय का ऐसा निष्कर्ष अभिलेख पर उपलब्ध तात्विक तथ्यों के अनुकूल नहीं है क्योंकि दिनांक 19.2.2015 के मेडिकल रिपोर्ट के मुताबिक याची की आयु 19 वर्ष से अधिक निर्धारित की गयी थी और नियम 12 (3) (b) निचले पक्ष पर एक वर्ष का लाभ देकर आयु का विनिश्चयकरण अनुध्यात करता है। जाँच के दौरान, जे॰ जे॰ अधिनियम की धारा 7 (A) के अधीन, डॉक्टर ने कथन किया कि 19 वर्ष से अधिक का अर्थ है 19 वर्ष एवं एक घंटा। यह तर्क किया गया है कि यदि डॉक्टर के अभिसाक्ष्य को सत्य स्वीकार किया जाता है, तब एक वर्ष का शिथिलीकरण देने पर दिनांक 19.2.2015 को याची की आयु लगभग 18 वर्ष निर्धारित की जा सकती है, अत:, घटना की तिथि पर अर्थात् दिनांक 22.12.2014 को याची 18 वर्ष से कम आयु का था। यह तर्क किया गया है कि **दुर्गा राम उर्फ गूंगा बनाम राजस्थान राज्य,** (2015)1 JLJR 414 (SC), मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित निर्णयाधार आयु के विनिश्चयकरण के लिए वर्तमान मामले के तथ्यों पर प्रयोज्य है। विद्वान अधिवक्ता ने किशोर की आयु के विनिश्चयकरण के बिंदु पर (2011)3 JLJR (Jhr.) 355; **(2011)2 East Cr. C. 87 (Jhr.)** एवं (2007)1JLJR (Jhr.) 427 में प्रकाशित इस न्यायालय के अनेक निर्णयों को भी निर्दिष्ट किया है।

3. विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने प्रतिवाद किया है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने **दीपक कुमार सिंह बनाम झारखंड राज्य** मामले में इस माननीय न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है और अभिनिर्धारित किया है कि अगर याची की आयु दिनांक 19.2.2015 को 19 वर्ष भी मानी जाती है, तब भी घटना की तिथि पर उसकी आयु 18 वर्ष से अधिक है। यह निवेदन किया गया है कि आक्षेपित आदेश विधि के अनुकूल है और इसमें इस न्यायालय के किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

4. सुना गया। आक्षेपित आदेश का परिशीलन करने पर, यह पर्याप्त रूप से स्पष्ट है कि दस्तावेज, जैसा धारा 12 (3) (a) के अधीन आवश्यक है, अर्थात् मैट्रिकुलेशन प्रमाण पत्र, (क्रीड़ा विद्यालय से भिन्न) पहले विद्यालय का प्रमाण पत्र अथवा नगरपालिका/निगम अथवा क्षेत्र के पंचायत द्वारा जारी जन्म प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं किए गए थे, तद्नुसार, अवर न्यायालय ने नियम 12 (3)(b) के निबंधनानुसार मेडिकल बोर्ड गठित करके याची की आयु के विनिश्चयकरण का निर्देश दिया। दिनांक 19.2.2015 की मेडिकल रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी थी जिसमें याची की आयु 19 वर्ष और अधिक निर्धारित की गयी थी और डॉक्टर ने अभिसाक्ष्य दिया है कि 19 वर्ष एवं अधिक का अर्थ 19 वर्ष एक घंटा हो सकता है।

घटना की तिथि दिनांक 22.12.2014 है और चिकित्सीय परीक्षण दिनांक 19.2.2015 को किया गया था। मेडिकल रिपोर्ट के आधार पर आयु निर्धारित करने की सामान्य प्रथा निचले पक्ष पर दो वर्ष का लाभ देना है किंतु, नियम 12 (3) (b) आज्ञा देती है कि मेडिकल रिपोर्ट के मामले में एक वर्ष का लाभ दिया जाना है।

वर्तमान मामले में विद्वान विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर आया है कि याची दिनांक 22.12.2014 को याची 18 वर्ष से अधिक आयु का था और इसका कोई तर्कपूर्ण कारण नहीं है कि किस प्रकार यह ऐसे निष्कर्ष पर आया है। यह स्पष्ट है कि नियम 12 (3) (b) के अधीन दी गयी आज्ञानुसार विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा एक वर्ष के लाभ पर विचार नहीं किया गया है। **दुर्गा राम उर्फ गूंगा (ऊपर)** मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 15 पर निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

> *"15. .....bl d vfrfjDr] vxj vihykFkh dh vk; mijh vfèkdre lhek }kjk 36 o"k fofuf'pr dh x;h Fkh] ;g nk o"kk d tkM ?kVko d ve;ènu gvk gkrk rn}kjk ft ldk vFk g fd og ijh{k.k dh frfFk ij 34 o"k dk Hkh gk ldrk FkkA ijh{k.k d fnu ml dh vk; 34 o"k yr g, og ?kVuk d fnu ij 18 o"k] 2 ekg ,o 7 fnu dk gkxk fdr , lk eY;kdu doy eY;kdu gkxk vkj vihykFkh fu;e 12 (3) (b) d fucèkuku lkj ,d o"k rd ml dh vk; de dju d fucèkuku lkj ,d o"k d vfrfjDr ykHk dk gdnkj gk ldrk g tk rc ml 17 o"k ,o nk ekg me dk vFkkr fd'kkj cuk,xkA***

5. यह इंगित करना भी प्रासंगिक है कि **हरि राम बनाम राजस्थान राज्य,** (2009)3 JLJR SC 123, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि जब किशोरिता का दावा किया जाता है और उपलब्ध साक्ष्य पर दो दृष्टिकोण संभव है; न्यायालय को सीमांत मामलों में अपराधी को किशोर अभिनिर्धारित करने के पक्ष में झुकना होगा।

6. अत:, विधि की सुनिश्चित प्रतिपादना एवं नियम 12 (3) (b) के अधीन प्रावधानों की आज्ञा पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि याची घटना की तिथि पर अर्थात् दिनांक 22.12.2014 को 18 वर्ष से कम आयु का था। यहाँ पर की गयी चर्चा की दृष्टि में आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है।

7. विचारण न्यायालय को आवश्यक कार्रवाई किए जाने के लिए याची के अभिलेख को जे॰ जे॰ बोर्ड प्रेषित करने का निर्देश दिया जाता है।

8. परिणामस्वरुप, पुनरीक्षण अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ,p॰ lh॰ feJk] U;k;efr

संजर नवाज खान उर्फ शहजाद खान उर्फ सज्जू खान

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (Cr.) No. 313 of 2015. Decided on 11th December, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 307 एवं 302/34 सहपठित आयुध अधिनियम, 1959 की धारा 27—हत्या एवं हत्या का प्रयास–याची एकमात्र घायल गवाह है और सुरक्षा की प्रार्थना कर रहा है–याची द्वारा पश्चातवर्ती नामित दो अभियुक्तों को गिरफ्तार करने एवं उनके विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल करने के लिए आई॰ ओ॰ पर दबाव बनाने के आशय से आवेदन दाखिल किया गया प्रतीत होता है–अन्वेषण प्राधिकारी पर अनुचित दबाव बनाने के लिए रिट अधिकारिता को उपकरण बनाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है–आवेदन खारिज।

(पैराएँ 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.–M/s Md. Zaid Ahmed, For the Petitioner; M/s Bhawesh Kumar, For the Opposite Parties.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची जो भारतीय दंड संहिता की धाराओं 307, 302/34 और आयुध अधिनियम की धारा 27 के अधीन अपराध के लिए दर्ज सदन पी॰ एस॰ केस सं॰ 967 वर्ष 2013, जी॰ आर॰ सं॰ 4447 वर्ष 2013 के तत्सम, में एकमात्र घायल चश्मदीद गवाह है को सुरक्षा प्रदान करने के लिए प्रत्यर्थियों को निर्देश देने वाले परमादेश प्रकृति का रिट जारी करने के लिए याची ने इस आवेदन को दाखिल किया है। वर्तमान में, मामला विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग के न्यायालय में लंबित है।

3. प्राथमिकी से यह प्रतीत होता है कि उक्त घटना में एक व्यक्ति की हत्या की गयी थी और याची घायल हुआ था। इस याची के पिता द्वारा प्राथमिकी दर्ज की गयी थी जब याची अस्पताल में इलाज करवा रहा था, जिसमें चार व्यक्तियों को अभियुक्त के रूप में नामित किया गया था जैसा इस याची द्वारा अपने पिता को प्रकट किया गया था। घटना दिनांक 16.3.2013 की है। यह प्रतीत होता है कि बाद में दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 164 के अधीन इस याची का बयान दर्ज किया गया था, जिसमें उसने दो और व्यक्तियों को अभियुक्त के रूप में नामित किया है। मामले का अन्वेषण किया गया था किंतु यह अभी समाप्त नहीं हुआ है। यह कथन किया गया है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 164 के अधीन दर्ज अपने बयान में याची द्वारा बाद में नामित दो व्यक्ति अभी भी शहर में स्वतंत्र घूम रहे हैं और याची को घटना का एकमात्र चश्मदीद गवाह होने के नाते और उसके परिवार के सदस्यों को उनके द्वारा धमकी दी जा रही है और तद्नुसार याची को पर्याप्त सुरक्षा प्रदान करने की प्रार्थना के साथ वर्तमान रिट आवेदन दाखिल किया गया है।

4. याची ने पहले इसी अनुतोष के लिए इस न्यायालय में डब्ल्यू॰ पी॰ (दा॰) सं॰ 301 वर्ष 2014 दाखिल किया था जिसे दिनांक 27.2.2015 के आदेश द्वारा निपटाया गया था। उक्त रिट आवेदन में इस न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं॰ 5 अर्थात् प्रभारी अधिकारी, सदर पुलिस थाना, हजारीबाग को यथा संभव शीघ्र अन्वेषण समाप्त करने और अवर न्यायालय के समक्ष रिपोर्ट दाखिल करने का निर्देश दिया था। इस न्यायालय ने यह निर्देश भी दिया था कि अन्वेषण से व्यथित होने पर याची अवर न्यायालय के समक्ष समुचित चरण पर समुचित आवेदन दाखिल कर सकता है जैसा दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन प्रावधानित किया गया है। यह निर्देश भी दिया गया था कि यदि याची को अवर न्यायालय में अपना साक्ष्य देने के लिए संरक्षण की आवश्यकता होगी, वह अवर न्यायालय के पास जाएगा और यदि विचारण न्यायालय मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में इसे आवश्यक पाता है, यह उस तिथि पर जब विचारण के क्रम में याची का परीक्षण किया जाना है, याची को सुरक्षा प्रदान करने के लिए संबंधित पुलिस प्राधिकारियों को निर्देश दे सकता है और इन निर्देशों के साथ उक्त रिट आवेदन निपटाया गया था।

5. तत्पश्चात, सुरक्षा प्रदान करने की उसी प्रार्थना के साथ याची द्वारा पुनः वर्तमान आवेदन दाखिल किया गया है। वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है जिससे यह प्रतीत होता है कि मामला भूमि व्यवसाय में लगे दो विरोधी समूहों के बीच विवाद से उद्भूत होता है। प्रतिशपथ पत्र में यह कथन भी किया गया है कि याची के जीवन को अथवा उसके पिता के जीवन को अभिकथित खतरा के बारे में ठोस प्रमाण नहीं है। प्रतिशपथ पत्र में यह स्वीकार किया गया है कि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 164 के अधीन दर्ज अपने बयान में याची द्वारा बाद में नामित दो व्यक्तियों के विरुद्ध अन्वेषण अभी भी चल रहा है, किंतु कुछ गवाहों ने उन व्यक्तियों की अंतर्ग्रस्तता का समर्थन नहीं किया है।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची के जीवन को अभी भी खतरा है और मामले का अन्वेषण समाप्त नहीं हुआ है न ही उन अभियुक्तों को गिरफ्तार नहीं किया गया है यद्यपि वे शहर में मौजूद हैं। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने याची को पर्याप्त सुरक्षा प्रदान करने के लिए पुनः जोर दिया।

7. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है।

8. इस मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में, मैं पाता हूँ कि डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 301 वर्ष 2014 में दिनांक 27.2.2015 के आदेश द्वारा इस न्यायालय द्वारा याची को पहले ही सुरक्षा प्रदान की गयी है। प्रत्यर्थी आरक्षी उपाधीक्षक, हजारीबाग की ओर से दाखिल प्रतिशपथ पत्र से यह प्रकट है कि यह भूमि व्यवसाय के कारण दो विरोधी समूहों के बीच स्पर्धा का मामला है और दो अभियुक्तों के विरुद्ध अन्वेषण अभी भी चल रहा है जिन्हें स्वीकृत रूप से आरंभ में प्राथमिकी में नामित नहीं किया गया था। इन दोनों व्यक्तियों को याची द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 164 के अधीन दर्ज अपने बयान में बाद में नामित किया गया है। यह आवेदन याची द्वारा पश्चातवर्ती नामित दो अभियुक्तों को गिरफ्तार करने और उनके विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल करने के लिए आई॰ ओ॰ पर दबाव बनाने के आशय के साथ दाखिल किया गया प्रतीत होता है क्योंकि रिट आवेदन में यह कथन किया गया है कि वे व्यक्ति अभी शहर में स्वतंत्र घूम रहे हैं और सूचक एवं उसके परिवार के सदस्यों को धमकी दे रहे हैं।

9. चाहे जो भी हो, चूँकि डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 301 वर्ष 2014 में दिनांक 27.2.2015 के आदेश द्वारा याची को पहले ही पर्याप्त सुरक्षा दी गयी है, मैं मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में याची को आगे कोई सुरक्षा देने का कोई कारण नहीं देखता हूँ। एक या दूसरे हितबद्ध अथवा विरोधी पक्ष द्वारा अन्वेषण

प्राधिकारी पर अनुचित दबाव डालने के लिए रिट अधिकारिता को उपकरण बनाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। इस आवेदन में गुणागुण नहीं है और तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है।

10. यह स्पष्ट किया जाता है कि डब्ल्यू॰ पी॰ (दां॰) सं॰ 301 वर्ष 2014 में दिनांक 27.2.2015 के आदेश द्वारा इस न्यायालय द्वारा पहले दिए गए निर्देशों का इसकी आत्मा एवं अक्षर में संबंधित प्रत्यर्थियों द्वारा पालन किया जाएगा।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

पवन कुमार केडिया

cuke

झारखंड राज्य निगरानी के माध्यम से

Cr. M.P. No. 511 of 2015. Decided on 27th November, 2015.

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धाराएँ 7/13 (2) एवं 13 (1) (d) सह-पठित धारा 19 (3)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 465—अवैध परितोषण–संज्ञान–पी॰ सी॰ अधिनियम की धाराओं 7 से 15 के अधीन अपराधों का अन्वेषण करने के लिए इंस्पेक्टर प्राधिकृत किया गया है–मंजूरी प्रदान करने में कोई गलती, लोप अथवा अनियमितता न्यायालय द्वारा पारित किसी निष्कर्ष, दंडादेश अथवा आदेश को प्रभावित नहीं करेगी जब तक न्याय विफल नहीं होता है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 3, 7 से 9)

निर्णयज विधि.–AIR 2014 SC 1674—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Sahani, For the Petitioner; Mr. Shailesh Kumar Singh, For the Vigilance.

आदेश

याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता एवं निगरानी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. आरंभ में, यह आवेदन विशेष केस सं॰ 25 वर्ष 2013 (निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 24 वर्ष 2013) में विद्वान विशेष न्यायाधीश, निगरानी, राँची द्वारा पारित दिनांक 28.11.2014 के आदेश, जिसके द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7/13 (2) सहपठित धारा 13 (1) (d) के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया है, के अभिखंडन के लिए इस आधार पर दाखिल किया गया था कि राजपत्रित श्रेणी के अधिकारी के संबंध में इंस्पेक्टर द्वारा मामले का अन्वेषण किया गया था यद्यपि इंस्पेक्टर को सामान्य पत्र द्वारा अथवा विनिर्दिष्ट आदेश द्वारा मामले का अन्वेषण करने के लिए प्राधिकृत कभी नहीं किया गया था।

3. याची की ओर से लिया गया उक्त आधार किसी भी गुणागुण से रहित है क्योंकि दिनांक 21.7.2012 की अधिसूचना सं॰ 3343 के फलस्वरुप इंस्पेक्टर को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराओं 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14 एवं 15 के अधीन अपराधों का अन्वेषण करने के लिए राज्य द्वारा प्राधिकृत किया गया है।

4. याची की ओर से लिया गया एक अन्य आधार यह है कि कतिपय दस्तावेजों, जो यह स्थापित करते हुए अभिलेख पर है कि याची ने परिवादी के समक्ष कोई मांग नहीं रखा था, को विचार में लिए बिना न्यायालय द्वारा आरोप विरचित किए गए थे और यदि किसी अवैध परितोषण की मांग नहीं की गयी

है, अभियोजन पोषित नहीं किया जा सकता है। याची की ओर से किया गया आगे निवेदन यह है कि सक्षम व्यक्ति द्वारा अभियोजन की मंजूरी कभी नहीं दी गयी है और कि विवेक के इस्तेमाल के बिना मंजूरी दी गयी है।

5. जहाँ तक सामग्री पर विचार नहीं किए जाने का संबंध है, उक्त निवेदन गुणागुण रहित प्रतीत होता है।

6. मैं याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता एवं निगरानी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर पाता हूँ कि विचारण न्यायालय ने संपूर्ण मामले को विचार में लेने के बाद सही प्रकार से आरोप विरचित किया।

7. जहाँ तक मंजूरी आदेश में त्रुटि से संबंधित निवेदन का संबंध है, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 (3) की दृष्टि में एवं दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 465 के अधीन इस चरण पर इसमें हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है जो अन्य बातों के साथ यह स्पष्ट करते हैं कि मंजूरी के प्रदान में कोई गलती, लोप अथवा अनियमितता सक्षम न्यायालय द्वारा पारित किसी निष्कर्ष, दंडादेश एवं आदेश को प्रभावित नहीं करेगा जब तक न्यायालय के मत में न्याय विफल नहीं हुआ है जिस प्रतिपादना को **बिहार राज्य बनाम राजमंगल राम, AIR 2014 Supreme Court 1674** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित किया गया है।

8. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित पूर्वोक्त प्रतिपादना की दृष्टि में, याची मंजूरी से संबंधित विवाद्यक एवं अन्य विवाद्यकों को भी उठाने के लिए स्वतंत्र होगा जैसा विचारण के दौरान उपदर्शित किया गया है।

9. इस प्रकार, मैं इस आवेदन में कोई गुणागुण नहीं पाता हूँ, अतः इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

मेसर्स आश्लेषा कॉरपोरेशन लिमिटेड एवं एक अन्य

cuke

सी॰ बी॰ आई॰, ए॰ सी॰ बी॰, राँची एस॰ पी॰ के माध्यम से

W.P. (Cr.) No. 319 of 2011. Decided on 27th November, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 120B एवं 420—भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धाराएँ 13 (2) एवं 13 (1) (d) सहपठित झारखंड क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण अधिनियम, 2001 की धारा 52/55—षडयन्त्र एवं छल–संज्ञान–मंजूर नक्शे से विपथन करके निर्माण किया गया–काफी समय से प्रश्नगत भूमि का उपयोग सड़क/गली के रूप में नहीं किया जा रहा था–प्रश्नगत भवन का डबल फ्रंटेज नहीं है–यदि उन समस्त भागों जिनसे होकर सड़क गुजरती है पर फ्रंट सेटबैक छोड़ने का आशय होता, डबल फ्रंटेज से अधिक फ्रंटेज वाला स्थल नोट में सम्मिलित किया जाता किंतु ऐसा नहीं है–यदि भवन का डबल फ्रंटेज है, दोनों भागों पर फ्रंट से बैक छोड़ने की आवश्यकता है जो वर्तमान में वहाँ है–संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित।
(पैराएँ 25, 28 से 31)

अधिवक्तागण.–M/s K.N. Choubey, Rajendra Krishna, Amit Sinha, For the Petitioners; Mr. K.P. Deo, For the C.B.I.

आदेश

यह आवेदन आर॰ सी॰ केस सं॰ 3 (A) वर्ष 2011-R में विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰ राँची द्वारा पारित दिनांक 25.10.2011 के आदेश जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 120B सहपठित धारा 420 के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) सहपठित धारा 13(1) (d) के अधीन और झारखंड क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण अधिनियम, 2001 की धारा 52/55 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया, सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

2. पक्षों की ओर से किए गए निवेदनों पर आने के पहले मामले के तथ्य जिन्होंने इस आवेदन को उद्‌भूत किया है ये हैं कि किसी बाबू सतीश चंद्र घोष ने बाबू काली शंकर सहाय एवं अन्य द्वारा निष्पादित दिनांक 17.4.1912 के हुकुमनामा के फलस्वरुप लाइन टैंक के उत्तर अवस्थित मौजा चादरी में भूमि का लभग 2 बीघा अर्जित किया। इस पर बाबू सतीश चंद्र घोष भूमि का रैयत बन गया और भूतपूर्व जमीन्दार को लगान के भुगतान पर उस पर काबिज हुआ। बाबू सतीश चंद्र घोष की मृत्यु पर उसका एकमात्र पुत्र क्षितिश चंद्र घोष ने उक्त संपत्ति विरासत में पाया। इस बीच, भूमि राँची नगरपालिका के नाम में दर्ज की गयी थी और इसका लाभ लेते हुए नगरपालिका ने उक्त भूमि पर क्षितिश चंद्र घोष के शांतिपूर्ण कब्जा में व्यवधान उत्पन्न करना शुरु किया जो दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 145 के अधीन कार्यवाही की ओर ले गयी जिसे नगरपालिका के पक्ष में विनिश्चित किया गया था। उस स्थिति में, क्षितिश चंद्र घोष ने नगरपालिका सर्वे भूखंड सं॰ 1736 वाले भूमि के कब्जा की वापसी के लिए और अधिकार, अभिधान तथा हित की घोषणा के लिए अभिधान वाद सं॰ 57 वर्ष 1957 संस्थित किया। राँची नगरपालिका द्वारा उक्त वाद का प्रतिवाद किया गया था। किंतु, इसे वादी के पक्ष में विनिश्चित किया गया था।

3. डिक्री से व्यथित होकर, राँची नगरपालिका ने अभिधान अपील सं॰ 30 वर्ष 1960 दाखिल किया जिसे व्यय के साथ खारिज किया गया था। उक्त निर्णय के विरुद्ध, पटना उच्च न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील दाखिल की गयी थी जिसे नए निर्णय के लिए अवर अपीलीय न्यायालय के समक्ष वापस भेजा गया था। वापस भेजे जाने पर अपीलार्थी ने निर्णय उलट दिया और वाद खारिज कर दिया।

4. उस आदेश से व्यथित होकर, वादी ने द्वितीय अपील सं॰ 733 वर्ष 1967 पटना उच्च न्यायालय के समक्ष दाखिल किया जिसे दिनांक 30.9.1970 के निर्णय के तहत खारिज किया गया था। उस निर्णय के विरुद्ध, वादी ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष सिविल अपील सं॰ 1034 वर्ष 1971 दाखिल किया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दिनांक 6.2.1981 के निर्णय के तहत पटना उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय अपास्त कर दिया और वाद डिक्री किया और तद्‌द्वारा अभिधान वाद सं॰ 57 वर्ष 1957 में विशेष उप न्यायाधीश, राँची द्वारा पारित डिक्री एवं निर्णय तथा डिक्री अभिपुष्ट करते हुए अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित डिक्री एवं निर्णय पुनर्स्थापित किया गया था। उसके अनुसरण में, भूखंड सं॰ 1736 से संबंधित 0.425 एकड़ माप वाली भूमि के उपर कब्जा का परिदान क्षितिश चंद्र घोष के पक्ष में प्रभावकारी बनाया गया था। उसके बावजूद राँची नगर निगम ने भूखंड सं॰ 1736 वाले भूमि के बंदोबस्ती के प्रदान के लिए निविदाओं को आर्मंत्रित किया जिसे सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1279 वर्ष 2011 में उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी थी। इस न्यायालय ने दिनांक 27.11.2001 के आदेश के तहत राँची नगर निगम की कार्रवाई अवैध पाया और तद्‌द्वारा राँची नगर निगम को याचीगण के अधिकार, अभिधान, हित एवं कब्जा में हस्तक्षेप करने से अवरुद्ध किया। क्षितिश चंद्र घोष की मृत्यु पर, क्षितिश चंद्र घोष के उत्तराधिकारियों ने संपत्ति विरासत में पाया, जिन्होंने नगरपालिका सर्वे सं॰ 1736 से संबंधित 0.425

एकड़ (42.5 डिसमिल) मापवाली भूमि को दिनांक 17.5.2002 के विक्रय विलेख के तहत मेसर्स विनय प्रकाश (एच० यू० एफ०) को बेचा जो भूमि पर काबिज हुआ। किंतु, राँची नगर निगम पुनः भूखंड सं० 1736 एवं 1735 के उपर उसका शांतिपूर्ण कब्जा में व्यवधान उत्पन्न करने लगा जो रिट आवेदन डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 4163 वर्ष 2003 की दाखिल की ओर ले गया जिसमें दिनांक 4.9.2003 को अंतरिम आदेश पारित किया गया था जिसके द्वारा राँची नगर निगम को याचीगण को भूखंड सं० 1735 वाली भूमि से बेदखल करने से अवरुद्ध किया गया था। किंतु इस न्यायालय ने पक्षों के दावा के गुणागुण पर विचार किए बिना याचीगण के सक्षम अधिकारिता के सिविल न्यायलय द्वारा विवाद सुलझाने की स्वतंत्रता देते हुए रिट आवेदन खारिज कर दिया। वर्ष 2006 में, राँची नगर निगम ने पुनः भूमि के शांतिपूर्ण कब्जा में व्यवधान उत्पन्न करना शुरू किया जिसके लिए एक अन्य रिट आवेदन डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 2259 वर्ष 2006 दाखिल किया गया था जिसमें दिनांक 27.7.2006 को इस प्रकार का अंतरिम आदेश पारित किया गया था कि रिट याचीगण के विरुद्ध प्रपीड़क कदम नहीं उठाया जाएगा। दिनांक 1.2.2011 को उक्त रिट आवेदन निपटाया गया था।

5. इस बीच, विक्रेता, जिसने मेसर्स विनय प्रकाश (एच० यू० एफ०) के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित किया था, ने दिनांक 6.8.2007 का परिशुद्धि विलेख उसमें यह अनुबंधित करते हुए निष्पादित किया कि विक्रय विलेख में भूखंड सं० 1735 सम्मिलित नहीं किया जा सकता था और कि बेचे गये विलेख में भूखंड सं० 1735 सम्मिलित नहीं किया जा सका था और कि बेचे गये भूखंड (भूखंड सं० 1736) की चौहद्दी, गलत रूप से दी गयी थी और तद्द्वारा दिनांक 17.5.2002 को निष्पादित विक्रय विलेख में नगरपालिका सर्वे भूखंड सं० 1735 भी सम्मिलित किया जाए। इस पर, क्रेता विनय प्रकाश (एच० यू० एफ०) ने नगरपालिका सर्वे भूखंड सं० 1736 से संबंधित भूमि मेसर्स आश्लेषा कॉरपोरेशन लिमिटेड (याची सं० 1) को बेचा। इस पर, मेसर्स आश्लेषा कॉरपोरेशन ने भूखंड सं० 1736 पर होटल के निर्माण के लिए भवन योजना दाखिल किया।

6. उसके पहले मेसर्स विनय प्रकाश (एच० यू० एफ०) ने नगरपालिका सर्वे भूखंड सं० 1735 एवं 1736 दोनों भूखंडों पर वाणिज्यिक भवन के निर्माण के लिए भवन योजना दाखिल किया था। नक्शा मंजूर किया गया था और निर्माण किया गया प्रतीत होता है। इस बीच, मेसर्स विनय प्रकाश (एच० यू० एफ०) ने दिनांक 11.12.2007 के अपने विक्रय विलेख के तहत 0.425 एकड़ (26 कट्ठा 9 छटाँक) माप वाले भूखंड सं० 1736 से संबंधित भूमि मेसर्स आश्लेषा कारॅपोरेशन लिमिटेड (याची सं० 1) को बेचा जिसका याची सं० 2 निदेशक है। इस पर, मेसर्स आश्लेषा कॉरपोरेशन ने नगरपालिका सर्वे भूखंड सं० 1736 पर होटल के निर्माण के लिए पुनरीक्षित भवन योजना दाखिल किया जिसने बी० सी० केस सं० 1103 वर्ष 2008 को उद्भूत किया। भवन योजना मंजूर किए जाने पर याचीगण ने छोड़ा गया कार्य प्रारंभ किया। काफी बाद, गोदाम के रूप में उपयोग किए जा रहे अवैध एवं अप्राधिकृत संरचना और ''चंद्रलोक अपार्टमेन्ट'' के पार्किंग क्षेत्र में निर्मित दुकानों को हटाने के लिए उपाध्यक्ष, राँची क्षेत्रीय विकास प्राधिकरण सहित प्राधिकारियों को निर्देश देने के लिए इस न्यायालय के समक्ष डब्ल्यू० पी० (पी० आई० एल०) सं० 1531 वर्ष 2011 के तहत लोकहित याचिका दाखिल की गयी थी। इस न्यायालय ने इस तथ्य को ध्यान में लेने के बाद कि प्राधिकारियों ने उनके मंजूर नक्शों से विपथन की ओर अपनी आँख मूंद लिया है जिन विपथनों का परिणाम न केवल सिविल दोष में हुआ है बल्कि वे दांडिक विधि के अधीन भी अपराध हैं और कि कोई स्थान जिसे सामान्य उपयोग के लिए समर्पित करने की आवश्यकता होती है, यदि इसे इसके चरित्र से अनावृत किया जाता है, इसका अर्थ अन्य के अधिकार का हनन होगा जो इसे अपराध बनाएगा और कि उक्त अपराध स्थानीय पदाधिकारियों अथवा उच्च पदों पर स्थित व्यक्तियों की परोक्ष सहमति के बिना नहीं किया जा सकता था। ऐसा संप्रेक्षण करने के बाद, उच्च न्यायालय ने दिनांक 22.3.2011 के अपने आदेश के तहत सी० बी० आई० को ऐसे मामलों का अन्वेषण करने का निर्देश दिया। ऐसे आदेश के परिणामस्वरुप, सी० बी० आई० ने तत्कालीन रजिस्ट्रार जनरल, झारखंड उच्च न्यायालय द्वारा औपचारिक

परिवाद दाखिल किए जाने पर मामला दर्ज किया और मंजूर नक्शे से भवन के निर्माण में किए गए विपथन से संबंधित मामले के संबंध में अन्वेषण आरंभ किया।

7. जहाँ तक इस मामले का संबंध है, सी॰ बी॰ आई॰ ने अन्वेषण पूरा करने के बाद इस अभियोजन पर आरोप-पत्र दाखिल किया कि आवेदक ने B+G+6 के विनिर्देश वाले भूखंड सं॰ 1735 एवं 1736 पर वाणिज्यिक भवन के निर्माण के लिए इसे मंजूर करवाने के लिए बी॰ सी॰ सं॰ 706 वर्ष 2004 के तहत योजना दाखिल किया था। नक्शा मंजूर किए जाने पर, इस आवेदक ने निर्माण कार्य शुरु किया और काफी हद तक निर्माण प्रारंभ किया। बाद में, B+G+6 संरचना वाले कुछ दुकानों एवं होटल के रूप में उपयोग किए जाने के लिए भवन के निर्माण के लिए आवेदक द्वारा पुनरीक्षित नक्शा दाखिल किया गया था। नक्शा दाखिल किए जाने पर, दोनों अवसरों पर यह इंगित किया गया था कि आवेदक भूखंड सं॰ 1735 पर स्पष्ट अभिधान नहीं रखता है और इसलिए, भूखंड सं॰ 1736 वाले भूमि पर नक्शा मंजूर किया जाए किंतु आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ प्राधिकारी ने इसे अनदेखा कर भूखंड सं॰ 1735 जो राँची नगर निगम के अनुसार उनका था जिससे उपर से सड़क एवं नाला गुजर रहा था के स्वामित्व के संबंध में उठाए गए विवाद्यकों को अनदेखा करते हुए दोनों अवसरों पर योजना मंजूर किया।

8. इस संबंध में आगे यह अभिकथित किया गया था कि चूँकि आरंभ से 42.5 डिसमिल माप वाला केवल नगरपालिका सर्वे भूखंड सं॰ 1735 पर कब्जा विवाद का विषय वस्तु कभी नहीं था जिसका उपयोग कॉमन सड़क के रूप में किया जा रहा था और मेसर्स बिनय प्रकाश (एच॰ यू॰ एफ॰) के विक्रेताओं ने संपुष्ट किया कि उन्होंने केवल भूखंड सं॰ 1736 से संबंधित भूमि मेसर्स बिनय प्रकाश (एच॰ यू॰ एफ॰) को बेचा था किंतु वह भूखंड सं॰ 1735 वाली भूमि को परिशुद्धि विलेख में सम्मिलित था यद्यपि उनका भूखंड सं॰ 1735 वाले भूमि पर कोई स्वामित्व नहीं था और तद्द्वारा न तो मेसर्स बिनय प्रकाश और न ही मेसर्स आश्लेषा कॉरपोरेशन जिसको बाद में भूमि अंतरित की गयी थी का भूखंड सं॰ 1735 वाले भूमि पर कोई अधिकार, अभिधान अथवा हित नहीं था, फिर भी पूर्व अवसर पर भूखंड सं॰ 1735 एवं 1736 वाले भूमि पर वाणिज्यिक भवन के निर्माण के लिए नक्शा दाखिल किया गया था। किंतु, बाद में भूखंड सं॰ 1736 वाले भूमि पर होटल के निर्माण के लिए नक्शा दाखिल किया गया था जिसे भूखंड सं॰ 1736 पर भवन के निर्माण के लिए मंजूर किया गया था किंतु आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ के अधिकारियों ने याचीगण को भूखंड सं॰ 1735 की भूमि का सेटबैक के रूप में उपयोग करने की अनुमति दिया था और इन समस्त कृत्यों को एक दूसरे के साथ मौनानुकूलता में किया गया था और प्राधिकारियों की मौनानुकूलता इस तथ्य से आगे पुख्ता होती है कि यद्यपि भूखंड सं॰ 1736 पर निर्माण के लिए योजना मंजूर की गयी थी किंतु फॉरवर्डिंग पत्र में नगरपालिका सर्वे भूखंड सं॰ 1735 भी सम्मिलित की गयी थी।

9. ऐसे अभिकथन पर, यह अभिकथित किया गया था कि याचीगण ने न केवल भारतीय दंड संहिता में अपराध किया था बल्कि आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ प्राधिकारियों के साथ मौनानुकूलता में भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन भी अपराध किया और आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ अधिनियम के अधीन भी अपराध किया।

10. आरोप-पत्र दाखिल करने पर जब दिनांक 25.10.2011 के आदेश के तहत अपराध का संज्ञान लिया गया था, इसे इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी है।

11. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री चौबे निवेदन करते हैं कि वर्ष 1912 में भूतपूर्व जमीन्दार नें लगान रसीद के प्रदान से संलग्न और कब्जा द्वारा अनुसरित हुकुमनामा के फलस्वरुप

बाबू सतीश चंद्र घोष को दो बीघा जमीन बंदोबस्त किया जो अपने पूरे जीवन तक उक्त भूमि पर काबिज बना रहा।

12. राँची नगरपालिका ने वर्ष 1929-30 में व्यवस्थापिती के शांतिपूर्ण कब्जा में इस आधार पर हस्तक्षेप करने का प्रयास किया कि उक्त संपत्ति लाइंस टैंक का भाग होने के नाते यह नगरपालिका की संपत्ति है और वर्ष 1928-29 के नगरपालिका सर्वे अधिकार अभिलेख में भूमि राँची नगरपालिका के रूप में दर्ज की गयी है।

13. स्वर्गीय सतीश चंद्र घोष के पुत्र क्षितिश चंद्र घोष द्वारा उस प्रविष्टि को अभिधान वाद सं॰ 57 वर्ष 1957 में चुनौती दी गयी थी जिसमें भूखंड सं॰ 1736 वाली भूमि पर अधिकार, अभिधान एवं हित की घोषणा और कब्जा की वापसी का अनुतोष इप्सित किया गया था। वादी ने हुकुमनामा के आधार पर और प्रतिकूल कब्जा के रूप में अभिधान का दावा किया। विचारण न्यायालय ने अभिधान एवं प्रतिकूल कब्जा के प्रश्न पर वाद डिक्री किया। डिक्री के विरुद्ध प्रतिवादी द्वारा दाखिल अपील खारिज की गयी थी और तद्द्वारा विचारण न्यायालय की डिक्री एवं निर्णय अभिपुष्ट किया गया था।

14. उस आदेश के विरुद्ध, प्रतिवादी द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील दाखिल की गयी थी। उच्च न्यायालय ने मामला नए सिरे से विनिश्चित किए जाने के लिए मामला अपीलीय न्यायालय के पास वापस भेजा, जहाँ तक वादी का दावा अभिधान पर आधारित है क्योंकि उच्च न्यायालय के अनुसार वादी यह मामला बनाने में विफल रहा कि वादी ने प्रतिकूल कब्जा के चिर भोग द्वारा अभिधान अर्जित किया था। इस पर अपीलीय न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि वादी वाद भूमि पर अपना अभिधान स्थापित करने में विफल रहा और इसलिए, विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री अपास्त कर दिया। उस आदेश से व्यथित होकर, वादी ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील दाखिल किया जिसने अपीलीय न्यायालय द्वारा रिमांड पर पारित निर्णय अभिपुष्ट किया। किंतु, उच्च न्यायालय ने मामले पर विचार करते हुए संप्रेक्षित किया कि हुकुमनामा के माध्यम से व्यवस्थापिती को बंदोबस्त भूमि भूखंड सं॰ 1735 भी सम्मिलित करेगी क्योंकि भूमि हुकुमनामा में दर्शायी गयी चौहद्दी की परिधि के अंतर्गत आएगी।

15. अंतत:, मामला माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष आया और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि उच्च न्यायालय को प्रतिकूल कब्जा के प्रश्न पर अवर न्यायालयों के निष्कर्ष को उलटने के बाद अभिधान के प्रश्न पर, जो भी दोनों न्यायालयों द्वारा प्राप्त तथ्य के समवर्ती निष्कर्ष द्वारा निष्कर्षित किया गया था, अपर न्यायिक आयुक्त के पास मामला वापस भेजने की अधिकारिता नहीं थी। तद्द्वारा उच्च न्यायालय का निर्णय अपास्त किया गया था और परिणामस्वरुप वाद डिक्री किया गया था।

16. काफी पश्चात, क्षितिश चंद्र घोष के उत्तराधिकारियों ने वर्ष 2002 में विक्रय विलेख के माध्यम से किसी मेसर्स विनय प्रकाश (एच॰ यू॰ एफ॰) को भूखंड सं॰ 1735 एवं 1736 वाला भूमि बेचा। यह निवेदन किया गया था कि पूर्वोक्त विक्रय विलेख के अधीन यद्यपि दोनों भूखंडों को बेचा गया था किंतु उत्तरी भाग पर चौहद्दी गलत रूप से भूखंड सं॰ 1735 के रूप में दर्शायी गयी थी जिस गलती का पता चलने पर विक्रेताओं द्वारा परिशुद्धि विलेख निष्पादित किया गया था जिसमें उत्तरी भाग पर भूखंड सं॰ 1734 दर्शा कर चौहद्दी सुधारी गयी थी। वर्ष 2007 में मेसर्स बिनय प्रकाश ने मेसर्स आश्लेषा कॉरपोरेशन लिमिटेड को भूखंड सं॰ 1736 की भूमि बेचा।

17. उसके पहले, वर्ष 2004 में मेसर्स बिनय प्रकाश (एच॰ यू॰ एफ॰) द्वारा वाणिज्यिक भवन के निर्माण के लिए योजना दाखिल किया गया था जिसे मंजूर किया गया था। वर्ष 2008 में, नयी योजना दाखिल की गयी थी, मेसर्स बिनय प्रकाश (एच॰ यू॰ एफ॰) द्वारा नहीं बल्कि मेसर्स आश्लेषा कॉरपोरेशन

लिमिटेड द्वारा जिसको मेसर्स बिनय प्रकाश ने वर्ष 2007 में भूमि बेचा था। नक्शा मंजूर किया गया था जिस पर होटल का निर्माण किया गया था। जब सी॰ बी॰ आई॰ ने इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में मामले का अन्वेषण किया, इसने पाया कि नक्शा गलत रूप से मंजूर किया गया था, जिसके द्वारा याचीगण को नगरपालिका की गली के रूप में दर्ज भूखंड सं॰ 1735 की भूमि का सेटबैक के रूप में उपयोग करने की अनुमति दी गयी थी और तद्द्वारा यह अभिकथित किया गया है कि आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ अधिकारी ने याचीगण के साथ मौनानुकूलता में नक्शा मंजूर किया है, किंतु प्राप्त निष्कर्ष से यह पता लगाने के लिए कि क्या मंजूर नक्शा के संबंध में कोई विपथन किया गया है, सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा गठित कमिटी द्वारा दाखिल रिपोर्ट के विपरीत है जिसके द्वारा भौतिक सत्यापन पर कमिटी के सदस्यों ने भवन के किसी भाग में कोई विपथन नहीं पाया था जहाँ तक यह सेटबैक से संबंधित है जो कमिटी द्वारा दाखिल ज्ञापन से स्पष्ट है जिसे दिनांक 18.5.2015 को दाखिल शपथपत्र के परिशिष्ट S/1 के रूप में संलग्न किया गया है।

18. उसके बावजूद, आरोप पत्र इस आधार पर दाखिल किया गया था कि भूखंड के उत्तरी भाग पर फ्रंट सेटबैक होना चाहिए था, क्योंकि उस भाग पर नगरपालिका पथ था, किंतु जब अवर न्यायालयों ने भूमि पर श्री बिनय प्रकाश के विक्रेताओं का अधिकार, अभिधान एवं हित पाया था और वाद डिक्री किया था, जिसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी अभिपुष्ट किया गया था, सं॰ 1735 वाला उक्त भूखंड सड़क के रूप में नहीं माना जा सकता है क्योंकि भूखंड सं॰ 1735 पर सड़क के रूप में नगरपालिका सर्वे में की गयी प्रविष्टि गलत पायी गयी थी और तद्द्वारा उत्तरी भाग पर फ्रंट सेटबैक छोड़ने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है। अन्यथा भी, छोड़ा गया सेटबैक उपविधि के नियम 5 के प्रावधान के अनुकूल है क्योंकि पूर्वी एवं पश्चिमी भाग की ओर फ्रंट सेटबैक है क्योंकि दोनों भागों पर से सड़क गुजरती है और तद्द्वारा भूमि ''डब्ल फ्रंटेज'' की कोटि के अंतर्गत आएगी। इन परिस्थितियों के अधीन, याचीगण को कोई अवैधता करता नहीं कहा जा सकता है अथवा इन याचीगण को अनुचित लाभ पहुँचाने के लिए अवैध कृत्य करने के लिए आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ अधिकारियों की मौनानुकूलता नहीं थी।

19. सी॰ बी॰ आई॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री के॰ पी॰ देव निवेदन करते हैं कि स्वीकृत रूप से नगरपालिका सर्वे भूखंड सं॰ 1735 से संबंधित भूमि किसी भी वाद, अपील, द्वितीय अपील अथवा माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष कार्यवाही का विषयवस्तु कभी नहीं थी और तद्द्वारा याचीगण भूखंड सं॰ 1735 से संबंधित भूमि का लाभ नहीं ले सकते हैं क्योंकि याचीगण का भूमि पर कोई अधिकार, अभिधान एवं हित नहीं है तथा वे परिशुद्धि विलेख के माध्यम से भी अधिकार, अभिधान अर्जित नहीं कर सकते थे जिसमें यह अनुबंधित किया गया था कि भूखंड सं॰ 1735 वाली भूमि बिनय प्रकाश (एच॰ यू॰ एफ॰) को बेच दी गयी समझी जाएगी। पूर्वोक्त कारण के कारण दोनों अवसरों पर जब योजनाएँ दाखिल की गयी थी, अधिवक्ता के रिपोर्ट के आधार पर आपत्ति की गयी थी कि नगरपालिका सर्वे सं॰ 1735 पर नक्शा मंजूर नहीं किया जा सकता है किंतु आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ प्राधिकारियों ने याचीगण के साथ मौनानुकूलता में यद्यपि भूखंड सं॰ 1736 पर भवन के निर्माण के लिए नक्शा मंजूर किया किंतु याचीगण को भूखंड सं॰ 1735 की भूमि को सेटबैक के रूप में उपयोग करने का अनुमति दिया और तद्द्वारा यह प्रकट है कि आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ के प्राधिकारियों ने याचीगण के साथ मौनानुकूलता में अपराध किया जिसके अधीन संज्ञान लिया गया है।

20. सी॰ बी॰ आई॰ की ओर से किए गए पूर्वोक्त निवेदन का उत्तर याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री चौबे द्वारा दिया गया था कि स्वीकृत रूप से भूखंड सं॰ 1736 वाली भूमि जो याचीगण की थी पर भवन के निर्माण के लिए नक्शा दाखिल किया गया था किंतु याचीगण का अभियोजन केवल इस कारण से किया जा रहा है कि आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ प्राधिकारियों ने याचीगण के साथ मौनानुकूलता

में याचीगण को भूखंड सं० 1735 की भूमि को फ्रंट सेटबैक के रूप में उपयोग करने का अनुमति दिया था किंतु तथ्य यह है कि साइड सेटबैक के लिए छोड़ी गयी खुली भूमि भूखंड सं० 1736 के क्षेत्र के अंतर्गत आती है। किंतु, सी० बी० आई० के अनुसार, चूँकि पार्श्वस्थ भूखंड सं० 1735 नगरपालिका सर्वे नक्शा में सड़क के रूप में दर्शायी गयी है, उपविधियों के नोट 5 के निबंधानुसार उस भाग पर भी फ्रंट सेटबैंक होना चाहिए था। किंतु सी० बी० आई० की प्रेरणा पर उपविधियों के नोट 5 की व्याख्या सही प्रतीत नहीं होती है क्योंकि सी० बी० आई० के अनुसार फ्रंट सेटबैक समस्त भागों जिनसे होकर सड़क गुजरती है पर छोड़ा जाना चाहिए था किंतु नोट 5 के अधीन ऐसा अनुबंध नहीं है बल्कि नोट 5 के निबंधनानुसार केवल दो भागों पर जिनसे होकर सड़क गुजरती है फ्रंट सेटबैक छोड़ने की आवश्यकता है।

21. आगे यह निवेदन किया गया था कि उपविधियों के मुताबिक उत्तरी भाग पर चार फीट भूमि साइड सेटबैक के रूप में छोड़ी गयी है जो भूखंड सं० 1736 का अभिन्न अंग है। केवल तब जब उस भाग पर यदि फ्रंट सेटबैक छोड़ा जाना है, यह भूखंड सं० 1735 वाली भूमि के अंतर्गत आएगा क्योंकि उस भाग पर फ्रंट सेटबैक के रूप में छोड़ने के लिए भूखंड सं० 1735 वाली भूमि की ओर 6-7 फीट छोड़ने की आवश्यकता है। केवल इस धारणा पर कि भूखंड सं० 1735 वाली भूमि की ओर फ्रंट सेटबैक के रूप में 6-7 फीट छोड़ने की आवश्यकता है, सी० बी० आई० इस मामले के साथ आया है कि आर० आर० डी० ए० अधिकारियों ने याचीगण के साथ मौनानुकूलता में भूखंड सं० 1735 वाली भूमि का भी लाभ दिया है जिस धारणा का उपविधियों के नोट 5 के निबंधनानुसार भी कोई आधार नहीं है और ऐसी स्थिति में यदि याचीगण को अभियोजित करने की अनुमति दी जाती है, उन पर गंभीर अन्याय कारित होगा और तद्द्वारा संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

22. नि:संदेह यह सत्य है कि विवाद जो क्षितिश चंद्र घोष एवं नगरपालिका के बीच उद्भूत हुआ की विषय वस्तु 0.425 एकड़ मापवाला नगरपालिका सर्वे सं० 1736 से संबंधित भूमि थी किंतु मेसर्स विनय प्रकाश (एच० यू० एफ०) के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख में किए गए परिवर्णन के अनुसार यह प्रतीत होता है कि उक्त क्षितिश चंद्र घोष के पिता बाबू सतीश चंद्र घोष ने दिनांक 17.4.1912 के हुकुमनामा के फलस्वरुप लाइन टैंक के उत्तर में अवस्थित मौजा चदरी में दो बीघा जमीन अर्जित किया और भूतपूर्व जमीन्दार को लगान के भुगतान पर उस पर काबिज हुआ। राँची नगरपालिका एवं क्षितिश चंद्र घोष के बीच विवाद उद्भूत हुआ क्योंकि भूखंड सं० 1735 एवं 1736 वाली भूमि सहित भूमि राँची नगरपालिका के नाम में दर्ज की गयी थी। चूँकि भूखंड सं० 1736 वाले भूमि के संबंध में क्षितिश चंद्र घोष के शांतिपूर्ण कब्जा में व्यवधान उत्पन्न किया गया था, भूखंड सं० 1736 वाली भूमि पर अभिधान की घोषणा एवं कब्जा की वापसी के लिए वाद लाया गया था। वादी क्षितिश चंद्र घोष द्वारा लाया गया अभिधान वाद डिक्री किया गया था जिसे अपीलीय न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट किया गया था। किंतु, जब मामला द्वितीय अपील में आया, मामला अपीलीय न्यायालय के पास वापस भेजा गया था और तब अपीलीय न्यायालय ने रिमांड पर विचारण न्यायालय और अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित डिक्री उलट दिया। अपीलीय न्यायालय का निर्णय भी उच्च न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट किया गया था। किंतु, सर्वोच्च न्यायालय ने पाया कि उच्च न्यायालय ने प्रतिकूल कब्जा के संबंध में पहली बार में विचारण न्यायालय एवं अपीलीय न्यायालय द्वारा दर्ज तथ्य के समवर्ती निष्कर्षों को उलटने में अवैधता किया था। अपीलीय न्यायालय ने निम्नलिखित निष्कर्ष दिया था:–

> *^^bl çdkj] mDr dfFkr rF;k l] ;g fcYdy Li"V g fd okn h ,o mldk firk o"k 1912 l o"k 1954-55 rd okn Hkfe ij dkfct jg FkA uxjikfydk u o"k 1924 l o"k 1954-55 rd okn Hkfe ij fuek.k lkexh HkMkfjr dju l okn h ,o*

*mld firk dk jkdu dk vud ç;kl fd;kA bl çdkj] o"k 1928-29 dh uxjikfydk lo d igy ,o ckn okn h d firk dk okn Hkfe ij dkfct fl) fd;k x;k gA v0 lk0 1, 5, 6, 8 ,o 9 d ekf[kd lk{; Hkh fl) djr g fd okn h ,o mldk firk o"k 1912 e tehUnkj }kjk cnkcLrh d ckn lc le; ij okn Hkfe ij okLrfod :i l dkfct FkA vr% bl ekey e] uxjikfydk lo çfof"V dh 'k) rk dh mièkkj.kk lQyrkiod okn h }kjk [kfMr dh x;h gA***

उस स्थिति में, सर्वोच्च न्यायालय ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश अपास्त कर दिया और वर्ष 1981 में वाद डिक्री किया।

23. काफी बाद, क्षितिश चंद्र घोष के उत्तराधिकारियों ने मेसर्स बिनय प्रकाश (एच० यू० एफ०) के पक्ष में विक्रय विलेख निष्पादित किया जिसमें इस प्रभाव का अनुबंध किया गया था कि विक्रेता ग्राम चदरी, शारदा बाबू स्ट्रीट, पी० एस० कोतवाली, जिला राँची अवस्थित भूखंड सं० 1735 पर स्थित सड़क एवं नाला, जो रास्ते के अधिकारों, सुखाचारों उसके साथ उपभोगित अनुलग्नकों अथवा ज्ञात अथवा इस रूप में प्रख्यात का अभिन्न अंग है, के साथ नगरपालिका सर्वे सं० 1736 से गठित भूमि के 0.425 एकड़ (42.5 डिसमिल) क्षेत्रफल वाली भूमि उपयोग के लिए एतद्द्वारा सदा के लिए और पूर्णत: विक्रय, अंतरित, हस्तांतरित करते हैं। किंतु, संपत्ति अनुसूची में उत्तरी चौहद्दी नगरपालिका सर्वे भूखंड सं० 1735 पर सड़क, नाला के रूप में दर्शायी गयी थी जो संदेह सृजित करता प्रतीत होता है कि क्या भूखंड सं० 1735 वाली भूमि अंतरित की गयी थी या नहीं। ऐसी स्थिति में, परिशुद्धि विलेख निष्पादित किया गया था जिसके द्वारा यह अनुबंधित किया गया था कि भूखंड सं० 1736 वाली भूमि के संबंध में निष्पादित विक्रय विलेख में भूखंड सं० 1735 की भूमि सम्मिलित की जाए। तथ्य जिनका याचिका में कथन किया गया है से यह सामने आता है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा वाद डिक्री किए जाने के बावजूद राँची नगरपालिका, भूखंड सं० 1736 वाली भूमि पर शांतिपूर्ण कब्जा में व्यवधान उत्पन्न करने लगा और इसलिए भूस्वामी द्वारा रिट आवेदन दाखिल किया गया था जिसके द्वारा प्रत्यर्थी नगरपालिका को भूखंड सं० 1736 वाली भूमि पर अधिकार, अभिधान एवं कब्जा में हस्तक्षेप करने से अवरुद्ध किया गया था। उसके बाद, जब भूखंड सं० 1735 एवं 1736 वाले भूमि पर कब्जा में व्यवधान उत्पन्न किया गया था, मेसर्स बिनय प्रकाश (एच० यू० एफ०) ने परिवार के कर्ता के रूप में रिट आवेदन डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 4163 वर्ष 2003 दाखिल किया जिसमें दिनांक 4.9.2003 को अंतरिम आदेश पारित किया गया था जिसके द्वारा राँची नगरपालिका को भूखंड सं० 1735 एवं 1736 वाले भूमि से याचीगण को बेदखल करने से अवरुद्ध किया गया था। किंतु दिनांक 10.3.2004 को याचीगण को सक्षम अधिकारिता के न्यायालय द्वारा विवाद सुलझाने की स्वतंत्रता देते हुए पक्षों के दावा के गुणागुण पर किसी न्यायनिर्णयन के बिना रिट आवेदन खारिज किया गया था। उसके बाद, राँची नगरपालिका द्वारा याचीगण की भूमि पर शांतिपूर्ण कब्जा में व्यवधान उत्पन्न किया गया प्रतीत होता है और इसलिए, एक अन्य रिट आवेदन डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 2259 वर्ष 2006 दाखिल किया गया था जिसके द्वारा दिनांक 27.7.2006 को इस प्रभाव का अंतरिम आदेश पारित किया गया था कि रिट याचीगण के विरुद्ध कोई प्रपीड़क कदम नहीं उठाया जाएगा। दिनांक 1.2.2011 को उक्त रिट आवेदन निपटाया गया था। इस बीच, अभिधान वाद सं० 112 वर्ष 2006 दाखिल किया गया था जिसमें दिनांक 29.1.2011 को राँची नगरपालिका को वाद के निपटान तक याचीगण के शांतिपूर्ण कब्जा में व्यवधान उत्पन्न करने से अवरुद्ध करते हुए व्यादेश पारित किया गया था। ये समस्त तथ्य सुझाते हैं कि सड़क एवं नाला के रूप में नगरपालिका अभिलेख में दर्ज भूखंड सं० 1735 की भूमि काफी पहले अपना चरित्र खो चुकी थी और इसका कब्जा मूल विक्रेता और तब पश्चातवर्ती खरीदार के साथ प्रतीत होता है। उस स्थिति

में, याचीगण के विक्रेता मेसर्स बिनय प्रकाश (एच॰ यू॰ एफ॰) ने भूखंड सं॰ 1735 एवं 1736 पर वाणिज्यिक भवन के निर्माण के लिए नक्शा इसकी मंजूरी के लिए पहले दाखिल किया था जिसे मंजूर किया गया था। किंतु, उसके बाद मेसर्स आश्लेषा कॉरपोरेशन (याची सं॰ 1) ने केवल भूखंड सं॰ 1736 वाली भूमि पर होटल के निर्माण के लिए वर्ष 2008 में इसकी मंजूरी के लिए नक्शा दाखिल किया जिसे मंजूर किया गया था। बाद में, जब सी॰ बी॰ आई॰ ने इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में मामले का अन्वेषण किया, इन याचीगण के विरुद्ध अभियोजन इस अभियोग पर आरंभ किया गया था कि यद्यपि भूखंड सं॰ 1736 वाली भूमि पर होटल के निर्माण के लिए नक्शा मंजूर किया गया था किंतु आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ प्राधिकारियों ने याचीगण को भूखंड सं॰ 1735 वाली भूमि को सेटबैक के रूप में उपयोग करने की अनुमति दी थी।

24. यहाँ यह गौर करना उपयुक्त होगा कि याचीगण के अनुसार, याचीगण ने लगभग चार फीट का साइड सेटबैक पर भूमि छोड़ दिया है जो भूखंड सं॰ 1736 के क्षेत्र के अंतर्गत आता है। किंतु सी॰ बी॰ आई॰ के अनुसार, याचीगण को फ्रंट सेटबैक के रूप में भूमि छोड़ने की आवश्यकता थी जो याचीगण के मामले के मुताबिक सात फीट होगा और तब इसका भाग भूखंड सं॰ 1735 में आएगा। इस प्रकार, केवल तब जब उपविधियों के नोट 5 के निबंधनानुसार याचीगण को भूखंड सं॰ 1735 वाली भूमि की ओर फ्रंट सेटबैक छोड़ने की आवश्यकता होगी, यह कहा जा सकता था कि आर॰ आर॰ डी॰ ए॰ प्राधिकारियों ने याचीगण के साथ मौनानुकूलता में याचीगण को भूखंड सं॰ 1735 का लाभ दिया। आगे यह दर्ज किया जाए कि चूँकि भूखंड सं॰ 1735 नगरपालिका अभिलेख में सड़क के रूप में दर्ज की गयी है, इसे नोट 5 के निबंधनानुसार सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा यह माना जा रहा है कि उत्तरी भाग पर फ्रंट सेटबैक छोड़ा जाना है किंतु जैसा मामला याचीगण द्वारा बनाया गया है कि उन्होंने समय के विभिन्न बिंदु पर अंतरिम आदेश पाया है से और व्यादेश से भी यह बिल्कुल प्रकट हो जाता है कि काफी समय से भूखंड सं॰ 1735 से संबंधित भूमि का उपयोग सड़क के रूप में कभी नहीं किया गया था। यदि ऐसा है, भूखंड सं॰ 1735 की भूमि उपविधियों के खंड 2.74 के निबंधनानुसार 'स्ट्रीट' के रूप में कभी नहीं मानी जाएगी जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *^^dkb jktekx LVhV] xyh] ixMMh] ldjk jkLrk] lh<huek jkLrk] xtju dk jkLrk] eky y tku dk jkLrk] iny ekx] pkjkgk] LFkku ;k iy pkg og lekIr gk jgh gk ;k vkx tkrh gk] ftlij vke turk dk xtju dk vfèkdkj gk ;k ogk rd igp gk rFkk ,d o"k dh vofèk rd fuckèk igp gk pkg ;ktuk e fo|eku gk ;k iLrkfor rFkk ble lHkh cM] ify;k] lkbMoky] VkfQd vkbyM] lMd fdukj [kM iM rFkk dkVkuek nhokj] ckM] cfj;j rFkk xyh j[kk d vrxr vku oky jfyx 'kkfey gA***

25. इस प्रकार, स्ट्रीट की परिभाषा स्पष्टतः सुझाती है कि यदि कोई भूमि जिस पर जनता को एक वर्ष की अवधि तक किसी रूकावट के बिना गुजरने का अधिकार है अथवा पहुँच है अथवा उससे होकर गुजरता है अथवा इस तक उनकी पहुँच है, इसे स्ट्रीट माना जाएगा किंतु सी॰ बी॰ आई॰ का मामला यह कभी नहीं है कि नक्शा खोजने के एक वर्ष पहले से भूखंड सं॰ 1735 की भूमि का उपयोग स्ट्रीट के रूप में किया जाता था बल्कि सी॰ बी॰ आई॰ वर्ष 1928 में तैयार किए गए नगरपालिका सर्वे अभिलेख के आधार पर उक्त भूमि को सड़क के रूप में ले रहा है जबकि उक्त कथित याचीगण के मामले के अनुसार यह बिल्कुल प्रकट हो जाता है कि भूखंड सं॰ 1735 की उक्त भूमि का उपयोग काफी समय से सड़क/गली के रूप में नहीं किया गया था। उस स्थिति में, उपविधियों के नोट 5 के निबंधनानुसार उत्तरी भाग की ओर फ्रंट सेटबैक छोड़ने का प्रश्न कभी नहीं उद्‌भूत होता है।

26. अब अगला प्रश्न उद्‌भूत होता है कि क्या उपविधियों के नोट 5 के निबंधनानुसार उत्तरी भाग पर फ्रंट सेटबैक छोड़ने की आवश्यकता है।

27. इस विवाद्यक को विनिश्चित करने के लिए राँची प्लानिंग स्टैन्डर्ड्स एन्ड बिल्डिंग बाइलॉज 2002 की तालिका 2A-11 के नोट 5 पर गौर करने की आवश्यकता है जिसका पठन निम्नलिखित है:

> *^^dkuj@Mcy ÝVt@VMe gku dh fLFkfr e] lMd dh vkj vofLFkr lHkh fdukjk dk lkeu dk Hkkx le>k tk;xk rFkk Hkou dh cgrj n';rk cuk; j[ku d fy, rnulkj fofu;e ykx gkxA tk fdukjk lMd d fdukj vofLFkr ugh g mUg lkbM lVcd le>k tk;xkA**

28. इसके परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि अनुबंध किया गया है कि उन समस्त भागों पर जिनसे होकर सड़क गुजरती है, कॉर्नर/डबल फ्रंटेज/टैंडेम साइट के मामले में फ्रंट सेटबैक छोड़ने की आवश्यकता है। चूँकि शब्द ''समस्त'' का उपयोग किया जा रहा है, सी० बी० आई० द्वारा इसकी व्याख्या इस प्रकार की जा रही है कि उत्तरी भाग पर जिस भाग पर भूखंड सं० 1735 अवस्थित है फ्रंट सेटबैक छोड़ा जाना चाहिए था जिसे नगरपालिका अभिलेख में सड़क के रूप में दर्ज किया गया है।

29. स्वीकृत रूप से, प्रश्नगत भवन का डबल फ्रंटेज है क्योंकि पूर्वी भाग एवं पश्चिमी भाग पर सड़क गुजरती है। दोनों भागों पर फ्रंट सेटबैक छोड़ा गया है। अब प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या उत्तरी भाग पर जिसकी ओर भूखंड सं० 1735 अवस्थित है, फ्रंट सेटबैक छोड़ने की आवश्यकता है?

30. यह कथन किया जाए कि पूर्वोक्त नोट का सरोकार कॉर्नर, डबल फ्रंटेज एवं टैंडेम के स्थलों का लक्षण रखने वाले भूखंडों के साथ है। यह डबल फ्रंटेज से अधिक वाले स्थल अनुध्यात नहीं करता है। उस स्थिति में, उक्त प्रावधान में आने वाला शब्द ''समस्त'' डबल फ्रंटेज वाले स्थल के संदर्भ में दोनों हो सकता था। यदि समस्त भागों जिनसे होकर सड़क गुजरती है पर फ्रंट सेटबैक छोड़ने का आशय होता, डबल फ्रंटेज से अधिक वाला स्थल उक्त नोट में सम्मिलित किया गया होता किंतु स्पष्ट रूप से यह वहाँ नहीं है। उस स्थिति में, यदि भवन का डबल फ्रंटेज है, दोनों भागों पर फ्रंट सटेबैक छोड़ने की आवश्यकता है जो वर्तमान में प्रश्नगत भवन का है।

31. उस स्थिति में, यदि याचीगण को अभियोजित करने की अनुमति दी जाती है, यह घोर अन्याय होगी। तद्नुसार, दिनांक 25.10.2011 का आदेश जिसके अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया है, एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

32. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ç'kkUr dekj] U;k;efr

संतोष कुमार भुवनिया एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (Cr.) No. 133 of 2015. Decided on 7th December, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 420, 406 एवं 120B—छल, न्यास का दांडिक भंग एवं षडयन्त्र–प्राथमिकी–याचीगण ने तथ्य का दुर्व्यपदेशन करने के लिए प्रत्यर्थी अथवा उसके पिता से कोई राशि नहीं लिया है–मुख्तारनामा में उल्लिखित निबंधनों एवं शर्तों के मुताबिक

मुख्तारनामा प्रतिसंहृत किया गया–छल, न्यास के दांडिक भंग अथवा षडयन्त्र का अवयव नहीं है–प्राथमिकी अभिखंडित। (पैराएँ 8 से 11)

अधिवक्तागण.–M/s R.S. Mazumdar, A.K. Pathak, For the Petitioners; Mr. J. Rahman, For the State; Mr. Sachin Kumar, For the Respondent.

प्रशान्त कुमार, न्यायमूर्ति.–यह रिट आवेदन भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 406 एवं 120B के अधीन दर्ज गोविन्दपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 112 वर्ष 2015, जी॰ आर॰ सं॰ 1317/2015 के तत्सम, की प्राथमिकी के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है।

2. यह प्रतीत होता है कि परिवादी/प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद के न्यायालय में परिवाद सी॰ पी॰ केस सं॰ 336/2015 दाखिल किया। उक्त परिवाद मामला गोविन्दपुर पुलिस थाना को मामले के संस्थापन और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 156 (3) के अधीन अन्वेषण के लिए भेजा गया था। तद्नुसार, गोविन्दपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 112/2015 दर्ज किया गया था। उक्त परिवाद याचिका में, प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने अभिकथित किया कि याचीगण मेसर्स एनिरॉक्स पिगमेंट्स लिमिटेड के निदेशक एवं प्रोमोटर्स हैं और वे परिवादी (प्रत्यर्थी सं॰ 2) से संबंधित हैं। यह कथन भी किया गया है कि याची सं॰ 1 एवं 2 मेसर्स एलिमेन्टीज कोक प्राइवेट लिमिटेड के भी निदेशक हैं। यह अभिकथित किया गया है कि वर्ष 2004-05 में याचीगण ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 और उसके पिता अर्थात् स्व॰ गणेश राम दोकनिया को अपने व्यवसाय से संबंधित कुछ महत्वपूर्ण चर्चा के लिए अपने कारखाना परिसर में आमंत्रित किया। यह कथन किया गया है कि पूर्वोक्त निमंत्रण के प्रत्युत्तर में, प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं उसका पिता अमाघाटा, गोविन्दपुर में याचीगण के निवास स्थान पर गए जहाँ याचीगण ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं उसके पिता से अपने व्यवसाय में सहायता करने का अनुरोध किया क्योंकि याचीगण की कंपनी अर्थात् मेसर्स एनिरॉक्स पिगमेंट्स लि॰ गंभीर वित्तीय संकट का सामना कर रही थी। यह अनुरोध भी किया गया था कि यदि प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं उसका पिता कंपनी में धन का निवेश करेंगे, उन्हें काफी लाभ होगा। आगे यह अभिकथित किया गया है कि उक्त आश्वासन पर प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं उसके पिता ने याचीगण की कंपनी में उधार देने वाले के रूप में करोड़ों रुपयों का निवेश किया, किंतु याचीगण ने उक्त निवेश को शेयरों के खरीदार के रूप में दर्शाया था। आगे यह कथन किया गया है कि याचीगण ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं उसके पिता को कंपनी के निदेशक के रूप में नियुक्त किया। किंतु, पाँच माह के भीतर प्रत्यर्थी सं॰ 2 और उसके पिता ने निदेशक के पद से त्यागपत्र दे दिया।

3. यह कथन किया गया है कि बाद में प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं उसके पिता ने पाया कि कंपनी गंभीर वित्तीय संकट का सामना कर रही थी, अत:, उन्होंने अभियुक्त/याचीगण को अपना धन वापस करने के लिए कहा। यह कथन किया गया है कि उक्त मांग के बदले में अभियुक्त याचीगण ने 22,25,00,000/- रुपयों की कुल राशि के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं उसके पिता के पक्ष में दिनांक 27.9.2005, 2.6.2008 एवं 3.6.2008 को तीन प्रॉमिसरी नोट निष्पादित किया था। यह कथन किया गया है कि तत्पश्चात, अभियुक्त/याचीगण ने अनेक अवसरों पर करोड़ों रुपया प्राप्त किया, किंतु प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं उसके पिता को एक पैसा का भी भुगतान करने के बजाए उन्होंने अल्प समय में बकायों का वापस भुगतान करने का आश्वासन दिया।

4. आगे यह अभिकथित किया गया है कि वर्ष 2013 में अभियुक्त/याचीगण ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 को बुलाया और उससे कहा कि उन्होंने एकमुश्त निपटान के लिए आई॰ डी॰ बी॰ आई॰ बैंक एवं कोटक महिन्द्रा बैंक से बातचीत किया है और उस प्रयोजन से उन्हें 50,00,000/- रुपयों की आवश्यकता है ताकि इसे आई॰ डी॰ बी॰ आई॰ बैंक एवं कोटक महिन्द्रा बैंक में जमा किया जा सके। यह अभिकथित किया गया है कि अभियुक्त/याचीगण ने आश्वासन दिया कि यदि उक्त राशि आई॰ डी॰ बी॰ आई॰ बैंक में जमा की जाती है, कंपनी अर्थात् मेसर्स एनिरॉक्स पिगमेंट्स लि॰ को बेचने में कोई अवरोध नहीं होगा। यह कथन

किया गया है कि पूर्वोक्त अनुरोध एवं प्रेरणा पर, परिवादी ने 50,00,000/- रुपयों का दो डिमांड ड्राफ्ट याचीगण को दिया और उक्त डिमांड ड्राफ्टों को परस्पर बैंकों में जमा किया गया था। यह कथन किया गया है कि उक्त डिमांड ड्राफ्ट जमा करने के बाद आई॰ डी॰ बी॰ आई॰ बैंक ने एकमुश्त निपटान के लिए मेसर्स एनिरॉक्स पिगमेंट्स लि॰ के लेनदारों के साथ बैठक की व्यवस्था करने का अनुदेश याचीगण को दिया। किंतु अभियुक्त/याचीगण ने कपटपूर्वक एवं आशयपूर्वक बैंक के पूर्वोक्त अनुदेश को अनदेखा किया जिस कारण परिवादी अभियुक्त/याचीगण को जो पहले दिया गया था के अतिरिक्त 50,00,000/- रुपयों के दोषपूर्ण हानि से पीड़ित हुआ। तब यह अभिकथित किया गया है कि तत्पश्चात् प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने अभियुक्त/याचीगण से राशि वापस करने का अनुरोध किया, जिस पर अभियुक्त याचीगण ने मेसर्स एनिरॉक्स पिगमेंट्स लि॰ के प्रस्तावित निवेशकों/खरीदारों को खोजने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 2 के पक्ष में ''समझौता ज्ञापन'' एवं ''प्राधिकार पत्र'' निष्पादित किया था। यह अभिकथित किया गया है कि पूर्वोक्त ज्ञापन निष्पादित करते हुए अभियुक्त/याचीगण ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 को आश्वासन दिया कि मेसर्स एनिरॉक्स पिगमेंट्स लि॰ के व्ययन के बाद प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं उसके पिता से प्राप्त की गयी समस्त राशि कुल विक्रय प्रतिफल के 10% कमीशन के साथ लौटा दी जाएगी। यह कथन किया गया है कि दिनांक 4.4.2014 को अभियुक्त–याचीगण ने पूर्वोक्त मेसर्स एनिरॉक्स पिगमेंट्स लि॰ के निवेशकों/खरीदारों के अंतिम करण के लिए परिवादी के पक्ष में रजिस्टर्ड मुख्तारनामा निष्पादित किया था। यह कथन किया गया है कि दिनांक 9.1.2015 को परिवादी प्रत्यर्थी सं॰ 2 को प्रभात खबर में प्रकाशित समाचार पत्र नोटिस से जानकारी हुई कि अभियुक्तगण ने झूठे एवं तुच्छ आधार पर दिनांक 5.1.2015 के रजिस्टर्ड विलेख के तहत मुख्तारनामा प्रतिसंहृत कर लिया था। यह कथन किया गया है कि तत्पश्चात प्रत्यर्थी सं॰ 2 अपने मित्र के साथ अपना धन वापस लेने के लिए अभियुक्तगण के पास गया। उस समय, अभियुक्त–याचीगण ने उसकी हत्या करने की धमकी दी थी। यह कथन किया गया है कि अभियुक्त/याचीगण ने लिखित में अभिस्वीकृत किया था कि 46,00,00,000/- रुपयों की राशि प्रत्यर्थी सं॰ 2 को भुगतेय है। तद्नुसार, वर्तमान मामला दाखिल किया गया है।

5. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री आर॰ एस॰ मजूमदार निवेदन करते हैं कि अगर प्राथमिकी में किए गए अभिकथन को सत्य माना भी जाता है, तब भी भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420 एवं 406 के अधीन अपराध नहीं बनता है। यह निवेदन किया गया है कि यह शुद्धतः धन उधार देने का मामला है जिसकी वसूली के लिए सिविल वाद पोषणीय है और याचीगण को इसके लिए दांडिक रूप से दायी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है। श्री मजूमदार आगे निवेदन करते हैं कि परिवाद याचिका के साथ संलग्न अनेक दस्तावेजों से यह स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 उवं उसके पिता ने शेयर धारक के रूप में कंपनी में निवेश किया था। उन्हें कंपनी के निदेशक के रूप में नियुक्त किया गया था। किंतु बाद में, उन्होंने निजीकारण से त्याग पत्र दे दिया था। इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं॰ 2 का दावा कि उन्होंने लेनदारों के रूप में याचीगण को धन दिया था, सही नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि रिट आवेदन के परिशिष्ट 4 से, यह स्पष्ट है कि आई॰ डी॰ बी॰ आई॰ बैंक ने उनके द्वारा जमा की गयी 50,00,000/- रुपयों की वापसी उसके लिए सुकर बनाने की दृष्टि से प्रत्यर्थी सं॰ 2 के पिता के नाम में लगा 'लियन' चिन्ह हटा दिया था। उक्त परिस्थितियों के अधीन, प्रत्यर्थी सं॰ 2 का अभिकथन कि वह 50,00,000/- रुपयों की हानि से भी पीड़ित हुआ है, सही नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि मुख्तारनामा में अनुबंध है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 को संपत्ति का अंतरण करने की शक्ति नहीं है और मुख्तारनामा प्रति संहरणीय होगा, यदि प्रत्यर्थी सं॰ 2 ऐसा चाहता है। यह निवेदन किया गया है कि परिवादी ने न्यायालय को गुमराह करने की दृष्टि से मुख्तारनामा के उक्त खंड के केवल आधे अंश को उद्धृत किया था और कथन किया था कि उक्त मुख्तारनामा प्रत्यर्थी सं॰ 2 की सहमति के बिना प्रतिसंहृत किया गया है। यह निवेदन किया गया

है कि वस्तुत:, प्रत्यर्थी सं॰ 2 कंपनी की संपूर्ण संपत्ति बेचने का प्रयास कर रहा था, अत: मुख्तारनामा के खंड 5 के मुताबिक याचीगण ने इसे प्रतिसंहृत कर दिया। इस प्रकार, ऐसा करके उन्होंने प्रत्यर्थी सं॰ 2 के साथ छल नहीं किया है। यह निवेदन किया गया है कि इस मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों से भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 406 सहपठित धारा 120B के अधीन अपराध नहीं बनता है।

6. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सचिन कुमार निवेदन करते हैं कि आरंभ से ही अभियुक्त–याचीगण का प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं उसके पिता के साथ छल करने का आशय था। यह निवेदन किया गया है कि उक्त आशय से उन्होंने प्रत्यर्थी सं॰ 2 एवं उसके पिता को याचीगण की कंपनी में करोड़ों रुपयों का निवेश करने के लिए आश्वस्त किया। यह निवेदन किया गया है कि याचीगण ने आश्वासन दिया कि पूर्वोक्त धन प्राप्त करने के बाद, वे प्रत्यर्थी सं॰ 2 के बकाया का भुगतान करेंगे और 10% कमीशन का भी भुगतान करेंगे, किंतु याचीगण का कंपनी बेचने का आशय नहीं था, अत: उन्होंने मुख्तारनामा प्रतिसंहृत कर दिया था। तद्नुसार, श्री कुमार निवेदन करते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 420/406 के अधीन अपराध निर्मित होता है। श्री कुमार आगे निवेदन करते हैं कि यह सुस्थापित है कि यदि तथ्यों के एक ही संवर्ग से दांडिक दायित्व एवं सिविल दायित्व दोनों निर्मित होता है, तब दोनों प्रकार के मामले पोषणीय हैं। वह आगे निवेदन करते हैं कि प्राथमिकी में किए गए अभिकथन से दांडिक मामला भी बनाया गया है, अत: वर्तमान रिट आवेदन खारिज किए जाने का दायी है।

7. निवेदनों को सुनने पर, मैंने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है।

8. परिवाद याचिका के साथ संलग्न दस्तावेजों जिन्हें पूरक शपथ पत्र के माध्यम से अभिलेख पर लाया गया था के परिशीलन से मैं पाता हूँ कि वस्तुत: प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने इसके पुनर्वास के लिए कंपनी अर्थात् मेसर्स एनिरॉक्स पिगमेंट्स लि॰ में निवेश करने में अपनी दिलचस्पी दिखायी थी। ऐसा एक पत्र पूरक शपथ पत्र के साथ संलग्न है। आगे रिट आवेदन के परिशिष्ट–2 से यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 को मेसर्स एलिमेंट्स कोक प्राइवेट लिमिटेड का निदेशक बनाया गया था और उसने कुछ निजी कारणों से उस पद से त्याग पत्र दे दिया। रिट आवेदन का परिशिष्ट–4 दर्शाता है कि मेसर्स गणेश राम दोकानिया द्वारा जमा किया गया 50 लाख रुपया आई॰ डी॰ बी॰ आई॰ बैंक द्वारा इसके चालू खाता से 'लियेन' चिन्ह हटा कर निर्मुक्त किया गया था। आगे, पूरक शपथ पत्र के साथ संलग्न प्रॉमिसरी नोट्स की छाया प्रतिलिपि से प्रतीत होता है कि याचीगण ने अभिस्वीकृत किया कि उन्होंने मेसर्स गणेश राम दोकानिया एवं कृष्ण कुमार दोकानिया से विभिन्न तिथियों पर कर्ज लिया है और उन्होंने 14.50% ब्याज के साथ इसे लौटाने का वादा किया है। पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन, मैं पाता हूँ कि याचीगण ने तथ्य का कोई दुर्व्यपदेशन करके प्रत्यर्थी सं॰ 2 और/अथवा उसके पिता से कोई राशि नहीं लिया है। समझौता ज्ञापन जिसे पूरक शपथ पत्र के साथ संलग्न किया गया है में भी यह स्पष्टत: उल्लिखित किया गया है कि याचीगण ने कंपनी की दशा के संबंध में प्रत्यर्थी सं॰ 2 को सूचित किया था और उक्त कंपनी पुनर्जीवित करने के लिए उपयुक्त निवेशक खोजने का अनुरोध प्रत्यर्थी सं॰ 2 से किया था। इस प्रकार, यह प्रथम दृष्टया प्रतीत होता है कि याचीगण ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 और/अथवा उसके पिता से कोई तथ्य नहीं छुपाया था। यह तथ्य मुख्तारनामा में भी उल्लिखित किया गया है। मुख्तारनामा के खंड 5 उल्लेखनीय है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*^^nlj Hkkx d i{kdkj dk lifÙk dk vrj.k dju dh 'kfDr ugh gkxh vkj e[rkjukek fdlh le; ij çfrlgj.kh; gkxk ;fn f}rh; i{k ,lk pkgrk gA***

9. इस प्रकार, पूर्वोक्त अनुबंध के परिशीलन से, यह स्पष्ट है कि यदि मुख्तारनामा का दूसरा पक्षकार (प्रत्यर्थी सं॰ 2) संपत्ति के अंतरण के लिए कोई कदम उठाएगा, तब उस स्थिति में मुख्तारनामा प्रतिसंहरणीय होगा। परिशिष्ट 3 के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने विभिन्न व्यक्तियों से बात किया था जो कंपनी के हित के विरुद्ध जाता है, अत: याचीगण ने मुख्तारनामा रद्द कर दिया है। इस प्रकार, प्रथम दृष्टया यह प्रतीत होता है कि मुख्तारनामा के खंड 5 में उल्लिखित निबंधनों एवं शर्तों के मुताबिक मुख्तारनामा प्रतिसंहृत किया गया है।

10. यहाँ उपर कथित पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों की दृष्टि में, मैं पाता हूँ कि प्राथमिकी में छल और/अथवा न्यास के दांडिक भंग का अवयव नहीं है। मैं दांडिक षड्यन्त्र का अवयव भी नहीं पाता हूँ। इस प्रकार, मैं निष्कर्षित करता हूँ कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420/406/120B के अधीन अपराध नहीं बनता है।

11. उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं यह रिट आवेदन अनुज्ञात करता हूँ और न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद के न्यायालय में लंबित गोविन्दपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 112 वर्ष 2015, जी॰ आर॰ सं॰ 1317/2015 के तत्सम, की प्राथमिकी अभिखंडित करता हूँ।

---

ekuuh; çeFk iVuk;d] U;k;efr

डॉ॰ कृष्ण मोहन प्रसाद

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (S) No. 1353 of 2011. Decided on 4th December, 2015.

सेवा विधि–उपदान–समपहरण–दांडिक मामले में दोषसिद्धि–पेंशन उपदान सम्मिलित करता है–पेंशन के प्रत्येक प्रदान के लिए भावी अच्छा आचरण अंतर्निहित शर्त है–याची को चौबीस चारा घोटाला मामले में अभियुक्त बनाया गया है–याची उपदान की राशि पाने का हकदार नहीं है–आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है–रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 8 से 10)

निर्णयज विधि.–1995 (1) PLJR 399; 2002 (2) JLJR 316—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s Saurabh Arun, Abhishek Kumar, For the Petitioner; Mr. Rajesh Kumar Singh, For the Respondents.

प्रमथ पटनायक, न्यायमूर्ति.–संलग्न रिट याचिका में याची ने अन्य बातों के साथ प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा पारित दिनांक 26.11.2010 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसमें प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने निर्णय लिया है कि याची उपदान के भुगतान का हकदार नहीं है।

2. अनावश्यक विवरणों के बिना, रिट आवेदन में प्रकट किए गए तथ्य संक्षेप में ये हैं कि जब याची पशुपालन विभाग, झारखंड सरकार, राँची में सहायक निदेशक (योजना) के रूप में कार्यरत था, दिनांक

4.2.1996 को याची के विरुद्ध मामला दर्ज किया गया था। उसके अनुसरण में, दिनांक 8.2.1996 को याची को उसकी सेवा से निर्लंबित किया गया था और अंततः दिनांक 11.3.1996 को उसकी सेवा समाप्त कर दी गयी थी। दिनांक 11.3.1996 के सेवा समाप्ति के आदेश से व्यथित होकर, याची ने सेवा समाप्ति का आदेश अभिखंडित करने के लिए इस माननीय न्यायालय के समक्ष रिट आवेदन सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 362 वर्ष 2000 दाखिल किया जिसे दिनांक 14.11.2002 को अधिकारिता के आधार पर खारिज किया गया था। तत्पश्चात, याची दिनांक 11.3.1996 का सेवा समाप्ति का आदेश अभिखंडित करवाने के लिए सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 6766 वर्ष 2003 के तहत पटना उच्च न्यायालय के समक्ष गया जिसे माननीय पटना उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 26.8.2003 के आदेश के तहत अनुज्ञात किया गया था और माननीय पटना उच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया है कि ''पक्षों के निवेदन के अनुरुप परिशिष्ट–3 में अंतर्विष्ट आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है। राज्य सरकार इस आदेश की प्रति की प्रस्तुति/प्राप्ति की तिथि से चार माह की अवधि के भीतर याची की हकदारी के प्रति आवश्यक आदेश पारित करेगी। राज्य उक्त मामले में याची को सुनवाई का समुचित अवसर देने के लिए भी बाध्य होगा क्योंकि किसी प्रतिकूल आदेश की स्थिति में याची अपने धनीय लाभ में प्रतिकूल रूप से प्रभावित होगा।'' याची दिनांक 30.6.2001 को सेवा से अधिवर्षित हो गया। सेवानिवृत्ति लाभ के भुगतान के लिए आदेश पारित नहीं किया गया था यद्यपि याची के विरुद्ध कोई अनुशासनिक कार्यवाही कभी आरंभ नहीं की गयी थी किंतु दिनांक 20.3.1996 को आर॰ सी॰ केस सं॰ 2 (A)/98 के संबंध में याची को दोषसिद्ध किया गया था। सेवानिवृत्ति लाभ के गैर–भुगतान के कारण, याची दिनांक 30.6.2001 से 19.3.2006 तक याची को ग्राह्य सेवानिवृत्ति लाभ के भुगतान के लिए डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6098 वर्ष 2007 में इस माननीय न्यायालय के समक्ष आया और याची को उपदान जिसका वह अपनी सेवानिवृत्ति की तिथि के तुरन्त बाद हकदार था के भुगतान के संबंध में विधि के अनुरुप समुचित निर्णय लेने के लिए मामले को संबंधित प्रत्यर्थी प्राधिकारियों के पास वापस भेजते हुए इस माननीय न्यायालय द्वारा दिनांक 28.5.2010 को उक्त रिट याचिका निपटायी गयी थी। ऐसा निर्णय इस आदेश की तिथि से दो माह की अवधि के भीतर दूधनाथ पांडे के मामले में अधिकथित विधि के सिद्धांतों के अनुरुप लिया जाएगा। दिनांक 28.5.2010 को इस माननीय न्यायालय द्वारा पारित निर्देश के अनुसरण में प्रत्यर्थी प्राधिकारी ने दिनांक 24.9.2010 को याची को कारण बताओ नोटिस जारी किया कि क्यों नहीं याची को भुगतेय उपदान रोका जाए और याची ने दिनांक 28.9.2010 को अपना उत्तर दाखिल किया किंतु प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि इस तथ्य की दृष्टि में कि चूँकि याची को अनेक न्यायिक कार्यवाहियों में दोषसिद्ध किया गया है जिसमें भावी अच्छा आचरण पेंशन के प्रत्येक प्रदान के लिए विवक्षित शर्त है और झारखंड पेंशन नियमावली की धारा 27 के अधीन पेंशन उपदान सम्मिलित करता है, याची उपदान के भुगतान का हकदार नहीं है, दिनांक 26.11.2010 को आक्षेपित आदेश पारित किया है।

दिनांक 26.11.2010 के आक्षेपित आदेश से व्यथित होकर, किसी वैकल्पिक एवं प्रभावकारी उपचार के बिना याची भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी शिकायत दूर करवाने के लिए इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब लेकर इस न्यायालय के पास आया है।

3. समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थीगण ने रिट आवेदन में किए गए प्रतिवादों का विरोध करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है। प्रतिशपथ पत्र में, अन्य बातों के साथ यह कथन किया गया है कि चारा घोटाला में याची की अंतर्ग्रस्तता के कारण पशुपालन एवं मत्स्य विभाग, बिहार, पटना के दिनांक 8.2.1996 के आदेश के तहत याची को निर्लंबित किया गया था। तत्पश्चात, याची को दिनांक 11.3.1996 के आदेश के तहत सेवा से बर्खास्त किया गया था। यदि याची सेवा से बर्खास्त नहीं किया

गया होता, वह दिनांक 30.6.2001 को सेवानिवृत्त होता। सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 6766 वर्ष 2003 में माननीय पटना उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 26.8.2003 के आदेश के आलोक में, पशुपालन एवं मत्स्य विभाग, बिहार, पटना ने दिनांक 19.8.2004 के आदेश के तहत याची को बर्खास्तगी आदेश अभिखंडित किए जाने के संबंध में निर्णय किया और पशुपालन एवं मत्स्य विभाग, झारखंड, राँची ने दिनांक 16.3.2006 के आदेश के तहत निर्णय स्वीकार किया था। इस प्रकार, याची निलंबन अवधि के दौरान दिनांक 30.6.2001 को सेवा निवृत्त हुआ। विभाग में उपलब्ध अभिलेख के मुताबिक, याची को 24 चारा घोटाला मामले में अभियुक्त बनाया गया है। पूर्वोल्लिखित मामलों में सरकारी निधि का मुख्य भाग अंतर्ग्रस्त है और याची को 16 मामलों में दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया गया है। याची को आर॰ सी॰ केस सं॰ 2 (A)/98-AHD-Pat में दोषसिद्ध किया गया है और विद्वान विशेष न्यायाधीश III (सी॰ बी॰ आई॰–ए॰ एच॰ डी॰) के न्यायालय द्वारा दिनांक 20.3.2006 को याची को निम्नलिखित दंड अधिनिर्णीत किया गया है:–

(i) Ng o"k dk dBkj dkjkokl]

(ii) 6,00,000/- #i;k dk tekuk vkj

(iii) tekuk d Hkxrku d 0;frØe e ,d o"k dk vfrfjDr dBkj dkjkoklA

उस दोषसिद्धि एवं दंड के कारण, विभाग ने प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट A के तहत झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 के अधीन याची को स्थायी रूप से पेंशन एवं उपदान की राशि का भुगतान नहीं करने का निर्णय दिनांक 31.12.2006 के आदेश के तहत किया। दिनांक 4.2.2010 के विभागीय पत्र के तहत, यह निर्णय किया गया था कि याची दिनांक 1.7.2001 से दिनांक 19.3.2006 तक की अवधि के लिए 90% अनंतिम पेंशन पाने का हकदार होगा। दिनांक 24.2.2010 के पत्र के तहत ए॰ जी॰, झारखंड, राँची के कार्यालय द्वारा प्राधिकार परची जारी किया गया है। पुन:, उक्त कार्यालय ने दिनांक 9.4.2010 के पत्र के तहत याची का पेंशन नियत किया है। डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6098 वर्ष 2007 में माननीय झारखंड उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 17.4.2010 के अंतरिम आदेश के अनुपालन में दिनांक 25.5.2010 के विभागीय पत्र के तहत 106 दिनों का अवकाश नगदकरण पहले ही मंजूर किया गया है। प्रतिशपथ पत्र में आगे यह निवेदन किया गया है कि विभाग ने दिनांक 25.5.2010 के आदेश के तहत निर्णय लिया कि याची को उपदान का भुगतान ग्राह्य नहीं होगा क्योंकि दिनांक 31.12.2006 के विभागीय आदेश के तहत लिया गया निर्णय विधि के सक्षम न्यायालय द्वारा अपास्त नहीं किया गया है। डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6098 वर्ष 2007 में पारित दिनांक 28.5.2010 के आदेश के अनुसरण में दिनांक 24.9.2010 के विभागीय पत्र के तहत याची को कारण बताओ नोटिस यह स्पष्ट करने के लिए जारी किया गया था कि क्यों उपदान राशि रोकी नहीं जाए। दिनांक 28.9.2010 को याची द्वारा उत्तर दिया गया था। याची से प्राप्त कारण बताओ नोटिस का दिनांक 28.9.2010 के उत्तर और संबंधित फाइल में उपलब्ध अभिलेख के परिशीलन के बाद विभाग निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुँचा:–

(i) MkO dO ,eO çlkn }kjk nkf[ky fnukd 28.9.2010 dk dkj.k crkvk dk mÙkj vlrk"ktud ik;k x;k gA

(ii) MCY;O ihO (,lO) lO 6098 o"k 2007 dk ;kph MkO Ñ".k ekgu çlkn vkj ,yO ihO ,O lO 714 o"k 2004 dk ;kph MkO nèkukFk ikM fofHkUu çÑfr d g D;kfd MkO nèkukFk ikM] rRdkyhu xke vfèkdkjh] ykgjnXxk pkjk ?kkVkyk dl lO vkjO lhO 47 (A)/96-Pate vfHk;Dr Fkk tcfd ;kph dk vud pkjk ?kkVkyk ekeyk e nk"kfl) fd;k x;k Fkk vkj tekuk d lkFk vkjO vkbO dk nMkn'k fn;k x;k gA

*(iii) >kj[kM i'ku fu;ekoyh d fu;e 43 e çkoèkku ^^i'ku d çR;d çnku d fy, vPNk Hkkoh vkpj.k** ifjdfYir djrk gA çknf'kd ljdkj i'ku vFkok bld fdlh Hkkx dk jkdu vFkok fudkyu dk vfèkdkj Lo; d ikl vkjf{kr j[krh g ;fn i'kuj dk xHkhj vijkèk d fy, nk"kfl) fd;k x;k g vFkok og xHkhj vopkj dk nk"kh gA bl fu;e d vèkhu i.k i'ku vFkok bld fdlh Hkkx dk jkdu vFkok fudkyu d fdlh ç'u ij çknf'kd ljdkj dk fu.k; vfre ,o fu'p;kRed gkxkA** vud U;kf;d dk;okfg;k e nk"kflf) vkj nM@nMkn'k d dkj.k Hkkoh vPNk vkpj.k i'ku d çR;d çnku dk foof{kr 'kr gA >kj[kM i'ku fu;ekoyh d fu;e 27 d vulkj ^^i'ku minku lfEefyr djrk gA** vr% iokfYyf[kr rF;k d vkykd e >kj[kM ljdkj u fnukd 26.12.2010 d vkn'k d rgr fu.k; fd;k fd ;kph minku jkf'k dk Hkxrku iku dk gdnkj ugh gA*

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सौरभ अरुण और प्रत्यर्थीगण–भारत संघ के लिए उपस्थित जी॰ पी॰ IV के जे॰ सी॰ श्री राजेश कुमार सिंह सुने गए।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने प्रत्यर्थीगण की ओर से दाखिल प्रतिशपथ पत्र के उत्तर को निर्दिष्ट करके निवेदन किया है कि याची के विरुद्ध जारी कारण बताओ नोटिस अधिकारिताहीन है क्योंकि विभाग के सचिव को पेंशन नियमावली के नियम 43 के निबंधनानुसार कारण बताओ नोटिस जारी करने की अधिकारिता नहीं है बल्कि पेंशन नियमावली के नियम 43 का आरंभिक वाक्य ही कहता है कि राज्य सरकार को ही पेंशन रोकने की शक्ति है और स्वीकृत रूप से याची वर्ग II का अधिकारी है और उसको नियुक्त करने वाले प्राधिकारी राज्यपाल हैं और यह सुनिश्चित विधि है कि नियुक्ति करने वाला प्राधिकारी अनुशासनिक प्राधिकारी होता है और स्वीकृत रूप से याची को नियुक्त करने वाले अथवा अनुशासनिक प्राधिकारी ने कोई आदेश पारित नहीं किया है। विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि सचिव जिसने कारण बताओ नोटिस और आक्षेपित आदेश जारी किया भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थ के अंतर्गत राज्य नहीं है और न ही वह पेंशन नियमावली के नियम 43 के अर्थ के अंतर्गत राज्य है। राज्यपाल को राज्य बताया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि राज्यपाल द्वारा मंजूरी नहीं दी गयी है क्योंकि आक्षेपित आदेश नहीं कहता है कि आदेश राज्यपाल के नाम में जारी किया गया है, अत: आक्षेपित आदेश अवैध, शून्य एवं अधिकारिताहीन है। विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि केवल कारण बताओ नोटिस के रूप में नियम 43 के अधीन कार्यवाही का आरंभ और उत्तर भी अवैध एवं शून्य है क्योंकि संक्षिप्त कार्यवाही नहीं हो सकती है जैसा उन्होंने वर्तमान मामले में किया है। नियम 43 के निबंधनानुसार पूर्णरुपेण जाँच होनी चाहिए किंतु वर्तमान मामले में वह भी नहीं किया गया है और मात्र कारण बताओ नोटिस जारी किया गया है विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि अपेक्षित आदेश विधि में दोषपूर्ण है और याची से उत्तर स्वीकार करने के बाद, आक्षेपित आदेश पारित किया गया है जो भी विधि में दोषपूर्ण है, क्योंकि स्वीकृत रूप से याची के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही कभी आरंभ नहीं की गयी थी और वर्ष 2010 में संक्षिप्त कार्यवाही के रूप में कार्यवाही आरंभ करना पेंशन नियमावली के नियम 43 के परन्तुक के विरुद्ध है क्योंकि चार वर्ष की परिसीमा की अवधि पहले ही बीत गयी है जैसा ऐसी घटना के संबंध में होना चाहिए जो ऐसी कार्यवाही के संस्थापन के चार वर्ष अधिक पहले नहीं हुई थी और इसलिए प्रत्यर्थीगण को याची के विरुद्ध संक्षिप्त कार्यवाही जैसा उन्होंने किया है भी आरंभ करने से विवंधित किया गया है क्योंकि चार वर्ष पहले ही बीत गया है क्योंकि घटना 1995 की है और

याची वर्ष 2001 में सेवानिवृत्त हुआ और लगभग ग्यारह वर्षों बाद कार्यवाही आरंभ करना पेंशन नियमावली के नियम 43 के परन्तुक के विरुद्ध है, अत: इस आधार पर भी आक्षेपित आदेश अभिखंडित किए जाने का दायी है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि नियम 43 परन्तुक (c) की दृष्टि में भी आक्षेपित आदेश दोषपूर्ण एवं अवैध है क्योंकि आक्षेपित आदेश में ऐसा कहीं नहीं कथन किया गया है कि अंतिम आदेश पारित करने के पहले झारखंड लोक सेवा आयोग के साथ परामर्श किया गया है जिसे वर्तमान मामले में नहीं किया गया है, अत: आक्षेपित आदेश विधि में दोषपूर्ण है और अभिखंडित किए जाने का दायी है। विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि आक्षेपित आदेश इस तथ्य की दृष्टि में विधि में दोषपूर्ण है कि नियम 43 पेंशन के बारे में और न कि उपदान के बारे में कहता है और स्वीकृत रूप से उपदान उपदान अधिनियम द्वारा शासित है और उपदान अधिनियम उपदान रोकने के बारे में नहीं कहता है। इसके अतिरिक्त, उपदान से वंचित नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह अधिनियम द्वारा आच्छादित एवं शासित है और इसका किसी योजना अथवा नियम पर अध्यारोही प्रभाव नहीं हो सकता है जहाँ केंद्रीय अधिनियम प्रयोज्य है और स्वीकृत रूप से उपदान के लिए केंद्रीय अधिनियम प्रयोज्य है क्योंकि उपदान का अर्थ है उसके द्वारा दी गयी लंबी सेवा के लिए कर्मचारी द्वारा अर्जित उपदान। याची के विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 23.8.1963 के परिपत्र और 1995 (1) PLJR 399 में प्रकाशित माननीय पटना उच्च न्यायालय के निर्णय को निर्दिष्ट किया है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि वर्ष 1963 का परिपत्र वैध है और उक्त मामले में आक्षेपित आदेश यह मानते हुए कि यह विचारण की निरंतरता है, उच्चतर न्यायालय के समक्ष अपील लंबित रहने के आधार पर अभिखंडित कर दिया गया था। याची के विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि याची का मामला दोहरे परिसंकट के अंतर्गत आता है क्योंकि एक ओर नियम 43B के अधीन किसी कार्यवाही के बिना प्रत्यर्थी ने 10% पेंशन रोक लिया है और साथ-साथ नियम 43 के निबंधनानुसार प्रत्यर्थी प्राधिकारी की निरंकुशता इस तथ्य से प्रकट है कि दूसरी ओर प्रत्यर्थीगण नियम 43 की ओट में याची का 10% पेंशन रोक रहे हैं जो विधि के सुनिश्चित सिद्धांत के विरुद्ध है।

6. अपना निवेदन पुख्ता करने के लिए याची के विद्वान अधिवक्ता ने **सुखदेव राम बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,** 2002 (2) JLJR 316, में निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

7. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने मेहनत से याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदनों का विरोध किया है कि याची को 24 चारा घोटाला मामलों में दोषसिद्ध किया गया था और दोषसिद्धि एवं दंडादेश के कारण विभाग ने दिनांक 31.12.2006 के आदेश के तहत झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 के अधीन याची को स्थायी रूप से पेंशन एवं उपदान की राशि का भुगतान नहीं करने का निर्णय किया। अत:, प्रत्यर्थीगण द्वारा पारित दिनांक 26.11.2010 के आक्षेपित आदेश में दुर्बलता बिल्कुल नहीं है जिसमें, यह विनिश्चित किया गया है कि याची उपदान का हकदार नहीं है और चूँकि पूर्वोक्त आदेश लोक सेवा आयोग की सहमति प्राप्त करने के बाद दोषसिद्धि एवं दंडादेश के आधार पर वर्ष 2006 में पहले ही पारित किया गया था, दिनांक 26.11.2010 के आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता अथवा अनियमितता नहीं पाया जा सकता है, अत: रिट याचिका गुण गुणरहित है।

8. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को विस्तारपूर्वक सुनने पर एवं दस्तावेजों के परिशीलन पर मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याची यहाँ नीचे कथित निम्नलिखित तथ्यों के कारण हस्तक्षेप का मामला बनाने में सक्षम नहीं हुआ है:–

(I) कि स्वीकृत रूप से चारा घोटाला में याची की अंतर्ग्रस्तता के कारण उसे पशुपालन एवं मत्स्य विभाग, बिहार के दिनांक 8.2.1996 के आदेश के तहत निलंबनाधीन किया गया था। निलंबन लंबित रहने

के दौरान याची दिनांक 30.6.2001 को अधिवर्षिता आयु प्राप्त करने पर सेवानिवृत्त हुआ। याची को 24 चारा घोटाला मामलों में अभियुक्त बनाया गया है जहाँ पूर्वोल्लिखित मामलों में सरकारी निधि की बड़ी राशि अंतर्ग्रस्त है और याची को 16 मामलों में दोषसिद्ध किया गया है और दंड अधिनिर्णीत किया गया है। दोषसिद्धि एवं दंड की दृष्टि में, विभाग ने दिनांक 31.12.2006 के आदेश के तहत झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 के अधीन याची को स्थायी रूप से पेंशन एवं उपदान की राशि का भुगतान नहीं करने का निर्णय किया और उक्त आदेश झारखंड लोक सेवा आयोग की अनुमति प्राप्त करने के बाद पारित किया गया है। याची द्वारा उक्त आदेश को चुनौती नहीं दी गयी है, अत: दिनांक 26.11.2010 के आदेश को चुनौती विधित: संपोषणीय नहीं है।

(II) कि झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 43 के अधीन प्रावधान के मुताबिक, यह परिकल्पित करता है कि ''भावी अच्छा आचरण पेंशन के प्रत्येक प्रदान की विवक्षित शर्त है। प्रादेशिक सरकार पेंशन अथवा इसके किसी भाग को रोकने अथवा निकालने का अधिकार स्वयं के लिए आरक्षित रखती है, यदि याची को गंभीर अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है अथवा वह गंभीर अवचार का दोषी है। इस नियम के अधीन पूर्ण पेंशन अथवा इसके किसी भाग को रोकने अथवा निकालने के प्रश्न पर प्रादेशिक सरकार का निर्णय अंतिम एवं निश्चयात्मक होगा।'' अनेक न्यायिक कार्यवाहियों में दोषसिद्धि एवं दंड/दंडादेश के कारण, भावी अच्छा आचरण पेंशन के प्रत्येक प्रदान का विवक्षित शर्त है। झारखंड पेंशन नियमावली के नियम 27 के अनुसार ''पेंशन उपदान सम्मिलित करता है।'' अत:, पूर्वोल्लिखित तथ्यों के आलोक में झारखंड सरकार ने दिनांक 26.11.2010 के आदेश मेमो सं॰ 2414 के तहत निर्णय किया कि सहायक निदेशक (योजना) के रूप में सेवानिवृत्त याची ''उपदान'' राशि पाने का हकदार नहीं है और सरकार द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में बिल्कुल भी दुर्बलता अथवा अवैधता नहीं है।

9. तथ्यों एवं कारणों के समेकित प्रभाव पर और पूर्वोक्त पैराग्राफों में किए गए ताथ्यिक प्राख्यानों के तार्किक परिणाम के रूप में दिनांक 26.11.2010 का दंड का आक्षेपित आदेश इस न्यायालय के किसी हस्तक्षेप को आवश्यक नहीं बनाता है।

10. तद्नुसार, रिट याचिका गुणागुण रहित होने के कारण खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o jRukdj Hkxjk] U;k;efrx.k

राजेश मोहन (एक्स स्टाफ सं॰ 3312)

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

L.P.A. No. 229 of 2009. Decided on 2nd November, 2015.

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947—धारा 25F—सेवा समाप्ति–प्रोबेशनर–अगर प्रोबेशनर ने अपनी प्रोबेशन अवधि के दौरान एक लगातार वर्ष में 240 दिन पूरा किया है और यदि उसका काम प्रबंधन द्वारा संतोषजनक नहीं पाया गया है और यदि उसकी सेवा समाप्त कर दी गयी है, ऐसी सेवा समाप्ति मात्र सेवा समाप्ति है और छंटनी के तुल्य कभी नहीं है और धारा 25F के अधीन प्रक्रिया का अनुसरण करने की आवश्यकता नहीं है–अपीलार्थी के विरुद्ध कोई जाँच करने की आवश्यकता नहीं है–अपील खारिज। (पैराएँ 4 से 6)

निर्णयज विधि.–(2014) 11 SCC 85—Distinguished; (2007)1 SCC 533; (2005) 5 SCC 569; (1997) 8 SCC 461; AIR 2002 SC 300; (1997) 11 SCC 521; AIR 1963 SC 1552—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. S.N. Das, For the Appellant; M/s K.B. Sinha, Vijay Gopal, Amitabh, For the Resp. No.2.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–यह लेटर्स पेटेन्ट अपील डब्ल्यू॰ पी॰ (एल॰) सं॰ 2911 वर्ष 2004 में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 16 अप्रिल, 2009 के निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा दाखिल याचिका निर्देश केस सं॰ 1 वर्ष 2002 में श्रम न्यायालय, देवघर द्वारा पारित दिनांक 4.12.2013 के अधिनिर्णय को अभिखंडित एवं अपास्त करके विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा अनुज्ञात की गयी थी।

2. अपीलार्थी के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपीलार्थी को आरंभ में दिनांक 22 मई, 1997 को छह माह के लिए स्टॉक लोडिंग सहायक के रूप में नियुक्त किया गया था और, तत्पश्चात, दिनांक 3 दिसंबर, 1997 के पत्र के तहत एक वर्ष के लिए बढ़ायी गयी थी। पुनः अपीलार्थी की सेवा दिनांक 30 नवंबर, 1998 के आदेश के तहत छह माह के लिए बढ़ायी गयी थी और, तत्पश्चात, दिनांक 31 मई, 1999 के प्रभाव से उसकी सेवा समाप्त कर दी गयी है। इस बीच, प्रत्यर्थी प्रबंधन द्वारा प्रदर्श 5 एवं 5/a के रूप में चिन्हित दो पत्रों को भी जारी किया गया था जिन्हें श्रम न्यायालय, देवघर के समक्ष इस अपीलार्थी के बारे में गोपनीय रिपोर्ट के रूप में रखा गया था जिसे संतोषजनक पाया गया था, अतः, सेवा में उसके नियमितिकरण की अनुशंसा की गयी थी। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मामले के इस पहलू का अधिमूल्य ने बिल्कुल नहीं किया गया है और, इसलिए, डब्ल्यू॰ पी॰ (एल॰) सं॰ 2911 वर्ष 2004 में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 16 अप्रिल, 2009 का निर्णय एवं आदेश अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है। अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि इस अपीलार्थी के काम के कारण प्रबंथन की असंतुष्टि के बारे में प्रत्यर्थी प्रबंधन द्वारा कोई पत्र कभी नहीं लिखा गया था। इसके विपरीत, प्रत्यर्थी प्रबंधन इस अपीलार्थी के काम से पूर्णतः संतुष्ट था और, इसलिए, संपुष्टिकरण के लिए अनुशंसा की गयी थी। दिनांक 31 मई, 1994 के सेवा समाप्ति आदेश (इस एल॰ पी॰ ए॰ के मेमो का परिशिष्ट 4) में भी प्रत्यर्थी प्रबंधन द्वारा उल्लेख नहीं किया गया है कि इस अपीलार्थी का काम संतोषजनक नहीं था। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मामले के इन पहलूओं का समूचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है, अतः, डब्ल्यू॰ पी॰ (एल॰) सं॰ 2911 वर्ष 2004 में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 16 अप्रिल, 2009 का निर्णय एवं आदेश अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है।

अपीलार्थी के अधिवक्ता ने **भुवनेश कुमार द्विवेदी बनाम हिंडाल्को इंडस्ट्रीज लिमिटेड, (2014)11 SCC 85,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है।

पूर्वोक्त निर्णय के आधार पर अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि इस अपीलार्थी की नियोजन संविदा का गैर नवीकरण औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2 (oo) के अधीन इस अपीलार्थी की सेवा की छँटनी के तुल्य है और, इसलिए, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25F के अधीन छँटनी की प्रक्रिया का अनुसरण करना होगा, किंतु, इसका अनुसरण एवं अनुपालन नहीं किया गया है। अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन भी किया गया है कि पिछली मजदूरी के साथ पुनर्बहाली का आदेश पारित करने में श्रम न्यायालय, देवघर द्वारा कोई गलती नहीं की गयी है। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है, अतः, आक्षेपित आदेश अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 2 के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि इस अपीलार्थी की सेवा समाप्ति मात्र सेवा समाप्ति है और दंडात्मक सेवा समाप्ति नहीं है। यह अपीलार्थी प्रोबेशनर था, उसकी प्रोबेशन अवधि बढ़ायी गयी थी और प्रोबेशन की इस बढ़ायी गयी अवधि के दौरान दिनांक 31 मई, 1999 के आदेश के तहत उसकी सेवा समाप्त की गयी थी और इस अपीलार्थी की सेवा समाप्त करने के लिए कोई कारण देने की बाध्यता प्रत्यर्थी सं॰ 1 की ओर से नहीं थी। यदि प्रबंधन द्वारा कोई कारण दिया जाएगा, तब इसे दंडात्मक सेवा समाप्ति में संपरिवर्तित किया जा सकता है, जिसके लिए जाँच आवश्यक हो सकता है, किंतु विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा सही प्रकार से अधिमूल्यन किया गया है कि प्रोबेशनर की सेवा की संविदा के दौरान, यदि उसकी सेवा बढ़ायी नहीं जाती है, ऐसी सेवा समाप्ति औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2 (oo) के मुताबिक छँटनी के तुल्य नहीं हो सकती है, क्योंकि यह औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2 (oo) (bb) के अधीन अलग कर निकाले गए अपवाद द्वारा आच्छादित है। इस अपीलार्थी का मामला इस अपवाद के अधीन आ रहा है, अत:, इस अपीलार्थी की सेवा समाप्ति छँटनी नहीं है। अत:, किसी भी प्रक्रिया का प्रश्न नहीं है जो औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25F के अधीन उद्भूत होता है। किंतु, प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा यह निवेदन किया गया है कि मात्र इसलिए कि अपीलार्थी ने सेवा का 240 दिन पूरा कर लिया है, इसका अर्थ यह नहीं है कि कर्मचारी को सेवा में बने रहने का अधिकार है। वस्तुत:, प्रोबेशन अवधि के दौरान प्रबंधन सदैव प्रोबेशनर की कार्यशैली की निगरानी कर रहा था और प्रबंधन को कोई कारण दिए बिना प्रोबेशनर की सेवा समाप्त करने की समस्त शक्ति, अधिकारिता एवं प्राधिकार है। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन किया गया है, अत: इस न्यायालय द्वारा इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को ग्रहण नहीं किया जा सकता है।

प्रत्यर्थी सं॰ 2 के अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि निर्देश केस सं॰ 1 वर्ष 2002 में श्रम न्यायालय, देवघर द्वारा पारित दिनांक 4.12.2003 का अधिनिर्णय अनुमानों एवं अटकलों पर पूर्णत: आधारित है। प्रदर्श 5 एवं 5/a जिन्हें श्रम न्यायालय, देवघर द्वारा विस्तारपूर्वक निर्दिष्ट किया गया है इस अपीलार्थी की मदद नहीं करते हैं क्योंकि यह आंतरिक संसूचना है। द्वितीयत: इस कारण से कि केवल संपुष्टिकरण की अनुशंसा की गयी थी, किंतु, तथ्य बना रहता है कि इस अपीलार्थी को संपुष्ट कभी नहीं किया गया था और समय-समय पर उसकी प्रोबेशन अवधि बढ़ायी गयी थी। श्रम न्यायालय, देवघर द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है। यदि इस प्रोबेशनर का काम संतोषजनक पाया गया होता, उसकी प्रोबेशन अवधि बढ़ाने की आवश्यकता नहीं थी और इसलिए, पत्र एवं प्रदर्श 5 एवं 5/a जिन्हें श्रम न्यायालय, देवघर द्वारा निर्दिष्ट किया गया है ऐसी कोई उपधारणा नहीं दे सकते हैं कि इस अपीलार्थी का काम संतोषजनक पाया गया था।

प्रत्यर्थी सं॰ 2 के अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर विश्वास किया है:–

- ***(1997)8 SCC 461 (Hkkjrh; thou chek fuxe ,o ,d vU; cuke jk?kon 'k"kkfxjh jko dyd.kh)***
- ***(2005)5 SCC 569 (itkc jkT; ,o vU; cuke l[kfoUnj flg)***
- ***(2007)1 SCC 533 (xxkèkj fiYyb cuke lkbel fyO)***
- ***(1963)0 AIR (SC) 1552 (juUn pn cuth cuke Hkkjr l?k)***
- ***(1997)11 SCC 521 (,LdkVl fyfeVM cuke ihBklhu vfèkdkjh ,o ,d vU;)***

● ***AIR 2002 SC 300 (e l l dY;k.kh 'kki bfM;k fyO cuke Je U;k;ky; l0 1 Xokfy;j ,o ,d vU;)***

पूर्वोक्त निर्णयों के आधार पर, प्रत्यर्थी सं॰ 2 के अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि यदि प्रोबेशनर की सेवा प्रोबेशन अवधि के दौरान समाप्त की जाती है, तब ऐसी सेवा समाप्ति छँटनी के तुल्य कभी नहीं है और इसलिए, यद्यपि उसने एक लगातार वर्ष में 240 से अधिक दिन के लिए काम किया है और चूँकि यह सेवा समाप्ति मात्र है, ऐसे प्रोबेशनर को पिछली मजदूरी के साथ पुनर्बहाल करने का आदेश नहीं दिया जा सकता है। डब्ल्यू॰ पी॰ (एल॰) सं॰ 2911 वर्ष 2004 खारिज करते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 16 अप्रिल, 2009 के निर्णय द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन किया गया है, अत:, यह लेटर्स पेटेन्ट अपील इस न्यायालय द्वारा ग्रहण नहीं की जा सकती है।

4. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर और मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों तथा अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को देखते हुए, हम मुख्यत: निम्नलिखित तथ्यों एवं कारणों से इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को ग्रहण करने का कारण नहीं देखते हैं:–

(i) इस अपीलार्थी को दिनांक 22 मई, 1997 को छह माह के लिए स्टॉक लोडिंग सहायक के रूप में नियुक्त किया गया था। तत्पश्चात, दिनांक 3 दिसंबर, 1997 के आदेश के तहत उसकी सेवा अवधि एक वर्ष के लिए बढ़ायी गयी थी और पुन: इसे दिनांक 30 नवंबर, 1998 के प्रभाव से छह माह की अतिरिक्त अवधि के लिए बढ़ाया गया था और, तत्पश्चात, दिनांक 31 मई, 1999 के आदेश (इस एल॰ पी॰ ए॰ के मेमो का परिशिष्ट 4) के तहत इस अपीलार्थी की सेवा समाप्त कर दी थी।

(ii) अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि यह मात्र सेवा समाप्ति का मामला है। यदि प्रोबेशनर का काम संतोषजनक नहीं पाया जाता है, प्रोबेशन की अवधि के दौरान प्रबंधन द्वारा उसकी सेवा समाप्त की जा सकती है यद्यपि प्रोबेशनर ने एक लगातार वर्ष में 240 दिन काम किया है।

(iii) अपीलार्थी के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि श्रम न्यायालय, देवघर के समक्ष दर्ज किए गए साक्ष्यों, विशेषत: प्रदर्श 5 एवं 5/a, को देखते हुए, इस अपीलार्थी के संपुष्टिकरण की अनुशंसा की गयी थी और, इसलिए, श्रम न्यायालय द्वारा उपधारित किया गया था कि अपीलार्थी का काम संतोषजनक था, अत:, अपीलार्थी की सेवा की समाप्ति छँटनी थी और इसके लिए औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25F के अधीन प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया गया था, इस दशा में, श्रम न्यायालय द्वारा पिछली मजदूरी के साथ पुनर्बहाली का आदेश निर्देश केस सं॰ 1 वर्ष 2002 में दिनांक 24 दिसंबर, 2003 के आदेश के तहत अधिनिर्णीत किया गया था।

यह प्रतिवाद इस न्यायालय द्वारीा मुख्यत: इस कारण से स्वीकार नहीं किया गया था कि प्रदर्श 5 एवं 5/a ऐसी कोई उपधारणा नहीं देता है कि इस अपीलार्थी का काम संतोषजनक पाया गया था। इसके विपरीत, प्रोबेशन अवधि का प्रत्येक विस्तारण उपधारणा देता है कि प्रोबेशनर का काम संतोषजनक नहीं था। जब प्रोबेशनर का काम संतोषजनक नहीं पाया गया था, कर्मचारी को अवसर देने की दृष्टि से उसकी प्रोबेशन अवधि बढ़ायी जाती है। प्रोबेशन अवधि ऐसी अवधि है जिसके दौरान प्रबंधन कर्मचारी के काम पर नजर रख रहा है। यदि कर्मचारी का काम संतोषजनक नहीं पाया जाता है, प्रोबेशन अवधि बढ़ायी जा सकती है अथवा उसकी सेवा समाप्त की जा सकती है।

(iv) यहाँ, वर्तमान मामले के तथ्यों में, आरंभ में इस अपीलार्थी को दिनांक 22 मई, 1997 को छह माह के लिए नियुक्त किया गया था। तत्पश्चात, उसकी सेवा प्रोबेशनर के रूप में 12 माह के लिए और

पुनः छह माह के लिए बढ़ायी गयी थी जैसा यहाँ उपर कथन किया गया है और, तत्पश्चात, दिनांक 31 मई, 1999 के आदेश के तहत उसकी सेवा समाप्त की गयी थी। उक्त परिभाषा में अलग कर निकाले गए अपवाद को देखते हुए, प्रोबेशनर की सेवा की समाप्ति छँटनी की परिभाषा, जैसा औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 2 (oo) के अधीन दिया गया है, अधिक विशेषतः, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 2 (oo) (bb) को देखते हुए द्वारा आच्छादित नहीं है। औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 के अधीन छँटनी की परिभाषा के त्वरित निर्देश के लिए धारा 2 (oo) का पठन निम्नलिखित है :–

*^^èkkjk 2(oo) ^^NVuh** l **fu;ktd }kjk fdlh dedkj dh lok dk ,lk i;olku vfHkçr g]** tk vu'kklu lcèkh dkjokb d :i e fn, x, nM l fHkUu fdlh Hkh dkj.k l fd;k x;k gk] fdUr bld vUrxr fuEufyf[kr ugh vkr%&*

(a) dedkj dh LoPN;k fuofÙk(vFkok

(b) vfèkokf"kdh vk; dk gk tku ij dedkj dh ml n'kk e fuofÙk ftle fu;ktd vkj lcfèkr dedkj d chp gb fdlh fu;ktu lfonk e ml fufeÙk dkb vucUèk vUrfo"V gk(vFkok

*(bb) **fu;ktd vkj lcfèkr dedkj d chp gb fu;ktu lfonk d leklr gk tku ij mldk uohdj.k u fd, tku ;k fu;ktu lfonk e ml fufeÙk vUrfo"V fdlh vucèk d vèkhu ,lh lfonk dk i;olku fd, tku d QyLo:i fdlh dedkj dh lok dk i;olku(;k***

*(c) bl vkèkkj ij dedkj dh lok dk i;olku fd mldk LokLF; cjkcj [kjkc jgk g(** ¼tkj Mkyk x;k½*

इस प्रकार, पूर्वोक्त परिभाषा को देखते हुए, इस अपीलार्थी की सेवा समाप्ति छँटनी बिल्कुल नहीं है, अन्यथा भी वह प्रोबेशनर था जैसा यहाँ ऊपर कथन किया गया है और प्रोबेशन अवधि के दौरान एक से अधिक विस्तारण दिया गया था जो यह इंगित करने के लिए पर्याप्त है कि इस अपीलार्थी का काम संतोषजनक नहीं था। इस एल॰ पी॰ ए॰ के मेमो के परिशिष्ट 4 को देखते हुए अपीलार्थी की सेवा समाप्ति दंडात्मक प्रकृति की नहीं थी, बल्कि सेवा समाप्ति मात्र थी, अतः जाँच करने की आवश्यकता नहीं है।

(v) श्रम न्यायालय, देवघर ने भी इस तथ्य को निर्दिष्ट किया है कि इस अपीलार्थी ने एक वर्ष में 240 दिनों से अधिक काम किया है और, इसलिए, इस अपीलार्थी की सेवा समाप्ति छँटनी के तुल्य है। यह इस अपीलार्थी के दिमाग में गलत धारणा है। अगर प्रोबेशन अवधि के दौरान लगातार एक वर्ष में प्रोबेशनर ने 240 दिन पूरा किया है और यदि प्रबंधन द्वारा उसका काम संतोषजनक नहीं पाया जाता है और यदि उसकी सेवा समाप्त की गयी है, ऐसी सेवा समाप्ति मात्र सेवा समाप्ति है और छँटनी के तुल्य नहीं है और, इसलिए, औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 25F के अधीन प्रक्रिया का अनुसरण करने की आवश्यकता नहीं है और इस अपीलार्थी के विरुद्ध जाँच करने की आवश्यकता नहीं है। प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल याचिका अनुज्ञात करते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन किया गया है और हम डब्ल्यू॰ पी॰ (एल॰) सं॰ 2911 वर्ष 2004 निपटाते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 16 अप्रिल, 2009 के निर्णय में लिए गए दृष्टिकोण से भिन्न दृष्टिकोण लेने का कारण नहीं देखते हैं।

(vi) **गंगाधर पिल्लई बनाम साइमंस लि॰, (2007)1 SCC 533** में पैराग्राफ सं॰ 28, 29 एवं 30 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"28. **fofèk ;g ugh g fd ,d o"k e fujrj lok dk 240 fnu ijk dju ij lcfèkr depkjh viuh lok d fu;fefrdj.k vkj@vFkok LFkk;h ntk dk gdnkj cu tkrk gA** ,d o"k e 240 fnuk dh èkkj.kk vk|kfxd fofèk e ,d fuf'pr ç;ktu l ij% LFkkfir dh x;h FkhA vk|kfxd fookn vfèkfu;e d vèkhu] 240 fnuk dh èkkj.kk lok l mldh NVuh fd, tku d igy vk|kfxd fookn vfèkfu;e] 1947 dh èkkjk 25F e fofufn"V rjhd l lxf.kr fd, tku oky evkotk dk Hkxrku dju dk lkfofèkd nkf;Ro fu;kDrk ij Mkyu d fy, ij%LFkkfir dh x;h Fkh vkj u fd fdlh vU; ç;ktu lA ;fn mDr çkoèkku dk mYy?ku fd;k tkrk g] depkjh dh lok lekfIr voèk ik;h tk ldrh g] fdr doy ml dkj.k] mldh lok dk fu;fer dju dk fun'k ugh fn;k tk ldrk gA dedkj dk iucgky dju d fun'k dk vFk gkxk fd og mlh ntk dk okil ikrk gA

29. ekè;fed f'k{kk ifj"kn ;0 ih0 cuke vfuy dekj feJk e bl U;k;ky; u Li"Vr% vfHkfuèkkfjr fd;k g% (SCC p 124 Para 5)

^^dr0; Hkkj rnFk Fkk ftlu çR;kf'kr :i l Lo; dk lekIr dj fy;k FkkA mud fy, 240 fnuk d dke dh i.krk dh ?kVukvk d fufgrkFk dk è;ku e j[kr g, vk|kfxd fookn vfèkfu;e] 1947 d çkoèkkuk dh rY;#irk ij dedkjk dk ntk ifjdfYir djuk ef'dy gA vk|kfxd fookn vfèkfu;e] 1947 d vèkhu ml vofèk d fy, dke l çokfgr fofèkd ifj.kke mu ifj.kkek l i.kr% fHkUu g ftUg foo{kk }kjk rY;#irk d :i oreku fLFkfr d çfr vH;kjkfir fd;k tkrk gA **ml fofèk d vèkhu 240 fnuk d dke dh i.krk dk fufgrkFk fu;fefrdj.k dk vfèkdkj** ugh gA ;g ek= lok lekfIr d le; ij fu;kDrk ij dfri; ckè;rk, vfèkjkfir djrh gA ;gk ml rY;#irk dk foLrkfjr vFkok c<k, x, :i e vk;kr vkj ykx djuk lefpr ugh gA**

30. ,e0 ih0 gkmflx ckM cuke eukt JhokLro e bl U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k% (SCC p. 709 Para 17)

"17. **vc ;g lfuf'pr g fd doy blfy, fd dkbZ 0;fDr 240 fnuk l vfèkd le; rd dk;jr jgk Fkk] og lok e fu;fer fd, tku dk dkbZ fofèkd vfèkdkj ugh ikrk gA** (n[k% ekè;fed f'k{kk ifj"kn ;0 ih0 cuke vfuy dekj feJk(dk;ikyd vfHk;Urk] tM0 ih0 bthfu;fjx fMfotu cuke fnxEcj jko] èkkeij lxj feYl fy0 cuke Hkkyk flg] çcèkd] fjto cd vkQ bfM;k cuke ,l0 ef.k ,o uhjt voLFkh** (tkj fn;k x;k)

(vii) **पंजाब राज्य एवं अन्य बनाम सुखविन्दर सिंह, (2005)5 SCC 569,** में पैराग्राफ 8, 15 एवं 20 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है;–

"8. **çkc'ku vofèk d nkjku vFkok bldh lekfIr ij çkc'kuj dh lok lekfIr lkekU;r% ,o Lo;a e nM ugh gkxk D;kfd bl çdkj fu;Dr lod dk çkboV fu;kDrk }kjk çkc'ku ij fu;kftr lod dh ryuk e ,l in ij cu jgu dk vfèkd vfèkdkj ugh gA** vr%] çkc'ku vofèk ekfyd dk **çkc'kuj d dke dk fudV :i l n[ku dk** vkj ml le; rd tc çkc'ku vofèk dk volku gkrk g viuk er cuku dk fd D;k lod dk fu;fer lok e vkefyr djd j[k fy;k tk, vFkok mldh lok vfHkeDr dj nh tk,] cgeY; volj çnku djrh gA **çkc'ku vofèk çR;d**

in vFkok çR;d ekfyd d fy, vyx&vyx gk ldrk g vkj çkc'ku vofèk fofgr dju dh ckè;rk ekfyd ij ugh gA mldk çkc'ku ij j[k fcuk fdlh 0;fDr dk fu;kftr dju dh NV fu;kDrk dk lno gA mldk çn'ku n[ku d fy, depkjh dk çkc'ku ij j[ku dh 'kfDr vkj vofèk ftld nkjku çn'ku n[kk tkuk g fu;r djuk fu;kDrk dk fo'k"kkfèkdkj gA *(n[kk vftr flg cuke itkc jkT;)A*

15. Ñ".k nojk;k f'k{kk U;kl cuke ,y0 ,0 ckykÑ".kk e ***;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd ikc'kuj ijh{kkèkhu g vkj ;fn mldh lok lrk"ktud ugh ik;h tkrh g] fu;kDrk dk fu;fDr i= d fucèkuku lkj lok lekIr dju dk vfèkdkj gA ;g rF; ek= fd pukrh d çR;Ùkj e fu;kDrk dFku djrk g fd lok lrk"ktud ugh Fkh dk vFk Loeo ;g ugh gkxk fd çkc'kuj dh lok nM d :i e lekIr dh x;h FkhA***

*20. oreku ekey e] u rk dkb vkipkfjd foHkkxh; tkp vFkok dkb vkjfHkd rF; irk dju okyh tkp dh x;h Fkh vkj mUekpu dk ljy vkn'k ikfjr fd;k x;k FkkA mPp U;k;ky; u fyf[kr dFku e fd, x, c;ku d vkèkkj ij egy [kMk fd;k g fd çR;Fkh viuh lf{kIr lok vofèk d nkjku vknro'k vuifLFkr jguokyk 0;fDr Fkk vkj mll fu"df"kr fd;k g fd dÙk0; l mldh vuifLFkfr u ojh; vkj{kh vèkh{kd ij vfèkeku Mkyk Fkk D;kfd dr0; l vuifLFkfr vopkj gA mPp U;k;ky; u vkx vfHkfuèkkfjr fd;k g fd lok l çR;Fkh d mUekpu d vkn'k ,o dr0; l mldh vuifLFkfr d chp çR;{k lcèk g vkj] blfy,] lok l mldk mUekfpr dju okyk vkn'k fu;ekoyh d fu;e 16.24 d vèkhu fu;fer tkp dh vi{kk dju oky nMkRed çÑfr d :i e n[kk tk,xkA vr% gekjk er g fd mPp U;k;ky; u ;g fu"d"kk fudkyu e ijh rjg xyrh fd;k g fd fnukd 16.3.1990 dk mUekpu vkn'k oLrr% vopkj ij vkèkkfjr Fkk vkj] blfy,] nMkRed çÑfr dk Fkk ftld igy fu;fer foHkkxh; tkp dh tkuh pkfg, FkhA ble dkb lng ugh gk ldrk g fd çR;Fkh yxHkx vkB ekg igy fu;Dr fd, tku ij çkc'ku ij FkkA tlk vftr flg cuke itkc jkT; e lçf{kr fd;k x;k g fd çkc'ku vofèk fu;kDrk dk lod dk dke] ;kX; rk] n{krk] bekunkjh ,o {kerk n[ku dk volj ,o le; nrh g vkj ;fn ml in d fy, mi;Dr ugh ik;k tkrk g] ekfyd fofgr vofèk ftl çkc'ku vofèk dh 'kyh nh x;h g d nkjku vFkok bldh lekfIr ij dkb dkj.k fn, fcuk mldh lok vfHkeDr dju dk vfèkdkj vkjf{kr j[krk gA ek= vkjfHkd tkp fd;k tkuk tgk depkjh l Li"Vhdj.k ekxk x;k g ,d vU;Fkk vFkok lok lekfIr d funk"k vkn'k dk nMkRed çÑfr dk ugh cuk,xkA vr%] mPp U;k;ky; ;g vfHkfuèkkfjr dju e Li"Vr% xyr Fkk fd dr0; l çR;Fkh dh vuifLFkfr vkn'k dk vkèkkj Fkh tk tkp vko';d cukrk Fkk tlk fu;ekoyh d fu;e 16.24 (ix) d vèkhu ifjdfYir fd;k x;k gA** (tkj fn;k x;k)*

(viii) **भारतीय जीवन बीमा निगम एवं एक अन्य बनाम राघवेन्द्र शेषागिरी राव कुलकर्णी, (1997)8 SCC 461,** में पैराग्राफ 5, 6 एवं 12 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"5. çR;Fkh dk tkjh fu;fDr i= d [kM dk iBu fuEufyf[kr g%

^^vki çkc'kuj d :i e viuk dr0; xg.k dju dh frfFk l ckjg ekg dh vofèk d fy, vkjHk e çkc'ku ij jgx] fdr fuxe viu ,dek= Lo food e vkidh çkc'ku vofèk c<k ldrk g ijUr ;g fd foLrkfjr vofèk lfgr dy çkc'ku vofèk çkc'ku fu;fDr d vkjHk l fxuh x;h 24 ekg d ij ugh gkxhA çkc'ku vofèk d nkjku (tk foLrkfjr çkc'ku vofèk] ;fn ç;kT; gk] lfEefyr djrh g) vki fdlh ukfVl d fcuk vkj dkb dkj.k fn, fcuk fuxe dh lok l mUekfpr fd, tku d nk;h gkxA**

;g [kM Li"Vr% vucfèkr djrk g fd çR;Fkh dk dkb ukfVl fn, fcuk vFkok dkb dkj.k fn, fcuk çkc'ku vofèk vFkok çkc'ku dh foLrkfjr vofèk d nkjku fdlh le; ij lok l mUekfpr fd;k tk ldrk FkkA

6. çkc'ku vofèk ijh{kk dh vofèk g ftld nkjku depkjh dk dke vkj vkpj.k loh{k.k d vèkhu gkrk gA **;fn bl vofèk d nkjku mld dke ,o vkpj.k d eY;kdu ij ;g ik;k tkrk g fd og in d fy, mi;Dr ugh g] mldh lok lekIr dju dh NV fu;kDrk dk gkxhA** mldh lok LFkk;h depkjh dh lok d lErY; ugh dh tk ldrh g tk viu ntk d dkj.k lok e j[k tku dk gdnkj g vkj fdlh ukfVl vFkok rd lxr dkj.k d fcuk mldh lok vpkud l lekIr ugh dh tk ldrh gA ;g bl fl)kr ij vkèkkfjr g fd ykd lok e LFkk;h in ij vfèk"Bk;h fu;fDr in dk vfèk"Bk;h vfèkdkj çnÙk djrh g vkj ml in ij fu;Dr 0;fDr in ij fy;u èkkj.k dju dk gdnkj cu tkrk gA og vfèkof"krk vk; çkIr dju rd vFkok c[kkLr fd, tku vFkok fu;ek d vu#i vu'kklfud dk;okgh ftle ml luokb dk fu"i{k ,o ;fDr;Dr volj fn;k x;k g d ckn vopkj vkfn d fy, lok l gVk, tku rd in ij cu jgu dk vfèkdkj ikrk gA og vfuok; lok fuofÙk ij in Hkh xok ldrk gA

12. **çkc'kuj dh lok vfHkeDr dju d igy fu;fer foHkkxh; tkp dju dh vko';drk dk voyc çkc'kuj d ekey e ugh fy;k tk ldrk g fo'k"krk tc mldh lok ,d funk"k vkn'k }kjk lekIr dh x;h g tk ml ij dkb dyd ugh yxkrk gA** fdr bl lkekU; fu;e d :i e vfèkdfFkr ugh fd;k tk ldrk g fd fdlh Hkh ljr e tkp ugh dh tk ldrh gA ;fn lok lekfIr nMkRed çÑfr dh g vkj vopkj d vkèkkj ij dh x;h g] vuPNn 311 (2) vkÑ"V gkxk vkj ml fLFkfr e] ljdkjh lok d ekey e] fu;fer foHkkxh; tkp djkuk fu;kDrk ij ckè;dkjh gkxkA fdlh vU; ekey e Hkh] fo'k"krk lkfofèkd fuxek vFkok ljdkjh vfHkdj.kk l lcfèkr ekey e] lok lekfIr tk nMkRed çÑfr dk g rc rd ugh fd;k tk ldrk g tc rd ml 0;fDr ftldh lok] çkc'ku vofèk vFkok foLrkfjr vofèk d nkjku Hkh lekIr fd;k tkuk bfllr fd;k x;k g dk luokb dk volj ugh fn;k tkrk gA (n[k % ij"kkUke yky èkhxjk cuke Hkkjr l?k ftle ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd **çkc'ku ij LFkk;h in ij fu;fDr dk vFk g fd lod dk ijh{k.k ij j[kk x;k gA** ,lh fu;fDr lekIr gk tkrh g ;fn çkc'ku d nkjku vFkok bldh lekfIr ij bl çdkj fu;Dr 0;fDr vui;Dr ik;k tkrk g vkj ukfVl }kjk mldh lok lekIr dh tkrh gA çkc'ku ij vFkok LFkkukiUu vkèkkj ij fu;fDr bl foof{kr 'kr d lkFk lØked pfj= dh g fd ,lh fu;fDr fdlh Hkh le; ij lekIr fd, tku dk nk;h gA (;g Hkh n[k % 'ke'kj flg cuke itkc jkT;)" (tkj fn;k x;k)

(ix) **मेसर्स कल्याणी शार्प इंडिया लि॰ बनाम श्रम न्यायालय सं॰ 1, ग्वालियर एवं एक अन्य, AIR 2002 SC 300,** में पैराग्राफ सं॰ 5 एवं 6 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"5. tgk rd çR;Fkh dh vkj l fd, x, çFke çfrokn dk lcèk g] ge dFku dj ldr g fd rd mu nLrkotk l lkeu vkrk g ftl ij çR;Fkh u viu fu;ktu vkj viuh lok lekflr d ckj e n'kku d fy, Je U;k;ky; d le{k fo'okl fd;k gA rF;k d u, vUo"k.k dh vko';drk ugh gA ;g ekey e fofèk dh ljy ç;kT;rk dk ekeyk gA vr% vkjfHkd vkifÙk vLohdkj dh tkrh gA

6. fu;ktu vkn'k Lo; Li"Vr% mu fucèkuk dk of.kr djrk g tk rRi'pkr ;g Li"V cukrk g fd mldk çf'k{k.k çnku dju dh lfoèkk dkb Hkh dkj.k fn, fcuk fdlh le; ij lekIr dh tk ldrh Fkh vkj mldh lok mld çf'k{k.k dh lrk"ktud i.krk ij gh fu;fer dh tk ldrh FkhA ;fn bu [kMk dk lgiBu fd;k tkrk g fd og çklfxd le; d nkjku çkc'ku d vèkhu Fkk vkj ;fn mldh lok lrk"ktud ugh g] bl lekIr fd;k tk ldrk FkkA ;g Li"V g fd çR;Fkh dk çf'k{k lok VfDuf'k;u d :i e fu;Dr fd;k x;k Fkk vkj ml ,d fu;r vofèk rd lrk"ktud çf'k{k.k l xtjuk Fkk ftl vofèk d nkjku lfoèkk fdlh le; ij okil yh tk ldrh Fkh vkj doy mld çf'k{k.k ijk gku ij ml fu;fer fd;k tk,xkA ***bl çdkj çkc'ku vofèk d volku d igy çR;Fkh dh lok lekIr dh x;h FkhA ,l ekey e tlk çR;Fkh }kjk nkok fd;k x;k g lok lekflr d igy ukfVl tkjh dju dk ç'u gh mnHkr ugh gkrk gA*** *,LdkV dk ekeyk (Åij) oreku ekey d ln'k gA mDr fu.k; dk vulj.k djr g, vkj mle dfFkr dkj.kk l bu vihyk dk vuKkr fd;k tkrk gA Je U;k;ky; }kjk ikfjr vfèkfu.k; dk vfHki"V djr g, mPp U;k;ky; }kjk ikfjr vkn'k vikLr fd;k tkrk g vkj çR;Fkh }kjk fd;k x;k nkok [kkfjt fd;k tkrk gA** (tkj fn;k x;k)*

(x) **एस्कार्ट्स लिमिटेड बनाम पीठासीन अधिकारी एवं एक अन्य, (1997)11 SCC 521,** में पैराग्राफ सं॰ 4 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नवत् अभिनिर्धारित किया है:–

"4. ge bl ç'u ij fopkj djuk vko';d ugh le>r g fd D;k dedkj u ,d o"k e 240 fnuk d fy, dke fd;k Fkk vkj D;k jfookj vFkok vU; vodk'k fnuk dh x.kuk dh tkuh pkfg,] tlk Je U;k;ky; }kjk fd;k x;k g D;kfd gekj er e] Jh 'kVh mud }kjk vkxfgr vU; vkèkkj ij Hkh lQy gku d gdnkj g fd ***dedkj dh lok lekflr vfèkfu;e dh èkkjk 2(oo) e [kM (bb) dh nf"V e NVuh xfBr ugh djrh gA [kM (bb) vfHk0;fDr ^^NVuh** dh ifjfèk l vioftr djrk g tlk fd èkkjk 2(oo) d e[; Hkkx e ifjHkkf"kr fd;k x;k g** fu;kDrk ,o lc) dedkj d chp fu;ktu dh lfonk d lekiu ij bldk uohdj.k ugh fd; tku ;k mle bl fufeÙk vrfo"V vu) rk d vèkhu ,lh lfonk d lekiu d ifj.kkeLo:i dedkj dh lokvk dh lekflrA*** *,e0 o.kxkiky cuke fMfotuy eutj] ,y0 vkb0 lh0 e bl U;k;ky; }kjk mDr çkoèkku ij fopkj fd;k x;k gA ml ekey e vihykFkh dk fnukd 23.5.1984 l fnukd 22.5.1985 rd ,d o"k dh vofèk d fy, çkc'ku ij fu;Dr fd;k x;k Fkk vkj çkc'ku dh mDr vofèk fnukd 23.5.1985 l fnukd 22.5.1986 rd ,d o"k dh vfrfjDr vofèk d fy, c<k;h x;h FkhA ikc'ku dh mDr vofèk dh lekflr d igy] 9.5.1986 dk mldh lok; lekIr gk x;h FkhA* ***;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd pfd lok lekflr***

lfonk d fucèkuk d vu#i Fkh] ;|fi çkc'ku vofèk d volku d igy] ;g vfèkfu;e dh èkkjk 2 (oo) (bb) dh ifjfèk d vrxr vkrh Fkh vkj NVuh xfBr ugh djrh FkhA ;gk Hkh dedkj dh lok fnukd 13.2.1987 dk fnukd 9.1.1987 d fu;fDr i= e vrfo"V fu;ktu lfonk d fucèkuk ftlu vihykFkh dk dkb Hkh dkj.k fn, fcuk fdlh pj.k ij dedkj dh lok leklr dju e l{ke cuk;k g d erkfcd leklr dh x;h FkhA ***pfd dedkj dh lok fu;ktu lfonk d fucèkuk d erkfcd leklr dh x;h Fkh] ;g vfèkfu;e dh èkkjk 2 (oo) d vèkhu NVuh d rY; ugh g vkj Je U;k;ky; ;g vfHkfuèkkfjr dju e xyr Fkk fd blu NVuh xfBr fd;k Fkk vkj vfèkfu;e dh èkkjkvk 25F ,o 25G }kjk ljf{kr FkkA*** *(tkj fn;k x;k)*

(xi) **रनेन्द्र चंद्र बनर्जी बनाम भारत संघ, AIR (1963)SC 1552,** में पैरा 5 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:–

"5. fofu'p;dj.k d fy, vk;k çFke ç'u ;g g fd D;k vihykFkh vuPNn 311 (2) d lj{k.k dk gdnkj g D;kfd ;fn og ml lj{k.k dk gdnkj g] ;g fookfnr ugh g fd mldh lok leklr dju d igy bl ekey e ml çkoèkku dk vuikyu ugh fd;k x;k FkkA vc ;g lfuf'pr g fd lfoèkku d vuPNn 311 dk lj{k.k vLFkk;h ljdkjh lodk ij Hkh ykx gkrk g tgk c[kkLrxh] gVk;k tkuk vFkok J.kh e ?kVk;k tkuk nM d :i e vfèkjkfir fd, tku d fy, bfllr fd;k x;k gA fdr ;g leku :i l lfuf'pr g fd tgk vLFkk;h ljdkjh lod dh lok nM d :i e leklr ugh dh x;h g] vuPNn 311 ykx ugh gkxk vkj ,l lod dh lok lfonk d fucèkuk d vèkhu vFkok lkekU; r% ,d ekg dk ukfVl ndj leklr dh tk ldrh gA [n[k% ij"kkÙke yky èkhxjk cuke Hkkjr l?k (1)] vkx] ;g leku :i l lfuf'pr g fd ljdkjh lod tk çkc'ku ij g mUekfpr fd;k tk ldrk g vkj ,lk mUekpu vuPNn 311 (2) d vFk d vrxr c[kkLrxh vFkok gVk, tku d rY; ugh gkxk vkj ml vuPNn dk lj{k.k vkÑ"V ugh djxk tgk çkc'kuj dh lok fu;ek d vu#i leklr dh x;h g vkj nM d :i e ugh gA ***çkc'kuj dk viu }kjk èkkj.k fd, x, in ij cu jgu dk vfèkdkj ugh g vkj viuh fu;fDr d fucèkuk d vèkhu og*** *,l ekeyk dk 'kkflr dju oky fu;ek d* ***vè;èkhu viu çkc'ku vofèk d nkjku fdlh le; ij mUekfpr fd, tku dk nk;h gA*** *[n[k % mMhlk jkT; cuke jke ukjk;.k nkl (1)] oreku ekey e vihykFkh fu%lng çkc'kuj FkkA ble Hkh lng ugh g fd mldh lok dh lekfIr nM d :i e ugh Fkh vkj blfy, vuPNn 311 d vFk d vrxr c[kkLrxh vFkok gVk, tku d rY; ugh gk ldrh gA* ***çkc'kuj d :i e og ml lcèk e çoÙk fu;ek d vè;èkhu çkc'ku vofèk d nkjku mUekfpr fd, tku dk nk;h gkxkA*** *vr% mPp U;k;ky; ;g vfHkfuèkkfjr dju e lgh Fkk fd vihykFkh lfoèkku d vuPNn 311 d lj{k.k dk gdnkj ugh FkkA** (tkj fn;k x;k)*

पूर्वोक्त निर्णयों की दृष्टि में, भले ही प्रोबेशनर ने 240 दिन पूरा किया है, किंतु यदि प्रबंधन प्रोबेशनर के काम से संतुष्ट नहीं है और यदि प्रोबेशनर की सेवा प्रोबेशन अवधि के दौरान समाप्त की गयी है, श्रम न्यायालय अथवा औद्योगिक न्यायालय को पिछली मजदूरी के साथ पुनर्बहाली का आदेश पारित नहीं करना

चाहिए था। प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा दाखिल रिट याचिका अनुज्ञात करते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मामले के इस पहलू का समुचित रूप से अधिमूल्यन किया गया है।

(xii) अपीलार्थी के अधिवक्ता ने **भुवनेश कुमार द्विवेदी बनाम हिंडालको इंडस्ट्रीज लिमिटेड, (2014)11 SCC 85,** मामले में प्रकाशित निर्णयों पर विश्वास किया है।

वर्तमान मामले के तथ्यों को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि:–

(a) इस अपीलार्थी को दिनांक 22 मई, 1997 को छह माह के लिए स्टॉक लोडिंग सहायक के रूप में नियुक्त किया गया था। तत्पश्चात, पुन: उसकी सेवा की संविदा बारह माह के लिए बढ़ायी गयी थी और पुन: इसे छह माह के लिए बढ़ाया गया था। प्रोबेशन अवधि विशेषत: इसके विस्तारण को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी का काम संतोषजनक नहीं था।

(b) इस अपीलार्थी की सेवाएँ दिनांक 31 मई, 1999 के प्रभाव से समाप्त की गयी थी। इस प्रकार, परिशिष्ट 4 जो सेवा समाप्ति आदेश है को देखते हुए इस अपीलार्थी के विरुद्ध अवचार अभिकथित नहीं किया गया है। यह प्रोबेशन अवधि के दौरान सेवा समाप्ति मात्र है।

ये दो तथ्य वर्तमान मामले को उन मामलों के तथ्यों से भिन्न बनाते हैं जिन पर अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा विश्वास किया गया है और, इसलिए, **(2014)11 SCC 85** में प्रकाशित माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय इस अपीलार्थी का मददगार नहीं है।

5. पूर्वोक्त तथ्यों, कारणों एवं न्यायिक उद्घोषणाओं के समेकित प्रभाव के कारण, इस लेटर्स पेटेन्ट अपील में गुणागण नहीं है क्योंकि डब्ल्यू॰ पी॰ (एल॰) सं॰ 2911 वर्ष 2004 अनुज्ञात करते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 16 अप्रिल, 2009 के निर्णय में कोई त्रुटि नहीं है और हम विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से भिन्न दृष्टिकोण लेने का कोई कारण नहीं देखते हैं।

6. इस निर्णय की प्रति इस न्यायालय के रजिस्ट्रार जनरल द्वारा:

(a) झारखंड राज्य के समस्त श्रम न्यायालयों,

(b) झारखंड राज्य के समस्त औद्योगिक अधिकरणों एवं

(c) निदेशक, न्यायिक एकेडमी, राँची को भेजी जाएगी।

7. इस लेटर्स पेटेन्ट अपील में सार नहीं है, अत: इसे एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; jfo ukFk oek] U;k;efr

पिंकी देवी एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P(Cr.) No. 343 of 2015. Decided on 1st September, 2015.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 73, 82 एवं 83—गिरफ्तारी वारन्ट, संपत्ति की कुर्की की उद्घोषणा एवं आदेशिका जारी किया जाना–वैधता–संबंधित न्यायालय ने सर्वोच्च न्यायालय की आज्ञाओं का अनुसरण किए बिना आई॰ ओ॰ द्वारा दाखिल तलब पर याचीगण के विरुद्ध

गैर-जमानती गिरफ्तारी वारंट जारी किया और अगली तिथि पर ही धारा 83 के अधीन उद्घोषणा एवं आदेशिका जारी की गयी थी–यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं है कि याचीगण गिरफ्तारी से बच रहे हैं और फरार घोषित किए गए हैं–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया। (पैराएँ 6 से 11)

निर्णयज विधि.–2008 (1) JLJR 82 (SC); (2011) 4 JLJR 385 (SC)—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Mahesh Tiwari & Ajit Kumar Dubey, For the Petitioners; Mr. Pran Pranay, For the State.

आदेश

तीनों याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब लेकर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, पलामू द्वारा पारित दिनांक 29.11.2013, 3.12.2013 एवं 27.1.2014 के आदेशों की वैधता को चुनौती दिया है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/120B/34 के अधीन संस्थित तरहासी पी॰ एस॰ केस सं॰ 30 वर्ष 2013 से उद्भूत होने वाले जी॰ आर॰ केस सं॰ 1057 वर्ष 2013 के संबंध में याचीगण के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'संहिता') की धाराओं 73, 82 एवं 83 के अधीन गिरफ्तारी वारंट, उद्घोषणा एवं संपत्ति की कुर्की की आदेशिका जारी की गयी है।

2. इस रिट आवेदन में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक के समुचित न्यायनिर्णय के लिए अभियोजन मामले के आवश्यक तथ्य संक्षेप में ये हैं कि सूचक की प्रेरणा पर पूर्वोक्त मामला इस अभिकथन के साथ संस्थित किया गया था कि वर्ष 2010 में हिंदू रीति-रिवाज के मुताबिक उसके भाई का विवाह याची सं॰ 1 के साथ हुआ था और विवाह के बाद से उसके भाई को उसकी पत्नी, सास-ससुर एवं सालों द्वारा यातना के अध्यधीन किया जाता था और दिनांक 2.6.2013 को सूचक के भाई का साला आया था और अपने परिवार में विवाह का बहाना बनाकर उसके भाई को ले गए किंतु जब विवाह के बाद भी, सूचक अपने भाई से संपर्क नहीं कर सका था, उसने उसको खोजने का प्रयास किया और दिनांक 9.6.2013 को उसे जानकारी हुई कि उसके भाई की हत्या कर दी गयी है।

3. रिट आवेदन के साथ परिशिष्ट-2 के रूप में संलग्न अवर न्यायालय के संपूर्ण ऑर्डरशीट की प्रमाणित प्रति से यह प्रतीत होता है कि मामले की प्राथमिकी दिनांक 11.6.2013 को मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, पलामू, डालटेनगंज के समक्ष प्रस्तुत की गयी थी और फाइनल फॉर्म जमा करने की अगली तिथि दिनांक 11.9.2013 नियत की गयी थी। जब दिनांक 11.9.2013 को फाइनल फॉर्म दाखिल नहीं किया गया था, फाइनल फॉर्म के दाखिले के लिए अगली तिथि दिनांक 24.2.2014 नियत की गयी थी किंतु उस तिथि के पहले दिनांक 29.11.2013 को अन्वेषण अधिकारी ने याचीगण के विरुद्ध गिरफ्तारी वारन्ट जारी करने के लिए न्यायालय में तलब दाखिल किया और इसे जारी किया गया था। अगली तिथि पर ही अर्थात् दिनांक 3.12.2013 को वारंट जारी किए जाने के लगभग तीन दिन बाद अन्वेषण अधिकारी ने न्यायालय को वारन्ट वापस कर दिया और संहिता की धारा 82 के अधीन उद्घोषणा जारी करने के लिए प्रार्थना किया और इसे जारी किया गया था। पुनः अगली तिथि पर अर्थात् दिनांक 27.1.2014 को आई॰ ओ॰ ने संहिता की धारा 83 के अधीन आदेशिका जारी करने की प्रार्थना के साथ संहिता की धारा 82 के अधीन न्यायालय द्वारा जारी उद्घोषणा की निष्पादन रिपोर्ट के साथ तलब दाखिल किया और अवर न्यायालय द्वारा इसे जारी किया गया था।

4. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री महेश तिवारी ने गंभीर रूप से प्रतिवाद किया कि अवर न्यायालय ने अपने न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना यांत्रिक रूप से गिरफ्तारी वारन्ट

जारी किया और धाराओं 82 एवं 83 की आज्ञाओं का अनुसरण किए बिना उद्घोषणा एवं कुर्की की आदेशिका जारी किया। यह निवेदन भी किया गया था कि रिट आवेदन के साथ संलग्न ऑर्डरशीट के परिशीलन मात्र पर यह प्रतीत होगा कि गिरफ्तारी वारन्ट जारी करने का आदेश एवं संहिता की धाराओं 82 एवं 83 में पारित दो पश्चातवर्ती आदेश गैर-सकारण आदेश हैं और **रघुवंश दीवान चंद भासिन बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं एक अन्य,** (2011)4 JLJR 385 (SC) **[: 2012 (1) JLJ 156 (SC)]** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दी गयी आज्ञाओं के आलोक में अभिखंडित किए जाने के दायी हैं।

5. पूर्वोक्त निवेदनों के विरुद्ध, राज्य का प्रतिनिधित्व कर रहे विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि केवल अन्वेषण अधिकारी द्वारा तलब दाखिल किये जाने के बाद, क्योंकि याचीगण अपनी गिरफ्तारी से बच रहे थे, गिरफ्तारी वारन्ट जारी किया गया था और निष्पादन रिपोर्ट के साथ अन्वेषण अधिकारी द्वारा दाखिल तलब पर पश्चातवर्ती आदेश भी जारी किए गए थे। विद्वान स्थायी अधिवक्ता ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय की संवैधानिक न्यायपीठ के निर्णय पर आगे विश्वास करते हुए निवेदन किया कि उक्त निर्णय में माननीय न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि अभियुक्त के विरुद्ध गैर-जमानती गिरफ्तारी वारन्ट जारी करना संबंधित न्यायालय के स्वविवेक के अंतर्गत है किंतु आगे अभिनिर्धारित किया कि विधि के अधीन दिए गए स्वविवेक का प्रयोग न्यायोचित रूप से करना होगा और न कि यंत्रवत। इस दशा में, आक्षेपित आदेश में अवैधता नहीं है।

6. दोनों अधिवक्ता को सुनने पर एवं मामले के अभिलेख विशेषत: रिट आवेदन के साथ संलग्न ऑर्डरशीट की प्रमाणित प्रति के परिशीलन के बाद, मैं पाता हूँ कि संबंधित न्यायालय ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय की आज्ञाओं का अनुसरण किए बिना अन्वेषण अधिकारी द्वारा दाखिल तलब पर याचीगण के विरुद्ध गैर-जमानती वारन्ट जारी किया और अगली तिथि पर ही जब अन्वेषण अधिकारी ने न्यायालय को वारंट लौटाया और संहिता की धारा 82 के अधीन उद्घोषणा जारी करने की प्रार्थना किया, अवर न्यायालय ने न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना उद्घोषणा जारी किया और अगली तिथि पर ही संहिता की धारा 83 के अधीन आदेशिका भी जारी की गयी थी। यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं है अथवा ऑर्डरशीट में इसको लेकर कोई चर्चा भी नहीं है कि अभियुक्तगण अपनी गिरफ्तारी से बच रहे थे अथवा स्वयं को छुपा रहे थे और उन्हें फरार घोषित किया गया था ताकि ऐसा वारंट निष्पादित नहीं हो सका।

7. इंदर मोहन गोस्वामी एवं एक अन्य बनाम उत्तरांचल राज्य, [2008(1) JLJR 82 SC **: 2008 (1) JLJ 82 (SC)]** के मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इसी स्थिति से निपटते हुए पैरा संख्याओं 50 से 55 में निम्नवत् संप्रेक्षित किया:–

*"50. xj&tekurh okjUVk dk tkjh fd;k tkuk futh Lor=rk e gLr{ki vrxLr djrk gA fxj¶rkjh ,o dkjkokl dk vFk g 0;fDr d lokfèkd cgeY; vfèkdkj dk opu fd;k tkukA vr%] U;k;ky;k dk xj&tekurh fxj¶rkjh okjUV tkjh dju d igy vR;Ur lkoèkku gkuk gkxkA**"*

51. ftl çdkj Lor=rk 0;fDr d fy, cgeY; g] mlh çdkj fofèk 0;oLFkk cuk, j[ku e lekt dk fgr cgeY; gA lH; lekt dh mÙkjthfork d fy, nkuk vR;Ur egRoi.k gA dHkh&dHkkj turk ,o jkT; d 0;kid fgr e dfri; vofèk d fy, 0;fDr dh Lor=rk de djuk fcydy vfuok; cu tkrk g] doy rc xj&tekurh okjUV dk tkjh fd;k tkuk pkfg,A

xj&tekurh okjUV dc tkjh fd;k tkuk pkfg,A

52. 0;fDr dk U;k;ky; yku d fy, xj&tekurh okjUV tkjh fd;k tkuk pkfg, tc leu vFkok tekurh okjUV dk bfPNr ifj.kke nu dh lHkkouk ugh gA ;g rc gk ldrk g tc(

● ;g fo'okl djuk ;fDr;Dr g fd 0;fDr LoPNkiod U;k;ky; e mifLFkr ugh gkxk(vFkok

● ifyl çkfèkdkjh ml ij leu rkehy dju d fy, 0;fDr dk iku e v{ke g(vFkok

● ;g ekuk tkrk g fd 0;fDr fdlh dk gkfu igpk,xk ;fn ml rjUr vfHkj{kk e ugh fy;k tkrk gA

53. tgk rd lHko gk] ;fn U;k;ky; dk er g fd U;k;ky; e 0;fDr dk mifLFkr djoku e leu i;kIr gkxk] leu vFkok tekurh okjUV dk çkFkfedrk nh tkuh pkfg,A rF;k d lefpr loh{k.k vkj food d i.k bLreky d fcuk vR;Ur xHkhj ifj.kkek ,o çHkkok tk okjUV tkjh dju ij gkr g d dkj.k okjUV] tekurh vFkok xj&tekurh tkjh ugh fd;k tkuk pkfg,A U;k;ky; dk vR;Ur lkoèkkuhiod ijh{k.k djuk gkxk fd D;k nkfMd ifjokn vFkok çkFkfedh çPNUu gr d lkFk nkf[ky fd;k x;k g ;k ughA

54. ifjokn ekeyk e] igyh ckj] U;k;ky; dk ifjokn dh çfr d lkFk leu rkehy dju dk fun'k nuk pkfg,A ;fn vfHk;Dr leu l cprk çrhr gkrk g] U;k;ky; dk nljh ckj e tekurh okjUV tkjh djuk pkfg,A rhljh ckj e] tc U;k;ky; i.kr% lr"V g fd vfHk;Dr vk'k;iod U;k;ky; dh dk;okgh l cp jgk g] xj&tekurh okjUV tkjh dju dh çfØ;k dk lgkjk fy;k tkuk pkfg,A futh Lor=rk lokifj g] vr% ge U;k;ky;k dk igyh ,o nljh ckj e xj&tekurh okjUV tkjh dju l ijgt dju d fy, lrd djr gA

55. 'kfDr d Lofoodh gku d ukr vR;Ur lrdrk ,o lkoèkkuh d lkFk U;k;kfpr :i l bldk ç;kx djuk gkxkA U;k;ky; dk okjUV tkjh dju d igy futh Lor=rk ,o lekt d fgr dk lefpr :i l lrfyr djuk pkfg,A okjUV tkjh dju d fy, dkb dBkj Qkeyk ugh gk ldrk g fdr lkeU; fu;e d :i e tc rd vfHk;Dr dk t?kU; vijkèk dh dkfjrk d fy, vkjkfir ugh fd;k tkrk g vkj bldk Hk; g fd ml ld lk{; d lkFk NMNkM dju vFkok bl fou"V dju dh lHkkouk g vFkok ml ld fofèk dh çfØ;k l cp fudyu dh lHkkouk g] xj&tekurh okjUV tkjh dju l cpuk pkfg,A**

8. पूर्वोक्त मामले में दिये गये मार्गदर्शकों के आलोक में, बेहतर मूल्यांकन के लिए, संहिता की धारा 73 का एक संदर्भ जो वारंट निर्गत किये जाने का वर्णन करता है, आवश्यक है, जो निम्नवत् पठित है:–

èkkjk 73. okj.V fdlh Hkh 0;fDr dk fufn"V gk ldx-*&(1) e[; U;kf;d eftLVV ;k çFke ox eftLVV fdlh fudy Hkkx fl)nk"k] mn?kkf"kr vijkèkh ;k fdlh ,l 0;fDr dh tk fdlh vtekurh; vijkèk d fy, vfHk;Dr g vkj fxj¶rkjh l cp jgk g] fxj¶rkjh dju d fy, okj.V viuh LFkkuh; vfèkdkfjrk d vUnj d fdlh Hkh 0;fDr dk fufn"V dj ldrk gA*

(2) ,l 0;fDr okj.V dh çkfIr dk fyf[kr :i e vfHkLohdkj djxk vkj ;fn og 0;fDr] ft ldh fxj¶rkjh d fy, okj.V tkjh fd;k x;k g] ml d Hkkj lkèku d vèkhu fdlh Hkfe ;k vU; lifUk e g ;k ço'k djrk g rk og ml okj.V dk fu"iknu djxkA

*(3) tc og 0;fDr] ftld fo:) ,lk okj.V tkjh fd;k x;k g] fxj¶rkj dj fy;k tkrk g] rc og okj.V lfgr fudVre ifyl vfèkdkjh d goky dj fn;k tk,xk] tk ;fn èkkjk 71 d vèkhu çfrHkfr ugh yh xb g rk] ml ml ekey e vfèkdkfjrk j[ku oky eftLVV d le{k fHktok,xkA***

9. उक्त धारा के कोरे परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि यह व्यक्तियों की तीन कोटियों अर्थात (i) फरार दोषसिद्ध, (ii) उद्घोषित अपराधी और (iii) व्यक्ति जो गैर जमानती अपराध का अभियुक्त है और गिरफ्तारी से बच रहा है पर गिरफ्तारी वारन्ट जारी करने के लिए दंडाधिकारी को कर्तव्य प्रदत्त करती है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **रघुवंश दीवानचंद भसिन बनाम महाराष्ट्र राज्य एवं एक अन्य (ऊपर)** के मामले में गैर-जमानती वारन्ट के निष्पादन के विवाद्यक पर पैराग्राफ 9 में विचार किया जिसका पठन निम्नलिखित है:-

*"9. bl ij 'kk;n gh tkj nu dh vko';drk g pfd xj tekurh okjUV dk fu"iknu 0;fDr dh Lor=rk de djuk vrxLr djrk g] fxj¶rkjh okjUV ;kf=d :i l tkjh ugh fd;k tk ldrk g] cfYd doy ;g lrf"V nt dju d ckn fd ekey d rF;k ,o ifjfLFkfr;k e] ;g vko';d cu x;k gA U;k;ky;k dk xj&tekurh okjUV tkjh dju dk fun'k nr g, vR;Ur lrd ,o lkoèkku jguk gkxk] ugh rk nk"ki.k fujkèk Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 21 e ifjdfYir loèkkfud vkKk l budkj d rY; gkxkA lkFk gh] bll budkj ugh fd;k tk ldrk g fd 0;fDr d dY;k.k ij lekt dk dY;k.k vfHkHkkoh gkxkA vr%] fofèk 0;oLFkk cuk, j[ku d fy, vkj lekt e fØ;k'khy lketL; cuk, j[ku d fy, ,d vkj 0;fDr rFkk nljh vkj jkT; d vfèkdkj] Lor=rk ,o fo'k"kkfèkdkj d chp lryu LFkkfir djuk vko';d gA okLro e] ;g ,d tfVy dk; gA tlk U;k;efr dkjnktk dgr g] ^^,d vkj lkekftd vko';drk g fd vijkèk dk neu djuk gkxkA nljh vkj] lkekftd vko';drk g fd in d vgdkj }kjk fofèk dk mYy?ku ugh fd;k tk,xkA fdlh Hkh fodYi e [krjk gA** pkg tk Hkh gk] U;k;ky; tk ;g fofuf'pr dju d Lofood l ifji.k g fd D;k vfHk;Dr dh mifLFkfr tekurh vFkok xj&tekurh okjUV }kjk lfuf'pr dh tk ldrh g] dk ,d vkj fofèk çoru dh vko';drk vkj nljh vkj fofèk çoru ,tfl;k d gkFkk fujd'krk l ukxfjdk d lj{k.k d chp lryu LFkkfir djuk gA ekey dh luokb dh frfFk ij U;k;ky; e mifLFkr gku e ml dh foQyrk ij vfHk;Dr d fo:) lefpr okjUV tkjh dju dh U;k;ky; dh vfèkdkfjrk ,o 'kfDr dk fookfnr ugh fd;k tk ldrk gA fQj Hkh] ,lh 'kfDr dk ç;kx vU; ckrk d lkFk vrxLr vijkèk dh çÑfr ,o xHkhjrk] vfHk;Dr d foxr vkpj.k] ml dh vk; rFkk ml d Qjkj gku dh lHkkouk dk è;ku e j[kdj U;k;kfpr :i l vkj u fd eueku :i l djuk gkxkA***

10. प्रकटत: अवर न्यायालय ने उक्त दो निर्णयों में दी गयी आज्ञाओं पर विचार नहीं किया है और उनका अनुसरण नहीं किया है और अपने न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना यंत्रवत और गैरजमानती वारंट जारी करने के संबंध में कोई कारण दर्शाए बिना अथवा कोई संतुष्टि दर्ज किए बिना आदेश और पश्चातवर्ती आदेश भी अर्थात् संहिता की धारा 82 एवं 83 के अधीन उद्घोषणा एवं आदेशिका जारी किया जाना भी पारित किया है। राज्य का प्रतिनिधित्व कर रहे विद्वान स्थायी अधिवक्ता का निवेदन कि यह दर्शाते हुए कि याचीगण अपनी गिरफ्तारी से बच रहे हैं, अन्वेषण अधिकारी द्वारा दाखिल तलब पर वारन्ट और पश्चातवर्ती उद्घोषणा एवं आदेशिका जारी किया गया था, मैं उनके निवेदन में सार नहीं पाता हूँ। अत:, मैं यह अभिनिर्धारित करने के लिए मजबूर हूँ कि उक्त आदेश जिन्हें माननीय सर्वोच्च न्यायालय की आज्ञाओं का अनुसरण किए बिना जारी किया गया था, अपास्त किए जाने के दायी हैं।

11. परिणामस्वरुप, पूर्वोक्त रिट याचिका (दांडिक) अनुज्ञात की जाती है। गैर जमानती वारन्ट जारी करते हुए मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, डालटेनगंज, पलामू के न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 29.11.2013 का आदेश एवं याचीगण की संपत्ति की कुर्की की उद्घोषणा एवं आदेशिका का जारी करने वाले दिनांक 3.12.2013 एवं दिनांक 27.1.2014 के पश्चातवर्ती आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किए जाते हैं। अवर न्यायालय को विधि के अनुरुप अग्रसर होने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o jRukdj Hkxjk] U;k;efrx.k

दिनेश कुमार महतो एवं अन्य

cuke

मेसर्स भारत कोकिंग कोल लिमिटेड एवं अन्य

L.P.A. No. 517 of 2014. Decided on 10th August, 2015.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–अपीलार्थी के पिता को वर्ष 2004 में चिकित्सीय रूप से अस्वस्थ घोषित किया गया था–अपीलार्थी अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए प्रत्यर्थी द्वारा चलायी गयी योजना द्वारा आच्छादित नहीं है–बारह वर्ष बीत जाने के बाद, अपीलार्थी को अनुकंपा के आधार पर नियुक्त नहीं किया जा सकता है–लोक पद पर स्वयं को नियुक्त करवाने के लिए आश्रितों में कोई वैध अधिकार निहित नहीं है–एल॰ पी॰ ए॰ खारिज। (पैराएँ 4 एवं 5)

निर्णयज विधि.–(1994) 4 SCC 138; (2000) 7 SCC 192; (2009) 6 SCC 481; (2014) 13 SCC 583—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Rajendra Ram Ravi Das, For the Appellants; M/s Indrajit Sinha, Arpan Mishra, For the Respondents.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–यह लेटर्स पेटेन्ट अपील डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 4632 वर्ष 2013 में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित दिनांक 10 नवंबर, 2014 के निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध मूल याचीगण द्वारा दाखिल की गयी है जिसके द्वारा इन अपीलार्थीगण द्वारा दाखिल याचिका खारिज की गयी थी और अनुकंपा पर नियुक्ति की प्रार्थना अनुज्ञात नहीं की गयी थी, अतः, मूल याचीगण ने इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को दाखिल किया है।

2. अपीलार्थीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि दिनेश कुमार महतो मृत कर्मचारी अर्थात् मधुसूदन महतो, जिसे वर्ष 2004 में मेडिकल बोर्ड के मत द्वारा चिकित्सीय रूप से अस्वस्थ घोषित किया गया था, का पुत्र है। वह महूदा कोल वाशरी प्लान्ट में बिजली मिस्त्री के रूप में कार्यरत था। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया है कि वह मृत कर्मचारी की दूसरी पत्नी का पुत्र है, अतः, उसने अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए आवेदन दिया। उसके पिता का देहान्त दिनांक 2 सितंबर, 2010 को हो गया था। अपीलार्थीगण के अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि मधुसूदन महतो की दो पत्नियाँ थी अर्थात् अपीलार्थी सं॰ 2 एवं अपीलार्थी सं॰ 3। अपीलार्थी सं॰ 2 पहली पत्नी है जबकि अपीलार्थी सं॰ 3 मृतक मधुसूदन महतो की दूसरी पत्नी है और अपीलार्थी सं॰ 1 स्वर्गीय मधुसूदन महतो एवं अपीलार्थी सं॰ 3 का पुत्र है और इस तथ्य के कारण कि उसके पिता को वर्ष 2004 में चिकित्सीय रूप से अस्वस्थ घोषित किया गया था और वर्ष 2010 में उसकी मृत्यु हो गयी थी, अपीलार्थी सं॰ 1 को अनुकंपा पर नियुक्त किया जाना चाहिए था। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मामले के इन पहलूओं का समुचित रूप से अधिमूल्यन नहीं किया गया है और इसलिए, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय एवं आदेश अभिखंडित एवं अपास्त किए जाने योग्य है।

3. प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया कि राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार के मुताबिक कर्मचारी के आश्रित अर्थात् पति/पत्नी/अविवाहित पुत्री/पुत्र/विधितः अंगीकृत पुत्र अनुकंपा पर नियुक्ति पा सकते हैं। इसके अतिरिक्त, यह अपीलार्थी सं॰ 1 पहली पत्नी का पुत्र नहीं है, वह दूसरी पत्नी का पुत्र है, अतः, वह राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार द्वारा आच्छादित नहीं है। प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता द्वारा आगे निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी सं॰ 1 के पिता को वर्ष 2004 में चिकित्सीय रूप से अस्वस्थ घोषित किया गया था जबकि यह याचिका वर्ष 2013 में अर्थात् लगभग 9 वर्ष बाद दाखिल की गयी थी। अब तक अनुकंपा नियुक्ति का प्रयोजन ही विफल कर दिया गया है। इसी प्रकार से, अपीलार्थी सं॰ 1 के पिता की मृत्यु जो वर्ष 2010 में हुई के बाद यह याचिका तीन वर्ष बाद दाखिल की गयी है और मामले के इस पहलू का विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा समुचित रूप से अधिमूल्यन किया गया है, अतः, यह लेटर्स पेटेन्ट अपील इस न्यायालय द्वारा ग्रहण नहीं की जा सकती है।

4. दोनों पक्षों के अधिवक्ता को सुनने पर मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए <u>हम मुख्यतः निम्नलिखित तथ्यों एवं कारणों से इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को ग्रहण करने का कारण नहीं पाते हैं:–</u>

(i) vihykFkh lO 1 bl rF; d dkj.k vudik fu;fDr bfllr dj jgk g fd mld firk dk o"k 2004 e fpfdRlh; :i l vLoLFk ?kkf"kr fd;k x;k Fkk vkj ftldh eR; o"k 2010 e gk x;h Fkh vkj tk çR;Fkhx.k dh lok e FkkA

(ii) ;g çrhr gkrk g fd vihykFkh lO 1 erd depkjh dh nljh iRuh dk i= g ftlu viuh igyh iRuh d thou dky d nkjku fookg fd;k FkkA

(iii) vkx ;g çrhr gkrk g fd jk"Vh; dk;yk etnjh djkj d erkfcd ;ktuk d vèkhu ifr@iRuh@vfookfgr i=h@i=@fofèkr% vxhÑr i= vkfJr gA vihykFkh lO 1 (ey ;kph) vkfJrk dh fdlh dkfV }kjk vkPNkfnr ugh gA

(iv) ekey d rF;k l vkx ;g çrhr gkrk g fd vihykFkh lO 1 d firk dk o"k 2004 e fpfdRlh; :i l vLoLFk ?kkf"kr fd;k x;k Fkk vkj fjV ;kfpdk o"k 2013 e vFkkr uk o"k chru d ckn nkf[ky dh x;h FkhA vihykFkh lO 1 d firk dh eR; o"k 2010 e gb g vkj rRi'pkr Hkh dkQh le; chr pdk gA bl çdkj] ;g çrhr gkrk g fd vc rd vudik ij fu;fDr dk ç;ktu gh foQy gk x;k gA vudik ij fu;fDr fdlh le; ij erd depkjh vFkok fpfdRlh; :i l vLoLFk depkjh d vkfJrk dk ugh nh tkuh gA vudik ij fu;fDr dk ç;ktu erd depkjh d ifjokj dk vFkok fpfdRlh; :i l vLoLFk depkjh d ifjokj dk rjUr lgkjk nuk gA bl çdkj dh fu;fDr vFkkr vudik ij fu;fDr lkekU; fu;e d çfr viokn g fd Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 16 d vèkhu ykd in d fy, ykd foKkiu fn;k tkuk pkfg, vkj vke turk dk ykd in d fy, Lièkk dju dh vuefr nuh gkxhA vudik ij fu;fDr Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 16 d çfr viokn gA tc ;g vihykFkh viu firk dk fpfdRlh; :i l vLoLFk ?kkf"kr fd, tku d 9 o"k ckn rd vkj viu firk dh eR; d ckn rhu o"k rd thfor jg ldrk Fkk] vc vudik d vkèkkj ij mldh fu;fDr ugh dh tk ldrh gA oLrr% ykd in ij Lo; dk fu;Dr djoku dk dkb oèk vfèkdkj vkfJr e fufgr ugh gA

*(v) **me'k dekj ukxiky cuke gfj;k.kk jkT; ,o vU;] (1994)4 SCC 138,** e ijkxkQ 2 l 6 ij ekuuh; lokPp U;k;ky; }kjk fuEufyf[kr vfHkfuèkkfjr fd;k x;k gS*

"2. ç'u mu fopkjk l lcfèkr g ftUg vudik d vkèkkj ij ykd lok e fu;fDr nr g, ekxn'ku djuk pkfg,A ;g çrhr gkrk g fd bl fook|d ij dkQh vLi"Vrk gA fu;e d rkj ij] ykd lok e fu;fDr dBkjrkiod vkonuk d [ky vke=.k vkj eèkk d vkèkkj ij dh tkuh pkfg,A fu;fDr dk dkb vU; <x vFkok dkb vU; fopkj vuuK; gA u rk ljdkj vkj u gh ykd çkfèkdkjhx.k dk fdlh vU; çfØ;k dk vulj.k dju vFkok in d fy, fu;ek }kjk vfèkdfFkr vgrkvk dk f'kfFky dju dh Lor=rk gA fdr] bl lkekU; fu;e ftl dk vulj.k dBkjrkiod çR;d ekey e fd;k tkuk g d çfr U;k; d fgr e vkj dfri; vko';drkvk dk ijk dju d fy, dN viokn vyx dj fudky x, gA ,lk ,d viokn lokjr jgr eR; gku vkj viu ifjokj dk nfjnrk e vkj thou ;kiu d fdlh lkèku d fcuk NkMu oky depkjh d vkfJrk d i{k e gA ,l ekeyk e] bl rF; dk fopkj e yr g, fd tc rd thou ;kiu dk dN lkr çnku ugh fd;k tkrk g] ifjokj thou ;kiu dju e l{ke ugh gkxk] 'k) ekuoh; fopkjk ij erd d vkfJrk tk ,l fu;ktu d ik= gk ldr g e l ,d dk ykHknk;h fu;ktu çnku dju d fy, fu;ek e çkoèkku cuk;k x;k gA bl çdkj] vudik ij fu;ktu çnku dju dk li.k mí'; ifjokj dk vpkud vk; ldV l mcju e l{ke cukuk gA mí'; ,l ifjokj d lnL; dk in nuk ugh g] erd }kjk èkkj.k fd, x, in d fy, in nu dh ckr rk nj jghA vkx] lokjr depkjh dh eR; ek= mld ifjokj dk thou ;kiu d ,l lkr dk gdnkj ugh cukrh gA ljdkj vFkok lcfèkr ykd çkfèkdkjh dk erd d ifjokj dh foÙkh; n'kk dk ijh{k.k djuk gkxk vkj doy ;fn ;g lr"V g fd fu;ktu d çkoèkku d fcuk ifjokj ldV dk lkeuk dju e l{ke ugh gkxk] ifjokj d ik= lnL; dk ukdjh dk çLrko fn;k tkrk gA rrh; ,o prFk ox dk in xj&'kkjhfjd ,o 'kkjhfjd dkfV;k e fuEure in g vkj doy muij gh vudik d vkèkkj ij çLrko fn;k tk ldrk g] mí'; ifjokj dk foÙkh; nfjnrk l Hkkj eDr djuk g vkj vkikrdky ij fot ;ku e lgk;rk nuk gA fu;e d çfr viokn cukdj ,l fuEure in e fu;ktu dk çkoèkku vkfpR; i.k vkj oèk g pfd ;g HknHkkoi.k ugh gA ,l ink e erd depkjh d ,l vkfJr d lkFk fd;k x;k vudy U;ogkj dk çkIr fd, tku d fy, bfllr mí'; vFkkr nfjnrk d fo#) vurk"k d lkFk rdi.k lcèk gA bl ç;ktu l ykd çkfèkdkfj;k }kjk fdlh vU; ink dk fn, tku dh mEehn ugh dh tkrh g vFkok bldh vko';drk ugh gA bl lcèk e ;g ;kn j[kuk gkxk fd erd d nfjn ifjokj d fo#) vl[; vU; ifjokj g tk leku :i l] ;fn vfèkd ugh] nfjn gA erd] depkjh d i{k e cuk;k x;k fu;e d çfr viokn mld }kjk nh x;h lok vkj oèk çR;k'kk vkj vc rd d fu;ktu tk vpkud l lekIr gk x;k g }kjk mRiUu ifjokj d ntk ,o dk;dyki e ifjoru d vkèkkj ij gA

*3. **bl fofèkd voLFkk dk è;ku e fy, fcuk** dN ljdkjk vkj ykd çkfèkdkjhx.k }kjk **LokHkkfodrk erd d ifjokj dh foÙkh; n'kk dk è;ku e fy, fcuk vkj dHkh dHkkj rrh; ,o prFk ox d mij d ink e Hkh***

vudhk ij fu;ktu dk çLrko fn;k tk jgk gA ;g fofèkr% vuuK; gA

4. bUgh dkj.kk l ge dN mPp U;k;ky;k d fu.k;k dk vfèkeY;u dju dh voLFkk e ugh g ftUgku LokHkkfodr% vFkok rrh; ,o prFk oxk d mij d ink e vudhk ij fu;ktu U;k;kfpr Bgjk;k g vkj fun'k Hkh fn;k gA ge ;g ikdj Hkh fujk'k g fd l"kek xklkb cuke Hkkjr l?k e bl U;k;ky; d fu.k; dh foÑrrk d fcn rd vi0;k[;k dh x;h gA ;g fu.k; LokHkkfodr% vFkok rrh; ,o prFk oxh; ink d mij d ink e vudhk ij fu;ktu U;k;kfpr ugh Bgjkrk gA oreku ekey e] mPp U;k;ky; u lgh çdkj l bfxr fd;k g fd jkT; ljdkj d ç'uxr vun'k ox II ink e vudhk ij fu;ktu U;k;kfpr ugh Bgjkr FkA fdr] fu.k; l ;g çrhr gkrk g fd jkT; ljdkj u de l de ,d viokn fd;k Fkk vkj bl Nnei.k vkèkkj ij ox II in e vudhk ij fu;ktu çkoèkkfur fd;k fd lcfèkr 0;fDr d ikl ,e0 ch0 ch0 ,l0] ch0 b0] ch0 Vd] vkfn tl h rduhdh vgrk FkhA tl k mij bfxr fd;k x;k g] ,l k viokn voèk g] D;kfd ;g lkekU; fu;e d çfr viokn cuku d mí'; d foijhr gA ,dek= vkèkkj tk vudhk ij fu;ktu U;k;kfpr Bgjk ldrk g] og erd d ifjokj dh nfjn n'kk gA u rk mld vkfJr dh vgrk vkj u gh in tk og èkkj.k djrk Fkk] çklfxd gA bl h dkj.k l ge vk{kfir fu.k; e mPp U;k;ky; d fuEufyf[kr lç{k.k dk le>u e v{ke g%

^^gekjk nf"Vdk.k g fd vl kèkkj.k fLFkfr;k dk vl kèkkj.k mipkjk dh vko';drk g vkj okLrfod Bkl ekeyk e vun'k d v{kj ,o vkRek l foifFkr gku vkj ,l ekeyk tgk bl dh vko';drk g vurk"k çnku dju dh NV ljdkj dk gA fofèk d rkj ij ;g vfHkfuèkkfjr djuk fd ljdkj doy rrh; ,o prFk ox ink d fo#) fu;fDr çnku dju dh uhfr l FkkMk Hkh foifFkr ugh gk ldrh g] bu fnuk thou dh okLrfodrk dk vun[kk djuk gkxkA ;g mEehn djuk gkL;kLin gkxk fd erd ox I vfèkdkjh d vkfJr dk rrh; vFkok prFk ox in ij fu;fDr dk çLrko fn;k tkuk pkfg,A ;fi ge ox I vFkok II ink e vudhk d vkèkkj ij fu;fDr dju e U;k;kfpr :i l viu Lofood dk ç;kx djuk ljdkj ij NkMr g] fQj Hkh lrdrk d dN 'kCn dgu dh vko';drk gA **;g xkj fd;k tkuk g fd doy fojy ekeyk e fojyre vkj vR;Ur vkiokfnd ifjfLFkfr;k e ,l h fu;fDr dk vkn'k fn;k tkuk pkfg,A** oLrr%] ge vu'kl k djx fd ljdkj dk ,l h fu;fDr;k d fy, Hkh uhfr fojfpr djuk pkfg,A**

5. mDr lç{k.kk l ;g Li"V g fd mPp U;k;ky; erd depkfj;k }kjk èkkj.k fd, x, ink d lErY; ink e vkj ox III ,o IV d mij vudhk ij fu;fDr dju dh jkT; ljdkj dh uhfr vuekfnr djrk gA ;g nkgjkuk vuko';d g fd ; lç{k.k fofèk d foijhr gA **;fn erd depkjh dk vkfJr çLrkfor in dk Lohdkj djuk viuh e;knk d uhp ikrk g] og ,l k ugh dju d fy, Lor= gA in mld ntk dh bPNkifr d fy, çLrkfor ugh g cfYd ifjokj dk vkfFkd foink l ikj yxku d fy, gA**

6. **bUgh dkj.kk l] ;fDr;Dr vofèk] ftl fu;ek e fofufn"V djuk gkxk] chru d ckn vudhk ij fu;ktu çnku ugh fd;k tk**

ldrk gA ,l fu;ktu d fy, fopkj fufgr vfèkdkj ugh g ftldk ç;kx Hkfo"; e fdlh le; ij fd;k tk ldrk gA foÙkh; ldVftldk lkeuk ;g ,dek= vtudrk dh eR; ij djrk g ij fot; iku e ifjokj dk l{ke cukuk mí'; gku d ukr vudik ij fu;ktu dk nkok ugh fd;k tk ldrk g vkj le; chru d ckn vkj ldV lekIr gku d ckn çLrko ugh fn;k tk ldrk gA** *(tkj fn;k x;k)*

(iv) ***lt; dekj cuke fcgkj jkT; ,o vU;] (2000)7 SCC 192,*** *e ijkxkQ 3 ij ekuuh; lokPp U;k;ky; }kjk fuEufyf[kr vfHkfuèkkfjr fd;k x;k g%*

"3. ge ;kph d fo}ku ojh; vfèkoDrk d fuonu l lger gku e v{ke gA bl U;k;ky; u vud ekeyk e vfHkfuèkkfjr fd;k g fd vudik ij fu;fDr vUunkrk dh eR; d dkj.k] ftlu ifjokj dk nfjnrk e vkj thou ;kou d fdlh lkèku d fcuk NkM fn;k Fkk] ifj.kr g, vpkud ldV ij fot; iku d fy, erd depkjh d ifjokj dk l{ke cuku d fy, vk'kf;r gA oLrr% ;kph }kjk m)r fun'kd f'k{kk cuke i"iUn dekj e fu.k; e ,lk nf"Vdk.k vfHk0;Dr fd;k x;k gA ;g xkj djuk Hkh egRoi.k g fd ml frFk ij tc ;kph }kjk igyk vkonu fnukd 2.6.1988 dk fn;k x;k Fkk] ***;kph vo;Ld Fkk vkj fu;fDr dk ik= ugh FkkA ;kph }kjk ;g Lohdkj fd;k x;k gA ml le; rd tc ;kph vud o"kk ckn o;Ld gk tkrk g] fjfDr dk vkj{k.k ugh fd;k tk ldrk g] tc rd fofufn"V çkoèkku u gkA*** *vudik ij fu;fDr dk vkèkkj ;g n[kuk g fd ifjokj rjUr vurk"k ik;A*** *(tkj fn;k x;k)*

(vii) ***lrk"k dekj nc cuke mÙkj çn'k jkT; ,o vU;] (2009)6 SCC 481,*** *ekey e ijkxkQ 10 l 13e ekuuh; lokPp U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k g ftldk iBu fuEufyf[kr g%*

"10. LohÑr :i l] vihykFkh dk firk o"k 1981 l ykirk FkkA bl fook|d ij fopkj vkj bl fofuf'pr fd, fcuk fd D;k lk{; vfèkfu;e dh èkkjk 108 d vèkhu le>h x;h eR; d ekey e vudik vkèkkj ij fu;ktu ekxk tk ldrk Fkk] Hky gh ge rd d ykHk d fy, eku yr g fd ,lh ekx dh tk ldrh g] ,l vfèkdkj dk ç;kx o"k 1988 e fd;k tkuk pkfg, Fkk vkj fd;k tk ldrk Fkk vkj ml l ikp o"k dh vofèk dh x.kuk djr g, vihykFkh d ekey e fu;ktu d fy, vkonu nu d fy, ifjlhek vofèk dk volku o"k 1993 e gk x;kA

11. vudik ij fu;fDr çnku dju dh ijh èkkj.kk ifjokj d vtu dju oky lnL; dh eR; d dkj.k erd d ifjokj }kjk lkeuk fd, tk jg foÙkh; ldVk ij fot; ikuk gA vk; dh rkRdkfyd {kfr gkrh g ftldh otg l ifjokj foÙkh; dfBukb l ihfMr gkrk gA ;g ykHk fn;k tkrk g rkfd ifjokj ,lh foÙkh; etcfj;k l fuiV ldA

12. vudik d vkèkkj ij fu;fDr dk vujkèk ;fDr;Dr gkuk pkfg, vkj ifjokj d vUunkrk dh eR; d le; d fudV gkuk pkfg,] D;kfd ,lk ykHk nu dk ç;ktu erd ftldh lokjr jgr eR; gk x;h d ifjokj e g, vpkud vkfFkd ldV ij fot; iku d fy, ifjokj dk foÙkh; enn miyCèk djkuk gA fdr] ;g Hkjrh dk ,d vU; lkr ugh gk ldrk gA bl vçR;kf'kr ykHk d :i

e vkj ljdkjh lok e fu;fDr iku d vfèkdkj d :i e ugh ekuk tk ldrk gA

13. **orZeku ekeys e] vihykFkh dk firk o"k 1981 e ykirk gk x;k vkj 18 o"kZ rd ifjokj thfor jg ldk Fkk vkj lQyrkiod foÙkh; ef'dyk dk lkeuk dj ldk Fkk vkj mu ij fot; ik ldk Fkk ftldk lkeuk mUgku vtu dju oky lnL; d xk;c gku ij fd;k FkkA ,slh voLFkk gku d ukr] gekj lfopkfjr er e] ;g gekjh vfèkdkfjrk dk ç;ksx dju d fy, l;kX; ekeyk ugh gA** ;g ,k ekeyk Hkh ugh g tgk vihykFkh dk vudik ij fu;fDr nu d fy, dkb fun'k tkjh fd;k tk ldrk Fkk D;kfd fo"k; ij 'kkfl r çpfyr fu;e ge ,k dkb fun'k tkjh dju dh vuefr ugh nr gA vr%] vihy e x.kx.k ugh g vkj bl [kkfjt fd;k tkrk gA**

(tkj fn;k x;k)

(viii) **,e0 th0 ch0 xkeh.k cd cuke pØorh flg] (2014)13 SCC 583,** ekey e ijkxkQ 6 l 9 e ekuuh; lokPp U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k g ftldk iBu fuEufyf[kr gS%&

"6. **ykd in ij çR;d fu;fDr lfoèkku d vuPNnk 14 ,o 16 dh vkKkid vko';drkvk dk dBkjrkiod ikyu djr g, djuk gkxkA 'kkd lrlr ifjokj tk viuk vUunkrk [kk pdk g ij foÙkh; dfBukbZ;k dk nj dju d fy, vudik vkèkkj ij fu;ktu çnku djd viokn vyx dj fudkyk x;k gA** lokjr ljdkjh depkjh dh eR; ek= ifjokj dk vudik ij fu;ktu dk nkok dju dk gdnkj ugh cukrh gA l{ke çkfèkdkjh dk erd depkjh dh foÙkh; n'kk dk ijh{k.k djuk gkxk vkj doy ;fn ;g lr"V g fd fu;ktu çnku fd, fcuk ifjokj ldV dk lkeuk dju e l{ke ugh gkxk] ifjokj d ik= lnL; dk ukdjh çLrkfor fd;k tkrk gA bld vfrfjDr] ,slh fu;fDr dk nkok dju oky U;fDr dk in d fy, vko';d ik=rk j[kuk gkxkA **bl U;k;ky; }kjk fy;k x;k lxr nf"Vdk.k g fd vfèkdkj d rkj ij vudik ij fu;ktu dk nkok ugh fd;k tk ldrk g D;kfd ;g fufgr vfèkdkj ugh gA** U;k;ky; dk ekuoh; vkèkkjk ij vuK; lhek d ij mnkjoknh U;k[;k }kjk çkoèkku dk [kkpuk ugh pkfg,A vr%] ,slh fu;fDr rjUr ifjokj dk ldV l mckju d fy, çnku fd;k tkuk pkfg,A o"kZ rd ,k ekeyk yfcr j[kuk vufpr gA

7. me'k dekj ukxiky cuke gfj;k.kk jkT; e bl U;k;ky; u vfèkdkj dh çÑfr ij fopkj fd;k g ftldk nkok vkfJr vudik d vkèkkj ij fu;fDr bfllr djr g, dj ldrk gA U;k;ky; u fuEufyf[kr lçf{kr fd;kA (SCC pp. 140-41 Paras 2, 4 ,o 6)

"2. ....bl çdkj] vudik ij fu;ktu çnku dju dk i.k mí'; ifjokj dk vpkud vk; ldV l mcju e l{ke cukuk gA mí'; ,l ifjokj d lnL; dk in nuk ugh g] erd }kjk èkkj.k fd, x, in d fy, in dh rkckr gh nj ------ erd depkjh d ifjokj d i{k e cuk;k x;k fu;e d çfr viokn mld }kjk nh x;h lok ,o oèk çR;k'kk vkj vcrd d fu;ktu tk vpkud lekIr gk x;k g l mRiUu ifjokj d ntk ,o dk;dyki e g, ifjoru d fopkj ij gA

4. ....., dek= vkèkkj tk vudik ij fu;ktu dk U;k;kfpr Bgjk ldrk g] erd d ifjokj dh nfjn n'kk gA

***

*6. ...... , l fu;ktu d fy, fopkj fufgr vfèkdkj ugh g------mí'; ifjokj dk foÙkh; ldV ij fot; iku d fy, l{ke cukuk g--------***

*8. ^^lèkkj dju oky vurk"k** dk ykd fu;ktu d çfr Hkjrh d odfYid <x [kkyu oky d :i e ugh fy;k tkuk pkfg,A* ***bld vfrfjDr] foyfcr pj.k ij fn;k x;k vkonu bl dkj.k l xg.k ugh fd;k tk ldrk g D;kfd le; chru l ,lh fu;fDr dju dk ç;ktu lekIr gk x;k gA***

*9. U;k;ky; ,o vfèkdj.k vudik d vkèkkj ij fu;fDr dju d lgkuHkfri.k fopkj l mRçfjr gkdj ykHk çnku ugh dj ldr g tc mld lcèk e fojfpr fofu;e ,lh fu;fDr vkPNkfnr ,o vuè;kr ugh djr gA** (tkj fn;k x;k)*

bl çdkj] iokDr fu.k;k dh nf"V e] vc vudik ij fu;fDr dk ç;ktu gh foQy gk x;k g D;kfd bl vihykFkh l0 1 d firk dk o"k 2004 e fpfdRlh; :i l vLoLFk ?kkf"kr fd;k x;k Fkk tcfd ;kfpdk yxHkx 9 o"k ckn o"k 2013 e nkf[ky dh x;h gA

(ix) bld vfrfjDr] vihykFkh l0 1 erd depkjh dh nljh iRuh dk i= gA og vudik ij fu;fDr d fy, çR;FkhZ.k }kjk pyk;h x;h ;ktuk }kjk vkPNkfnr ugh gA bu vihykfFk;k }kjk nkf[ky fjV ;kfpdk [kkfjt djr g, fo}ku ,dy U;k;kèkh'k }kjk ekey d bl igy dk lefpr :i l vfèkeY;u fd;k x;k gA

5. पूर्वोक्त तथ्यों, कारणों एवं न्यायिक उद्घोषणाओं के समेकित प्रभाव के कारण इन अपीलार्थियों द्वारा दाखिल डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 4632 वर्ष 2013 को खारिज करते हुए दिनांक 10 नवंबर, 2014 के आदेश में विद्वान एकल न्यायाधीश ने कोई गलती नहीं की है। हम विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से भिन्न दृष्टिकोण लेने का कारण नहीं देखते हैं। इस लेटर्स पेटेन्ट अपील में सार नहीं है, अतः इसे एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

मनोज कुमार पासवान एवं एक अन्य (5812 में)

संदीप कुमार बर्नवाल एवं एक अन्य (5680 में)

विजय कुमार साव (5782 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य (सभी में)

W.P. (S) Nos. 5812, 5680 with 5782 of 2015. Decided on 7th December, 2015.

झारखंड न्यायिक सेवा (भरती) नियमावली, 2004—नियम 5—नियुक्ति–ऊपरी आयु सीमा की गणना के लिए कट-ऑफ तिथि का नियतीकरण–कट-ऑफ तिथि का नियतीकरण सदैव कट-ऑफ तिथि के अंतर्गत नहीं आने वाले उम्मीदवारों के लिए कठिनाई के रूप में कार्य करता है–यह हस्तक्षेप का आधार नहीं हो सकता है–उपरी आयु सीमा की गणना करने के लिए आक्षेपित विज्ञापन के अधीन नियत तिथि किसी प्रदर्शनीय आधार पर मनमानी अथवा अयुक्तियुक्त दर्शायी नहीं गयी है–रिट आवेदनों को खारिज। (पैराएँ 11 से 13)

निर्णयज विधि.–2008 (2) JLJR 543; 2014 (2) JBCJ 343 (HC)—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Gautam Kumar, For the Petitioners; M/s Rakesh Kumar Shahi, H.K. Mehta, For the Resp.-State; Mr. Rajesh Kumar, For the J.H.C.; Mr. Sanjay Piprawal, For the J.P.S.C..

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5812 वर्ष 2015 में याचीगण विशेष अभियान में सिविल जज (जूनियर डिविजन) के 20 पदों पर भरती के संबंध में झारखंड लोक सेवा आयोग द्वारा जारी विज्ञापन सं॰ 11/2015 (परिशिष्ट 1) के अधीन ऊपरी आयु सीमा की कट ऑफ तिथि के नियतीकरण से व्यथित है। वे इप्सित करते हैं कि उपरी आयु सीमा की गणना करने के लिए कट ऑफ तिथि दिनांक 31 जनवरी, 2015 के स्थान पर वर्ष 2001 में प्रासंगिक तिथि बनायी जानी चाहिए।

3. डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5680 वर्ष 2015 एवं डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5782 वर्ष 2015 में याचीगण सिविल जज (जूनियर डिविजन) की अनेक कोटियों अर्थात् अनारक्षित, एस॰ सी॰, एस॰ टी॰, बी॰ सी॰ I एवं बी॰ सी॰ II में 46 पदों की कुल संख्या के लिए विज्ञापन सं॰ 10/2015 (परिशिष्ट 1) के तहत झारखंड लोक सेवा आयोग द्वारा संचालित भरती में उपरी आयु सीमा की गणना करने के लिए कट ऑफ तिथि के नियतकरण से व्यथित है। ये याचीगण भी दिनांक 31 जनवरी, 2015 के बजाए दिनांक 31 जनवरी, 2010 पर उपरी आयु सीमा की गणना करने के लिए कट–ऑफ–तिथि का नियतीकरण इप्सित करते हैं।

4. मामलों के दोनों संवर्गों में उपरी आयु सीमा की गणना करने के लिए कट–ऑफ–तिथि में ऐसी परिशुद्धि/संशोधन इप्सित करने के लिए याचीगण के अधिवक्ता की ओर से सामान्य आधारों का आग्रह किया गया है।

5. याचीगण के अनुसार, सिविल जज (जूनियर डिविजन) के पद के लिए भरती कार्य राज्य में लंबे अंतरालों के बाद किया गया है। वर्ष 2008 एवं 2013 में किए गए दो पूर्व कार्यों को निर्दिष्ट करके उन्होंने निवेदन किया है कि इस न्यायालय ने **संजीव कुमार सहाय एवं अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य,** (2008)2 JLJR 543 और **भोला नाथ रजक एवं अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, 2014 (2) JBCJ 343 (HC)** में दिए गए निर्णयों में विज्ञापन सं॰ 4/2013 के तहत किए गए भारतीय कार्य के संबंध में वर्ष 2008 और दिनांक 31 जनवरी, 2009 से दिनांक 31 जनवरी, 2013 के बीच किए गए भरती कार्य के संबंध में दिनांक 31 जनवरी, 2003 से दिनांक 31 जनवरी, 2008 तक सारवान रूप से कट–ऑफ–तिथि उपांतरित किया है। कट–ऑफ–तिथि के उपांतरण ने दिलचस्पी रखने वाले उम्मीदवारों की विशाल संख्या को लाभ दिया है जिन्हें झारखंड न्यायिक सेवा (भरती) नियमावली, 2004 के नियम 5 के अधीन अनुबंधित 35 वर्ष की ऊपरी आयु सीमा के फलस्वरुप अपात्र बना दिया गया होता।

6. याचीगण के अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि पहली बार राज्य में आरक्षित कोटि उम्मीदवार की पीछे की संचित रिक्तियों को भरने के लिए विशेष अभियान चलाया गया है। अत: दिनांक 31 जनवरी, 2015 के बजाए वर्ष 2001 की उपयुक्त कट–ऑफ–तिथि आदर्श रूप से विहित की जाएगी जैसा आक्षेपित विज्ञापन सं॰ 11/2015 के अधीन अधिकथित किया गया है। विज्ञापन सं॰ 10/2011 के अधीन कार्य के संबंध में भी यह आग्रह किया गया है कि वर्ष 2010 की कट–ऑफ–तिथि द्वारा उपरी आयु सीमा की गणना याचीगण सहित उम्मीदवारों की विशाल संख्या को भरती प्रक्रिया में भाग लेने के लिए पात्र बनाएगी। अत:, व्यापक लोकहित भी पूरा होगा।

7. प्रत्यर्थी राज्य, झारखंड उच्च न्यायालय एवं जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के विद्वान अधिवक्ता ने याचीगण की प्रार्थना का विरोध किया है। प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आग्रह किया गया है कि प्रश्नगत भरती कार्य केवल आधे वर्ष के अंतराल के बाद किया गया है क्योंकि रिक्तियों की विशाल संख्या के

लिए पूर्व भरती कार्य विज्ञापन सं० 4/2013 के अधीन किया गया था। अत:, उपरी आयु सीमा पर विचार करने के लिए 2001 एवं 2010 से कट–ऑफ–तिथि की गणना करने का याचीगण का अभिवचन किसी आधार पर न्यायोचित नहीं है। वर्तमान प्रक्रिया में कोई विलंब नहीं हुआ है। संजीव कुमार सहाय एवं अन्य तथा भोला नाथ रजक एवं अन्य मामलों में दिए गए निर्णयों को निर्दिष्ट करके यह निवेदन किया गया है कि दोनों मामलों में विद्वान न्यायालय ने सिविल जज (जूनियर डिविजन) के पद के लिए भरती कार्य करने में लंबे अंतराल को ध्यान में लेते हुए शुरुआती तिथि पर कट–ऑफ–तिथि उपांतरित करने की आवश्यकता पर विचार किया था ताकि ऐसी परीक्षा में भाग लेने के लिए उम्मीदवारों की विशाल संख्या पात्र हो सके। यह भाग लेने वाले उम्मीदवारों का अधिक विशाल भंडार प्रदान कर सकता था। यह निवेदन भी किया गया है कि वर्तमान मामले में यदि याचीगण 2009 की कट–ऑफ–तिथि के नियतीकरण के फलस्वरुप विज्ञापन सं० 4/2013 के अधीन पात्र थे, यद्यपि अन्यथा उन्हें आयु वर्जित किया जा सकता था, उन्हें पहले ही ऊपरी आयु सीमा में शिथिलीकरण के अवसर का लाभ लेने की अनुमति दी गयी है। वे प्रत्येक अवसर पर कट–ऑफ–तिथि में शिथिलीकरण इप्सित नहीं कर सकते हैं क्योंकि उक्त उपांतरण मामले के विशेष तथ्यों में किया गया था जैसा उक्त निर्णयों में गौर किया गया है।

8. प्रत्यर्थियों के अधिवक्ता ने याचीगण के इस प्रतिवाद को भी विवादित किया है कि विज्ञापन सं० 11/2015 पीछे की इकट्ठा रिक्तियों को भरने के लिए है बल्कि यह एस० सी०, एस० टी०, बी० सी० **I** एवं बी० सी० **II** कोटि के कतिपय पद के संबंध में विशेष अभियान है। यह निवेदन किया गया है कि विज्ञापन सं० 10/15 में अधिसूचित पद समस्त कोटियों के लिए हैं। अत: याचीगण का प्रतिवाद सही नहीं है।

9. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने छठे संयुक्त सिविल सेवा (आरंभिक) प्रतियोगिता परीक्षा हेतु भरती के संबंध में विज्ञापन सं० 1/2015 के भूल सुधार को निर्दिष्ट किया है जहाँ उपरी आयु सीमा की गणना करने के प्रयोजन से कट–ऑफ तिथि दिनांक 1 अगस्त, 2010 तक शिफ्ट की गयी है।

10. जे० पी० एस० सी० के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उक्त भरती कार्य में कट–ऑफ तिथि का नियतीकरण उक्त मामले के विनिर्दिष्ट तथ्यों के विचार में है और राज्य सरकार द्वारा लिए गए निर्णय पर है। किसी अन्य भरती कार्य के आधार पर सामान्य सदृशता निकाली नहीं जा सकती है।

11. मैंने पक्षों के निवेदनों पर विचार किया है और विश्वास किए गए निर्णयों सहित अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्री का परिशीलन किया है। वर्ष 2008 एवं 2013 में किए गए भरती कार्य में कट–ऑफ तिथि उपांतरित करने के लिए विद्वान खंडपीठ का विनिर्दिष्ट कारण **भोला नाथ रजक एवं अन्य (ऊपर)** मामले में दिए गए निर्णय के पठन से स्पष्ट है जिसके पैराग्राफों 8 एवं 11 को यहाँ उद्धृत किया जाता है:–

"8. LohÑr :i l] flfoy tt (tfu;j fMfotu) d ink dk Hkju d fy, o"k 2008 d ckn dkb ijh{kk ugh yh x;h FkhA flfoy tt (tfu;j fMfotu) ¼eflQ½ d dMj e U;kf;d vfèkdkfj;k dh Hkjrh d fy, fu;fer ijh{kk dh vuifLFkfr e ;kph.k ijh{kk d fy, mifLFkr ugh gk ld FkA bl chp] ;kph.k ,o lefLFkr mEehnokjk u 35 o"k dh egÙke vk; ijk dj fy;k gA ijh{kk yu e foyc d dkj.k fjV ;kph.k dk ijh{kk e mifLFkr gku l vufgr ugh fd;k tkuk pkfg,A

11. LohÑr :i l] flfoy tt (tfu;j fMfotu) (eflQ) d in ij Hkjrh d fy, >kj[kM ykd lok vk;kx u o"k 2008 e foKkiu tkjh fd;k vkj rRi'pkr fnukd 10.12.2013 dk foKkiu l0 4/2013 tkjh fd;k vkj o"k 2008 e tkjh io

*foKkiu ,o o"k 2013 e tkjh foKkiu d chp 5 o"k l vfèkd dk vrjky gA ifj.kkeLo#i] flfoy tt (tfu;j fMfotu) (eflQ) ijh{kk d fy, mifLFkr gku dh bPNk j[ku oky ik= mEehnokj 2008 ,o 2013 dh vofèk d chp viuh vk; d ikj py x, gkx vkj blfy,] mud ikl ijh{kk e mifLFkr gku dk volj ugh FkkA bl rF; dk è;ku e j[kdj fd flfoy tt (tfu;j fMfotu) (eflQ) d in ij Hkjrh d fy, ijh{kk ugh yh x;h Fkh] vfèkd vk; d dkj.k ofpr ik= mEehnokjk dk U;k; nu d fy, 2013 d flfoy tt ¼tfu;j fMfotu½ ¼eflQ½ dh Hkjrh ¼foKkiu l0 4/2013) d dV&vkQ frfFk fnukd 31.1.2009 gkuh pkfg,A rnulkj] vk{kfir vfèklpuk e 35 o"k dh egÙke vk; fu;r dju d fy, dV&vkQ frfFk dk fnukd 31.1.2013 d ctk, fnukd 31.1.2009 dju dk vkn'k fn;k tkrk gA**

12. जैसा विद्वान न्यायालय के मत से प्रकट है, ये विशेष तथ्य वर्तमान भरती कार्य पर लागू नहीं होते हैं क्योंकि इसे लंबे अंतराल के बाद नहीं किया जा रहा है। ऐसी प्रार्थना के समर्थन में याचीगण की ओर से कोई अन्य आधार आग्रहित नहीं किया गया है। उपरी आयु सीमा की गणना करने के लिए आक्षेपित विज्ञापन के अधीन नियत कट–ऑफ तिथि किसी प्रदर्शनीय आधार पर मनमानी अथवा अयुक्तियुक्त नहीं दर्शायी गयी है। ऐसी किसी परिस्थिति में कट–ऑफ तिथि का नियतीकरण सदैव कट–ऑफ तिथि के अंतर्गत न आनेवाले उम्मीदवारों के लिए कठिनाई के रूप में कार्य करता है। वह हस्तक्षेप का आधार नहीं हो सकता है। अतः, याचीगण हस्तक्षेप का मामला बनाने में विफल होते हैं।

13. अतः, यह न्यायालय इस मामले में कोई गुणागुण नहीं पाता है। तदनुसार, रिट आवेदनों को खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; fojUnj flg] e[; U;k;kèkh'k ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

बिगन मांझी

cuke

सेंट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड एवं अन्य

L.P.A. No. 343 of 2015 with I.A.No. 3564/2015. Decided on 6th November, 2015.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–अवयस्क दावेदार–उसके दावे के अस्वीकरण की संसूचना उसको कभी नहीं दी गयी थी और उसके अभ्यावेदनों के बावजूद अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए उसके मामले पर विचार नहीं किया गया था–सी॰ सी॰ एल॰ को अपीलार्थी की ओर सहानुभूतिपूर्ण रवैये के साथ मामले में कुछ निर्णय लेने का निर्देश दिया। (पैराएँ 2 से 4)

निर्णयज विधि.–(2007) 8 SCC 549—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Yogendra Prasad, For the Appellant/Petitioner; M/s Rajesh Lala, Arpit Kumar, For the Respondents.

विरेन्दर सिंह, मुख्य न्यायाधीश.–

<u>आई॰ ए॰ सं॰ 3564 वर्ष 2015</u>

संलग्न अपील दाखिल करने दो दिनों का विलंब प्रतीत होता है। हम एतद् द्वारा उक्त विलंब माफ करते हैं। तदनुसार, आई॰ ए॰ सं॰ 3564/2015 निपटायी जाती है।

<u>एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 343/2015</u>

अपीलार्थी रिट याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री योगेन्द्र प्रसाद एवं वर्तमान प्रत्यर्थीगण

सेन्ट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड (सी॰ सी॰ एल॰) के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राजेश लाला सुने गए। हमने आक्षेपित निर्णय का भी परिशीलन किया है।

2. वर्तमान मामले के विचित्र तथ्यों को दृष्टि में रखते हुए अपीलार्थी याची का मामला इसे देखते ही विलंबित दावा प्रतीत होता है, फिर भी इस पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है क्योंकि अपीलार्थी ने न केवल अपना पिता खोया है जो प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ का कर्मचारी था जिसकी मृत्यु सेवारत रहते हो गयी और बाद में वह अपनी माता का स्नेह भी गवाँ चुका है। जब अपीलार्थी ने अपने माता–पिता को खोया, वह स्वीकृत रूप से अवयस्क था और जनवरी, 2003 में अपने दावा के अस्वीकरण के बाद भी उसने काफी समय तक मामले पर जोर नहीं दिया जैसा प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ का दृष्टिकोण है जिसका अपीलार्थी यह प्राख्यान करते हुए अन्यथा जोरदार विवाद करता है कि उसके दावा के अस्वीकरण की संसूचना उसको कभी नहीं दी गयी थी और उसके अभ्यावेदनों के बावजूद अनुकंपा पर नियुक्ति के उसके मामले पर विचार नहीं किया गया था जिसने उसे इस न्यायालय के पास से आने के लिए मजबूर किया।

3. हम यह आशा करते हुए कि प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ अपीलार्थी रिट याची की ओर सहानुभूतिपूर्ण रुख अपनाते हुए मामले में कुछ निर्णय लेगा और वह भी यथाशीघ्र, हम कुछ समय के लिए वर्तमान अपील पर विचार करना प्रास्थगित करते हैं।

4. हम यह आशा भी करते हैं कि प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ अपीलार्थी रिट याची के मामले पर विचार करते हुए **मोहन महतो बनाम सेन्ट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड एवं अन्य, (2007)8 SCC 549,** मामले में विशेषत: पैरा 17 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के संप्रेक्षण को ध्यान में रखेंगे जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"17. ;g u rk lng e g vkj u gh fookn e fd vo;Ld dk vudik ij fu;fDr çnku dju d ekey ij ,u0 lh0 MCY;0 ,0 vd [kM 9.5.0 d mi[kM (iii) d fucèkukulkj fopkj fd, tku dh vko';drk FkhA mDr çkoèkku d fucèkukulkj] vihykFkh dk uke thfor jkLVj ij j[kk tkuk FkkA ml 18o"k dh vk; çkIr dju rd thfor jkLVj ij cuk jguk FkkA çR;fFk;k u mld vèkhu mu ij Mky x, viu dr0;k dk ikyu ugh fd;k FkkA blu ,d i{kh; nf"Vdk.k fy;k fd vkonu fofgr Qke e o"k 1999 e nkf[ky fd;k x;k FkkA 0;oLFkkiu d çkoèkkuk dk vuikyu dju d fy,] tk i{kk ij ckè;dkjh g] çR;Fkh d lnHkko vFkok vU;Fkk dk bl rF; l vkduk gkxk fd D;k blu bld vèkhu viu dr0;k dk fuogu fd;k Fkk ;k ughA bl ekey e] ;g u doy ,l dju e foQy jgk vkj@vFkok mi{kk fd;k cfYd tl ;gk igy minf'kr fd;k x;k g] blu nf"kr nf"Vdk.k fy;k fd vihykFkh d cM Hkkb d fu;kftr gku d dkj.k og vudik vkèkkj ij fu;fDr dk gdnkj ugh FkkA bl çdkj] vihykFkh dk vudik ij fu;fDr dk ykHk nu l budkj dju e ftlu oLrr% çR;Fkh dk çfjr fd;k] ;g vueku yxku d fy, [kyk gA ge vk'kk djr g fd ,d ykd {k= miØe] tk Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 12 d vFk d vrxr ^jkT;* g] u doy fu"i{k :i l cfYd ;fDr;Dr :i l vkj lnHkkoiod Hkh ÑR; djA bl ekey e] ge lr"V g fd çR;Fkh dh dkjokb fu"i{k vFkok ;fDr;Dr vFkok lnHkkoi.k ugh gA***

5. दिनांक 7.12.2015 को पुन: मामला रखा जाए।

6. प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ के विद्वान अधिवक्ता के कहने पर कोर्ट मास्टर के हस्ताक्षर एवं मुहर के अधीन आदेश की प्रति अधिवक्ता श्री राजेश लाला को दी जाएगी ताकि किसी विलंब के बिना इसे संबंधित प्राधिकारी के समक्ष रखा जा सके।

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

ओम प्रकाश राठौर उर्फ ओम प्रकाश कुमार राठौर एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 1020 of 2013. Decided on 27th November, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 414, 420, 467, 448, 471 एवं 109—खान एवं खनिज (विकास एवं विनियमन) अधिनियम, 1957—धाराएँ 4 एवं 12 सहपठित भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धाराएँ 4, 9 एवं 12—छल एवं कूटरचना–संज्ञान–सी॰ जे॰ एम॰ को पी॰ सी॰ अधिनियम के अधीन अपराधों का विचारण करने के लिए राज्य सरकार द्वारा सशक्त नहीं बनाया गया है–केवल विशेष न्यायाधीश पी॰ सी॰ अधिनियम के अधीन अपराधों का संज्ञान ले सकता है–आदेश का वह भाग जिसके अधीन याचीगण के विरुद्ध पी॰ सी॰ अधिनियम के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया है, अपास्त किए जाने का दायी है।

(पैराएँ 6 से 8)

अधिवक्तागण.–Md. Zaid Ahmad, For the Petitioners; Mr. S.K. Srivastava, For the State.

आदेश

याचीगण के विद्वान अधिवक्ता एवं राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन जी॰ आर॰ सं॰ 251 वर्ष 2010 में मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, सिमडेगा द्वारा पारित दिनांक 29.3.2012 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 414, 420, 467, 468, 471 एवं 109 के अधीन, एम॰ एम॰ डी॰ आर॰ अधिनियम की धाराओं 4 एवं 12 के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 4, 9 एवं 12 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया है।

3. अभियोजन मामले के मुताबिक, जब सिमडेगा में पुलिस द्वारा पाँच डंपरों को बीच रास्ते में पकड़ा गया था, चालकों को ट्रांजिट परमिशन, ड्राइविंग लाइसेंस आदि जैसे दस्तावेजों को प्रस्तुत करने के लिए कहा गया था और सत्यापन पर ट्रांजिट परमिट कूटरचित पाया गया था और कि चेकपोस्ट पर उन डंपरों के संबंध में प्रविष्टि नहीं की गयी थी। ऐसे अभियोग पर जब आरोप-पत्र दाखिल किया गया था, पूर्वोक्तानुसार अपराध का संज्ञान याचीगण के विरुद्ध लिया गया था जो चुनौती के अधीन है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री जैद अहमद का एकमात्र बिंदु यह है कि जहाँ तक भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन अपराध का संबंध है, संज्ञान इस तथ्य के कारण दोषपूर्ण है कि मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 3 के निबंधनानुसार विशेष न्यायाधीश की शक्ति निहित कभी नहीं की गयी है।

5. याचीगण के पूर्वोक्त प्रतिवाद का खंडन राज्य की ओर से नहीं किया गया है।

6. स्वीकृत रूप से, मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, सिमडेगा ने भारतीय दंड संहिता एवं अन्य अधिनियमों के अधीन अपराधों के साथ भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया है, यद्यपि मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी को भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन अपराधों का विचारण करने के लिए राज्य सरकार द्वारा सशक्त नहीं बनाया गया है। भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 4 का पठन निम्नलिखित है:–

*"4.. **fo'k"k U;k;kèkh'kk }kjk fopkj.k d ekey-**&(1) nM ifØ;k lfgrk] 1973 (1974 dk l0 2) e ;k rRle; ioÙk fdlh vU; fofèk e fdlh ckr d gkr g, Hkh èkkjk 3 dh mièkkjk (1) e fofufn"V vijkèkk dk fopkj.k fo'k"k U;k;kèkh'kk }kjk gh fd;k tk, xkA*

(2) .....

(3) .....

(4) ....."

7. इस प्रकार यह प्रतीत होता है कि धारा 4 की उपधारा (1) प्रावधानित करती है कि केवल विशेष न्यायाधीश धारा 3 की उपधारा (1) के अधीन विनिर्दिष्ट अपराधों का विचारण करेगा। उसमें विनिर्दिष्ट अपराध एवं उनके संबंध में षडयन्त्र केवल विशेष न्यायाधीश द्वारा विचारण योग्य हैं केवल जो अपराध का संज्ञाल ले सकता है।

8. उस स्थिति में, दिनांक 29.3.2012 के आदेश का वह भाग जिसके अधीन भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन अपराधों का संज्ञान याचीगण के विरुद्ध लिया गया है, अपास्त किए जाने के दायी हैं और तद्नुसार इसे अपास्त किया जाता है।

9. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अंशत: अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn ,o çeFk iVuk; d] U;k;efrx.k

हरिपद मोदी एवं अन्य (1056 में)

कुंवर मोदी एवं अन्य (1023 में)

cuke

झारखंड राज्य (दोनों में)

Cr. Appeal (D.B.) Nos. 1056 with 1023 of 2007. Decided on 7th October, 2015.

एस॰ टी॰ सं॰ 369 वर्ष 2002 में तत्कालीन अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ I, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 12.7.2007 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 17.7.2007 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/149, 324, 323 एवं 325—हत्या–विधिविरुद्ध जमाव का सामान्य उद्येश्य–दोषसिद्धि–अभियोजन मामला चिकित्सीय साक्ष्य के साथ पूर्णत: संगत नहीं है–झगड़ा जो अचानक हुआ था के क्रम में मृतक की हत्या की गयी थी–एक के सिवाय समस्त अपीलार्थियों को विचारण न्यायालय द्वारा भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/149 के अधीन गलत रूप से दोषसिद्ध किया गया था–दोषसिद्धि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 भाग II के अधीन उपांतरित की गयी और दंडादेश पहले ही भुगत ली गयी अवधि तक घटाया गया।

(पैराएँ 7 से 13)

अधिवक्तागण.–Mr. N.K. Sahani, For the Appellants; Mrs. Lily Sahay, Krishna Shankar, For the State.

आदेश

न्यायालय द्वारा.–चूँकि दोनों अपीलें एक ही निर्णय से उद्भूत हो रही है, उन्हें साथ सुना गया था और इसे एक ही आदेश द्वारा निपटाया जा रहा है।

2. अपीलार्थीगण हरि पद मोदी, लखीराम मोदी एवं राम पद मोदी (सभी दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 1056 वर्ष 2007 में अपीलार्थीगण) और दांडिक अपील (डी॰ बी॰) सं॰ 1023 वर्ष 2007 के अन्य अपीलार्थीगण अर्थात् कँवर मोदी, जगनू मोदी, प्रथम मोदी, लोढ़ा मोदी, कंटू मोदी, कमल मोदी, बलराम

मोदी, धर्म मोदी का शिबू मोदी (जिसकी मृत्यु इस अपील के लंबित रहने के दौरान हो गयी) के साथ जग्गू रजवार की हत्या करने के लिए और प्रफुल्या रजवार और पारु रजवारिन की हत्या का प्रयास करने के लिए विचारण किया गया था। न्यायालय ने समस्त अपीलार्थीगण को अपने सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में जग्गू रजवार की हत्या करने का दोषी पाने पर उनको सत्र विचारण सं० 369 वर्ष 2002 में पारित दिनांक 12.7.2007 के निर्णय के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 302/149 के अधीन दोषसिद्ध किया और आगे अपीलार्थीगण कमल मोदी, बलराम मोदी एवं धर्मा मोदी को क्रमशः भारतीय दंड संहिता की धाराओं 324, 323 एवं 325 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया। तद्नुसार, विचारण न्यायालय ने समस्त अपीलार्थीगण को भा० दं० सं० की धारा 302/149 के अधीन अपराध के लिए आजीवन कारावास भुगतने और 500/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश दिया और आगे अपीलार्थीगण कमल मोदी, बलराम मोदी एवं धर्मा मोदी को क्रमशः भा० दं० सं० की धाराओं 324, 323 एवं 325 के अधीन दो वर्ष छह माह एवं दो वर्ष का कारावास भुगतने का दंडादेश दिया। धर्मा मोदी को 500/- रुपया के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश भी दिया गया था।

3. अभियोजन मामला यह है कि दिनांक 8.9.2002 को अपराह्न लगभग 7.30 बजे अपीलार्थी कुँवर मोदी मृतक जग्गू रजवार के घर आया और उसको हरि मंदिर ले गया। वहाँ उन दोनों के बीच झगड़ा हुआ क्योंकि मंदिर के पुनर्निर्माण के लिए योगदान के संबंध में कुछ विवाद उद्भूत हुआ। उस क्रम में अपीलार्थीगण लखीराम मोदी एवं हरिपद मोदी जो टांगी लिए थे, रामपद मोदी, लोढ़ा मोदी एवं शिबू मोदी फरसा लिए थे और शेष के पास लाठी थी ने जग्गू रजवार पर प्रहार किया। उस क्रम में, जब सूचक प्रफुल्या रजवार अ० सा० 5 और मृतक की पत्नी पारु रजवारिन अ० सा० 6 जग्गू रजवार (मृतक) को बचाने आए, उन पर भी प्रहार किया गया था जिसके परिणामस्वरुप पारु रजवारिन को अपने हाथ पर उपहति आयी। इस बीच, घटनास्थल पर मृतक की मृत्यु हो गयी। इस पर सूचक एवं अन्य मृत शरीर को उनके घर लाए।

4. अगले दिन अर्थात् दिनांक 9.9.2002 को चास मुफस्सिल पुलिस थाना का प्रभारी-अधिकारी एस० आई० आर० ए० खान गाँव आया, सूचक अ० सा० 5 प्रफुल्या रजवार का फर्दबयान (प्रदर्श 2) दर्ज किया जिसमें उसने पूर्वोक्तानुसार घटना के बारे में बताया।

5. फर्दबयान के आधार पर, औपचारिक प्राथमिकी (प्रदर्श 3) लिखी गयी थी और इन अपीलार्थीगण तथा शिबू मोदी (जिसकी मृत्यु अपील लंबित रहने के दौरान हो गयी) के विरुद्ध मामला दर्ज किया गया था। आई० ओ० ने मृतक के मृत शरीर की मृत्यु समीक्षा करने के बाद मृत शरीर शव परीक्षण के लिए भेजा जिसे अ० सा० 7 डॉ० बी० प्रसाद द्वारा किया गया था जिन्होंने मृत शरीर का शव परीक्षण करने पर निम्नलिखित उपहतियों को पाया:–

(i) flj dh [kky d eè; ij 5" x 1/4" x LdkYi vfLFk rd xgjk eghu dVu dk t[eA

(ii) [kkiMh d ck, VEikjy Hkkx ij 3 ,o 1/2" x 1/4" x 1/4" dk eghu ;k rt èkkjnkj gfFk;kj l dVu dk t[eA

(iii) [kkiMh d ck, VEikjy Hkkx ij 4" x 1/4" x LdkYi vfLFk rd xgjk rt èkkjnkj gfFk;kj l dVu dk t[eA

(iv) BMMh d eè; ij 4" x 1/4" x vfLFk rd xgjk rt èkkjnkj gfFk;kj l dVu dk t[eA

(v) [kkiMh d lkeu oky Hkkx d ck, Hkkx ij 3" x 1/4" x [kkiMh dh vfLFk rd xgjk rt èkkjnkj gfFk;kj l dVu t[eA

विच्छेदन करने पर.—लेफ्ट टेम्पोरल एवं ऑक्सीपीटल अस्थि का फ्रैक्चर पाया गया था। ब्रेन सतह के उपर रक्त एवं रक्त का थक्का पाया गया था। मेनिंजेस एवं ब्रेन अक्षुण्ण किंतु कंट्यूज्ड थे। क्रेनियल कैविटी रक्त एवं रक्त के थक्कों से भरी पायी गयी थी। बायाँ फेफड़ा एचिमोज्ड पाया गया था। बायीं दूसरी से चौथी पसली टूटी पायी गयी थी। थोरेसिक कैविटी के बाएँ भाग पर रक्त एवं रक्त के थक्के थे।

डॉक्टर ने इस मत के साथ शव परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 1) जारी किया कि मृत्यु ब्रेन एवं फेफड़ों जैसे महत्वपूर्ण अंगों को कारित उपहतियों के कारण अत्यधिक हेमरेज एवं आघात के कारण कार्डियो-रेसपिरेटरी फेल्योर के कारण कारित हुई थी।

उसी दिन, डॉक्टर ने सूचक अ० सा० 5 प्रफुल्या रजवार का परीक्षण भी किया और निम्नलिखित उपहतियों को पाया:—

(i) rt èkkj oky gfFk;kj }kjk dkfjr nk, Ldkijy {k= ij 1½" x 1/6" x 1/6" dk rt èkkjnkj gfFk;kj l dVu dk t[eA

(ii) Ldkiyj {k= d nk, Hkkx ij 4" x1/8" dk [kjkpA

(iii) dej d nk, Hkkx ij 3/4" x 1/4" dk [kjkpA

(iv) ihB d eè; Hkkx ij 1/4" x 1/4" dk [kjkpA

डॉक्टर ने इस मत के साथ उपहति रिपोर्ट (प्रदर्श 4) जारी किया कि उपहतियाँ जिन्हें सामान्य पाया गया था तेज धार वाले हथियार द्वारा कारित की गयी हैं जबकि उपहति सं० 2 कड़े भोथरे पदार्थ द्वारा कारित की गयी है।

डॉक्टर ने पारु रजवारिन का परीक्षण भी किया और निम्नलिखित उपहतियों को पाया:—

(i) gkFk d Mkly lrg ij 4" x 3½" dk ltuA

(ii) jfM;l d fupy Nkj ij vfLFkHkxA

डॉक्टर ने इस मत के साथ उपहति रिपोर्ट (प्रदर्श 4/1) जारी किया कि दोनों उपहति कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित की गयी थी।

6. इस बीच, आई० ओ० ने गवाहों का बयान दर्ज किया। अन्वेषण पूरा होने पर, जब अपीलार्थीगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था, न्यायालय ने इन समस्त अपीलार्थीगण के और शिबू मोदी (जिसकी मृत्यु अपील लंबित रहने के दौरान हो गयी) के विरुद्ध संज्ञान लिया। मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किए जाने पर, अपीलार्थीगण का विचारण किया गया था जिसके दौरान अभियोजन ने आठ गवाहों का परीक्षण किया। उनमें से, अ० सा० 1 बसु रजवार और अ० सा० 2 रूपलाल रजवार अनुश्रुत गवाह हैं जिन्होंने परिसाक्ष्य दिया है कि उन्हें पता चला कि झगड़ा के दौरान अपीलार्थीगण द्वारा जग्गू रजवार की हत्या कर दी गयी थी। अ० सा० 3 अनिल रजवार, अ० सा० 4 अमूल्य रजवार और अ० सा० 5 प्रफुल्ल रजवार, सभी मृतक के पुत्र, और मृतक की पत्नी अ० सा० 6 पारु रजवारिन चश्मदीद गवाह हैं। उनके अनुसार, जब जग्गू रजवार अपने घर में था, अपीलार्थीगण में से एक कुँवर मोदी उसके घर आया और उसे हरि मंदिर ले गया जहाँ झगड़ा हुआ क्योंकि हरि मंदर के पुनर्निर्माण के लिए दिए गए योगदान से संबंधित कुछ विवाद उद्भूत हुआ। समय के उस बिंदु पर अपीलार्थीगण में से एक कुँवर मोदी ने अन्य को मृतक की हत्या करने की आज्ञा दी जो यह सुनने पर चिल्लाया। चीख सुनने पर, समस्त पूर्वोक्त गवाह अ० सा० 3, 4, 5 एवं 6 घटना स्थल पर आए और अपीलार्थीगण हरि पद मोदी एवं लखीराम मोदी को टांगी से लैस और राम पद मोदी को फरसा लिए और शेष को लाठी लिए देखा। उन सबों ने मृतक को घेर कर

उस पर प्रहार किया। जब अ॰ सा॰ 5 एवं 6 उसको बचाने गए, उन पर भी प्रहार किया गया था जिसके परिणामस्वरुप अ॰ सा॰ 6 के हाथ का अस्थिभंग हो गया। इस बीच, घटना स्थल पर मृतक की मृत्यु हो गयी जिसका मृत शरीर घर लाया गया था।

7. अभियोजन मामला बंद होने पर, जब दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अपीलार्थीगण के समक्ष अपराध में फँसाने वाला साक्ष्य रखा गया था, उन्होंने यह अभिवचन करके इनकार किया कि वस्तुत: मृतक और उसके पुत्रों द्वारा अपीलार्थीगण पर प्रहार किया गया था जिसके परिणामस्वरुप अपीलार्थीगण हरि पद मोदी एवं लखीराम मोदी को उपहतियाँ आयी थी और उसके लिए मृतक और उसके पुत्रों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन मामला दर्ज किया गया था। किंतु, विचारण न्यायालय ने उक्त तथ्य, जिसे उक्त मामले के निर्णय को दाखिल करके अभिलेख पर लाया गया था को विचार में लिए बिना चश्मदीद गवाहों के परिसाक्ष्य पर अंतर्निहित विश्वास किया और अपीलार्थीगण को मृतक की हत्या करने का दोषी पाया और तद्नुसार पूर्वोक्तानुसार दोषसिद्धि का आदेश एवं दंडादेश दर्ज किया जो चुनौती के अधीन है।

8. अपीलार्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री एन॰ के॰ सिन्हा निवेदन करते हैं कि लगभग समस्त अभियोजन गवाहों द्वारा असल में स्वीकार किया गया है कि घटना मृतक एवं अपीलार्थीगण के बीच झगड़ा के क्रम में हुई थी जिसके दौरान कुछ अपीलार्थीगण को मृतक पर प्रहार करता हुआ अभिकथित किया गया था जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु हो गयी। किंतु गवाहों के परिसाक्ष्यों को स्वीकार करते हुए, अपीलार्थीगण को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अपराध करता हुआ नहीं कहा जा सकता है क्योंकि स्वयं गवाहों के परिसाक्ष्यों की दृष्टि में, घटना झगड़ा के क्रम में अचानक हुई थी और तद्द्वारा, मामला भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 300 के चतुर्थ अपवाद के अंतर्गत आएगा और ऐसी स्थिति में अपीलार्थीगण ने भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि के दायी नहीं होंगे। आगे, यह निवेदन किया गया था कि उपहतियाँ, जिन्हें मृतक के शरीर पर पाया गया था, अ॰ सा॰ 7 डॉक्टर के अनुसार तेज धारदार भारी हथियार जैसे टांगी द्वारा कारित की गई है एवं डॉक्टर के अनुसार समस्त उपहतियाँ टांगी द्वारा कारित की गयी हैं और तद्द्वारा यह आसानी से कहा जा सकता है कि हरि पद मोदी एवं लखीराम मोदी से भिन्न किसी भी अपीलार्थीगण ने मृतक पर प्रहार नहीं किया था और तद्द्वारा हरि पद मोदी एवं लखीराम मोदी से भिन्न अपीलार्थीगण की भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दोषसिद्धि अवैध है। इसी समय पर, हरि पद मोदी एवं लखीराम मोदी को भी यहाँ उपर कथित कारणों से भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए अवैध तौर पर दोषसिद्ध किया गया कहा जा सकता है एवं तद्द्वारा विचारण न्यायालय ने दोषसिद्धि एवं दंडादेश अभिलिखित करने में अवैधता किया है एवं इसलिए, यह अपास्त किए जाने योग्य है।

9. इसके विरुद्ध राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि अभियोजन का मामला यह है कि अपीलार्थी कुँवर मोदी मृतक के घर आया और मृतक को हरि मंदिर ले गया जहाँ अन्य अपीलार्थीगण हथियारों से लैस थे और वहाँ बचाव के मुताबिक झगड़ा के क्रम में मृतक की हत्या की गयी थी। किंतु मामले में सामने आने वाली परिस्थितियाँ सुझाती हैं कि कुँवर मोदी मृतक की हत्या करने के आशय से उसको हरि मंदिर लाया, जहाँ समस्त अपीलार्थीगण ने अपने सामान्य उद्देश्य को अग्रसर करने में मृतक की हत्या की और तद्द्वारा विचारण न्यायालय दोषसिद्धि का आदेश एवं दंडादेश दर्ज करने में बिल्कुल न्यायोचित था और इसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नही है।

10. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिलेख के परिशीलन पर हम पाते हैं कि अभियोजन मामला जैसा दोनों पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रक्षेपित किया गया है यह है कि अपीलार्थी कुँवर मोदी घटना के दिन पर मृतक के घर आया और मृतक को हरि मंदिर ले गया जहाँ झगड़ा हुआ। अ॰ सा॰ 6 के साक्ष्य के मुताबिक वह झगड़ा मृतक को मंदिर ले जाने के एक घंटा बाद हुआ। उस झगड़ा के दौरान मृतक पर प्रहार किया गया था। अभियोजन का मामला यह है कि लखीराम मोदी एवं हरि पद मोदी टांगी लिए हुए थे जबकि अपीलार्थी राम पद मोदी के पास फरसा था और शेष अपीलार्थीगण लाठी लिए थे जिन्होंने गवाहों के अनुसार मृतक पर प्रहार किया। किंतु डॉक्टर के साक्ष्य से, यह प्रतीत होता है कि मृतक के शरीर पर पाँच उपहतियाँ आयी थी जो समस्त डॉक्टर के अनुसार तेज धार वाले भारी हथियार से कारित की गयी थी जिसने खोपड़ी का फ्रैक्चर भी कारित किया था और इन परिस्थितियों के अधीन हथियार टांगी हो सकता था न कि फरसा। इसी समय पर, डॉक्टर ने परिसाक्ष्य दिया कि उसने कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित कोई उपहति नहीं पाया था। इन परिस्थितियों के अधीन, कोई आसानी से इस निष्कर्ष पर आ सकता है कि केवल दो व्यक्तियों अर्थात् लखीराम मोदी एवं हरिपद मोदी ने उसकी मृत्यु में परिणत होने वाली उपहतियाँ कारित करते हुए मृतक पर प्रहार किया था। जहाँ तक अन्य अपीलार्थीगण का संबंध है, उन्हें इन तथ्यों एवं परिस्थितियों में सामान्य उद्देश्य शेयर करते हुए नहीं कहा जा सकता है। किंतु, निवेदन जिसे राज्य की ओर से किया गया है यह है कि चूँकि अपीलार्थीगण में से एक मृतक को मंदिर ले गया था जहाँ अन्य अपीलार्थीगण अपने साथ हथियार लिए वहाँ थे और उन्होंने मृतक पर प्रहार किया था और तद्द्वारा यह आसानी से कहा जा सकता है कि समस्त अपीलार्थीगण सामान्य उद्देश्य शेयर कर रहे थे। इन तथ्यों एवं परिस्थितियों में, राज्य की ओर से किया गया निवेदन स्वीकार्य नहीं है। हम दोहरा सकते हैं कि अभियोजन मामले के मुताबिक अपीलार्थीगण में से एक मृतक के घर आया था और मृतक को हरि मंदिर ले गया था जहाँ यहाँ उपर पहले ही कथित कारण से उनके बीच झगड़ा हुआ था। अ॰ सा॰ 6 के साक्ष्य के मुताबिक वह झगड़ा मृतक को ले जाने के समय से एक घंटा बाद हुआ था। उस स्थिति में, हम राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के इस दृष्टिकोण को अनुमोदित करने में अक्षम हैं कि समस्त अपीलार्थीगण सामान्य उद्देश्य शेयर कर रहे थे। इन परिस्थितियों के अधीन, हम पाते हैं कि अपीलार्थीगण लखीराम मोदी एवं हरि पद मोदी के सिवाए समस्त अपीलार्थीगण को विचारण न्यायालय द्वारा भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302/149 के अधीन गलत रूप से दोषसिद्ध किया गया था और तद्नुसार उनके विरुद्ध दर्ज किया गया दोषसिद्धि का आदेश बिल्कुल गलत प्रतीत होता है और इसलिए उन्हें उक्त आरोप से दोषमुक्त किया जाता है।

11. यह कथन किया जाए कि अपीलार्थी धरमा मोदी को भी अ॰ सा॰ 6 को फ्रैक्चर कारित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 325 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है। इन तथ्यों एवं परिस्थितियों में, हम दोषसिद्धि के आदेश में कोई दुर्बलता नहीं पाते हैं। अत:, उसे तथ्यों एवं परिस्थितियों में पहले ही भुगत ली गयी अवधि के लिए दंडादेशित किया जा रहा है। जहाँ तक अपीलार्थीगण कमल मोदी एवं बलराम मोदी का संबंध है, वे क्रमश: भारतीय दंड संहिता की धाराओं 324 एवं 323 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किए गए प्रतीत होते हैं, किंतु, हम साक्ष्य के संवीक्षण पर पाते हैं कि किसी भी गवाह ने उनके विरुद्ध सूचक अ॰ सा॰ 5 अथवा अ॰ सा॰ 3 को उपहति कारित करता हुआ अभिकथित नहीं किया है और तद्द्वारा उनके विरुद्ध दर्ज दोषसिद्धि एवं दंडादेश अपास्त किया जाता है और उनको उन आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है।

12. अपीलार्थीगण लखीराम मोदी एवं हरि पद मोदी के मामले पर आते हुए, जिन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 302/149 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है किंतु इस मामले में समाने आने वाले तथ्य एवं परिस्थितियाँ पर्याप्त रूप से चित्रित करते हैं कि जो भी घटना हुई, वह झगड़ा के क्रम में हुई जिस तथ्य को लगभग समस्त अभियोजन गवाहों द्वारा स्वीकार किया गया है। इसके अतिरिक्त, प्रदर्श A जो अपीलार्थियों में से एक द्वारा मृतक तथा उसके पुत्रों अ॰ सा॰ 3,4,5 एवं अन्य लोगों के विरुद्ध दर्ज प्रति मामला में पारित निर्णय है से प्रतीत होता है कि अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 324, 148 एवं 149 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है। इस प्रकार, इसमें कोई संदेह नहीं बना रहता है कि मृतक की झगड़ा के क्रम में हत्या की गयी थी जो अचानक हुआ प्रतीत होता है जिसके दौरान अपीलार्थीगण अर्थात् हरि पद मोदी एवं लखीराम मोदी ने टांगी से प्रहार किया था। दोनों अपीलार्थियों को मृतक पर प्रहार करने के बाद क्रूर एवं असामान्य तरीके से कृत्य करता हुआ अभिकथित कभी नहीं किया गया है और तद्द्वारा मामला भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के चतुर्थ अपवाद के अंतर्गत आता है। तद्नुसार, उन दोनों को भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302 एवं 149 के बजाए भारतीय दंड संहिता की धारा 304 (भाग II) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जाता है और पहले ही भुगत ली गयी अवधि का दंडादेश दिया जाता है।

13. परिणामस्वरुप, अपीलार्थीगण हरि पद मोदी, लखीराम मोदी, एवं रामपद मोदी जो विगत 13 वर्ष से अभिरक्षा में है को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उनकी आवश्यकता नहीं है।

14. परिणामस्वरुप, यह अपील अंशतः अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; jfo ukFk oek] U;k;efr

नेपाल कुंभकर

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 347 of 2014. Decided on 26th November, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 376/511—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 227—बलात्कार करने का प्रयास–मामले से उन्मोचन इप्सित करने वाले आवेदन का अस्वीकरण–उन्मोचन के लिए आवेदन पर विचार करने के समय, न्यायालय अभियोजन के मुखपत्र के रूप में कृत्य नहीं कर सकता है अथवा डाकखाना के रूप में कृत्य नहीं कर सकता है और यह इंगित करने के लिए साक्ष्य की छानबीन कर सकता है कि क्या अभिकथन निराधार हैं या नहीं ताकि उन्मोचन आदेश पारित किया जा सके–अनेक व्यक्तियों ने याची का नाम प्रकट किया है और अभियोजन विवरण का पूर्ण समर्थन किया है–याची द्वारा किया गया अन्यत्र होने के अभिवचन की सत्यता का अधिमूल्यन केवल विचारण के दौरान किया जा सकता है–पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया गया। (पैराएँ 6 से 9)

निर्णयज विधि.–(2010) 9 SCC 368; (2013) 3 SCC 330—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Naveen Kumar Jaiswal, For the Petitioner; A.P.P., For the State; M/s Asit Baran Mahata, Mahesh Kumar Mahto, For the O.P. No.2.

आदेश

इस पुनरीक्षण आवेदन में भारतीय दंड संहिता की धाराओं 376/511 के अधीन संस्थित चास (मुफ्फसिल) पी॰ एस॰ केस सं॰ 149 वर्ष 2012 से उद्भूत होने वाले एस॰ टी॰ सं॰ 220 वर्ष 2013 में विद्वान

अपर सत्र न्यायाधीश II, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 3.4.2014 के आदेश को चुनौती दी गयी है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'संहिता') की धारा 227 के अधीन अपने उन्मोचन के लिए याची द्वारा दाखिल याचिका अस्वीकार कर दिया गया है।

2. अनावश्यक विवरणों से रहित कथन किए जाने के लिए आवश्यक तथ्य ये हैं कि सूचक किरण देवी की प्रेरणा पर पूर्वोक्त मामला इस अभिकथन के साथ संस्थित किया गया था कि दिनांक 16.12.2012 को अपराह्न लगभग 7 बजे जब वह अपने कर्तव्य से लौट रही थी, याची नेपाल कुंभकर एवं किसी विश्वनाथ कुंभकर जिन्हें वह घटना के पहले से जानती थी, मोटर साइकिल पर आए और बीच रास्ते में उसे रोका और सूचक को पकड़ लिया और मोटरसाइकिल से उतरे। दोनों उक्त व्यक्तियों ने उसका बलात्कार करने के आशय से उसकी पिटाई की और उसके वस्त्रों को फाड़ दिया और शोर नहीं करने की धमकी दी। अभियुक्तों ने उसे गंभीर परिणामों की धमकी भी दिया यदि वह शोर करती है किंतु उसने उनकी धमकी को अनदेखा करते हुए शोर किया जिसके बाद अनेक व्यक्ति उसका शोर सुन कर घटनास्थल के निकट एकत्रित हुए। तत्पश्चात अभियुक्तगण भाग गए।

3. अन्वेषण पूरा करने के बाद, पुलिस ने पूर्वोक्त धाराओं के अधीन आरोप-पत्र दाखिल किया और तद्नुसार संज्ञान लिया गया था। तत्पश्चात्, मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था जहाँ वर्तमान याची द्वारा उन्मोचन याचिका दाखिल की गयी थी किंतु इसे यह अभिनिर्धारित करते हुए कि अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त आधार है, इसे अवर न्यायालय द्वारा आक्षेपित आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश का विकृत एवं विधि में दोषपूर्ण के रूप में विरोध करते हुए गंभीर रूप से प्रतिवाद किया कि अवर न्यायालय अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का सही परिप्रेक्ष्य में अधिमूल्यन करने में विफल रहा और कि केस डायरी के विभिन्न पैराग्राफों में अन्वेषण के दौरान यह सामने आया है कि अभिकथित घटना के समय पर याची शताब्दी परियोजना, बरोरा क्षेत्र, बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ में अपने कार्य स्थल पर था और प्रभारी अभियन्ता द्वारा प्रमाण पत्र भी जारी किया गया था और याची को पक्षों के बीच पूर्व दुश्मनी के आधार पर इस मामले में झूठा आलिप्त किया गया था। यह प्रतिवाद भी किया गया था कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 376/511 के अधीन अपराध गठित करने के लिए अभिलेख पर कोई भी तत्व उपलब्ध नहीं है और अभिकथित अपराध में इस याची की सह अपराधिता दर्शाने के लिए साक्ष्य बिल्कुल नहीं है किंतु अवर न्यायालय ने उन साक्ष्य पर विचार किए बिना आक्षेपित आदेश द्वारा उसकी उन्मोचन याचिका अस्वीकार कर दिया।

5. उक्त निवेदनों का खंडन करते हुए, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री महतो ने प्रतिवाद किया कि अवर न्यायालय ने याची की उन्मोचन के लिए प्रार्थना अस्वीकार करते हुए सही प्रकार से अभिनिर्धारित किया कि याची द्वारा किया गया अन्यत्र होने के अभिवचन पर विचारण के दौरान विचार किया जाएगा और इस चरण पर ऐसे साक्ष्य की सत्यता को आँका नहीं जा सकता है। यह निवेदन भी किया गया है कि इस चरण पर अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का विस्तारपूर्वक परीक्षण एवं मामले के पक्ष-विपक्ष में अतिगामी जाँच अनुज्ञेय नहीं है।

6. विद्वान अधिवक्ताओं के परस्पर विरोधी निवेदनों पर आने के पहले मैं संहिता की धारा 227 के विस्तार का परीक्षण करना आवश्यक महसूस करता हूँ। यह सत्य है कि उन्मोचन के लिए आवेदन पर विचार करते समय न्यायालय अभियोजन के मुखपत्र के रूप में अथवा डाकघर के रूप में कृत्य नहीं कर सकता है और यह इंगित करने के लिए साक्ष्य की छानबीन कर सकता है कि अभिकथन आधारहीन

हैं या नहीं ताकि उन्मोचन आदेश पारित किया जा सके। यह पूर्व से प्रचलित है कि उन्मोचन के लिए आवेदन पर विचार करने के चरण पर न्यायालय को इस धारणा के साथ अग्रसर होना होगा कि अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लायी गयी सामग्री सत्य है और यह पता लगाने की दृष्टि से उक्त सामग्री का मूल्यांकन करना होगा कि क्या उससे सामने आने वाले तथ्य उनके अंकित मूल्य पर लिए जाने पर अभिकथित अपराध गठित करने वाले समस्त अवयवों को प्रकट करते हैं। **सज्जन कुमार बनाम सी० बी० आई०, (2010)9 SCC 368,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस बिंदु पर विधि का सारगर्भित रूप से विश्लेषण किया गया है जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 19 पर निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

*"19. ;g Li"V g fd vkjfHkd pj.k ij ;fn etcr lng g tk U;k;ky; dk ;g lkpu dh vkj y tkrk g fd ;g mièkkfjr dju dk vkèkkj g fd vfHk;Dr u vijkèk fd;k g] rc U;k;ky; dk ;g dgu dh NV ugh g fd vfHk;Dr d fo#) vxlj gku d fy, i;klr vkèkkj ugh gA vfHk;Dr d nk"k dh mièkkj.kk ftl vkjfHkd pj.k ij fd;k tkuk g doy çFke n"V;k ;g fofuf'pr dju d ç;ktu l g fd D;k U;k;ky; dk fopkj.k gr vxlj gkuk pkfg, ;k ughA ;fn lk{; ftl nu dk çLrko vfHk;ktu nrk g vfHk;Dr dk nk"k fl) djrk g] Hky gh çfr ijh{k.k e pukrh vFkok cpko lk{; ;fn gk] }kjk [kfMr fd, tku d igy i.kr% Lohdkj fd;k tkrk g] ;g ugh n'kk ldrk g fd vfHk;Dr u vijkèk fd;k g] rc fopkj.k gr vxlj gku dk i;klr vkèkkj ugh gkxkA**

एक अन्य मामले **राजीव थापर एवं अन्य बनाम मदन लाल कपूर, (2013)3 SCC 330,** में समरुप विवाद्यक अंतर्ग्रस्त था और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने परिवाद मामले में उन्मोचन याचिका पर विचार करते हुए पैराग्राफ 28 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

*^^;g vfHk;Dr d fo#) vfHk;ktu@ifjoknh }kjk fd, x, vfHkdFkuk dh lR;rk vFkok vU;Fkk dk eY;kdu dju dk pj.k ugh gA blh çdkj l] ;g ;Hkh fofuf'pr dju dk pj.k ugh g fd vfHk;Dr dh vkj l fd;k x;k cpko fdruk otunkj gA Hky gh vfHk;Dr vfHk;ktu@ifjoknh }kjk fd, x, vfHkdFkuk e dN lng n'kku e lQy gkrk g] fopkj.k d igy vfHk;Dr dk mUekfpr djuk vuuK; gkxkA ,lk blfy, g D;kfd bldk ifj.kke vfHk;ktu@ifjoknh dk bl fl) dju d fy, lk{; nu dh vuefr fn, fcuk vfHk;ktu@ifjoknh }kjk fd, x, vfHkdFkuk dk vfrerk nu e gkxkA fdr] bldk foijhr lR; ugh g D;kfd Hky gh fopkj.k d lkFk vxlj gvk tkrk g] ;g vfHk;Dr dk fdlh vlèkk; ifj.kkek d vè;èkhu ugh djrk gA vfHk;Dr vHkh Hkh fofèk d vu#i lk{; ndj viuk cpko LFkkfir djd lQy gku dh voLFkk e gkxkA fofèkd voLFkk ?kkf"kr djr g,] bl U;k;ky; }kjk fn, x, fu.k;k dh vrghu lph g fd ,l ekey e tgk vfHk;ktu@ifjoknh u yxk, x, leLr vkjkik d leLr vo;ok dk lkeu ykr g, vfHkdFku fd;k g vkj U;k;ky; d le{k lkexh çLrr fd;k g] çFke n"V;k fd, x, vfHkdFkuk dh lR;rk lkf{;r djr g,] fopkj.k djuk gh gkxkA**

7. प्रकटत:, उक्त दो निर्णयों की दृष्टि में यह आसानी से निष्कर्षित किया जा सकता है कि आरोप विरचित करने अथवा अभियुक्त को उन्मोचित करने के चरण पर न्यायालय ने प्राथमिकी में किए गए अभिकथनों की सत्यता अथवा अन्यथा का मूल्यांकन करने के लिए अथवा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का विस्तारपूर्वक परीक्षण करने के लिए अभिकथनों में कोई अतिगामी जाँच नहीं किया है। इस चरण पर, भले ही अभियुक्त कुछ संदेह दर्शाने में सफल रहा है, विचारण के पहले अभियुक्त को उन्मोचित करना

अननुज्ञेय होगा, क्योंकि इसका परिणाम अभियोजन को इसे सिद्ध करने के लिए साक्ष्य देने की अनुमति दिए बिना पीड़ित अथवा सूचक द्वारा किए गए अभिकथनों को अंतिमता देने में होगा।

8. वर्तमान मामले में, अवर न्यायालय ने याची की उन्मोचन याचिका पर विचार करते हुए सही परिप्रेक्ष्य में साक्ष्य का अधिमूल्यन किया है और अभिलेख पर उपलब्ध उन साक्ष्यों को प्रकट भी किया है और याची के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला पाया है। मैंने भी केस डायरी के विभिन्न पैराग्राफों का परिशीलन किया है और पाया है कि अनेक व्यक्तियों ने वर्तमान याची का नाम प्रकट किया है और अभियोजन विवरण का पूर्णत: समर्थन किया है। अवर न्यायालय ने सही प्रकार से अभिनिर्धारित किया है कि केवल विचारण के दौरान याची द्वारा किए गए अन्यत्र होने के अभिवचन का अधिमूल्यन किया जा सकता है। मैं याची की ओर से किए गए तर्क से दृढ़तापूर्वक असहमत हूँ कि याची के विरुद्ध विधिक साक्ष्य नहीं है ताकि उसे अभिकथित अपराध के लिए अभियोजित किया जा सके।

9. उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं इस पुनरीक्षण आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, यह पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ç'kkUr dekj] U;k;efr

सुनील लुल्ला एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W.P. (Cr.) No. 182 of 2015. Decided on 6th January, 2016.

(क) दांडिक विधि–प्रतिनिधिक दायित्व का सिद्धांत–दांडिक कार्यवाही में प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत की प्रयोज्यता नहीं है–एक ही दांडिक अपराध के लिए दो व्यक्तियों को अभियोजित करने के लिए दोनों अभियुक्तों के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन करना परिवादी की ओर से बाध्यकारी है। (पैरा 7)

(ख) भारतीय दंड संहिता, 1860— धाराएँ 504 एवं 506 सहपठित धारा 34—आशयपूर्ण प्रहार एवं दांडिक अभित्रास–संज्ञान–अस्पष्ट एवं सामान्य अभिकथनों पर अभियुक्तगण अभियोजित किए जाने के दायी नहीं है–भले ही प्राथमिकी में कुछ अभिकथन किए गए हैं, किंतु अन्वेषण के दौरान इनके समर्थन में साक्ष्य संग्रहित नहीं किए गए हैं, तब उस मामले में उच्च न्यायालय द्वारा दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की जा सकती है–निजी दुश्मनी के लिए याचीगण से प्रतिशोध लेने के लिए अंतरस्थ हेतु के साथ वर्तमान कार्यवाही आरंभ की गयी है–दांडिक कार्यवाही अभिखंडित। (पैराएँ 7 से 13)

निर्णयज विधि.–(2008) 5 SCC 668; AIR 1960 SC 866; 1992 Supp (1) SCC 335; (2015) 7 SCC 423—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Indrajit Sinha, For the Petitioners; Mr. Ram Nivas Roy, For the State; Mr. Srijit Choudhary, For the Respondent No.2.

प्रशान्त कुमार, न्यायमूर्ति.–यह रिट आवेदन बिष्टुपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 303 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ सं॰ 2520 वर्ष 2012 के तत्सम, के संबंध में विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 13.12.2012 के आदेश जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन उन्होंने याचीगण के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 504, 506 सहपठित धारा 34 के अधीन संज्ञान लिया, सहित संपूर्ण दांडिक

कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है। याचीगण आगे पूर्वोक्त मामले में विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 13.2.2013, 19.8.2013 एवं 20.3.2015 के आदेशों के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है, जिसके द्वारा उन्होंने जमानती गिरफ्तारी वारन्ट, गैर–जमानती गिरफ्तारी वारन्ट एवं आदेशिका दं० प्र० सं० की धारा 83 के अधीन जारी किया।

2. प्रत्यर्थी सं० 2 (सूचक) ने न्यायिक दंडाधिकारी, जमशेदपुर के न्यायालय में परिवाद मामला सं० सी०/1.2106 वर्ष 2012 उसमें यह अभिकथन करते हुए दाखिल किया है कि अभियुक्तगण (याचीगण) मेसर्स इरोस इंटरनेशनल लिमिटेड के नाम एवं शैली में सिनेमेटोग्राफी का व्यवसाय चला रहे हैं। आगे यह अभिकथित किया गया है कि अभियुक्तगण अपनी फिल्म का डिस्ट्रीब्यूटरशिप के लिए जुलाई, 2008 में प्रत्यर्थी सं० 2 के पास गए। यह कथन किया गया है कि अभियुक्तों द्वारा प्रेरित किए जाने पर, प्रत्यर्थी सं० 2 ने अभियुक्तों को उनकी फिल्म का डिस्ट्रीब्यूटरशिप लेने के लिए 9,47,000/- रुपयों की राशि का भुगतान किया। तब यह अभिकथित किया गया है कि अभियुक्तों ने प्रत्यर्थी सं० 2 को डिस्ट्रीब्यूटरशिप नहीं दिया था। तत्पश्चात, प्रत्यर्थी सं० 2 ने अभियुक्तों से अपनी राशि लौटाने का अनुरोध किया, किंतु अभियुक्तों ने उसके अनुरोध पर कोई ध्यान नहीं दिया था और पूर्वोक्त राशि का भुगतान करने से बचते रहे। इससे मजबूर होकर, प्रत्यर्थी सं० 2 ने भा० दं० सं० की धाराओं 403, 406 एवं 420 सहपठित धारा 34 के अधीन परिवाद मामला C/1 सं० 308 वर्ष 2009 दाखिल किया, किंतु दांडिक विविध याचिका सं० 684 वर्ष 2010 में पारित दिनांक 16.4.2012 के आदेश द्वारा दं० प्र० सं० की धारा 482 के अधीन इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने पूर्वोक्त दांडिक कार्यवाही अभिखंडित कर दिया है। यह अभिकथित किया गया है कि तत्पश्चात प्रत्यर्थी सं० 2 ने दिनांक 21.4.2012 को याचीगण को कानूनी नोटिस भेजा, जिसे याचीगण द्वारा प्राप्त किया गया था, किंतु उन्होंने उक्त नोटिस का कोई उत्तर नहीं दिया है। यह कथन किया गया है कि दिनांक 1.8.2012 को अपराह्न 8 बजे अभियुक्तों ने दूरभाष सं० 022-69812565 के माध्यम से उसके मोबाइल पर फोन करके प्रत्यर्थी सं० 2 को गंभीर परिणामों की धमकी दिया। तद्नुसार, यह अभिकथित करते हुए कि याचीगण ने भा० दं० सं० की धाराओं 384, 504, 506, 120B एवं 34 के अधीन अपराध किया था, वर्तमान मामला दाखिल किया गया है।

3. यह प्रतीत होता है कि विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, जमशेदपुर ने पूर्वोक्त परिवाद को प्राथमिकी संस्थित करने एवं मामले का अन्वेषण करने के निर्देश के साथ दं० प्र० सं० की धारा 156 (3) के अधीन बिष्टुपुर पुलिस थाना भेजा। तद्नुसार, भा० दं० सं० की धाराओं 406, 504, 506/34 के अधीन बिष्टुपुर पी० एस० केस सं० 303 वर्ष 2012 संस्थित किया गया और पुलिस ने अन्वेषण किया। यह प्रतीत होता है कि पुलिस ने अन्वेषण पूरा करने के बाद, भा० दं० सं० की धाराओं 504, 506 सहपठित धारा 34 के अधीन याचीगण/अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप–पत्र दाखिल किया। आगे यह प्रतीत होता है कि विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर ने दिनांक 13.12.2012 के आदेश के तहत याचीगण के विरुद्ध पूर्वोक्त अपराधों का संज्ञान लिया और याचीगण को समन जारी किया। तब यह प्रतीत होता है कि विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी ने दिनांक 13.12.2013 के आदेश के तहत याचीगण के विरुद्ध जमानती गिरफ्तारी वारन्ट जारी किया था। तत्पश्चात, दिनांक 19.8.2013 के आदेश के तहत विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी ने याचीगण के विरुद्ध गैर जमानती गिरफ्तारी वारन्ट जारी किया। तब दिनांक 25.11.2013 के आदेश के तहत दं० प्र० सं० की धारा 82 के अधीन आदेशिका जारी किया और तत्पश्चात दिनांक 20.3.2015 के आदेश के तहत दं० प्र० सं० की धारा 83 के अधीन आदेशिका जारी किया। विद्वान दंडाधिकारी द्वारा पारित पूर्वोक्त आदेशों के विरुद्ध यह रिट आवेदन दाखिल किया गया है।

4. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री इंद्रजीत सिन्हा द्वारा यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान दांडिक कार्यवाही न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है क्योंकि प्राथमिकी/परिवाद याचिका और अभिलेख

पर उपलब्ध अन्य सामग्री से यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 निजी दुश्मनी के कारण याचीगण को परेशान कर रहा है। यह निवेदन किया गया है कि दांडिक एम॰ पी॰ सं॰ 684 वर्ष 2010 में पारित दिनांक 16.4.2012 के आदेश (परिशिष्ट 3) से यह स्पष्ट है कि इस न्यायालय ने परिवाद याचिका में किए गए अभिकथनों पर विचार करने के बाद तथ्यों के उस संवर्ग पर पूर्व कार्यवाही अभिखंडित कर दिया था। यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने पुनः कुछ अस्पष्ट एवं सामान्य अभिकथन जोड़ने के बाद वर्तमान मामला दाखिल किया था और विद्वान अवर न्यायालय ने उक्त अभिकथनों पर अपने न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना याचीगण के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 504, 506 सहपठित धारा 34 के अधीन संज्ञान लिया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि प्राथमिकी/परिवाद के सादे पठन से यह स्पष्ट है कि याचीगण के विरुद्ध सामान्य एवं अस्पष्ट अभिकथन हैं कि उन्होंने दूरभाष सं॰ 022-69812565 के माध्यम से दिनांक 1.8.2012 को अपराह्न 8 बजे प्रत्यर्थी सं॰ 2 को उसके मोबाइल पर धमकी दिया है। किंतु, संपूर्ण परिवाद याचिका में कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं है कि किस याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 को धमकी दिया था। कोई अभिकथन बिल्कुल नहीं है कि दोनों याचीगण एक–दूसरे से मिले थे और प्रत्यर्थी सं॰ 2 को धमकी देने की योजना बनायी थी। यह निवेदन किया गया है कि यह सुनिश्चित है कि दांडिक मामलों में प्रतिनिधिक दायित्व का सिद्धांत प्रयोज्य नहीं है। उक्त परिस्थितियों के अधीन, जब तक यह विनिर्दिष्टतः अभिकथित नहीं किया जाता है कि किस अभियुक्त ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 को धमकी देने के लिए उसके साथ सामान्य आशय शेयर किया था, यह अभिनिर्धारित करना मुश्किल है कि दोनों याचीगण ने वर्तमान अपराध किया था। आगे यह कथन किया गया है कि सपाट एवं अस्पष्ट अभिकथन पर दांडिक कार्यवाही जारी नहीं रह सकती है। श्री इंद्रजीत सिन्हा आगे निवेदन करते हैं कि दिनांक 6.10.2015 को वरीय आरक्षी अधीक्षक, पूर्वी सिंहभूम, जमशेदपुर की ओर से दाखिल पूरक प्रतिशपथ पत्र के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि दूरभाष सं॰ 022-69812565 किसी मो॰ वकर का है और यह सार्वजनिक टेलीफोन बूथ है। यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर साक्ष्य मौजूद नहीं है कि दिनांक 1.8.2012 को याचीगण मो॰ वकर के पास गए और उसके टेलीफोन बूथ से प्रत्यर्थी सं॰ 2 से बात किया। यह निवेदन किया गया है कि उक्त साक्ष्य की अनुपस्थिति में वर्तमान कार्यवाही जारी रखना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है। तद्नुसार, श्री इंद्रजीत सिन्हा निवेदन करते हैं कि याचीगण के विरुद्ध आरंभ की गयी संपूर्ण दांडिक कार्यवाही न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है, अतः, यह अभिखंडित किए जाने की दायी है।

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सृजित चौधरी और श्री राम निवास रॉय, जी॰ पी॰ III ने निवेदन किया था कि दोनों अभियुक्तों के विरुद्ध प्रत्यक्ष अभिकथन है कि उन्होंने प्रत्यर्थी सं॰ 2 को गंभीर परिणामों की धमकी दिया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि केस डायरी का पैराग्राफ सं॰ 29 दर्शाता है कि अन्वेषण के दौरान पुलिस ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 के मोबाइल फोन सं॰ 8797640065 का कॉल विवरण रिपोर्ट लिया। यह निवेदन किया गया है कि उक्त कॉल विवरण से यह स्पष्ट है कि दिनांक 1.8.2012 को परिवादी ने दूरभाष सं॰ 022-69812565 से टेलीफोन कॉल पाया है। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि परिवाद याचिका में किए गए अभिकथन पूर्वोक्त कॉल विवरण रिपोर्ट से संपुष्टि पाते हैं। इस प्रकार, याचीगण के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 504, 506 सहपठित धारा 34 के अधीन अपराध बनता है। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

6. निवेदन को सुनने पर, मैंने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है। स्वीकृत रूप से, याचीगण ने प्राथमिकी के पैराग्राफ सं॰ 1 से 5 में किए गए अभिकथनों के विरुद्ध दांडिक एम॰ पी॰ सं॰

684 वर्ष 2010 दाखिल किया और इस न्यायालय ने दिनांक 16.4.2012 के आदेश (परिशिष्ट 3) के तहत परिवाद केस सं॰ C/1-308 वर्ष 2009 के संबंध में दांडिक कार्यवाही अभिखंडित कर दिया। जहाँ तक वर्तमान मामले का संबंध है, यह दांडिक अभित्रास से संबंधित है और उस प्रयोजन से केवल प्राथमिकी के पैराग्राफ सं॰ 7 पर अभिकथन किए गए हैं जिनका पठन निम्नलिखित है:–

*07. fd ifjoknh u fnukd 21.4.2012 dk vfHk;Drk dk dkuuh ukfVl Hktk vkj vfHk;Drk }kjk bl çkIr fd;k x;k Fkk fdr vkt d fnu rd iokDr ukfVl dk dkb mÙkj ugh fn;k x;k Fkk] fdr vfHk;Drk u fnukd 1.8.2012 d vijkgu 8 ct njHkk"k l0 022-69812565 l ifjoknh d ekckby l0 8797640065 ij ml dk xHkhj ifj.kkek dk èkedh fn;kA***

पूर्वोक्त अभिकथन के कोरे पठन से, यह स्पष्ट है कि दोनों अभियुक्तों के विरुद्ध अस्पष्ट एवं सामान्य अभिकथन हैं कि उन्होंने दूरभाष सं॰ 022-69812565 के माध्यम से प्रत्यर्थी सं॰ 2 को गंभीर परिणामों का धमकी दिया। परिवाद याचिका में, प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने कहीं पर भी यह कथन नहीं किया कि किस याची ने प्रासंगिक तिथि एवं समय पर उसके साथ बात किया और दूसरे अभियुक्त द्वारा निभायी गयी भूमिका क्या थी। चूँकि, धमकी टेलीफोन पर दी गयी थी, अत:, यह उपधारित किया जा सकता है कि केवल एक व्यक्ति प्रत्यर्थी सं॰ 2 से बात कर सकता था। इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं॰ 2 के लिए अभियुक्त जिसने उसे धमकी दिया जिसका नाम प्रकट करना और दूसरे अभियुक्त की भूमिका प्रकट करना जरूरी है।

7. वर्तमान मामले में, प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने अभियुक्तों (याचीगण) में से किसी के विरुद्ध कोई विनिर्दिष्ट अभिकथन नहीं किया है। यह सुनिश्चित है कि दांडिक कार्यवाही में प्रतिनिधिक दायित्व की प्रयोज्यता नहीं होती है। इस प्रकार, एक ही अपराध के लिए दो व्यक्तियों को अभियोजित करने के लिए दोनों अभियुक्तों के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभिकथन करना परिवादी की ओर से बाध्यकारी है। इस संबंध में, **मकसूद सईद बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, (2008)5 SCC 668,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि का पठन निम्नलिखित है:–

*"13. tgk nM çfØ;k lfgrk dh èkkjk 156 (3) vFkok èkkjk 200 d fucèkuku lkj nkf[ky ifjokn ;kfpdk ij vfèkdkfjrk dk ç;kx fd;k tkrk g] nMkfèkdkjh dk viu food dk bLreky dju dh vko';drk gA nM lfgrk diuh d çcèk fun'kd vFkok fun'kdk dh vkj l] tc diuh vfHk;Dr g] çfrfufèkd nkf;Ro lc) dju d fy, dkb çkoèkku vrfo"V ugh djrk gA fo}ku nMkfèkdkjh Lo; l ;g ç'u iNu e foQy jg fd D;k ifjokn ;kfpdk] Hky gh T;k dk R;k Lohdkj fd, tku vkj bldh li.krk e lgh fy, tku ij] bl fu"d"k dh vkj y tk,xh fd oreku çR;Fkx.k fdlh vijkèk d fy, futh :i l nk;h FkA cd ,d dkjikjV fudk; gA çcèk fun'kd ,o fun'kd dk çfrfufèkd nkf;Ro mnHkr gkxkA c'kr lfofèk e ml fufeÙk dkb çkoèkku gkA ,lk çfrfufèkd nkf;Ro fu;r djr g, lfofèk dk fufooknr% çkoèkku vrfo"V djuk gkxkA mDr ç;ktu l Hkh] vè;if{kr vfHkdFkuk] tk çfrfufèkd nkf;Ro xfBr dju oky çkoèkku vkÑ"V djx] dk djuk ifjoknh dh vkj l ckè;dkjh gA***

जैसा गौर किया गया है, वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी सं॰ 2 ने अभियुक्तों के विरुद्ध कोई विनिर्दिष्ट कथन नहीं किया है, अत:, मेरे दृष्टिकोण में, अस्पष्ट एवं सामान्य अभिकथन पर याचीगण अभियोजित किए जाने के दायी नहीं है।

8. आर॰ पी॰ कपूर बनाम पंजाब राज्य, AIR 1960 SC 866, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मामलों की कुछ कोटियों को संक्षिप्त किया है जहाँ अंतर्निहित शक्ति के प्रयोग में दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की जा सकती है जो निम्नलिखित है:–

(i) tgk ;g Li"V :i l çrhr gkrk g fd lLFkkiu vFkok tkjh j[ku d fo#) fofèkd otuk g vFkkr etjh dh dehA

(ii) tgk çkFkfedh vFkok ifjokn e fd, x, vfHkdFku T;k dk R;k Lohdkj fd, tku vkj mudh l i.krk e Lohdkj fd, tku ij vfHkdfFkr vijkèk xfBr ugh djr gA

(iii) tgk vfHkdFku vijkèk xfBr djr g fdr fofèkd lk{; ugh fn;k x;k g vFkok fn, x, lk{; vkjki fl) dju e Li"Vr% foQy gA

इसी प्रकार से, **हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल, 1992 Supp (1) SCC 335,** मामले में पैराग्राफ सं॰ 102 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने सात परिस्थितियों को अधिकथित किया है जिनके अधीन दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की जा सकती है, जो निम्नलिखित हैं:–

"102 (1). tgk çkFkfedh vFkok ifjokn e fd, x, vfHkdFku] Hky gh mUg T;k&dk&R;k fy;k tkrk g vkj mudh l i.krk e Lohdkj fd;k tkrk g] çFke n"V;k fdlh vijkèk dk xfBr ugh djr g vFkok vfHk;Dr d fo#) ekeyk ugh cukr gA

(2) tgk çkFkfedh rFkk çkFkfedh e lyXu vU; lkexh] ;fn gk] e vfHkdFku] flok, lfgrk dh èkkjk 155 (2) d dk;{k= d vrxr nMkfèkdkjh d vkn'k d vèkhu] èkkjk 156(1) d vèkhu ifyl vfèkdkfj;k }kjk vUo"k.k dk U;k;kfpr Bgjkr g, lK; vijkèk çdV ugh djr gA

(3) tgk çkFkfedh vFkok ifjokn e fd, x, v[kfMr vfHkdFku vkj bld leFku e lxfgr lk{; fdlh vijkèk dh dkfjrk çdV ugh djr g vkj vfHk;Dr d fo#) ekeyk ugh cukr gA

(4) tgk çkFkfedh e fd, x, vfHkdFku lK; vijkèk xfBr ugh djr g fdr doy vlK; vijkèk xfBr djr g] nMkfèkdkjh d vkn'k d fcuk ifyl vfèkdkjh }kjk vUo"k.k dh vuefr ugh nr g tlk lfgrk dh èkkjk 155 (2) d vèkhu vuè;kr fd;k x;k gA

(5) tgk çkFkfedh vFkok ifjokn e fd, x, vfHkdFku bru crd vkj vrfufgr :i l vufèklHkkO; g ftud vkèkkj ij dkb food'khy 0;fDr bl fu"d"k ij dHkh ugh igp ldrk g fd vfHk;Dr d fo#) vxlj gku d fy, i;klr vkèkkj gA

(6) tgk ekey d lLFkkiu vkj dk;okgh tkjh j[ku d çfr lcfèkr vfèkfu;e (ftld vèkhu nkfMd dk;okgh lfLFkr dh x;h g) vFkok lfgrk d çkoèkkuk e l fdlh e mRdh.k dkb vfHk0;Dr fofèkd otuk ugh g vkj@vFkok tgk 0;fFkr i{k dh f'kdk;r d fy, çHkkodkjh çfrrk"k çkoèkkfur djrk g lfgrk vFkok lcfèkr vfèkfu;e e fofufn"V çkoèkku gA

*(7) tgk nkfMd dk;okgh Li"V :i l vlnHkkoi.k g vkj@vFkok tgk dk;okgh vfHk;Dr l çfr'kkèk yu d vrjLFk gr d lkFk vkj çkboV ,o futh n'euh d dkj.k mldk viekfur dju dh nf"V l }"kiod lfLFkr dh x;h gA**

इस प्रकार, पूर्वोक्त निर्णयों के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि यदि प्राथमिकी में कुछ अभिकथन किए भी गए हैं किंतु अन्वेषण के दौरान इनके समर्थन में साक्ष्य संग्रहित नहीं किया गया है, तब उस मामले में उच्च न्यायालय द्वारा दांडिक कार्यवाही अभिखंडित की जा सकती है।

9. वर्तमान मामले में, यद्यपि प्राथमिकी में यह अभिकथित किया गया है कि अभियुक्तों ने दूरभाष सं॰ 022-69812565 के माध्यम से प्रत्यर्थी सं॰ 2 को धमकी दिया, किंतु अन्वेषण के दौरान, पुलिस ने पाया कि उक्त टेलीफोन नंबर किसी मो॰ वकर का है। यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं है कि याचीगण मो॰ वकर के पास गए और उसके टेलीफोन नंबर से प्रत्यर्थी सं॰ 2 को धमकी दिया। उक्त परिस्थितियों के अधीन, मैं पाता हूँ कि प्राथमिकी के पैराग्राफ सं॰ 7 पर याचीगण के विरुद्ध किए गए अभिकथन को सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर साक्ष्य बिल्कुल मौजूद नहीं है। इस प्रकार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के पूर्वोक्त दो निर्णयों की दृष्टि में, साक्ष्य की अनुपस्थिति में याचीगण के विरुद्ध वर्तमान दांडिक कार्यवाही जारी रखना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है।

10. मानिक तनेजा एवं एक अन्य बनाम कर्नाटक राज्य एवं एक अन्य, (2015)7 SCC 423, मामले में पैराग्राफ 8 पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा हाल में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

> *"8. fofèkd voLFkk lfuf'pr g fd tc vkjfHkd pj.k ij vfHk;ktu vfHk[kfMr dju d fy, dgk tkrk g] U;k;ky; }kjk ykx dh tku okyh ijh{kk ;g g fd D;k fd, x, v[kfMr vfHkdFku çFke n"V;k vijkèk LFkkfir djr gA U;k;ky; dk ;g fopkj dju d fy, fd D;k dk;okgh tkjh j[kuk lehphu ,o U;k; d fgr e g] fdlh fo'k"k y{k.kk tk ekeyk fo'k"k e lkeu vkr g dk fopkj e yuk gA tgk U;k;ky; d er e vfre nk"kflf) dk volj èkèkyk g vkj nkfMd vfHk;ktu tkjh j[ku dh vuefr ndj dkb ykHknk;h ç;ktu ijk dju dh lHkkouk ugh g] U;k;ky; dk;okgh vfHk[kfMr dj ldrk g Hky gh ;g vkjfHkd pj.k ij gkA***

जैसा ऊपर गौर किया गया है, वर्तमान मामले में, दूरभाष सं॰ 022-69812565 किसी मो॰ वकर का है और यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर साक्ष्य बिल्कुल नहीं है कि याचीगण प्रत्यर्थी सं॰ 2 को उसके टेलीफोन से धमकी देने के लिए मो॰ वकर के पास गए। इस प्रकार, किसी तर्कपूर्ण साक्ष्य की अनुपस्थिति में कि याचीगण ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 को धमकी दिया, मेरा दृष्टिकोण है कि याचीगण की अंतिम दोषसिद्धि की संभावना अत्यन्त धुंधली है। अत:, वर्तमान दांडिक कार्यवाही को जारी रखने की अनुमति देकर कोई लाभदायी प्रयोजन पूरा नहीं होगा।

11. यह प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं॰ 2 पूर्व मामले में याचीगण के विरुद्ध कानूनी लड़ाई हार चुका है, क्योंकि इसे दांडिक एम॰ पी॰ सं॰ 684 वर्ष 2010 में दिनांक 16.4.2012 के आदेश के तहत इस न्यायालय की न्यायपीठ द्वारा अभिखंडित किया गया है। इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि वर्तमान कार्यवाही निजी दुश्मनी के लिए याचीगण से प्रतिशोध लेने के अंतरस्थ हेतु के साथ प्रत्यर्थी सं॰ 2 द्वारा आरंभ की गयी है। इस प्रकार, इस आधार पर भी वर्तमान कार्यवाही जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

12. उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं पाता हूँ कि याचीगण के विरुद्ध वर्तमान दांडिक कार्यवाही जारी रखना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग है। अत:, इसे संपोषित नहीं किया जा सकता है।

13. परिणामस्वरुप, यह आवेदन सफल होता है। बिष्टुपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 303 वर्ष 2012, जी॰ आर॰ सं॰ 2520 वर्ष 2012 जो विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर के न्यायालय में लंबित है, के संबंध में, उक्त मामले में पारित दिनांक 13.2.2013, 19.8.2013 एवं 20.3.2015 के आदेशों सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

श्रीमती कमला देवी

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

W. P. (C) No. 7324 of 2013. Decided on 12th January, 2016.

छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908—धारा 55(d)—लगान जमा करना–लगान प्राप्त करने से प्राधिकारियों का इनकार–मूल रैयत जीवित नहीं है अथवा उनका पता नहीं है–निर्गत एटॉर्नी द्वारा विक्रय विलेख निष्पादित नहीं किया गया था–निर्गत एटॉर्नी के पक्ष में मुख्तारनामा निष्पादित करने के लिए विक्रय विलेख में परिवर्णन नहीं है–रिट याचिका प्रश्नगत भूमि पर याची के अभिधान का प्रश्न अंतर्ग्रस्त करती है जिसे रिट कार्यवाही में न्यायनिर्णीत नहीं किया जा सकता है–वर्तमान मामले में धारा 55 (d) के प्रावधान आकृष्ट नहीं होते हैं–रिट याचिका खारिज।

(पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–Mr. R.K. Das, For the Petitioner; Mr. V.K. Prasad, For the Respondents.

आदेश

ग्राम बरगैन, जिला राँची के खाता सं॰ 218, खेवट सं॰ 10/1 के अधीन पुनरीक्षण भूखंड सं॰ 523 से गठित भूमि से संबंधित लगान प्राप्त करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 2 उपायुक्त को निर्देश इप्सित करते हुए वर्तमान रिट याचिका दाखिल की गयी है।

2. छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908 की धारा 55 (d) एवं अनेक अन्य प्रावधानों को निर्दिष्ट करते हुए याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची, जो दिनांक 6.7.2011 के रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के माध्यम से किसी गोविंद साहू से भूमि का खरीदार है, को उक्त संपत्ति के लाभ से इनकार किया गया है। उपायुक्त ने याची द्वारा दाखिल आवेदन पर कोई आदेश पारित नहीं किया है। याची प्रश्नगत भूमि के लिए लगान जमा करने के लिए तैयार है किंतु प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने लगान स्वीकार करने से इनकार कर दिया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि भूमि की प्रकृति भूईनहरि है जो बिहार भू-सुधार अधिनियम, 1950 के अधिनियम के बाद राज्य सरकार में निहित नहीं हुई थी।

3. प्रत्यर्थी झारखंड राज्य के विद्वान अधिवक्ता आरंभिक आपत्ति करते हुए निवेदन करते हैं कि याची प्रश्नगत भूमि पर अपना अधिकार, अभिधान, हित एवं कब्जा स्थापित करने में विफल रही। यह प्रतिवाद किया गया है कि प्रश्नगत भूमि के लिए लगान स्वीकार करने के लिए उपायुक्त को निर्देश इप्सित करने वाली प्रार्थना वर्तमान कार्यवाही में प्रदान नहीं की जा सकती है।

4. दिनांक 9.5.2012 के आवेदन का परिशीलन प्रकट करता है कि याची स्वीकार करती है कि मूल रैयत जीवित नहीं है अथवा लापता हैं। दिनांक 6.7.2011 का विलेख प्रकट नहीं करता है कि किस

प्रकार याची के विक्रेता ने प्रश्नगत भूमि पर अभिधान पाया था। याची गोविन्द साहू से खरीदार है जिसने स्वयं विक्रय विलेख निष्पादित नहीं किया है, बल्कि विक्रय विलेख निर्गत एटॉर्नी अर्थात् अनामुल हक द्वारा निष्पादित किया गया था। विक्रय विलेख में उक्त अनामुल हक के पक्ष में मुख्तारनामा निष्पादित करने के लिए परिवर्णन नहीं है। दिनांक 9.5.2012 के आवेदन में किए गए प्रकथनों एवं वर्तमान कार्यवाही में याची द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से यह प्रकट है कि रिट याचिका प्रश्नगत भूमि पर याची के अभिधान का प्रश्न अंतर्ग्रस्त करती है जिसे रिट कार्यवाही में विनिश्चित नहीं किया जा सकता है। सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 55 (d) के अधीन प्रावधान वर्तमान मामले में आकृष्ट नहीं होते हैं।

5. मैं रिट याचिका में गुणागुण नहीं पाता हूँ और तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o vferkHk dñ xlrk] U;k;efrx.k

करमदेव यादव

cuke

सेन्ट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड एवं अन्य

L.P.A. No. 494 of 2014. Decided on 5th January, 2016.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–जन्मतिथि–परिशुद्धि–अनुज्ञेयता–विलंबित चरण पर कर्मचारी की जन्मतिथि के बारे में न्यायालय द्वारा इस प्रकार की परिशुद्धि नहीं की जा सकती है–एकल न्यायाधीश ने सही प्रकार से रिट याचिका खारिज किया–एल॰ पी॰ ए॰ खारिज।

(पैराएँ 6 से 11)

निर्णयज विधि.–(1993) 2 SCC 162; (1995) 4 SCC 172; (2010) 14 SCC 423; (2011) 9 SCC 664—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Atanu Banerjee, For the Appellant; Mr. Ananda Sen, For the Respondents.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–यह लेटर्स पेटेन्ट अपील मूल याची (वर्तमान अपीलार्थी) द्वारा दाखिल की गयी है जिसकी रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 2898 वर्ष 2003 विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 4.9.2014 के आदेश के तहत खारिज कर दिया गया था।

2. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए, यह प्रतीत होता है कि वर्तमान अपीलार्थी (मूल याची) वर्ष 1977 में प्रत्यर्थी कंपनी के साथ नियोजित था। परिशिष्ट 1/1 के मुताबिक दिनांक 6.2.1977 को उसकी आयु 33 वर्ष थी जो याची की प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा रखा गया सेवा अभिलेख है। मामले के तथ्यों से आगे प्रतीत होता है कि वर्ष 1993 में अपनी जन्मतिथि के बारे में इस अपीलार्थी द्वारा विवाद किया गया था। इस अपीलार्थी के मुताबिक, उसकी सही जन्मतिथि दिनांक 5.7.1954 है जबकि प्रत्यर्थी कंपनी के मुताबिक इस अपीलार्थी की जन्मतिथि दिनांक 6.2.1944 है।

3. अपनी जन्मतिथि की परिशुद्धि के लिए इस अपीलार्थी द्वारा आपत्ति की गयी थी और उक्त आवेदन अक्टूबर, 1999 में प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा खारिज कर दिया गया था।

4. मामले के तथ्यों से आगे यह प्रतीत होता है कि वर्ष 1944 की जन्मतिथि के मुताबिक यह अपीलार्थी वर्ष 2004 में सेवानिवृत्त हो गया है।

5. अपनी सेवा करिअर के अंतिम छोर पर, इस अपीलार्थी (मूल याची) द्वारा रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 2898 वर्ष 2003 दाखिल किया गया था। चूँकि अत्यधिक विलंब हुआ है और अपने सेवा

करिअर के अंतिम छोर पर विवाद किया गया है, इस अपीलार्थी द्वारा दाखिल रिट याचिका खारिज करने में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा कोई गलती नहीं की गयी है। अन्यथा भी, पहले अक्टूबर, 1999 के महीने में प्रत्यर्थी कंपनी द्वारा उसकी जन्मतिथि की परिशुद्धि की प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी थी। इस अपीलार्थी द्वारा उक्त आदेश को चुनौती नहीं दी गयी थी, अतः, हम इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को ग्रहण करने का कारण नहीं पाते हैं।

6. भारत संघ बनाम हरनाम सिंह, (1993)2 SCC 162, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विशेषत: पैरा 7 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *"7. ljdkjh lod lok e çoo'k dju d ckn] lokfuofÙk dh vk; rd lok e cu jgu dk vfèkdkj vftr djrk g tlk jkT; }kjk lok dh 'krk dk fofu;fer dju dh viuh 'kfDr d ç;kx e fu;r fd;k x;k g] tc rd mle fofgr çfØ;k dk vulj.k dju d ckn çklfxd lok fu;ek e vrfo"V vU; vkèkkjk ij lok vfHkeDr ugh dh tkrh gA bl çdkj] flfoy lod d lok vfHky[k e çfo"V dh x;h tUefrfFk bl dkj.k l vR;Ur egRo dh g fd lok e cu jgu dk vfèkdkj lok vfHky[k e bldh çfof"V }kjk fofuf'pr dh x;h gA fu'p; gh] ljdkjh lod] ftlu fu;ktu d vkjfHkd pj.k ij viuh vk; ?kkf"kr fd;k g] dk viuh vk; dh ifj'kf) d fy, ckn e vujkèk dju l vioftr ugh fd;k tkrk gA flfoy lod dk viuh tUefrfFk dh ifj'kf) dk nkok dju dh NV g ;fn mld ikl igy nt dh x;h tUefrfFk l fHkUu viuh tUefrfFk l lcfèkr v[kMuh; çek.k g vkj vxj tUefrfFk dh ifj'kf) bfllr dju d fy, ifjlhek vofèk fofgr ugh Hkh dh x;h g] ljdkjh lod dk fdlh v;fDr;Dr foyc d fcuk ,lk djuk gkxkA tUefrfFk dh ifj'kf) d fy, fu;ek e fdlh çkoèkku dh vuifLFkfr e] pdk vFkok ckn e nkok d vkèkkj ij vurk"k l budkj dju dk lkekU; fl)kr lkekU;r% U;k;ky;k ,o vfèkdj.kk }kjk ykxw fd;k tkrk gA fQj Hkh] lok fu;ek e le; lhek fu;r djuk ljdkj dh l{kerk d vrxr g ftld ckn ljdkjh lod dh tUefrfFk dh ifj'kf) d fy, vkonu xg.k ugh fd;k tk ldrk gA*
> ***vr%] ljdkjh lod tk bl çdkj fu;r fd, x, le; d ij tUefrfFk dh ifj'kf) d fy, vkonu nrk g] d rkj ij viuh tUefrfFk dh ifj'kf) dk nkok ugh dj ldrk g Hky gh ;g LFkkfir dju d fy, mld ikl vPNk lk{; g fd nt dh x;h tUefrfFk Li"Vr% xyr gA ifjlhek fofèk dBkj :i l çofrr gk ldrh g fdr bl bldh leLr dBkjrk d lkFk ykxw djuk gkxkk vkj U;k;ky; vFkok vfèkdj.k mudh enn d fy, ugh vk ldr g tk viu vfèkdkjk d çfr lpr ugh g vkj ifjlhek vofèk dk volku gku nr gA*** *tc rd bl ifjofrr ugh fd;k tkrk g] mldh tUefrfFk tlk bl nt fd;k x;k g mldh vfèkof"krk dh frfFk fofuf'pr djxh Hky gh ;g mldh okLrfod vk; d vkèkkj ij lok e cu jgu d mld vfèkdkj dk lf{klr dju d rY; gA oLrr%] tlk bl U;k;ky; }kjk vle jkT; cuke n{k çlkn Mdk e vfHkfuèkkfjr fd;k x;k g] ykd lod tUefrfFk tlk bl lok vfHky[k e çfof"V fd;k x;k g] fookfnr dj ldrk g vkj bldh ifj'kf) d fy, vkonu n ldrk g fdr vfHky[k lgh fd, tku rd viu }kjk nkok fd, x, tUefrfFk d vkèkkj ij lok e cu jgu dk nkok ugh dj ldrk gA bl U;k;ky; u dgk% (SCC pp 625-26, ijk 4)*
>
> *^^----,Q0 vkj0 56 (a) d vèkhu vfuok; lokfuofÙk dh frfFk gekj fu.k; e lok vfHky[k d vkèkkj ij fofuf'pr djuk gkxk] vkj u fd mI frfFk ij ftldk nkok viuh tUefrfFk d :i e çR;Fkh u fd;k g tc rd lok vfHky[k igy lefpr çfØ;k d lkFk lxr :i l lgh ugh fd;k tkrk gA ykd lod*

*tUefrfFk tlk bl lok vfHky[k e çfo"V fd;k x;k g fookfnr dj ldrk g vkj vfHky[k dh ifj'kf) d fy, vkonu n ldrk gA fdr tcrd vfHky[k lgh ugh fd;k tkrk g] og nkok ugh dj ldrk g fd ml lok vfHky[k e çfo"V fd, x, tUefrfFk d vkèkkj ij vfèkof"krk dh vk; çkIr dju ij vfuok; :i l lokfuoÙk fd, tku d dkj.k lfoèkku d vuPNn 311 (2) d vèkhu xkjUVh l ofpr fd;k x;k gA*** *(tkj fn;k x;k)*

7. बर्न स्टैन्डर्ड कं॰ लि॰ एवं अन्य बनाम दीनबंधु मजूमदार एवं एक अन्य, (1995)4 SCC 172, मामले में विशेषत: पैरा 10 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

*"10. **viuh lok d vfre Nkj ij vkj tc o viuh lok l lokfuofÙk d fy, n; g] ljdkj vFkok bld vfHkdj.kk d depkfj;k }kjk fn, x, fjV vkonuk dk mPp U;k;ky;k }kjk xg.k gekj nf"Vdk.k e vuko';d gA** ,lk bl dkj.k l gkxk fd dkb depkjh tUefrfFk dh ifj'kf) d vfèkdkj dk nkok ugh dj ldrk g vkj ljdkj vFkok bld vfHkdj.kk d dN depkfj;k dh tUefrfFk;k dh ifj'kf) d fy, ,l fjV vkonuk dk xg.k mud dfu"Bk dh çkUufr dk volj u"V djxk vkj viuh lok&fuofÙk;k tc o n; g dk jkdu d ,d ek= mí'; d lkFk viuh lok dfjvjk d vfre Nkj ij blh idkj d vkonu nu d fy, vU; depkfj;k dk vufpr çkRlkgu d :i e fl) gkxkA gekj lfopkfjr er e] lfoèkku d vuPNn 226 d vèkhu mPp U;k;ky;k e fufgr vfèkdkfjrk dh vlkèkkj.k çÑfr ljdkj vFkok bld vfHkdj.kk d depkfj;k dk rFkkdfFkr u;h ik;h x;h lkexh ij fo'okl djr g, viu fu;kDrkvk }kjk Lohdkj dh x;h tUefrfFk;k d vulkj viuh gdnkjh dh vofèk l vfèkd lok e cu jgu nu d fy, vk'kf;r ugh gA **;g rF; fd ljdkj vFkok bld vfHkdj.kk dk depkjh] tk lgh :i e fu;kDrk }kjk Lohdkj dh x;h viuh tUefrfFk d çfr fdlh Hkh vkifÙk d fcuk n'kdk rd lok e cuk gvk g] tc vpkud l viuh lok dfjvj d vfre Nkj ij viu lok vfHky[k e viuh tUefrfFk dh ifj'kf) bfIlr djr g, mPp U;k;ky; d le{k fjV vkonu d lkFk vkx vkrk g] depkjh }kjk ekey e vkifÙk ugh dju dk vkpj.k] gekj nf"Vdk.k e] mPp U;k;ky; d fy, mier] vufpr foyc ,o pdk d vkèkkjk ij ,l vkonuk dk xg.k ugh dju dk i;kIr dkj.k gkuk pkfg,A** bld vfrfjDr] mPp U;k;ky; dh Lofoodh vfèkdkfjrk dk ;fDr;Dr ,o U;kf;d :i l ç;kx fd;k x;k dHkh ugh dgk tk ldrk g ;fn ;g ,lk fjV vkonu xg.k djrk g D;kfd dkb depkjh] ftldk viu ^^lok ,o vodk'k vfHky[k** e viuh tUefrfFk d çfr f'kdk;r Fkh] mPp U;k;ky; dh vlkèkkj.k vfèkdkfjrk dk ykHk ydj blh lgh djoku d fy, viu lok dfjvj d vfre Nkj rd okLrfod :i l çrh{kk ugh dj ldrk FkkA vr%] ge ;g vfHkfuèkkfjr dju e ldkp ugh g fd viuh lok fuofÙk dh lkekU; vofèk d ij lok e cu jgu d [kyvke mí'; d lkFk viu ^^lok ,o vodk'k vfHky[k** vFkok lok jftLVj e çfo"V dh x;h viuh tUefrfFk dh ifj'kf) bfIlr dju oky ljdkj vFkok bld vfHkdj.kk d depkjh }kjk viuh lok d vfre Nkj ij nkf[ky fjV vkonu@;kfpdk lkekU;r% mPp U;k;ky;k }kjk viuh Lofoodh fjV vfèkdkfjrk d ç;kx e xg.k ugh dh tkuh pkfg,A*** *(tkj fn;k x;k)*

8. महाराष्ट्र राज्य एवं एक अन्य बनाम गोरखनाथ सीताराम कांबले एवं अन्य, (2010)14 SCC 423, में विशेषत: पैराओं 12 से 20 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

"12. vfèklpuk ,o mDr vun'k d vfrfjDr ***blU;k;ky; u ekeyk dh J[kyk e Li"Vr% vfèkdfFkr fd;k g fd depkjh dk viu lok dfjvj d vfre Nkj ij tUefrfFk ifjofrr dju dh vuefr ugh nh tkuh pkfg,A*** *oreku ekey e ifjoru d fy, vkonu 28 o"k ckn viuh lok d vfre Nkj ij nkf[ky fd;k x;k gA*

13. Hkkjr l?k cuke gjuke flg e blU;k;ky; u yxHkx le#i rF;k dk lkeuk fd;k FkkA U;k;ky; u fuEufyf[kr vfèkdfFkr fd;k (Scc pp 172-73 ijk 15)

"15. oreku ekey e] fnukd 20.5.1934 dk lok e çR;Fkh d ço'k d le; ij nt dh x;h tUefrfFk yxHkx lk< rhu n'kdk rd 1956 ,o flrcj] 1991 d chp pukrh ghu cuh jgh FkhA çR;Fkh d ikl viuh lok iLrd dk n[ku dk vud volj FkkA mlu le; d fofHkUu fcnvk ij fofHkUu LFkkuk ij lok iLrd e gLrk{kj fd;kA mlu nt dh x;h çfof"V ij vkifÙk dHkh ugh fd;k FkkA ,yO MhO lhO ,o ;O MhO lhO dh ojh;rk lph e ogh tUefrfFk ifjyf{kr dh x;h Fkh ftl çR;Fkh u LohÑr :i l n[kk Fkk] D;kfd ;g n'kku d fy, vfHky[k ij dN Hkh ektn ugh g fd mld ikl bl n[ku dk volj ugh FkkA og eku cuk jgk vkj viuh vfèkof"krk dh frfFk d dN ekg igy flrcj] 1991 rd tUefrfFk dk ifjoru bfllr ugh fd;k FkkA ***vko';d ifj'kf) bfllr dju d fy, çR;Fkh dh vkj l vR;fèkd ,o vLi"VhÑr foyc vFkok pd u fdlh Hkh fLFkfr e mldk vurk"k l budkj dk U;k;kfpr Bgjk;k gkrkA*** *Hky gh çR;Fkh u o"k 1979 d ckn ikp o"kk d Hkhrj tUefrfFk dh ifj'kf) bfllr fd;k Fkk] io foyc u mldk okn l ckgj fd;k gkrk fdr mlu o"k 1979 e Hkh] FR 56 e ukV 5 lfEefyr fd, tku d ckn ikp o"kk dh vofèk d nkjku tUefrfFk dh ifj'kf) bfllr ugh fd;k FkkA vr% lok xg.k dju dh frfFk l yxHkx 35 o"k dh bl leLr vofèk d fy, mldh fuf"Ø;rk ml ;g n'kku l vioftr djrh g fd lok vfHky[k e mldh tUefrfFk dh çfof"V lgh ugh FkhA***

14. rfeyukM jkT; cuke VhO ohO o.kxkikyu u blU;k;ky; dk Li"V er Fkk fd ljdkjh lod dk viu lok dfjvj d vfre Nkj ij tUefrfFk lgh djoku dh vuefr ugh nh tkuh pkfg,A U;k;ky; u vR;Ur etcr 'kCnk e fuEufyf[kr lçf{kr fd;k% (SCC p. 307 para 7)

"7. .... ***ljdkjh lod dk lok jftLVj e çfo"V dh x;h viuh tUefrfFk d lgh gku dh ?kk"k.kk dju ij lok jftLVj e çfof"V;k dh 'k)rk d lcèk e viuh lok dfjvj d vfre Nkj ij fookn dju dh vuefr ugh nh tk,xhA ;g lkekU; ifj?kVuk g fd vfèkof"krk d rjUr igy lok e cu jgu d fy, doy le; iku d fy, vfèkdj.k vFkok U;k;ky; e vkonu fn;k tk,xk vkj vfèkdj.k vFkok U;k;ky; ljdkjh depkjh vFkok ykd depkjh dk in ij cu jgu dh vuefr nu e nHkkX;o'k vufpr :i l mnkj jg g tk vfHky[k x<u dk lgkjk yu vkj ml ij fo'okl dju rFkk bl lgh dju d fy, çkfèkdkjh dk dgu dk xfr çnku dj jg gA*** *tc rduhdh vkèkkjk ij bl vLohdkj fd;k tkrk g] o bldk pukrh nr g vkj nkok dh x;h vofèk d volku gku rd in ij cu jgr gA ;g ekeyk ,lk gh ,d [kyk mnkgj.k gA rnulkj] gekj nf"Vdk.k e] vfèkdj.k u Lo;mld viu ekey d erkfcd Hkh mldh vfèkof"krk dh frfFk d ckn nk o"k d fy, in ij cu jgu dh vuefr mldk nr g, viuh 'kfDr;k d ij tkr g, Hkh vurk"k çnku dju e vfr vuxg n'kku*

e xyrh fd;k g vkj depkjh d çfr ykHknk;h leLr dYiuh; fun'k fn;k gA **vr%] vfèkdj.k }kjk dh x;h ?kkjre xyrh dk ekeyk g ftl Lohdkj ugh fd;k tk ldrk g vkj fdlh Hkh vkèkkj ij lkif"kr ugh fd;k tk ldrk gA****

15. xg foHkkx cuke vkjO fd: cdj.k e bl U;k;ky; u iu% fofèkd voLFkk nkgjk;k fd U;k;ky;k dk vR;Ur lkoèkku jguk gkxk tc vfèkof"krk dh io lè;k ij vFkok ml le; d vkl&ikl tUefrfFk d ifjoru d fy, vkonu nkf[ky fd;k tkrk gA U;k;ky; u fuEufyf[kr lçf{kr fd;k% (SCC p 160 para 9)

"9..... **bl n'kk e tc dHkh Hkh vfèkof"krk dh io lè;k ij vFkok ml le; d vkl&ikl tUefrfFk d ifjoru d fy, vkonu fn;k tkrk g] U;k;ky; vFkok vfèkdj.k dk ykd lodk d chp ;g Li"V fd, fcuk fd bl ç'u dk igy D;k ugh mBk;k x;k Fkk] ,lk fookn mBku dh c<rh çofÙk d dkj.k vkj Hkh vfèkd lrd jguk pkfg,A****

16. vihykFkh d fo}ku vfèkoDrk u mO çO ekè;fed f'k{kk ifj"kn cuke jkt dekj vfXugk=h e bl U;k;ky; d fu.k; ij fo'okl fd;k gA bl ekey e] bl U;k;ky; u bl U;k;ky; d vud fu.k;k ij fopkj fd;k g vkj lçf{kr fd;k g fd **lok dfjvj d vfre Nkj ij lok vfHky[k e tUefrfFk d çfr f'kdk;r dju dh vuefr ugh nh tkuh pkfg,A**

17. **mÙkjkpy jkT; cuke firkcj nÙk leoky e ,d vU; fu.k; e ljdkjh depkjh dk bl vkèkkj ij vurk"k l budkj fd;k x;k Fkk fd mlu lok d yxHkx 30 o"k ckn lok vfHky[k e ifj'kf) bfllr fd;k FkkA mPp U;k;ky; dk fu.k; vikLr djr g, bl U;k;ky; u lçf{kr fd;k fd mPp U;k;ky; dk yxHkx rhu n'kdk ckn fu.k; e gLr{ki ugh djuk pkfg, FkkA**

18. vkèk in'k ljdkj cuke ,eO g;xho ljek e nk n'kd igy bl U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k g fd tUe] eR; ,o fookg ithdj.k vfèkfu;e] 1886 d vèkhu j[kx, tUe&eR; jftLVj e vrfo"V çfof"V d m)j.k d vkèkkj ij Hkh fu;ekoyh d vkjHk gku d ckn ifjoru d fy, i'pkrorh nkok dju dh NV ugh FkhA mÙkj in'k jkT; cuke xyk;ph(rfeyukM jkT; cuke VhO ohO o.kxikyu(Hknd (vkjO ,UM chO) fMfotu cuke jxèkj efYyd(Hkkjr l?k cuke gjuke flg ,o xg foHkkx cuke vkjO fd#cdj.k ij Hkh fo'okl fd;k x;k FkkA

19. **; fu.k; ekey d fofHkUu vk;ke dh vkj y tkr g fd vfre Nkj ij ifj'kf) depkfj;k dh fo'kky l[;k dh dher ij gkxh] vr%] vfre Nkj ij fdlh ifj'kf) dk U;k;ky; }kjk grkRlkfgr fd;k tkuk pkfg,A xg foHkkx cuke vkjO fd#cdj.k e fu.k; d çklfxd Hkkx dk iBu fuEufyf[kr g%** (SCC pp 158-59, para 7)

"7. **ykd lod }kjk tUefrfFk dh ifj'kf) d fy, vkonu mldh lok d vfre Nkj ij xg.k ugh fd;k tk ldrk gA** ;g bfxr dju dh vko';drk ugh g fd lcfèkr ykd lod dh tUefrfFk dh ifj'kf) d fy, ,l fdlh fun'k dh J[kfyr çfrfØ;k g D;kfd viuh&viuh çkUufr d fy, o"kk l çrh{kk dj jg mld uhp d vU; depkjh bl çfØ;k }kjk çHkkfor gkr gA dN dh vlèkk; migfr l ihfMr gku dh lHkkouk gkrh g D;kfd tUefrfFk dh ifj'kf) d dkj.k lcfèkr vfèkdkjh in ij cuk jgrk g] dN ekeyk e o"kk rd] ftl le; d Hkhrj vud vfèkdkjh] tk viuh çkUufr dh irh{kk djr g, ojh;rk e

mlds uhps g] lnk ds fy, viuh çkUufr [kks ldrs g--------gekjs vuqlkj] ;g egRoiw.kZ igyw gS ftls viuh tUefrfFk dh ifjHkk"kk ds lcèk esa ykxw lsok dh 'krksaZ ds fy, vkèkkj ds :i esa fy;k tk ldrk gS] ;g fd dksbZ Hkh deZpkjh viuh lsok ds var esa ,d ,sls çeq[k egRo okys [kkus esa tUefrfFk dks ifjofrZr djus dh vuqefr ugha ns ldrk] ;fn ,slk vkosnu le; ij u djds lsok ds var esa tc og lsok fuo`fÙk ds dxkj ij gks] djuk vuqefr ugha gksxkA ,sls çR;sd ekeys esa tUefrfFk dh ifjHkk"kk vkSj U;k;ky; }kjk vfHkfu.khZr gksus okys [kkl rF;ksa ij fuHkZj djrk gSA ;fn vkosnd vius vkosnu esa lQy ugha gksrk rks mls viuh tUefrfFk dks cnyus dk vfèkdkj ugha gSA U;k;ky; vFkok vfèkdj.k dks lkekU;r% ,sls vkosnu dks Lohdkj ugha djuk pkfg, vkSj ekeys esa lafLFkr dh xbZ vkifÙk dks Hkh ns[kuk pkfg,A**

20. lxr fofèkd voLFkk dh nf"V e] vk{kfir vkn'k likf"kr ugh fd;k tk ldrk g vkj ioorh ijkxkQk e of.kr vfèklpuk ,o vun'k dk lknk iBu Hkh bl fu"d"k dh vkj y tkrk g fd ikp o"k ckn tUefrfFk d ifjoru d fy, vkonu xg.k ugh fd;k tkuk pkfg,A** (tkj fn;k x;k)

9. मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम प्रेमलाल श्रीनिवास, (2011)9 SCC 664, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विशेषत: पैरा 7 एवं 8 पर निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"7. iokDr rkfF;d ifjn'; vkj bl fcn ij fofèk d fl)krk d vkykd e oreku fook|d ij fopkj dju ij ge vk'oLr g fd mPp U;k;ky; çR;Fkh dh tUefrfFk e ifjoru dju dk fun'k nu e U;k;kfpr ugh FkkA

8. ;g tkj nu dh vko';drk g fd ljdkjh lod dh tUefrfFk dh ifj'kf) vrxLr dju oky ekeyk e] fo'k"kr% vfèkof"krk dh io lè;k ij vFkok viu dfjvj d vfre Nkj ij U;k;ky; vFkok vfèkdj.k dk fdlh ljdkjh lok e ço'k d le; ij lok iLrd e nt dh x;h tUefrfFk dh ifj'kf) d fy, fun'k tkjh djr g, lrd ,o lkoèkku jguk gkxkA tc rd U;k;ky; vFkok vfèkdj.k i.kr% lr"V ugh g fd ,Ik nkok mlds tUe frfFk l lcfèkr v[kMuh; çek.k d vkèkkj ij vkj fofgr dh x;h çfØ;k d vu#i vFkok lcfèkr foHkkx }kjk viuk;h x;h lxr çfØ;k d erkfcd] ;FkkfLFkfr fd;k x;k g vkj fd lcfèkr 0;fDr d lkFk okLrfod vU;k; gvk g] U;k;ky; vFkok vfèkdj.k dk lok iLrd dh ifj'kf) d fy, fun'k tkjh dju l ijgt djuk pkfg,A **ckj&ckj bl U;k;ky; u nf"Vdk.k vfHk0;Dr fd;k g fd ;fn ljdkjh lod lok e viu ço'k l yck le; chr tku d ckn] fo'k"kr% viu fu;kDrk }kjk fu;r fd, x, le; d ij] nt dh x;h tUefrfFk dh ifj'kf) d fy, vujkèk djrk g] og vfèkdkj d rkj ij viuh tUefrfFk dh ifj'kf) dk nkok ugh dj ldrk g Hky gh mlds ikl ;g LFkkfir dju d fy, vPNk lk{; g fd nt dh x;h tUefrfFk Li"Vr% xyr gA dkbl U;k;ky; vFkok vfèkdj.k mudh enn d fy, ugh vk ldrk g tk viu vfèkdkjk dk NkM nr gA**** (tkj fn;k x;k)

10. पूर्वोक्त तथ्यों, कारणों एवं न्यायिक उद्घोषणाओं की दृष्टि में, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा अभिलेख पर मौजूद तथ्यों का अधिमूल्यन करने में गलती नहीं किया है और विद्वान एकल न्यायाधीश

ने सही प्रकार से रिट याचिका खारिज कर दिया है। जैसा उपर उद्धृत किया गया है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों ने भी निर्णयाधार अधिकथित किया है कि अत्यन्त विलंबित चरण पर न्यायालय द्वारा कर्मचारी की जन्मतिथि के बारे में इस प्रकार की परिशुद्धि नहीं की जानी चाहिए। अतः, इस लेटर्स पेटेन्ट अपील में सार नहीं हैं और हम इस अपीलार्थी द्वारा दाखिल रिट याचिका को खारिज करते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा लिए गए दृष्टिकोण से भिन्न किसी अन्य दृष्टिकोण लेने का कारण नहीं देखते हैं।

11. इस प्रकार, यह लेटर्स पेटेन्ट अपील एतद्द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

पटेल एवं कमानी एजेंसी

cuke

भारतीय जीवन बीमा निगम एवं एक अन्य

W.P. (C) No. 4491 of 2015. Decided on 8th January, 2016.

सार्वजनिक परिसर (अप्राधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971—धाराएँ 2 (e) एवं 4—बेदखली–पट्टा करार के निबंधनों एवं शर्तों के अभिकथित उल्लंघन के लिए परिसर खाली करने का निर्देश–संपदा अधिकारी की अधिकारिता किसी विधि द्वारा वर्जित नहीं है–अधिनियम 1971 के अधीन प्रावधान सामान्य अभिधृति विधियों के उपर अभिभावी होंगे–यह अभिवचन मात्र कि परिसर सार्वजनिक परिसर नहीं है और याची अप्राधिकृत अधिभोगी नहीं है, वर्तमान कार्यवाही में संपदा मामले की पोषणीयता को चुनौती नहीं दी जा सकती है–रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 6 एवं 7)

निर्णयज विधि.–(1990) 4 SCC 406; 1994 Supp. (3) SCC 694—Referred.

अधिवक्तागण.–Mrs. A.R. Choudhary, For the Petitioner; Mr. Sachin Kumar, For the Respondents.

श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति.–संपदा केस सं॰ 1 वर्ष 2013 की पोषणीयता को चुनौती देते हुए वर्तमान रिट याचिका दाखिल की गयी है।

2. संक्षिप्त रूप से कथित, वर्तमान कार्यवाही में प्रकट किए गए तथ्य ये हैं कि याची फर्म एवं प्रत्यर्थी निगम के बीच दिनांक 12.2.2007 का गैर रजिस्टर्ड करार निष्पादित किया गया था जिसके अधीन हिंदुस्तान भवन, मेन रोड, बिष्टुपुर, जिला पूर्वी सिंहभूम के भूतल पर 1138 वर्गफीट मापवाली एक दुकान दिनांक 1.8.2005 के प्रभाव से पट्टा पर दी गयी थी। पट्टा के अधीन अवधि का अवसान दिनांक 31.7.2010 को होना था। दिनांक 12.2.2007 के करार में पट्टा के नवीकरण के लिए प्रावधान है और उसके अनुसरण में, याची ने 5 वर्ष की अतिरिक्त अवधि के लिए करार का नवीकरण इप्सित करते हुए दिनांक 4.5.2010 को आवेदन दिया। यह कथन किया गया है कि दिनांक 18.7.2009 को प्रश्नगत परिसर का निरीक्षण किया गया था और पट्टा करार के निबंधनों एवं शर्तों का गंभीर उल्लंघन पाया गया था। दिनांक 15.4.2010 के नोटिस के तहत पट्टा समाप्त किया गया था और याची फर्म को 30 दिनों के भीतर परिसर खाली करने का निर्देश दिया गया था। बाद में, प्रत्यर्थी निगम द्वारा दिनांक 1.7.2010 का पत्र यह कथन करते हुए जारी किया गया था कि दिनांक 31.7.2010 को पट्टा का अवसान हो गया है और याची फर्म को परिसर खाली करने एवं रिक्त कब्जा सौंपने का निर्देश दिया गया था।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता श्रीमती ए॰ आर॰ चौधरी संपदा अधिकारी की अधिकारिता का प्रश्न उठाते हुए निवेदन करते हैं कि दिनांक 12.2.2007 के पट्टा करार के अधीन परिसर सार्वजनिक परिसर

(अप्राधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971 की धारा 2 (e) के अधीन ''सार्वजनिक परिसर'' नहीं हैं और याची फर्म अप्राधिकृत अधिभोगी नहीं है। पट्टा करार गैर रजिस्टर्ड लिखत है और इस प्रकार याची मासिक आधार पर किराएदार है और, इसलिए, याची की बेदखली की कार्यवाही केवल अभिधृति विधियों के अधीन आरंभ की जा सकती है। आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि अभिधान वाद सं॰ 101 वर्ष 2010 के लंबित रहने की दृष्टि में संपदा केस सं॰ 1 वर्ष 2013 की कार्यवाही जारी नहीं रखी जा सकती है। याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थी निगम के विरुद्ध स्थायी व्यादेश इप्सित करते हुए याची द्वारा अभिधान वाद सं॰ 101 वर्ष 2010 संस्थित किए जाने के लगभग तीन वर्ष बाद याची द्वारा आरंभ की गयी कार्यवाही से बचने के लिए संपदा केस सं॰ 1 वर्ष 2013 दाखिल किया गया है। प्रत्यर्थी निगम की मनमानी कार्रवाई अभिकथित करते हुए और ''**अशोका मार्केटिंग लि॰ एवं एक अन्य बनाम पंजाब नेशनल बैंक एवं अन्य**'', **(1990)4 SCC 406,** में निर्णय पर विश्वास करते हुए याची की विद्वान अधिवक्ता निवेदन करती हैं कि प्रत्यर्थी निगम द्वारा संपदा केस सं॰ 1 वर्ष 2013 का संस्थापन विधि की प्रक्रिया का दुरुपयोग है।

4. समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थी निगम के विद्वान अधिवक्ता श्री सचिन कुमार निवेदन करते हैं कि अधिकारिता का प्रश्न पहली बार में संपदा केस सं॰ 1 वर्ष 2013 में संपदा अधिकारी के समक्ष उठाया जाना चाहिए था। यह अभिवचन कि प्रश्नगत परिसर सार्वजनिक परिसर नहीं है और याची को अप्राधिकृत अधिभोगी घोषित नहीं किया जा सकता है, ऐसा विवाद्यक है जिसे संपदा केस सं॰ 1 वर्ष 2013 में उठाया एवं विनिश्चित किया जा सकता है। प्रत्यर्थी निगम के विरुद्ध मनमानी कार्रवाई का अभिकथन अस्वीकार करते हुए विद्वान अधिवक्ता ''**जीवन दास बनाम भारतीय जीवन बीमा निगम एवं एक अन्य,**'' **1994 Supp (3) SCC 694,** में निर्णय को निर्दिष्ट करते हैं एवं निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थी निगम किसी अन्य मकान मालिक की तरह अपने सर्वोत्तम लाभ के लिए परिसर का उपयोग करने का हकदार है।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों के परिशीलन के बाद, मेरा मत है कि रिट याचिका खारिज किए जाने की दायी है। दिनांक 12.2.2007 का पट्टा करार पक्षों के बीच निष्पादित किया गया था, यह विवादित नहीं है। उक्त करार गैर रजिस्टर्ड करार है किंतु न तो किराएदारी से इनकार किया गया है और न ही याची ने इनकार किया है कि प्रत्यर्थी निगम मकान मालिक है। यह भी अभिलेख पर है कि दिनांक 15.4.2010 के पत्र के तहत याची को तीस दिनों के भीतर परिसर खाली करने का निर्देश दिया गया था। दिनांक 15.4.2010 के पत्र में प्रकट किया गया कारण पट्टा करार का उल्लंघन है। दिनांक 4.5.2010 के नवीकरण के लिए आवेदन के प्रत्युत्तर में प्रत्यर्थी निगम ने याची को सूचित किया कि अभिधृति दिनांक 1.8.2010 के प्रभाव से विनिश्चित की जाएगी। याची ने दिनांक 1.7.2010 का पत्र अभिलेख पर लाया है, जिसे प्रत्यर्थी निगम द्वारा दिनांक 4.5.2010 के पत्र के प्रत्युत्तर में लिखा गया है किंतु याची ने दिनांक 15.4.2010 के पत्र अथवा दिनांक 1.7.2010 की संसूचना को किसी न्यायिक कार्यवाही में चुनौती नहीं दिया है। अभिधान वाद सं॰ 101 वर्ष 2010 में प्रार्थना का पठन निम्नलिखित है:–

> *"15 (i) uhp nh x;h vulph e of.kr okn ifjlj l fofèk d çkoèkkuk dk lgkjk fy, fcuk oknh dk voèk :i l vFkok tcju cn[ky dju l vkj@vFkok fdlh rjhd l bld mij oknh d 'kkfri.k dCtk e gLr{ki dju l çfroknh] bld vknfe;k ,o ,tUVk dk vo#) djr g, LFkk;h 0;kn'k dh fMØh d fy,A***

6. अभिधान वाद सं॰ 101 वर्ष 2010 में याची/वादी का संपूर्ण मामला दिनांक 12.2.2007 के पट्टा करार में नवीकरण के खंड पर आधारित है। संपदा केस सं॰ 1 वर्ष 2013 में कार्यवाही सार्वजनिक परिसर (अप्राधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971 के अधीन विधि में कार्यवाही है, इससे इनकार नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार, यह प्रतिवाद कि संपदा केस सं॰ 1 वर्ष 2013 का संस्थापन याची द्वारा संस्थित मामलों को विफल करने के लिए है, अस्वीकार किए जाने का दायी है। यह अभिवचन कि प्रश्नगत परिसर 1971 के अधिनियम की धारा 2 (e) के अधीन आच्छादित नहीं है और क्या याची प्रश्नगत परिसर के अप्राधिकृत अभिभोग में है या नहीं, ऐसा विवाद्यक है जिसे संपदा केस सं॰ 1 वर्ष 2013 में न्यायनिर्णीत किया जाएगा। मात्र यह अभिवचन करके कि प्रश्नगत परिसर सार्वजनिक परिसर नहीं है और याची उक्त परिसर के अप्राधिकृत अधिभोग में नहीं है, वर्तमान कार्यवाही में संपदा केस सं॰ 1 वर्ष 2013 की पोषणीयता को चुनौती नहीं दी जा सकती है। संपदा अधिकारी की अधिकारिता किसी विधि द्वारा वर्जित नहीं है और प्रत्यर्थी ने लिखित कथन में अभिधान वाद सं॰ 101 वर्ष 2010 की पोषणीयता को विनिर्दिष्टतः चुनौती दिया है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अब यह विवादित नहीं है कि सार्वजनिक परिसर (अप्राधिकृत अधिभोगियों की बेदखली) अधिनियम, 1971 के अधीन प्रावधान सामान्य अभिधृति विधियों पर अभिभावी होंगे। आगे यह निवेदन किया गया है कि केंद्र सरकार द्वारा जारी मार्गदर्शक सिद्धांत परामर्शदायी मात्र हैं और यह संपदा केस सं॰ 1 वर्ष 2013 में कार्यवाही वर्जित नहीं करेगा।

7. पूर्वोक्त तथ्यों पर विचार करते हुए, मैं मामले में हस्तक्षेप करने का इच्छुक नहीं हूँ और तद्नुसार, रिट याचिका खारिज की जाती है। किंतु, रिट याचिका की खारिजी संपदा अधिकारी के समक्ष कार्यवाही में पक्षों पर कोई प्रतिकूलता कारित नहीं करेगी और याची द्वारा किए गए समस्त अभिवचनों को संपदा केस सं॰ 1 वर्ष 2013 में उठाया जा सकता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k; ,o jRukdj Hkxjk] U;k;efrx.k

बनमाली खंडायत एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (D.B.) No. 1794 of 2004. Decided on 6th January, 2016.

सत्र विचारण मामला सं॰ 68 वर्ष 2004, जी॰ आर॰ केस सं॰ 538 वर्ष 2003, हटगम्हरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 35 वर्ष 2003 के तत्सम के संबंध में अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ 1, चाईबासा द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 16 अगस्त, 2004 एवं दिनांक 18 अगस्त, 2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—हत्या–सामान्य आशय–आजीवन कारावास–अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य परस्पर रूप से संपुष्टकारी पाए गए–चाक्षुक साक्ष्य भी चिकित्सीय रिपोर्ट से समर्थन पाता है–गवाहों के बयानों में सामने आने वाले लघु विरोधाभास गवाहों के दर्ज बयानों को त्यक्त करने के लिए पर्याप्त नहीं है–अपील खारिज। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Sanjay Saxena, *Amicus Curiae,* For the Appellants; Mr. Manoj Kumar No.3, A.P.P., For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.–यह दांडिक अपील सत्र विचारण केस सं॰ 68 वर्ष 2004, जी॰ आर॰ केस सं॰ 538 वर्ष 2003, हटगम्हरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 35 वर्ष 2003 के तत्सम, के संबंध में अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ 1, चाईबासा द्वारा पारित क्रमश: दिनांक 16 अगस्त, 2004 एवं दिनांक 18 अगस्त, 2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध दाखिल की गयी है जिसके द्वारा दोनों अपीलार्थियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया गया है और आजीवन कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है।

2. दिनांक 28.12.2003 को पूर्वाह्न 6.05 बजे हटगम्हरिया पी॰ एस॰ के अंतर्गत ग्राम हुरहुबसाई में दर्ज रंडाई कुइ के फर्दबयान के मुताबिक मामले के तथ्य ये हैं कि दिनांक 27.12.2003 को पूर्वाहन 9 बजे वह घर से निकली और अपने कर्तव्य का निर्वहन करने के लिए मंगल सिंह कोरहा के घर गयी। उसका पति दुका पूरती (मृतक) एवं पुत्र गोविन्द पूरती घर में उपस्थित थे। अपराह्न लगभग 5 बजे गोविन्द पूरती वहाँ पहुँचा और सूचित किया कि अपीलार्थीगण बनमाली खंडायत एवं उसकी पत्नी दुदुमाई खंडायत उसके पिता को शराब देने के बहाना पर अपने साथ ले गए। उसने आगे सूचित किया कि अपीलार्थीगण अपने घर में टांगी एवं अन्य हथियारों से दुका पूरती पर प्रहार कारित कर रहे थे। ऐसी सूचना पाने पर, सूचक अपीलार्थियों के घर गयी और अभियुक्तों को अपने हाथों में टांगी एवं भाला लिए देखा। जब सूचक ने अपने पति को बचाने का प्रयास किया, उसे अपीलार्थियों द्वारा धक्का दिया गया था और वे भाग गए। पुलिस को मामला सूचित किया गया था और रंडाई कुई का फर्दबयान दर्ज किया गया था। फर्दबयान के आधार पर दिनांक 28.12.2003 का हटगम्हरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 35 वर्ष 2003 भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपीलार्थियों के विरुद्ध दर्ज किया गया था।

पुलिस ने सम्यक अन्वेषण के बाद आरोप-पत्र दाखिल किया और तद्नुसार संज्ञान लिया गया था। चूँकि अपराध जिसके लिए अभियुक्तों को आरोप-पत्रित किया गया था अनन्य रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय थी, मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था और सत्र विचारण सं॰ 68 वर्ष 2004 के रूप में दर्ज किया गया था।

अभियोजन ने आरोप सिद्ध करने के लिए कुल 11 गवाहों का परीक्षण किया। विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश ने अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य एवं दस्तावेजों पर विचार करने के बाद दोनों अपीलार्थियों को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया और उनको पूर्वोक्तानुसार दंडादेशित किया।

3. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय एवं दंडादेश का मुख्यत: इस आधार पर विरोध किया है कि परीक्षण किए गए तात्विक गवाह विश्वसनीय नहीं हैं और उनके बयान संगत नहीं हैं। तात्विक गवाह अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 5, अ॰ सा॰ 6 एवं अ॰ सा॰ 8 ने गोविन्द पूरती जो मृतक का अवयस्क पुत्र है से प्राप्त सूचना के आधार पर अपना बयान दिया था। पूर्वोक्त अभियोजन गवाहों ने कथन किया है कि जब वे घटना स्थल पर पहुँचे, उन्होंने अपीलार्थियों को घर में उपस्थित देखा था। अपीलार्थी बनमाली खंडायत अपने हाथ में टांगी लिए था जबकि उसकी पत्नी दुदुमाई खंडायत बिना मूठवाला भाला लिए थी। यह इंगित किया गया है कि अपीलार्थियों द्वारा लिए गए हथियारों के बिन्दु पर गवाहों के बयान संगत नहीं हैं। कुछ गवाहों ने कथन किया है कि दुदुमाई खंडायत बर्छी पकड़े थी जबकि किसी और ने कथन किया है कि वह भुजाली लिए थी। इसी प्रकार से, अपीलार्थी बनमाली खंडायत द्वारा पकड़े गए हथियार के संबंध में भी गवाहों का बयान संगत नहीं है। पूर्वोक्त समस्त गवाहों ने कहा है कि

उन्हें मृतक के पुत्र गोविन्द पूरती द्वारा घटना के बारे में सूचित किया गया था, सही प्रतीत नहीं होता है। घटना के समय पर पुत्र लगभग 3-4 वर्ष का था। घटना के समय पर पूर्वोक्त गवाह एक स्थान पर उपस्थित नहीं थे बल्कि वे अपने कार्यस्थल पर अथवा अपने निवास स्थान पर उपस्थित थे। सूचक अ॰ सा॰ 8 ने कथन किया है कि जब वह घटना स्थल पर आयी, वहाँ कोई नहीं उपस्थित था। यदि सूचक का ऐसा बयान सही है, शेष गवाहों की उपस्थिति झूठी बन जाती है। अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने अ॰ सा॰ 11 द्वारा सिद्ध किए गए शव परीक्षण रिपोर्ट को निर्दिष्ट किया है जो उपदर्शित करता है कि मृतक के शरीर पर केवल एक उपहति पायी गयी थी किंतु गवाह यह कहने की सीमा तक गए कि जब वे घटनास्थल पर पहुँचे, उन्होंने अपीलार्थियों को मृतक पर प्रहार करते देखा। चूँकि तथाकथित चश्मदीद गवाहों के साक्ष्य चिकित्सीय रिपोर्ट द्वारा संपुष्ट नहीं किया गया है, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए अपीलार्थियों को दोषी अभिनिर्धारित करने के लिए इस पर विश्वास नहीं किया जाना चाहिए था।

4. राज्य के लिए उपस्थित विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ ने निवेदन किया है कि दुका पूरती का मृत शरीर इन अपीलार्थियों को घर के कमरा से बरामद किया गया था। अ॰ सा॰ 4 गोविन्द पूरती का साक्ष्य अत्यन्त स्पष्ट है कि अपीलार्थियों ने शराब देने के बहाने उसके पिता दुका पूरती (मृतक) के अपने घर ले गए थे। लड़के ने अपीलार्थियों को अपने पिता दुका पूरती (मृतक) पर प्रहार कारित करते देखा था। ऐसी स्थिति को देखते हुए गोविन्द पूरती उस स्थान की ओर दौड़ा जहाँ उसकी माता उपस्थित थी और घटना के बारे में सूचित किया। उसने अभियुक्तों द्वारा अपने पिता पर कारित प्रहार के संबंध में अन्य गवाहों को भी सूचना दिया है।

अ॰ सा॰ 1 राजन केशरी दकुआ एवं अ॰ सा॰ 2 सेरेगा पूरती मृत्यु समीक्षा के गवाह हैं और उन्होंने मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट सिद्ध किया और स्वीकार किया कि उनकी उपस्थिति में मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार की गयी थी। अ॰ सा॰ 1 राजन केशरी दकुआ एवं अ॰ सा॰ 3 सोना राम पूरती अभिग्रहण सूची के भी गवाह हैं। उन्होंने कथन किया है कि घटना स्थल से लाठी, कुल्हाड़ी एवं भाला बरामद किया गया था। अ॰ सा॰ 3 सोना राम पूरती ने अभिग्रहण सूची पर अपने हस्ताक्षर को सिद्ध किया है। अ॰ सा॰ 1 एवं अ॰ सा॰ 2 ने आगे कथन किया है कि उन्होंने दुका पूरती का मृत शरीर अपीलार्थियों के घर में पड़ा देखा था। अ॰ सा॰ 3 सोना राम पूरती ने घटना का भाग देखा था। वह कहता है कि जब वह घटना स्थल पर पहुँचा, उसने देखा कि दुदुमाई खंडायत मृतक दुका पूरती को पकड़े हुई थी जबकि अपीलार्थी बनमाली खंडायत उसके मस्तक पर टांगी से वार कर रहा था। प्रहार करने के बाद बनमाली खंडायत ने भागने का प्रयास किया था, किंतु उसका पीछा किया गया था और इन गवाहों द्वारा उसे पकड़ा गया था। यह निवेदन भी किया गया है कि अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 5 एवं अ॰ सा॰ 8 ने भी अभियोजन मामला संपुष्ट किया। चक्षुदर्शी साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य से भी सम्पोषण पाता है। विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश ने सही प्रकार से अपीलार्थियों को दोषी अभिनिर्धारित किया है और विचारण न्यायालय के निष्कर्ष में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

5. हमने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परीक्षण किया है, आक्षेपित निर्णय का परिशीलन किया है और गवाहों के अभिसाक्ष्यों पर विचार किया है। यह कि इन अपीलार्थीयों के घर में दुका पूरती पर प्रहार किया गया था, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4 एवं अ॰ सा॰ 5 के बयानों द्वारा पूर्णत: सिद्ध किया गया है जो तथ्य इस साक्ष्य से भी समर्थन पाता है कि मृत शरीर एवं प्रयुक्त हथियार घटना स्थल से जब्त किए गए थे। अ॰ सा॰ 3 सोना राम पूरती और अ॰ सा॰ 5 मंगल सिंह कोराह के विरुद्ध किए गए प्रति परीक्षण में कुछ भी नहीं निकाला गया है। उन्होंने स्पष्टत: कथन किया है कि गोविन्द पूरती से घटना की सूचना प्राप्त करने के बाद वे अपीलार्थियों के घर की ओर दौड़े और अपीलार्थी बनमाली खंडायत को टांगी से

मृतक के मस्तक पर उपहति कारित करते देखा। अ॰ सा॰ 3 ने अपीलार्थी बनमाली खंडायत का पीछा किया था और उसे पकड़ा था। इन दो स्वतंत्र गवाहों पर अविश्वास करने के लिए हम कोई तर्कपूर्ण सामग्री नहीं पाते हैं।

अ॰ सा॰ 4 गोविन्द पूरती एवं अ॰ सा॰ 8 रंडाई कुई क्रमशः मृतक के पुत्र एवं पत्नी हैं। गोविन्द पूरती ने समस्त गवाहों को सूचित किया था कि उसके पिता दुका पूरती को अपीलार्थियों द्वारा अपने घर ले जाया गया था जो परीक्षण किए गए गवाहों के बयानों से पूर्ण संपुष्टि पाता है। दुका पूरती का मृत शरीर एवं प्रयुक्त हथियारों को अपीलार्थियों के घर से बरामद किया गया था और यह तथ्य भी लगभग समस्त तात्विक गवाहों के बयानों से समर्थन पाता है। चश्मदीद गवाहों ने भी अभिसाक्ष्य दिया है कि अपीलार्थी बनमाली खंडायत ने टांगी से मृतक के मस्तक पर उपहति कारित किया और इस प्रकार कारित उपहति शव परीक्षण रिपोर्ट द्वारा संपुष्ट की गयी है। अ॰ सा॰ 9 केदारनाथ राम अन्वेषण अधिकारी है और उसने अपने द्वारा किए गए अन्वेषण का समर्थन किया है। उसने फर्दबयान प्रदर्श 2, औपचारिक प्राथमिकी प्रदर्श 3, मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट प्रदर्श 4 और अभिग्रहण सूची प्रदर्श 5 सिद्ध किया है। उसने अपने अभिसाक्ष्य के पैराग्राफ सं॰ 2 में घटनास्थल का वर्णन किया है। जब्त हथियारों को भी अ॰ सा॰ 10 द्वारा प्रस्तुत किया गया था और उन्हें तात्विक प्रदर्श सं॰ I, II एवं III के रूप में चिन्हित किया गया था।

6. अपीलार्थियों के विरुद्ध अभिलेख पर उपलब्ध निर्णयकारी साक्ष्य पर विचार करते हुए हम गवाहों के बयानों में सामने आने वाले लघु विरोधाभासों को अधिमान देने के इच्छुक नहीं हैं और वह गवाहों के दर्ज किए गए बयानों को त्यक्त करने के लिए पर्याप्त नहीं है। हम इस अपील में गुणागुण नहीं पाते हैं, अतः इसे खारिज किया जाता है। सत्र विचारण केस सं॰ 68 वर्ष 2004, जी॰ आर॰ केस सं॰ 538 वर्ष 2003, हटगम्हरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 35 वर्ष 2003 के तत्सम के संबंध में अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ 1, चाईबासा द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 16 अगस्त, 2004 एवं दिनांक 18 अगस्त, 2004 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश को एतद् द्वारा मान्य ठहराया जाता है। दुदुमाई खंडायत का जमानत बंधपत्र एतद् द्वारा रद्द किया जाता है और उसे दंड भुगतने के लिए दोषसिद्ध करने वाले/उत्तरवर्ती न्यायालय के समक्ष आत्मसमर्पण करने का निर्देश दिया जाता है। यदि वह आज के दिन से 30 दिनों के भीतर दोषसिद्ध करने वाले न्यायालय के समक्ष आत्मसमर्पण करने में विफल होती है, विद्वान दोषसिद्ध करने वाला/उत्तरवर्ती न्यायालय उसकी उपस्थिति सुनिश्चित करने के लिए उक्त अपीलार्थी अर्थात् दुदुमाई खंडायत के विरुद्ध आदेशिका जारी करके समुचित कदम उठाएगा।

7. विद्वान अधिवक्ता श्री संजय सक्सेना को न्यायालय की सहायता करने के लिए न्यायमित्र के रूप में नियुक्त किया गया है और इसलिए वह आवश्यक फीस प्राप्त करने के हकदार हैं और इसके लिए सदस्य सचिव, जे॰ एच॰ ए॰ एल॰ एस॰ ए॰, से आवश्यक करने का अनुरोध किया जाता है।

---

ekuuh; jfo ukFk oek] U;k;efr

अंजनी कुमार

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 513 of 2015. Decided on 8th January, 2016.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 306/34—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 227—आत्महत्या का दुष्प्रेरण–सामान्य आशय–दांडिक मामले से उन्मोचन इप्सित करने वाली याचिका

का अस्वीकरण–प्रथम दृष्टया मामला अथवा गंभीर संदेह विनिश्चित करने की परीक्षा प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करती है–इस चरण पर, न्यायालय को यह नहीं देखना है कि क्या विचारण का अंत दोषसिद्धि में होगा या नहीं–मृतक ने संयुक्त तलाक याचिका की दाखिली के बाद आत्महत्या किया–मृतका अपने पिता के घर में रह रही थी जब उसने आत्महत्या किया किंतु पति द्वारा किए गए दुर्व्यवहार ने उसे अपना जीवन समाप्त करने के लिए मजबूर किया–अभियुक्त को विचारण के पहले उन्मोचित नहीं किया जा सकता है–पुनरीक्षण आवेदन खारिज।

(पैराएँ 9 से 14)

निर्णयज विधि.–(2010) 9 SCC 368; 2015 (1) East Cr. C. 450 (SC); (2013) 3 SCC 330—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Ram Chandra Prasad Sah, For the Petitioner; Mr. Ravi Prakash, For the State.

आदेश

दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'संहिता') की धाराओं 397 एवं 401 के अधीन इस न्यायालय की पुनरीक्षण अधिकारिता का अवलंब लेते हुए याची ने चास पी॰ एस॰ केस सं॰ 199 वर्ष 2013 से उद्भूत होने वाले एस॰ टी॰ सं॰ 16 वर्ष 2015 में अपर सत्र न्यायाधीश II, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 22.4.2015 के आदेश की वैधता को चुनौती दिया है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धारा 306/34 के अधीन अपने उन्मोचन के लिए संहिता की धारा 227 के अधीन याची द्वारा दाखिल याचिका अस्वीकार कर दी गयी है।

2. मृतका मनीषा के पिता केशव प्रसाद की प्रेरणा पर दर्ज प्राथमिकी में चित्रित ताथ्यिक आधार संक्षेप में यह है कि उसकी पुत्री मनीषा का विवाह याची के साथ दिनांक 2.3.2012 को हुआ था किंतु चूँकि विवाहोपरांत उसकी पुत्री को ससुराल वालों सहित याची एवं अन्य अभियुक्तों द्वारा शारीरिक एवं मानसिक यातना के अध्यधीन किया गया था, वह अपने नैहर में रहने लगी थी और दिनांक 28.6.2013 को अपराह्न लगभग 5 बजे उसने स्वयं को फाँसी लगाकर आत्महत्या कर लिया और उसके द्वारा सम्यक रूप से हस्ताक्षरित एक आत्महत्या नोट छोड़ा गया था।

3. अन्वेषण पूरा करने के बाद, इस याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था और मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था जहाँ इस याची ने संहिता की धारा 227 के अधीन अपने उन्मोचन के लिए याचिका दाखिल किया जिसे अवर न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए कि यह दर्शाने के लिए पर्याप्त सामग्री है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है, दिनांक 22.4.2015 के आदेश के तहत अस्वीकार कर दिया गया था। अतः, यह पुनरीक्षण आवेदन दाखिल किया गया है।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश का विकृत एवं विधि में दोषपूर्ण के रूप में विरोध करते हुए गंभीर रूप से प्रतिवाद किया कि अवर न्यायालय ने अन्वेषण के दौरान संग्रहित साक्ष्य का अधिमूल्यन किए बिना यांत्रिक रूप से याची की प्रार्थना अस्वीकार कर दिया। आगे यह निवेदन किया गया था कि अगर अभियोजन मामला ज्यों का त्यों स्वीकार किया जाता है, फिर भी अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लायी गयी सामग्री के आधार पर इस याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध नहीं बनता है और आत्महत्या के दुष्प्रेरण का अपराध गठित करने के लिए जिम्मेदार अवयव बिल्कुल गायब हैं। यह निवेदन भी किया गया था कि मृतका विवाह के बाद केवल तीन माह तक अपने दांपत्य गृह में रही थी और तत्पश्चात अपने ससुराल से चली गयी और अपने नैहर में रहने लगी जिसके बाद प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय के न्यायालय में हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13 (B) के अधीन संयुक्त तलाक याचिका दाखिल की गयी थी और विगत एक वर्ष से पक्षों के बीच कोई

अंत:क्रिया नहीं थी। यह निवेदन भी किया गया था कि आत्महत्या की तिथि पर मृतका अपने माता-पिता के घर में थी किंतु अवर न्यायालय ने केस डायरी के पैराग्राफ 43 में संग्रहित साक्ष्य का अधिमूल्यन किए बिना, जहाँ सूचक के घर की मकानमालिक ने स्पष्टत: कथन किया है कि याची विगत एक वर्ष से अपने ससुराल नहीं आया था, अपने न्यायिक विवेक का इस्तेमाल किए बिना आत्म हत्या नोट पर विश्वास करके उसके उन्मोचन के लिए दाखिल याचिका अस्वीकार कर दिया।

5. पूर्वोक्त निवेदनों के विपरीत, राज्य का प्रतिनिधित्व कर रहे विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि अवर न्यायालय ने उन्मोचन की प्रार्थना अस्वीकार करते हुए केस डायरी के विभिन्न पैराग्राफों पर विचार किया है और आत्महत्या नोट तथा अभिकथित अपराध से संबंधित एक सी॰ डी॰ (कॉम्पैक्ट डिस्क) पर भी चर्चा किया है। यह निवेदन भी किया गया था कि यह उपधारित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री है कि याची जो मृतका का पति था ने आत्महत्या की कारिता दुष्प्रेरित किया और आक्षेपित आदेश में अवैधता अथवा अनियमितता नहीं है।

6. विद्वान अधिवक्ता के परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करने के पहले मैं संहिता की धारा 227 के अधीन अवर न्यायालय की शक्तियों के विस्तार एवं परिधि को संक्षिप्त रूप से ध्यान में ले सकता हूँ। संहिता का अध्याय XVIII संहिता की धारा 209 के अधीन सुपुर्दगी आदेश के अनुसरण में सत्र न्यायालय के समक्ष विचारण के लिए प्रक्रिया अधिकथित करता है। धारा 227 उन परिस्थितियों को अनुध्यात करती है जिसमें आरोप विरचित किए जाने के चरण पर अभियुक्त उन्मोचित किया जा सकता है जो प्रावधानित करती है कि मामले के अभिलेख और पुलिस रिपोर्ट के साथ प्रस्तुत दस्तावेजों पर विचार करने पर और अभियुक्त तथा अभियोजन को सुनने के बाद न्यायालय से यह विनिश्चित करने की उम्मीद की जाती है और न्यायालय बाध्य है कि क्या अभियुक्त के विरुद्ध अग्रसर होने का पर्याप्त आधार है और उसके परिणामस्वरुप अभियुक्त को उन्मोचित कर सकता है अथवा उसके विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए अग्रसर हो सकता है।

7. सज्जन कुमार बनाम सी॰ बी॰ आई॰, (2010)9 SCC 368, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस बिन्दु पर सारगर्भित से विश्लेषण करते हुए पैरा 19 में निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:-

> *"19. ;g Li"V g fd vkjfHkd pj.k ij ;fn etcr lng g tk U;k;ky; dk ;g lkpu dh vkj y tkrk g fd ;g mièkkfjr dju dk vkèkkj g fd vfHk;Dr u vijkèk fd;k g] rc U;k;ky; dk ;g dgu dh NV ugh g fd vfHk;Dr d fo#) vxlj gku dk i;kIr vkèkkj ugh gA vfHk;Dr d nk"k dh mièkkj.kk ftl vkjfHkd pj.k ij fd;k tkuk g] doy çFke n"V;k ;g fofuf'pr dju d ç;ktu l g fd U;k;ky; dk fopkj.k gr vxlj gkuk pkfg, ;k ughA ;fn lk{; ftl nu dk vfHk;ktu çLrko djrk g vfHk;Dr dk nk"kfl) djrk g] Hky gh bl çfrijh{k.k e pukrh fn, tku vFkok cpko }kjk [kfMr fd, tku d igy i.kr% Lohdkj fd;k tkrk g] lk{;] ;fn gk] ugh n'kk ldrk g fd vfHk;Dr u vijkèk fd;k g] rc fopkj.k gr vxlj gku d fy, i;kIr vkèkkj ugh gkxkA***

8. एक अन्य मामले **राज्य पुलिस इंस्पेक्टर के माध्यम से बनाम ए॰ अरुण कुमार एवं एक अन्य, (2015)1 East Cr. C. 450 (SC)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अनेक प्रामाणिक निर्णयों पर विचार करने पर संहिता की धाराओं 227 एवं 228 के विस्तार पर पूर्ण मार्गदर्शक सिद्धांत अधिकथित किया। उक्त मामलों में विनिश्चित निर्णयाधार से यह स्पष्ट है कि आरंभिक चरण पर न्यायालय को यह पता लगाने की दृष्टि से कि क्या उससे सामने आने वाले तथ्य अपने अंकित मूल्य पर लिए जाने पर अभिकथित अपराध गठित करने के लिए अवयवों का अस्तित्व प्रकट करते हैं और यह भी पता लगाने

कि क्या अभियुक्त के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है अथवा नहीं, के सीमित प्रयोजन से अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों एवं दस्तावेजों का मूल्यांकन करना होगा। प्रथम दृष्टया मामला अथवा गंभीर संदेह विनिश्चित करने के लिए परीक्षा प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करती है और इस चरण पर न्यायालय को यह नहीं देखना होगा कि क्या विचारण का अंत दोषसिद्धि में होगा या नहीं।

9. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए पूर्वोक्त सिद्धांत अथवा मार्गदर्शक सिद्धांत के आलोक में यह परीक्षण करना आवश्यक है कि क्या वर्तमान मामले में अवर न्यायालय याची को उन्मोचित करने से इनकार करने में न्यायोचित था या नहीं। अभिलेख पर मौजूद सामग्री एवं साक्ष्य का परीक्षण करने के पहले इस मामले में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक के बेहतर अधिमूल्यन के लिए भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 306 को निर्दिष्ट करना आवश्यक है। भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 306 का पठन निम्नलिखित है:

> *"306. **vkRegR;k dk n"çj.k**-&;fn dkb 0;fDr vkRegR;k dj] rk tk dkb ,l h vkRegR;k dk n"çj.k djxk] og nkuk e l fdl h Hkkfr d dkjkokl l] ft ldh vofèk nl o"k rd dh gk ldxh] nf.Mr fd;k tk,xk vkj teku l Hkh n.Muh; gkxkA***
>
> *ikoèkku d dkj iBu l] ;g Li"V g fd HkkO nO l0 dh èkkjk 306 d vèkhu vijkèk xfBr dju d fy,] vfHk;ktu dk LFkkfir djuk % (i) fd 0;fDr u vkRegR;k dkfjr fd;k g] rFkk (ii) fd vkRegR;k dk n"ij.k vfHk;Dr }kjk fd;k x;k FkkA vU; 'kCnk e] èkkjk 306 d vèkhu vijkèk doy rc xfBr gkxk tc vijkèk dh dkfjrk dk ^^n"ij.k** fd;k tkrk gA*

शब्द दुष्प्रेरण को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 107 में परिभाषित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"107. **fdl h ckr dk n"çj.k**-&og 0;fDr fdl h ckr d fy, yku dk n"çj.k djrk g] tk&*
>
> *igyk&ml ckr dk dju d fy, fdl h 0;fDr dk mdl krk g(vFkok*
>
> *nljk&ml ckr dk dju d fy, fdl h "kM;= e ,d ;k vfèkd vU; 0;fDr ;k 0;fDr;k d lkFk lfEefyr gkrk g] ;fn ml "kM;= d vulj.k e] vkj ml ckr dk dju d mnn'; l] dkb dk; ;k voèk yki ?kfVr gk tk,(vFkok g] ;fn ml "kM;= d vulj.k e] vkj ml ckr dk dju d mí'; l] dkb dk; ;k voèk yki ?kfVr gk tk,(vFkok*
>
> *rhljk&ml ckr d fd, tku e fdl h dk; ;k voèk yki }kjk lk'k; lgk;rk djrk gA*
>
> ***Li"Vhdj.k 1**—tk dkb 0;fDr tkuc>dj n0;in'ku }kjk] ;k rkfRod rF;] ft l çdV dju d fy, og vkc) g] tkuc>dj fNiku }kjk] LoPN;k fdl h ckr dk fd;k tkuk dkfjr ;k mikIr djrk g] vFkok dkfjr ;k mikIr dju dk ç;Ru djrk g] og ml ckr dk fd;k tkuk mdl krk g] ;g dgk tkrk gA***

पूर्वोक्त प्रावधान के कोरे परिशीलन से, यह पर्याप्त रूप से स्पष्ट है कि किसी व्यक्ति को कोई चीज करने में दुष्प्रेरित करता कहा जा सकता है यदि वह प्रथमत: किसी व्यक्ति को उस चीज को करने के लिए उकसाता है; अथवा द्वितीयत: उस चीज को करने के लिए एक अथवा अधिक व्यक्तियों के साथ कोई षडयंत्र करता है अथवा तृतीयत: उस चीज का किया जाना किसी कृत्य अथवा अवैध लोप द्वारा आशयपूर्वक मदद करता है।

10. मैंने अन्वेषण के दौरान केस डायरी में दर्ज किए गए गवाहों के बयान का परिशीलन किया है जो स्पष्टत: उपदर्शित करता है कि मृतका को याची द्वारा मानसिक एवं शारीरिक यातना के अध्यधीन

किया गया था जो कुटुंब न्यायालय अधिनियम की धारा 13 (b) के अधीन कुटुंब न्यायालय के समक्ष याची द्वारा दाखिल याचिका से भी प्रतीत होगा। यह सत्य है कि मृतका अपने पिता के घर में रह रही थी जब उसने आत्महत्या किया किंतु पति द्वारा किए गए दुर्व्यवहार ने उसको अपने जीवन का अंत करने के लिए कदम उठाने के लिए मजबूर किया। यद्यपि मृतका के आत्महत्या नोट के बारे में चर्चा है किंतु इसे केस डायरी के साथ संलग्न नहीं किया गया है। किंतु, मृतका द्वारा तैयार की गयी सी॰ डी॰ में आत्महत्या के नोट के एक भाग का फोटोग्राफ है। अवर न्यायालय ने आक्षेपित आदेश में केस डायरी के विभिन्न पैराग्राफों और सी॰ डी॰ के आत्महत्या नोट के भाग पर विस्तार में चर्चा किया है।

11. प्रकटत:, मृतका ने प्रधान न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, बक्सर के न्यायालय में तलाक के लिए संयुक्त याचिका दाखिल करने के बाद आत्महत्या किया। उक्त याचिका दिनांक 8.4.2013 को दाखिल की गयी थी और मृतका ने दिनांक 28.6.2013 को आत्म हत्या किया। उकसावा की आवश्यकता संतुष्ट करने के लिए, यद्यपि यह आवश्यक नहीं है कि उस प्रभाव के वास्तविक शब्दों का उपयोग करना होगा अथवा जो उकसावा गठित करता है, उस परिणाम का आवश्यकत: एवं विनिर्दिष्टत: सुझाव होना होगा, फिर भी परिणाम उकसाने की युक्तियुक्त निश्चितता होनी होगी। वर्तमान मामले में, यद्यपि आत्महत्या नोट केस डायरी का भाग नहीं है किंतु आत्महत्या नोट के उस भाग से, जिसे काम्पैक्ट डिस्क (सी॰ डी॰) में दर्शाया गया है, यह प्रतीत होता है कि मृतका को याची के हाथों अमानवीय व्यवहार एवं क्रूरता के अध्यधीन किया गया था। अन्वेषण के दौरान संग्रहित साक्ष्य एवं सामग्री, यदि उन्हें उनके अंकित मूल्य पर लिया जाता है, स्पष्टत: याची के विरुद्ध मजबूत प्रथम दृष्टया मामले अथवा गंभीर संदेह का कथन करते हैं। यह चरण मामले में अतिगामी जाँच का नहीं है और न ही यह ये देखने का चरण है कि विचारण का अंत दोषसिद्धि अथवा दोषमुक्ति में होगा या नहीं बल्कि न्यायालय को मामले में अग्रसर होने के लिए मजबूत संदेह अथवा मजबूत प्रथम दृष्टया मामला उपधारित करना होगा।

12. राजीव थापर एवं अन्य बनाम मदन लाल कपूर, (2013)3 SCC 330 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मृतका लड़की के पिता का प्रेरणा पर कि उसे संदेह है कि उसकी पुत्री को जहर दिया गया था, दर्ज परिवाद मामले में उन्मोचन के इसी विवाद्यक पर विचार करते हुए पैराग्राफ 28 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:

> *^^;g vfHk;Dr d fo#) vfHk;ktu@ifjoknh }kjk fd, x, vfHkdFkuk dh lR;rk vFkok vU;Fkk dk eY;kdu dju dk pj.k ugh gA blh çdkj] ;g fofuf'pr dju dk pj.k ugh g fd vfHk;Dr dh vkj l fd;k x;k cpko fdruk otunkj gA Hky gh vfHk;Dr vfHk;ktu@ifjoknh }kjk fd, x, vfHkdFkuk e dN lng n'kku e lQy gkrk g] fopkj.k d igy vfHk;Dr dk mUekfpr dju vuuK; gkxkA ,l k blfy, g D;kfd bldk ifj.kke vfHk;ktu vFkok ifjoknh dk bl fl) dju d fy, lk{; nu dh vuefr fn, fcuk vfHk;ktu@ifjoknh }kjk fd, x, vfHkdFkuk dk vfrerk nu e gkxkA fdr] bldk foijhr lR; ugh g D;kfd Hky gh fopkj.k gr vxlj gvk tkrk g(vfHk;Dr dk fdlh v lèkk; ifj.kkek d vè;èkhu ugh fd;k x;k gA vfHk;Dr vHkh Hkh fofèk d vu#i lk{; çLrr djd viuk cpko LFkkfir dju e lQy gku dh voLFkk e gkxkA fofèkd voLFkk dh ?kk"k.kk djr g, bl U;k;ky; }kjk fn, x, fu.k;k dh vrghu lph g fd ,l ekey e tgk vfHk;ktu@ifjoknh u yxk, x, vkjkik d leLr vo;ok dk ykr g, vfHkdFku fd;k g vkj fd, x, vfHkdFkuk dh lR;i.krk çFke n"V;k lkf{;r djr g, U;k;ky; d le{k lkexh çLrr fd;k g] fopkj.k djuk gh gkxkA**

13. भले ही याची यह दर्शाने में सफल हुआ है कि चूँकि मृतका घटना की तिथि पर अपने पिता के घर में थी, संदेह सृजित किया किंतु अभियोजन द्वारा किए गए अभिकथनों में अथवा परिस्थितियों में,

जैसी चर्चा पूर्ववर्ती पैराग्राफों में की गयी है, विचारण के पहले इस आरंभिक चरण पर अभियुक्त को उन्मोचित करना अनुज्ञेय नहीं होगा।

14. उक्त चर्चा की दृष्टि में, मैं आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का तर्कसंगत आधार नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, यह पुनरीक्षण आवेदन एतद् द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

खूबलाल महतो एवं अन्य

cuke

जमुना प्रसाद महतो एवं अन्य

W.P.(C) No. 7578 of 2013. Decided on 12th January, 2016.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 41, नियम 27—अतिरिक्त साक्ष्य–वादीगण के संपत्ति पर अधिकार एवं अभिधान और विक्रय विलेख का अविधिमान्यकरण की घोषणा इप्सित करने वाला वाद–लिखित कथन में आवेदन में उल्लिखित दस्तावेजों के आधार पर साक्ष्य देने का आधार नहीं है–पूर्ण रूप से विचारण के बाद सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश 41 नियम 27 के अधीन आवेदन इस अभिवचन पर अनुज्ञात नहीं किया जा सकता है कि याचीगण बाद में कतिपय दस्तावेजों के बारे में जान सके थे–रिट याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 2 से 4)

अधिवक्तागण.–Mr. Anil Kumar Sinha, For the Petitioners; None, For the Respondents.

आदेश

अभिधान अपील सं॰ 40 वर्ष 2009 में दिनांक 16.9.2013 के आदेश से व्यथित होकर वर्तमान रिट याचिका दाखिल की गयी है, जिसके द्वारा दिनांक 18.9.2012 एवं दिनांक 11.12.2013 के आवेदनों, जो अतिरिक्त साक्ष्य देने के लिए अनुमति इप्सित कर रहे थे को खारिज कर दिया गया है।

2. याचीगण अभिधान वाद सं॰ 133 वर्ष 2003 में प्रतिवादीगण थे। वाद अनुसूची A संपत्ति पर वादीगण के अधिकार एवं अभिधान की घोषणा और यह घोषणा कि दिनांक 11.9.1978 का विक्रय विलेख अवैध, गैर कानूनी एवं अप्रवृत्त है, इप्सित करते हुए संस्थित किया गया था। वाद में वादीगण ने दिनांक 27.10.1972 के विक्रय विलेख के फलस्वरुप अनुसूची A संपत्ति पर दावा किया। वादीगण ने प्राख्यान किया कि प्रश्नगत भूमि भूतपूर्व भूस्वामी द्वारा कौशल्या देवी एवं अन्य के पक्ष में बंदोबस्त की गयी थी और जमीन्दारी निहित किए जाने के बाद, भूस्वामी ने कौशल्या देवी एवं अन्य को अभिधारी दर्शाते हुए रिटर्न दाखिल किया। केस सं॰ 57 वर्ष 1960-61 के तहत उक्त कौशल्या देवी एवं अन्य ने बिहार राज्य को लगान का भुगतान किया और उनके नामों में लगान रसीद जारी किए गए थे। वादीगण उक्त कौशल्या देवी के विधिक उत्तराधिकारी से खरीदार है जिसने उनके पक्ष में दिनांक 27.10.1972 का रजिस्टर्ड विक्रय विलेख निष्पादित किया। प्रतिवादीगण ने उक्त कौशल्या देवी एवं अन्य द्वारा वाद संपत्ति पर अधिकार, अभिधान एवं हित के अर्जन से इनकार किया। हुकुमनामा जिसके माध्यम से बंदोबस्ती की गयी थी से इनकार किया गया था। उन्होंने दावा किया कि वाद भूमि के संबंध में किसी माना देवी एवं अन्य के पक्ष में बंदोबस्ती की गयी थी जिन्होंने सलामी का भुगतान किया और वाद भूमि पर काबिज हुए। प्रतिवादियों ने दावा किया कि बंदोबस्तों ने बहुमूल्य प्रतिफल के बदले प्रतिवादी सं॰ 1 एवं प्रतिवादी सं॰ 2 से 5 के पिता, प्रतिवादी सं॰ 6 एवं 7 तथा प्रतिवादी सं॰ 8, 9 एवं 10 के पक्ष में दिनांक 9.9.1978 का

विक्रय विलेख निष्पादित किया। प्रतिवाद किए जाने पर दिनांक 4.8.2009 के निर्णय एवं आदेश के तहत वाद डिक्री किया गया था जिसे प्रतिवादियों द्वारा अभिधान अपील सं॰ 40 वर्ष 2009 दाखिल करके चुनौती दी गयी थी। लंबित अभिधान अपील में प्रतिवादियों ने सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XLI नियम 27 के अधीन दिनांक 18.9.2012 एवं दिनांक 11.12.2013 के आवेदनों को दाखिल किया। उक्त आवेदनों में प्रतिवादियों ने हुकुमनामा की प्रति एवं अंचल में दाखिल किए गए रिटर्न की प्रति प्रस्तुत करने के लिए न्यायालय का अनुमति इप्सित किया।

3. जैसा ऊपर गौर किया गया है, दिनांक 18.9.2012 एवं दिनांक 11.12.2013 के आवेदनों में उल्लिखित दस्तावेजों के आधार पर साक्ष्य देने का आधार नहीं है। पूर्ण रूप से विचारण के बाद, इस अभिवचन पर कि वादीगण बाद में कतिपय दस्तावेजों के बारे में जान सके थे, सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XLI नियम 27 के अधीन आवेदन अनुज्ञात नहीं किया जा सकता है। याचीगण द्वारा किया गया अभिवचन कि उन्हें दिनांक 18.9.2012 एवं दिनांक 11.12.2013 के आवेदनों में उल्लिखित दस्तावेजों की जानकारी नहीं थी, पर इस कारण से विश्वास नहीं किया जा सकता है कि दिनांक 11.9.1978 के विक्रय विलेख को रिटर्न एवं हुकुमनामा की दाखिली उपदर्शित करने वाला परिवर्णन अंतर्विष्ट करना होगा।

4. मैं रिट याचिका में गुणागुण नहीं पाता हूँ और तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

अशोक कुमार गुप्ता एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 2717 of 2013. Decided on 8th January, 2016.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406, 420 एवं 506/34—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग, छल एवं दांडिक अभित्रास–संज्ञान–कंपनी द्वारा अपराध–अध्यपेक्षित अभिकथन करना परिवादी की ओर से बाध्यकारी है जो प्रतिनिधिक दायित्व गठित करने वाले प्रावधान आकृष्ट करेंगे–परिवाद याचिका में धाराओं 406, 420 एवं 506 के अधीन अपराधों को आकृष्ट करने वाले किसी प्रत्यक्ष कृत्य के लिए याचीगण को उत्तरदायी ठहराया नहीं गया है–जब तक प्रवंचना नहीं है, छल का अपराध आकृष्ट नहीं होता है–याचीगण मामले से उन्मोचित किए गए। (पैराएँ 19, 20, 24 से 28)

निर्णयज विधि.–(2008) 5 SCC 662; (2008) 5 SCC 668—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Gautam Kumar, Renuka Trivedi, Sandeep Kumar, For the Petitioner; Mr. Vijai Kumar Gupta, For the State; M/s Delip Jerath, Ashutosh Anand, For the O.P. No.2.

आदेश

आरंभ में यह आवेदन जी॰ आर॰ सं॰ 392 वर्ष 2012 (धनबाद बैंक मोड़ पी॰ एस॰ केस सं॰ 104 वर्ष 2012) में पारित दिनांक 6.11.2012 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया था, जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420 एवं 506/34 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया। समय के क्रम में, जब अवर न्यायालय के समक्ष दाखिल उन्मोचन आवेदन अस्वीकार किया गया था, अंतर्वर्ती आवेदन द्वारा दिनांक 27.7.2015 के उक्त आदेश को चुनौती दी गयी थी।

2. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री गौतम कुमार, राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री विजय कुमार गुप्ता और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री आशुतोष आन्नद द्वारा सहायित विद्वान अधिवक्ता श्री दिलीप जेराथ सुने गए।

3. पक्षों की ओर से किए गए निवेदनों का उल्लेख करने के पहले अभियोजन मामले को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जो निम्नलिखित है:–

4. मेसर्स वर्ल्ड मेटल मूवर्स के रूप में ज्ञात जिसे बाद में मेसर्स बी॰ एन॰ होटल्स प्रा॰ लि॰ के रूप में जाना जा रहा है, द्वारा मेसर्स बी॰ एन॰ होटल्स प्रा॰ लि॰ की बैंक मोड़, धनबाद अवस्थित 73 डिसमिल क्षेत्रफल माप वाली भूमि का टुकड़ा यूनाइटेड बैंक ऑफ इंडिया के पास बंधक रखा गया था। उक्त कंपनी के पक्ष में दिए गए कर्ज के गैर भुगतान के कारण बैंक कंपनी द्वारा भुगतान किए जाने वाले देय बकाया राशि की वसूली के लिए बैंक कर्ज वसूली अधिकरण के पास गया। संपत्ति को नीलाम में बेचा जाना था। समय के उस बिंदु पर, कंपनी का प्रबंध निदेशक राजेन्द्र कुमार गुप्ता जो वित्तीय मजबूरी के अधीन था परिवादी विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के पास गया और राजेन्द्र कुमार गुप्ता को 55 लाख रुपयों के भुगतान की शर्त पर इसके विकास के लिए भूमि का उक्त टुकड़ा बेचने का प्रस्ताव दिया ताकि बैंक को भुगतान किया जा सके और संपत्ति समस्त विल्लंगमों से मुक्त बनायी जा सके। परिवादी वि॰ प॰ सं॰ 2 ने उक्त प्रस्ताव स्वीकार किया और उक्त राशि का भुगतान किया। इसपर कंपनी का प्रबंध निदेशक राजेन्द्र प्रसाद गुप्ता कंपनी मेसर्स बी॰ एन॰ होटल्स प्रा॰ लि॰ की ओर से दिनांक 8.8.2007 को करार किया। विकास करार के निष्पादन के बाद, दिनांक 3.4.2008 को परिवादी को भूमि का कब्जा सौंपा गया था जिस पर निर्माण आरंभ हुआ। समय बीतने पर जब परिवादी ने 5,21,59,889/- रुपयों की राशि का निवेश किया, पक्षों के बीच विवाद उद्भूत हुआ। विकास करार के अनुसार, भूमि से संबंधित मूल विलेख बंधक के अधीन संपत्ति रखने के प्रयोजन से वि॰ प॰ सं॰ 2 को सौंपने की आवश्यकता थी ताकि वि॰ प॰ सं॰ 2 परियोजना पूरा करने के लिए वित्तीय संस्थान से कर्ज ले सके किंतु उक्त राजेन्द्र कुमार गुप्ता ने बार–बार अनुरोध किए जाने के बावजूद दस्तावेज नहीं सौंपा था जिसने निर्माण कार्य की प्रगति बाधित किया। विवाद का परिणाम मध्यस्थ की नियुक्ति में हुआ। जब मामला मध्यस्थ के समक्ष लंबित था, उक्त राजेन्द्र कुमार गुप्ता ने कंपनी की ओर से मुख्तारनामा प्रतिसंहृत कर दिया और विकास करार रद्द कर दिया और परिवादी को उक्त भूमि का कब्जा सौंपने के लिए कहा गया था। उस प्रभाव का पत्र प्राप्त करने पर, जब परिवादी उक्त राजेन्द्र कुमार गुप्ता के पास गया और शिकायत किया कि उसके साथ छल किया गया है, उसे गंभीर परिणामों की धमकी दी गयी थी।

5. इसपर एक परिवादी सी॰ पी॰ केस सं॰ 154 वर्ष 2012 दाखिल किया गया था जिसे इसके संस्थापन एवं अन्वेषण के लिए संबंधित पुलिस थाना के समक्ष भेजा गया था। तद्नुसार, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420 एवं 506/34 के अधीन धनबाद (बैंक मोड़) पी॰ एस॰ केस सं॰ 104 वर्ष 2012 दर्ज किया गया था।

6. मामला संस्थित किए जाने के बाद, कंपनी अर्थात् मेसर्स बी॰ एन॰ होटल्स प्रा॰ लि॰ और राजेन्द्र कुमार गुप्ता प्राथमिकी अभिखंडित करवाने के लिए रिट याचिका (दांडिक) सं॰ 49 वर्ष 2012 के तहत न्यायालय के पास गए। यह अभिनिर्धारित करने के बाद कि प्रथम दृष्टया मामला जिसके अधीन प्राथमिकी दर्ज की गयी थी बनता है, न्यायालय द्वारा उस रिट आवेदन को खारिज कर दिया गया था।

7. उस आदेश से व्यथित होकर, कंपनी और राजेन्द्र कुमार गुप्ता विशेष अनुमति अपील (दांडिक) सं॰ 8563 वर्ष 2011 के तहत माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष गए जिसे भी खारिज कर दिया गया था।

8. इसके पश्चात् चंपा देवी और राजेन्द्र कुमार गुप्ता संज्ञान लेने वाले आदेश को अभिखंडित करवाने के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन आवेदन दांडिक एम॰ पी॰ सं॰ 277 वर्ष 2013 दाखिल करके इस न्यायालय के पास आए। वह आवेदन भी खारिज किया गया था।

9. उस आदेश से व्यथित होकर, किसी चंपा देवी ने विशेष अनुमति अपील (दांडिक) सं॰ 460 वर्ष 2014 माननीय सर्वोच्च न्यायालय में दाखिल किया जिसे भी उन्मोचन के समय पर विचारण न्यायालय के समक्ष समस्त विवाद्यकों को उठाने की स्वतंत्रता उसे देते हुए खारिज कर दिया गया था।

10. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, ये दो याचीगण अर्थात् अशोक कुमार गुप्ता एवं कन्हैया लाल गुप्ता (कंपनी के निदेशकगण) इस न्यायालय अथवा माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष दाखिल किसी भी आवेदन में पक्ष कभी नहीं थे और कि स्वीकृत रूप से वे विकास करार करने के लिए परिवादी के पास कभी नहीं गए थे और कि ये याचीगण वे व्यक्ति नहीं थे जिन्होंने परिवादी से 55 लाख रुपयों की राशि प्राप्त किया था और कि इस प्रभाव का कोई भी अभिकथन परिवाद याचिका में नहीं है और, इसलिए, आरंभ में केवल राजेन्द्र कुमार गुप्ता के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था किंतु बाद में इन याचीगण सहित कंपनी मेसर्स बी॰ एन॰ होटल्स प्रा॰ लि॰ एवं इसके समस्त निदेशकों के विरुद्ध पूरक आरोप-पत्र दाखिल किया गया था यद्यपि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 या 420 या 506 के अधीन अपराध की कारिता के मामले में निभायी गयी भूमिका के बारे में भी अन्वेषण के दौरान कुछ भी नहीं आया था और उसी स्थिति में उन्मोचन आवेदन दाखिल किया गया था किंतु उसे इस तथ्य का अधिमूल्यन किए बिना अस्वीकार किया गया था कि किसी भी अपराध जिसके अधीन संज्ञान लिया गया था गठित करने के लिए इन याचीगण की ओर से कोई प्रत्यक्ष कृत्य नहीं है। किंतु, विचारण न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि इन याचीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है जिसके अधीन अपराधों का संज्ञान लिया गया है और ऐसी दशा में आक्षेपित आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

11. इसके विरुद्ध, वि॰ प॰ सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री दिलीप जेराथ ने दो दस्तावेजों को निर्दिष्ट किया जिनमें से एक कंपनी मेसर्स बी॰ एन॰ होटल्स प्रा॰ लि॰ के निदेशकों की सूची है और दूसरा बी॰ एन॰ होटल्स प्रा॰ लि॰ के निदेशकों के बोर्ड की बैठक में लिया गया संकल्प है जो दस्तावेज केस डायरी के भाग नहीं है। उन दस्तावेजों को निर्दिष्ट करके, यह निवेदन किया गया था कि ये याचीगण कंपनी के निदेशक हैं और कंपनी की ओर से समस्त निदेशकों ने राजेन्द्र कुमार गुप्ता को श्रीराम मल्टीकॉम प्रा॰ लि॰ जिसका परिवादी निदेशक है, से बहुमंजिला वाणिज्यिक काम्प्लेक्स बनाने के लिए दहिया में कंपनी की भूमि का विकास करने और श्री राम मल्टीकॉम प्रा॰ लि॰ के साथ करार करने और श्रीराम मल्टीकॉम प्रा॰ लि॰ के पक्ष में ऐसा करार एवं रजिस्टर्ड मुख्तारनामा निष्पादित करने और विकासकर्ताओं को भूमि सौंपने के संबंध में बातचीत करने के लिए प्राधिकृत किया था।

12. इस संबंध में, आगे यह निवेदन किया गया था कि इन याचीगण सहित समस्त निदेशक राजेन्द्र कुमार गुप्ता के परिवार के सदस्य हैं जिसे इन याचीगण एवं अन्य निदेशकों द्वारा परिवादी के साथ करार

करने के लिए प्राधिकृत किया गया था जिसने वस्तुतः संकल्प के निबंधनानुसार मुख्तारनामा एवं विकास करार निष्पादित किया और भारतीय दंड संहिता की धारा 406 अथवा 420 के अधीन अपराध गठित करता हुआ राजेन्द्र कुमार गुप्ता द्वारा जो भी कृत्य किया गया है, यह समझा जाएगा कि कंपनी के अन्य निदेशकों ने ऐसा किया है और तद्द्वारा ये याचीगण कंपनी का निदेशक होने के नाते राजेन्द्र कुमार गुप्ता द्वारा किए गए अपराध के दायित्व से नहीं बच सकते है।

13. इस प्रकार, विरोधी पक्षकार–परिवादी की ओर से किया गया निवेदन यह है कि ये याचीगण कंपनी के अन्य निदेशकों के साथ अपराधों की कारिता, यद्यपि इन्हें राजेन्द्र कुमार गुप्ता द्वारा किया गया है, के लिए प्रतिनिधिक रूप से जिम्मेदार हैं जो कुछ अवयवों के अध्यधीन भारतीय दंड संहिता के अधीन अभियोजन के प्रति अनजान है।

14. यह कथन किया जाए कि परिवादी के पास जाने और परिवादी से धन लेने और तब विलेख सौंपने से इनकार करने का जो भी अभिकथन है, वह राजेन्द्र कुमार गुप्ता के विरुद्ध है और न कि इन याचीगण के विरुद्ध। परिवादी अपनी परिवाद याचिका में मेसर्स बी॰ एन॰ होटल्स प्रा॰ लि॰ एवं परिवादी के बीच हुए करार से संबंधित मामले में इन याचीगण द्वारा निभायी गयी भूमिका पर बिल्कुल मौन है।

15. अन्वेषण के दौरान भी, ऐसा कुछ नहीं आया है कि इन याचीगण ने पूर्वोक्त अपराधों को गठित करने वाला कोई कृत्य किया था किंतु इन याचीगण को मात्र इस कारण से अभियोजित किया जा रहा है कि वे कंपनी के निदेशक हैं।

16. इस प्रकार, प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या इन परिस्थितियों के अधीन इन याचीगण को निदेशकों में से किसी एक द्वारा अथवा कंपनी द्वारा किए गए अपराधों की कारिता के लिए प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत पर अभियोजित किया जा सकता है। इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए मुझे दूर जाने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह विवाद्यक पहले ही विनिश्चित किया जा चुका है।

17. इस संबंध में, मैं **एस॰ के॰ अलघ बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं अन्य, (2008)5 SCC 662,** में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट कर सकता हूँ जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

> *^^pfd] LohÑr :i l] diuh d uke e Mk¶V fy[kk x;k Fkk] vr% Hkyh gh vihykFkh bldk çcèk fun'kd Fkk] ml nM lfgrk dh èkkjk 406 d vèkhu vijkèk djrk gvk ugh dgk tk ldrk gA ;fn vkj tc lofèk ,lh fofèkd dYiuk dk ltu vuè;kr djrh g] ;g bld fy, fofufn"Vr% çkoèkkfur djrh gA lofèk d vèkhu vfèkdfFkr fdlh çkoèkku dh vuifLFkfr e] diuh d fun'kd vFkok depkjh dk Lo;a diuh }kjk fd, x, fdlh vijkèk d fy, çfrfufèkd :i l nk;h vfHkfuèkkfjr ugh fd;k tk ldrk gA***

18. आगे, **मकसूद सईद बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, (2008)5 SCC 668**, में दिए गए निर्णय को ध्यान में लिया जा सकता है जिसमें निम्नलिखित संप्रेक्षित किया गया है:

> *"tgk nM çfØ;k lfgrk dh èkkjk 156 (3) vFkok èkkjk 200 d fucèkukuklkj nkf[ky ifjokn ;kfpdk ij vfèkdkfjrk dk ç;kx fd;k tkrk g] nMkfèkdkjh dk viu food dk bLreky dju dh vko';drk gA nM lfgrk diuh d çcèk fun'kd vFkok fun'kdk dh vkj l] tc diuh vfHk;Dr g] çfrfufèkd nkf;Ro lc) dju d fy, dkbZ çkoèkku vrfo"V ugh djrk gA fo}ku nMkfèkdkjh Lo; l ;g ç'u*

*iNu e foQy jg fd D;k ifjokn ;kfpdk] Hky gh ;Fkkor Lohdkj fd, tkus vkj bldh li.krk e lgh fy, tkus ij] bl fu"d"k dh vkj y tk,xh fd oreku çR;Fkhx.k fdlh vijkèk d fy, futh : i l nk;h FkA cd ,d dkjikjV fudk; gA çcèk fun'kd ,o fun'kd dk çfrufèkd nkf;Ro mnHkr gkxkA c'kr lfofèk e ml fufeÙk dkb çkoèkku gkA ,lk çfrufèkd nkf;Ro fu;r djr g, lfofèk dk fufooknr% çkoèkku vrfo"V djuk gkxkA mDr ç;ktu l Hkh] vè; if{kr vfHkdFkuk] tk çfrufèkd nkf;Ro xfBr dju oky çkoèkku vkÑ"V djx] dk djuk ifjoknh dh vkj l ckè; dkjh gA***

19. इस प्रकार, यह स्पष्टत: अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी संविधि के अधीन कंपनी द्वारा अपराध की कारिता के लिए प्रबंध निदेशक अथवा निदेशक को प्रतिनिधिक रूप से दायी अभिनिर्धारित किया जा सकता है यदि वह संविधि उसके लिए प्रावधानित करती है। उस मामले में भी जहाँ संविधि प्रतिनिधिक दायित्व के सिद्धांत के कारण प्रबंध निदेशक अथवा निदेशक का अभियोजन अनुध्यात करती है, अध्यपेक्षित अभिकथन, जो प्रतिनिधिक दायित्व गठित करने वाला प्रावधान आकृष्ट करेंगे, करना परिवादी की ओर से बाध्यकारी है।

20. इस मामले में जैसा मैंने पहले ही कथन किया है कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 अथवा 420 अथवा 506 के अधीन अपराधों को आकृष्ट करने वाला इन याचीगण द्वारा किए जा रहे किसी प्रत्यक्ष कृत्य के संबंध में परिवाद याचिका में इन याचीगण के विरुद्ध एक भी शब्द नहीं है। दस्तावेज, जिसके अधीन कंपनी की ओर से कृत्य करने के लिए निदेशकों में से एक अर्थात् राजेन्द्र कुमार गुप्ता को प्राधिकृत करते हुए समस्त निदेशकों द्वारा संकल्प लिया गया है, इन याचीगण को अभियोजित करने का आधार नहीं हो सकता है विशेषत: जब अपराध गठित करने वाला ऐसा कोई अभिकथन परिवाद याचिका में नहीं है और न ही मामले के अन्वेषण के दौरान अन्वेषण अधिकारी द्वारा कोई सामग्री संग्रहित की गयी है ताकि इस निष्कर्ष पर आया जा सके कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 अथवा 420 के अधीन अपराध गठित करता हुआ इन याचीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है।

21. यह कथन किया जाए कि भारतीय दंड संहिता की धारा 415 में छल का अपराध परिभाषित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

^^Ny-& *tk dkb fdlh 0;fDr l çopuk dj ml 0;fDr dk] ft l bl çdkj çofpr fd;k x;k g] diViod ;k cbekuh l mRçfjr djrk g fd og dkb lifÙk fdlh 0;fDr dh ifjnÙk dj n] ;k ;g lEefr n n fd dkb 0;fDr fdlh lifÙk dk j[k j[k ;k lk'k; ml 0;fDr dk] ft l bl çdkj çofpr fd;k x;k g] mRçfjr djrk g fd og ,lk dkb dk; dj] ;k dju dk yki dj ft l og ;fn ml gj çdkj çofpr u fd;k x;k gkrk rk] u djrk] ;k dju dk yki u djrk] vkj ft l dk; ;k yki l ml 0;fDr dk 'kkjhfjd] ekufld] [;kfr lcèkh ;k lkifÙkd udlku ;k vigkfu dkfjr gkrh g] ;k dkfjr gkfu lHkk0; g] og ^^Ny** djrk g] og ^^Ny** djrk g] ;g dgk tkrk gA*

22. इसके पठन से, यह प्रतीत होता है कि छल का अपराध गठित करने के लिए निम्नांकित घटक आवश्यक रूप से होने होते हैं:–

(1) ml èkk[kk ndj ml 0;fDr dk diVi.k ;k èkk[kkèkMh Hkjk iykHku gkuk pkfg,A

(2)(a) bl idkj Nyk x;k 0;fDr fdlh 0;fDr dk fdlh lifÙk dk ifjnk; dju d fy, ifjr fd;k tkuk pkfg,] ;k blij lgefr nu oky gkuk pkfg, fd dkb 0;fDr fdlh lifÙk dk viu ikl j[kxk ;k

(b) bl idkj Nyk x;k 0;fDr vk'kf;r : i l dkb ,lk dk; dju ;k u dju d fy, ifjr gkuk pkfg, ft l og djrk ;k ugh djrk vxj ml bl idkj Nyk x;k ugh gkrkA

*(3) 2(b) }kjk vkPNkfnr ekeyk e dk; ;k foyki , lk gkuk pkfg, tk Ny x; 0;fDr dk 'kkjhfjd :i l ;k mldh ifr"Bk ;k mldh lifÙk dk gkfu dkfjr dj ;k gkfu ;k udlku dkfjr fd, tku dh lHkkouk gkA***

23. इस प्रकार, छल का अपराध गठित करने के लिए आवश्यक प्रथम तत्व अभियुक्त द्वारा परिवादी की प्रवंचना है। जब तक प्रवंचना नहीं है, छल का अपराध कभी आकृष्ट नहीं होता है।

24. जैसा मैंने पहले ही कथन किया है कि इन याचीगण को विकास करार करने के लिए परिवादी के पास जाते हुए अभिकथित कभी नहीं किया गया है, अतः इन याचीगण द्वारा परिवादी को कपटपूर्वक अथवा गैरईमानदार रूप से प्रेरित करने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है। उस स्थिति में, इन याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 420 के अधीन अपराध आकृष्ट नहीं होता है।

25. जहाँ तक भारतीय दंड संहिता की धारा 406 के अधीन अपराध का संबंध है, वह भी इन याचीगण के विरुद्ध बनाया गया प्रतीत नहीं होता है। भारतीय दंड संहिता की धारा 405 में न्यास का दांडिक भंग परिभाषित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*405. **vkijkfèkd U;klHkx.**— tk dkb lEifÙk ;k lEifÙk ij dkb Hkh v[R;kj fdlh çdkj viu dk U;Lr fd, tku ij ml lEifr dk cbekuh l nfofu;kx dj yrk g ;k ml viu mi;kx e lifjofrr dj yrk g ;k ftl çdkj , lk U;kl fuogu fd;k tkuk g] ml fofgr dju okyh fofèk d fdlh fun'k dk] ;k , l U;k; d fuogu d ckj e mld }kjk dh xb fdlh vfHkO;Dr ;k foof{kr oèk lfonk dk vfrØe.k djd cbekuh l ml lEifÙk dk mi;kx ;k O;;u djrk g] ;k tkuc>dj fdlh vU; 0;fDr dk ,lk djuk lgu djrk g] og ^^vkijkfèkd U;klHkx** djrk gA*

26. उक्त प्रावधान के पठन पर, भारतीय दंड संहिता की धारा 405 के अधीन अपराध गठित करने के लिए निम्नलिखित अवयव होना चाहिए:–

"(a) fdlh 0;fDr dk lifÙk U;Lr vFkok lifÙk d mij v[r;kj U;Lr fd;k tkuk pkfg, FkkA

(b) ml 0;fDr dk ml lifÙk dk Lo; viu mi;kx d fy, xjbekunkj :i l nfofu;kftr vFkok lifjofrr djuk pkfg,] vFkok ml lifÙk dk xjbekunkj :i l mi;kx dju vFkok cpu d fy, vFkok ,lk dju d fy, fdlh vU; 0;fDr dk tkuc>dj ihfMr djuk pkfg,(

*(c) fd ,l nfofu;kx] lifjoru] mi;kx vFkok fuiVku dk ml <x] ftle ,l U;kl dk mUekfpr fd;k tkuk g] vFkok fdlh fofèkd lfonk] ftl ,l U;kl d mUekpu dk Nr g, 0;fDr }kjk fd;k x;k g] dk fofgr dju okyh fofèk;k d fdlh fun'k d mYy?ku e gkuk pkfg,A***

27. ऐसे अभिकथन की अनुपस्थिति की पृष्ठभूमि में, इन याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 406 के अधीन अपराध आकृष्ट नहीं होता है। समरुप स्थिति भारतीय दंड संहिता की धारा 506 के अधीन अपराध के साथ है क्योंकि याचीगण को ऐसा अपराध आकृष्ट करने वाला कोई प्रत्यक्ष कृत्य करता हुआ अभिकथित कभी नहीं किया गया है।

28. विचारण न्यायालय ने मामले के इन समस्त पहलूओं पर सही परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया था और इन पहलुओं पर विचार किए बिना इसने अभिनिर्धारित किया कि इन याचीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला बनता है और इसलिए इन याचीगण के विरुद्ध उन्मोचन आवेदन खारिज करने में अवैधता किया है।

तद्नुसार, उस आदेश को एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

परिणामस्वरुप, याचीगण को मामले से उन्मोचित किया जाता है।

परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

पंकज कुमार

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(C) No. 1258 of 2014. Decided on 14th January, 2016.

झारखंड सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम, 1956—धाराएँ 6 (2) एवं 11(a)—अधिक्रमण हटाया जाना–याची द्वारा किया गया अभिवचन कि अधिनियम वर्ष 1956 के अधीन प्रक्रिया का अनुसरण अंचलाधिकारी द्वारा नहीं किया गया है, केवल अंचलाधिकारी के समक्ष कार्यवाही में अभिलेखों के परीक्षण पर स्थापित किया जा सकता है जिसे प्रभावकारी रूप से अपीलीय प्राधिकारी द्वारा विनिश्चित किया जा सकता है–झारखंड सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम स्व-अंतर्विष्ट संहिता है जो व्यथित व्यक्ति को प्रभावकारी उपचार प्रावधानित करती है–याची को अपील दाखिल करने की स्वतंत्रता दी गयी। (पैराएँ 3 एवं 4)

अधिवक्तागण.–M/s Lalit Kumar Singh, Ramadhar Prasad Srivastav, For the Petitioner; M/s V.K. Prasad, Amit Kumar Verma, For the State.

आदेश

अधिक्रमण मामला सं॰ 3 वर्ष 2011-12 में पारित आदेश से व्यथित होकर, जिसके द्वारा झारखंड सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम, 1956 की धारा 6 (2) के अधीन आदेश पारित किया गया है, वर्तमान रिट याचिका दाखिल की गयी है।

2. याची ग्राम लेसली गंज अवस्थित खाता सं॰ 129 के अंतर्गत भूखंड सं॰ 579 में एक डिसमिल भूमि पर अधिकार, अभिधान एव ंहित का दावा करते हुए प्राख्यान करता है कि उक्त भूमि रैयती भूमि है। भूतपूर्व जमीन्दार ने हुकुमनामा के माध्यम से याची के दादा के नाम में पूर्वोक्त भूमि बंदोबस्त किया जिसने उससे लगान पाना जारी रखा। याची के विद्वान अधिवक्ता ने झारखंड सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम, 1956 के अधीन प्रावधानों को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन करते हैं कि विधि की आज्ञा के बिना अंचलाधिकारी द्वारा धारा 6 (2) के अधीन आदेश पारित किया गया है। यह प्रतिवाद किया गया है कि डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 6764 वर्ष 2011 में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के गलत अर्थान्वयन पर आक्षेपित आदेश पारित किया गया है।

3. प्रत्यर्थी झारखंड राज्य ने संपूर्ण अभिलेख प्रस्तुत किया है जो प्रकट करता है कि डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 1076 वर्ष 2011 में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेशों के अनुसरण में लेसलींग बाजार से लगे निर्मित बाजारों का भौतिक सत्यापन किया गया था। अंचलाधिकारी एवं अंचल अमीन ने 182 लोगों का नाम प्रकट करते हुए रिपोर्ट दिया जिन्होंने सरकारी भूमि का अधिक्रमण किया था। तद्नुसार, उन व्यक्तियों को नोटिस जारी किया गया था। यह विवादित नहीं है कि याची को भी नोटिस जारी किया गया था। आगे यह प्रतीत होता है कि खाता सं॰ 129 के अंतर्गत भूखंड सं॰ 579, 580, 581 एवं 582 से गठित भूमि के संबंध में अभिधान वाद सं॰ 87 वर्ष 1998 एवं अभिधान वाद सं॰ 19 वर्ष 2000 लंबित

है। याची द्वारा किया गया अभिवचन कि झारखंड सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम, 1956 के अधीन प्रक्रिया का अनुसरण अंचलाधिकारी द्वारा नहीं किया गया है, केवल अंचलाधिकारी के समक्ष कार्यवाही के अभिलेख के परीक्षण पर स्थापित किया जा सकता है जिसे अपीलीय प्राधिकारी द्वारा प्रभावकारी रूप से न्यायनिर्णीत किया जा सकता है। झारखंड सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम, 1956 धारा 11 के अधीन समाहर्त्ता के समक्ष अपील करने के लिए याची को उपचार प्रावधानित करता है। अधिनियम आगे धारा 36 के अधीन पुनर्विलोकन प्रावधानित करता है। यह सुनिश्चित है कि झारखंड सार्वजनिक भूमि अधिक्रमण अधिनियम स्व-अंतर्विष्ट संहिता है जो व्यथित व्यक्ति को प्रभावकारी उपचार प्रावधानित करती है।

4. पूर्वोक्त तथ्यों पर विचार करते हुए, मैं मामले में हस्तक्षेप करने का इच्छुक नहीं हूँ किंतु, याची को अधिनियम की धारा 6 (2) के अधीन पारित आदेश के विरुद्ध अपील दाखिल करने की स्वतंत्रता दी जाती है। यह कहना अनावश्यक है कि वर्तमान कार्यवाही में पारित आदेश याची पर प्रतिकूलता कारित नहीं करेगा और याची दस्तावेजों, जिनके आधार पर वह प्रश्नगत भूमि पर अधिकार, अभिधान एवं हित का दावा कर रहा है, प्रस्तुत करने के लिए स्वतंत्र होगा।

5. यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; jfo ukFk oek] U;k;efr

चंदन राम

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 538 of 2013. Decided on 8th January, 2016.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 366 (A)/34—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 227—यौन संभोग के अवैध प्रयोजन से अवयस्क लड़की का उपापन—पीड़िता लड़की ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 164 के अधीन अपने परीक्षण में याची द्वारा निभायी गयी किसी भूमिका से पूर्णतः इनकार किया—अवैध यौन संभोग के लिए याची की ओर से उत्प्रेरण अथवा किसी बल का उपयोग अथवा बहकावा नहीं हुआ था—यह दर्ज करने के लिए साक्ष्य बिल्कुल नहीं है कि अभियुक्त याची ने अभिकथित अपराध किया—उन्मोचन याचिका अस्वीकार करने वाला आक्षेपित आदेश अपास्त। (पैराएँ 9 एवं 10)

निर्णयज विधि.—(2010) 9 SCC 368—Relied.

अधिवक्तागण.—Mr. Shree Niwas Roy, For the Petitioner; Mr. Ravi Prakash, For the State.

आदेश

इस पुनरीक्षण आवेदन में चुनौती एस॰ टी॰ सं॰ 323 वर्ष 2011 में अपर सत्र न्यायाधीश III, गिरीडीह द्वारा पारित दिनांक 18.5.2013 के आदेश को दी गयी है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन याची द्वारा अपने उन्मोचन के लिए दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'संहिता') की धारा 227 के अधीन दाखिल याचिका अस्वीकार कर दी गयी है।

2. मामले के तथ्य, जो पुनरीक्षण आवेदन के समुचित न्याय निर्णयन के लिए प्रासंगिक हैं, संक्षेप में ये हैं कि सूचक मदन राना की प्रेरणा पर याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 366 (A)/34 के अधीन धनवार पी॰ एस॰ केस सं॰ 138 वर्ष 2011 इस अभिकथन पर संस्थित किया गया था कि दिनांक 15.8.2011 को अपराह्न लगभग 3.30 बजे उसकी आठवें वर्ग में अध्ययनरत लगभग 14 वर्षीय

पुत्री हेमंती कुमारी को दो व्यक्तियों अर्थात् लगभग 22 वर्षीय चंदन राम (याची) और लगभग 15 वर्षीय आकाश राम द्वारा कुछ अंतरस्थ हेतु के साथ बहकाकर दूर ले जाया गया था।

3. अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि पुलिस ने गिरीडीह में बस अड्डा से लड़की को बरामद किया और तत्पश्चात न्यायालय द्वारा संहिता की धारा 164 के अधीन उसका बयान दर्ज किया गया था और बयान में उसने वर्तमान याची द्वारा अथवा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा अपहरण किए जाने के अभिकथन से इनकार किया बल्कि उसने कथन किया कि वह स्वयं माता से डाँट सुनने के भय से घर से चली गयी थी और गाँव के विद्यालय के निकट आयी और स्वयं अपने गाँव के चंदन राम को बुलाया जिसे वह घटना के पहले से जानता था और जब वह आया, उसने उससे अपने साथ बनारस चलने का अनुरोध किया किंतु उक्त चंदन राम ने उसके साथ चलने से इनकार किया। किंतु, समझाने बुझाने और धमकी देने के बाद कि वह आत्महत्या कर लेगी, उन्होंने बस पकड़ा और गया आया और गया से ट्रेन से बनारस आए। उसने अपने बयान में यह कथन भी किया है कि उसने चंदन को उसका समस्त धन लौटाने का आश्वासन दिया जिसे उसने उस पर खर्च किया था। तत्पश्चात्, उसने चंदन को एक हजार रुपया दिया जिसे सूरत (गुजरात) जाना था जहाँ वह काम करता है। बनारस में, वह दो अज्ञात महिलाओं से मिली और उनके साथ रही किंतु वे दोनों महिलाएँ उसे मधुपुर ले गयी जहाँ वह स्वयं अपने गाँव के दो व्यक्तियों से मिली और तत्पश्चात गिरीडीह वापस आयी। वह अपने घर जाने की योजना बना रही थी किंतु इस बीच पुलिस आयी और उसे पकड़ लिया। अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण के बाद पुलिस ने दो अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 366 (A)/34 के अधीन आरोप-पत्र दाखिल किया जिसके बाद अपराध का संज्ञान लिया गया था और मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था जहाँ याची ने अपने उन्मोचन के लिए संहिता की धारा 227 के अधीन याचिका दाखिल किया किंतु इसे यह अभिनिर्धारित करते हुए कि याची के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री उपलब्ध है, आक्षेपित आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था। अत:, यह पुनरीक्षण दाखिल किया गया है।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री निवास रॉय ने आक्षेपित आदेश का विकृत एवं विधि में दोषपूर्ण के रूप में विरोध करते हुए गंभीर रूप से प्रतिवाद किया कि अवर न्यायालय ने याची को उन्मोचित नहीं करने में गलती किया क्योंकि इस याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 366(A) अथवा किसी अन्य प्रावधान के अधीन अपराध नहीं बनता है। यह निवेदन भी किया गया था कि सिवाए इसके कि लड़की 18 वर्ष से कम आयु की थी, याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 366 के अधीन अपराध गठित करने के लिए जिम्मेदार अवयव नहीं बनती है और संहिता की धारा 164 के अधीन दर्ज अपने बयान में भी लड़की ने अपने को बहकाने का अथवा कि उसे किसी अन्य व्यक्ति के साथ अवैध यौन संभोग के लिए मजबूर किया गया था अथवा बहकाया गया था, अभिकथित कहीं नहीं किया गया है बल्कि वह डांट सुनने के भय से अपने घर से चली गयी थी। अत:, याची उन्मोचित किए जाने योग्य है।

5. पूर्वोक्त निवेदन के विपरीत, राज्य का प्रतिनिधित्व कर रहे विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि अवर न्यायालय ने उसके उन्मोचन के लिए याचिका अस्वीकार करते हुए सही परिप्रेक्ष्य में अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का अधिमूल्यन किया है और इस आरंभिक चरण पर साक्ष्य की सत्यता एवं प्रभाव का विस्तारपूर्वक परीक्षण नहीं किया जाता है बल्कि वर्तमान मजबूत प्रथम दृष्टया मामला याची के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त है।

6. इस तथ्य के प्रति जागरुक होने के नाते कि विचारण अभी दहलीज पर ही है और कि इस आवेदन में न्यायालय याची को आरोपित अथवा उन्मोचित किए जाने के सीमित पहलू पर विचार कर

रहा है, मैं संहिता की धारा 227 के विस्तार का परीक्षण करना चाहूँगा। इस बिंदु पर विधि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **सज्जन कुमार बनाम सी॰ बी॰ आई॰, (2010)9 SCC 368,** में सारगर्भित रूप से विश्लेषित की गयी है जिसमें माननीय न्यायालय ने पैरा 19 पर निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

> *"19. ;g Li"V gS fd vkjfHkd pj.k ij ;fn etcwr lansg gS tks U;k;ky; dks ;g lkspus dh vksj ys tkrk gS fd ;g mièkkfjr djus dk vkèkkj gS fd vfHk;qDr us vijkèk fd;k gS] rc U;k;ky; dks ;g dgus dh NwV ugha gS fd vfHk;qDr ds fo#) vxlj gksus dk i;kZIr vkèkkj ugha gSA vfHk;qDr ds nks"k dh mièkkj.kk ftlls vkjfHkd pj.k ij fd;k tkuk gS] doy çFke n"V;k ;g fofuf'pr djus ds ç;kstu ls gS fd U;k;ky; dks fopkj.k gsrq vxlj gksuk pkfg, ;k ugha ;fn lk{; ftls nsus dk vfHk;kstu çLrko djrk gS vfHk;qDr dks nks"kh fl) djrk gS] Hkys gh bls çfrijh{k.k esa pqukSrh fn, tkus vFkok cpko }kjk [kaMr fd, tkus ds igys i.kZr% Lohdkj fd;k tkrk gS] lk{;] ;fn gks] ugha n'kkZ ldrk gS fd vfHk;qDr us vijkèk fd;k gS] rc fopkj.k gsrq vxlj gksus ds fy, i;kZIr vkèkkj ugha gksxkA**

7. उसको बहकाने के आशय से 18 वर्ष से कम आयु की अवयस्क लड़की को प्रेरित करना अथवा अवयस्क लड़की का अपहरण करना समाज में सर्वाधिक नैतिक एवं शारीरिक रूप से निंद्य अपराध है क्योंकि यह पीड़िता के शरीर, विवेक एवं निजता का अपमान है। उक्त मामले में और अनेक निर्णयों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्टत: आज्ञा दिया है कि आरंभिक चरण पर यदि मजबूत संदेह है जो न्यायालय को यह सोचने की ओर ले जाता है कि यह उपधारित करने का आधार है कि अभियुक्त ने अपराध किया है, न्यायालय आरोप विरचित करेगा और अग्रसर होगा किंतु यदि साक्ष्य, जिसे देने का प्रस्ताव अभियोजन करता है, भले ही इसे प्रतिपरीक्षण में चुनौती दिए जाने अथवा बचाव पक्ष द्वारा खंडित किए जाने के पहले पूर्णत: स्वीकार किया जाता है, नहीं दर्शा सकता है कि अभियुक्त ने अपराध किया है, तब विचारण हेतु अग्रसर होने का पर्याप्त आधार नहीं होगा। मामले के बेहतर अधिमूल्यन के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 366 (A) को निर्दिष्ट करना आवश्यक है जिसे यहाँ नीचे दिया गया है:–

*366A- **vçkIro; yMdh dk mikiu&***

> *^^tks dksbZ vBkjg o"kZ ls de vk;q dh vçkIro; yMdh dks vU; O;fDr ls v;qDr lEHkksx djus ds fy, foo'k ;k foyqCèk djus ds vk'k; ls ;k rn}kjk foo'k ;k foyqCèk fd;k tk,xk ;g lEHkkO; tkurs gq, ,slh yMdh dks fdlh LFkku ls tkus dks ;k dksbZ dk;Z djus dks fdlh Hkh lkèku }kjk mRçfjr djsxk] og dkjkokl ls ftldh vofèk nl o"kZ rd dh gks ldsxh] nf.Mr fd;k tk,xk vkSj teZkus ls Hkh n.Muh; gksxkA**

8. धारा के परिशीलन मात्र से, यह प्रतीत होता है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 366A के अधीन अपराध स्थापित करने के लिए अभियोजन को सिद्ध करना होगा कि:–

> *(a) vijkèk dh ihfM+rk 18 o"kZ ls de vk;q dh yMdh gSA*
>
> *(b) vfHk;qDr us ihfM+rk dks ,d LFkku ls nwljs LFkku tkus ds fy, çsfjr fd;k] vFkok*
>
> *(c) dksbZ çR;{k Ñr; djus ds fy, çsfjr fd;k*
>
> *(d) ;g çj.kk bl vk'k; ds lkFk vFkok ;g tkurs gq, nh xbZ Fkh fd blds ihfM+rk dks vU; O;fDr ds lkFk voSèk ;kSu lEHkksx ds fy, etcwj djus vFkok foyqCèk djus dh lEHkkouk FkhA*

9. वर्तमान मामले में, पीड़िता लड़की, जिसका बयान संहिता की धारा 164 के अधीन दर्ज किया गया था, ने इस याची द्वारा निभायी गयी किसी भूमिका से पूर्णत: इनकार किया है और उसने यह भी कहा

है कि याची की ओर से कोई उत्प्रेरण नहीं था बल्कि वह डाँट सुनने के डर से अपने घर से चली गयी थी और याची पर दबाव डालकर अथवा आत्महत्या करने की धमकी देकर वह याची के साथ बनारस आयी और वहाँ उसने याची को एक हजार रुपया दिया जिसे सूरत (गुजरात) जाना था।

प्रकटत: एकमात्र अवयव जो अभिलेख पर उपलब्ध है, यह है कि पीड़िता लड़की 18 वर्ष से कम आयु की थी और इसके अतिरिक्त पूर्वोक्त धारा के अधीन अपराध गठित करने के लिए जिम्मेदार अवयव अभिलेख पर उपलब्ध नहीं है। याची की ओर से उत्प्रेरण नहीं था अथवा अन्य व्यक्ति के साथ अवैध यौन संभोग करने के लिए मजबूर नहीं किया गया था अथवा बहकाया नहीं गया था बल्कि याची पीड़िता के साथ केवल बनारस तक गया और तत्पश्चात सूरत (गुजरात) चला गया। अवर न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय में मामले के उक्त पहलू पर बिल्कुल विचार नहीं किया है और यह प्रतीत होता है कि प्राथमिकी में किए गए अभिकथन पर विश्वास मात्र करके याची की उन्मोचन की प्रार्थना अस्वीकार कर दिया। यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर साक्ष्य बिल्कुल नहीं है कि अभियुक्त याची ने अभिकथित अपराध किया।

10. उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं याची के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में सार पाता हूँ कि भारतीय दंड संहिता की धारा 366 (A) के अधीन कोई मामला याची के विरुद्ध बनता है। अत:, एस॰ टी॰ सं॰ 323 वर्ष 2011 में अपर सत्र न्यायाधीश III, गिरीडीह द्वारा पारित दिनांक 18.5.2013 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। इस प्रकार, यह पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

सेन्ट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (C) No. 7200 of 2013. Decided on 5th January, 2016.

बिहार एवं उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914—धाराएँ 9 एवं 60—भारत का संविधान—अनुच्छेद 226—प्रमाण पत्र कार्यवाही—आपत्ति की खारिजी—प्रमाण पत्र अधिकारी द्वारा अधिनियम के अधीन प्रक्रिया का अनुसरण किया गया है—धारा 9 के अधीन आपत्ति की खारिजी का परिणाम प्रमाण पत्र राशि के अभिपुष्टकरण में हुआ है जैसा दावा प्रत्यर्थी राज्य द्वारा किया गया था—रिट याचिका अपोषणीय होने के चलते खारिज की गयी—किंतु, याची धारा 60 के अधीन सांविधिक उपचार का लाभ ले सकता है। (पैराएँ 6 एवं 7)

निर्णयज विधि.—(1983) 2 SCC 433—Relied; (1998) 8 SCC 1—Referred.

अधिवक्तागण.—Mr. Amit Kumar Das, For the Petitioner; Mr. Anil Kumar, For the Respondents.

आदेश

प्रमाण पत्र केस सं॰ 5 वर्ष 2012-13 में दिनांक 20.2.2013 के आदेश से व्यथित होकर वर्तमान रिट याचिका दाखिल की गयी है।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि बिहार एवं उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914 की धारा 9 के अधीन आपत्ति याची द्वारा किए गए अभिवचन पर विचार किए बिना दिनांक 20.2.2013 के आदेश के तहत खारिज की गयी है और उसी दिन प्रमाण पत्र अधिकारी द्वारा याची को ब्याज सहित 56,38,150/- रुपया जमा करने का निर्देश जारी किया गया है। यह प्रतिवाद किया गया है

कि 1914 अधिनियम के अधीन विहित प्रक्रिया का अनुसरण प्रमाण पत्र अधिकारी द्वारा नहीं किया गया है क्योंकि याची को समुचित अवसर नहीं दिया गया था और न ही याची को साक्ष्य देने की अनुमति दी गयी थी। प्रमाण पत्र अधिकारी द्वारा प्रमाण पत्र राशि का अंतिम विनिश्चयकरण नहीं हुआ है, अत:, याची अधिनियम की धारा 60 के अधीन सांविधिक प्रावधान से बचते हुए रिट याचिका पोषित कर सकता है।

3. ''व्हर्लपूल कॉरपोरेशन बनाम रजिस्ट्रार ऑफ ट्रेड मार्क्स,'' (1998)8 SCC 1, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास करते हुए याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि दिनांक 20.2.2013 का आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने का दायी है।

4. यह प्रतीत होता है कि 56,38,150/- रुपयों की राशि की वसूली के लिए मेसर्स सी॰ सी॰ एल॰ की स्वांग कोलियरी के परियोजना अधिकारी के तलब पर प्रमाण पत्र मामला सं॰ 5 वर्ष 2012-13 के तहत प्रमाण पत्र कार्यवाही आरंभ की गयी थी। दिनांक 31.10.2012 को याची को धारा 7 के अधीन नोटिस जारी किया गया था। यह प्रतीत होता है कि दिनांक 21.12.2012 को याची द्वारा धारा 9 के अधीन आवेदन दाखिल किया गया था। याची ने अभिवचन किया कि केंद्र सरकार की अधिसूचना के अधीन उर्जा सेक्टर को आपूर्ति किए गए कोयला की कीमत पर 5% रीबेट दिया गया था। यह प्रतिवाद किया गया है कि याची ने रेलवे के माध्यम से पावर हाउस को आपूर्ति किए गए कोयले का विवरण दिया था किंतु प्रमाण पत्र अधिकारी द्वारा इस पर विचार नहीं किया गया है। प्रतिशपथ पत्र में, यह अभिवचन कि उर्जा सेक्टर को कोयला की कीमत पर 5% रीबेट दिए जाने की अनुमति दी गयी थी जैसा दावा याची द्वारा किया गया था, विवादित किया गया है। यह कथन किया गया है कि याची मेसर्स सी॰ सी॰ एल॰ ने जून, 2009 से मार्च, 2011 की अवधि के दौरान 1587271.94 एम॰ टी॰ कोयला डिस्पैच किया और उक्त मात्रा में से केवल 361445.99 एम॰ टी॰ उक्त अवधि के दौरान मासिक रिटर्न में उर्जा सेक्टर को डिस्पैच किया गया दर्शाया गया है। प्रत्यर्थियों द्वारा अभिवचन किया गया है कि पट्टा धृत क्षेत्र से रेलवे स्लाइडिंग को 1225825.95 एम॰ टी॰ कोयला डिस्पैच किया गया था और याची ने संपूर्ण डिस्पैच की गयी मात्रा के लिए पावर हाऊस के वाशरी ग्रेड कोकिंग कोयला की आपूर्त्ति के लिए 5% रीबेट का लाभ लिया। वैकल्पिक उपचार का अभिवचन करते हुए प्रत्यर्थी राज्य ने निम्नलिखित प्रकथन किया है:–

> *"23. fd ijk 18 d mÙkj e ;g dFku fd;k x;k g fd 0;fFkr gku ij çek.k i= vfèkdkjh }kjk ikfjr fnukd 20.2.2013 d vkn'k d fo#) mik;Dr] ckdkjk d le{k vihy nkf[ky djd fcgkj ,o mMhlk ykd ekx olyh vfèkfu;e] 1914 dh èkkjkvk 60 ,o 63 d vèkhu odfYid ,o leku :i l çHkkodkjh mipkj miyCèk gA ;kph diuh u iufoykdu ;kfpdk nkf[ky dju d fy, ,d ekg dk le; ekxr g, fnukd 30.4.2013 dk çek.k i= vfèkdkjh] [kku vpy] èkuckn d le{k fnukd 20.2.2013 d vkn'k d fo#) fcgkj ,o mMhlk ykd ekx olyh vfèkfu;e] 1914 dh èkkjk 63 d vèkhu iufoykdu ;kfpdk nkf[ky dju d fy, vkonu fn;kA ;kph dk vud volj fn, x, g fdr ;kph iufoykdu ;kfpdk nkf[ky dju e l{ke ugh gk ldk Fkk vkj vrr% çek.k i= vfèkdkjh u fnukd 20.2.2013 ,o fnukd 30.10.2013 d vkn'kk dk ekU; Bgjk;kA*
>
> *;kph u ,l volj dk ykHk ugh fy;k Fkk vkj çek.k i= jkf'k d 40% dk tek dju tk vfèkfu;e dh èkkjk 60 d vèkhu vihy nkf[ky dju dh io 'kr g] l cpu d fy, fjV dk jkLrk viuk;kA vr% ;g MCY;0 ih0 (lh0) l0 7200/ 2013 lUVy dkyQhYMl cuke >kj[kM jkT; [kkfjt fd, tku ;kX; gA***

5. यह प्रतीत होता है कि दिनांक 30.10.2013 के आदेश के तहत प्रमाण पत्र अधिकारी ने याची द्वारा किए गए अभिवचन पर आगे विचार किया है और दिनांक 20.2.2013 का आदेश अभिपुष्ट किया

है। दिनांक 30.10.2013 का आदेश वर्तमान कार्यवाही में आक्षेपित नहीं है। प्रत्यर्थी झारखंड राज्य ने बिहार एवं उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914 की धारा 60 के अधीन वैकल्पिक उपचार की उपलब्धता के आधार पर रिट याचिका की पोषणीयता का प्रश्न उठाया है। यह प्रतिवाद किया गया है कि सांविधिक प्रावधान के अधीन अपीलार्थी को प्रमाण पत्र का 40% जमा करने की आवश्यकता है और याची सांविधिक प्रावधान को शॉट सर्किट करने का प्रयास कर रहा है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया है कि 1914 अधिनियम के अधीन विहित प्रक्रिया का अनुसरण किया गया है।

6. प्रमाण पत्र मामला सं॰ 5 वर्ष 2012-13 में कार्यवाही से यह प्रतीत होता है कि याची ने रेलवे के माध्यम से पावर हाऊस को कोयला की आपूर्ति का विवरण दिया और प्रमाण पत्र अधिकारी द्वारा इसे ध्यान में लिया गया है। धारा 9 के अधीन आपत्ति में याची द्वारा उठाया गया एकमात्र अभिवचन यह है कि पावर हाउस को आपूर्ति किए गए कोयले की कीमत पर 5% रीबेट दिया गया है। वर्तमान कार्यवाही में याची द्वारा किया गया अभिवचन वस्तुतः मामले के गुणागुण पर है। प्रमाण पत्र सं॰ 5 वर्ष 2012-13 में कार्यवाही के संबंध में प्रथम दृष्टया मेरा मत है कि प्रमाण पत्र अधिकारी द्वारा अधिनियम के अधीन प्रक्रिया का अनुसरण किया गया है। धारा 9 के अधीन आपत्ति की खारिजी का परिणाम प्रमाण पत्र राशि के अभिपुष्टकरण में हुआ है जैसा प्रत्यर्थी राज्य द्वारा दावा किया गया है। **''टीटागढ़ पेपर मिल्स कं॰ लि॰ बनाम उड़ीसा राज्य (1983)2 SCC 433** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *"11. vfèkfu;e dh ;k tuk d vèkhu çkfèkdkfj;k dk vfèkØe g ft ld le{k ;kphx.k ifjokn fd, x, nk"ki.k ÑR;k d fo#) i;kIr çfrk"k ik ldr gA ;kphx.k dk vfèkfu;e dh èkkjk 23 dh mièkkjk (1) d vèkhu fofgr çkfèkdkjh d le{k vihy nkf[ky dju dk vfèkdkj gA ;fn ;kphx.k vihy e fn, x, fu.k; l vlr"V g] o vkx vfèkfu;e dh èkkjk 23 dh mièkkjk (3) d vèkhu vfèkdj.k d le{k vihy dj ldr g vkj rc vfèkfu;e dh èkkjk 24 d vèkhu mPp U;k;ky; d er d fy, fofèk d ç'u ij dFku fd, tku d fy, ekey d fy, dg ldr gA vfèkfu;e fuèkkj.k d vkn'k dk pukrh nu d fy, i.k e'khujh çkoèkkfur djrh g vkj fuèkkj.k d vk{kfir vkn'kk dk doy vfèkfu;e }kjk fofgr <x l pukrh nh tk ldrh g vkj u fd lfoèkku d vuPNn 226 d vèkhu ;kfpdk }kjkA vc ;g leU;rk çkIr g fd tgk lfofèk }kjk vfèkdkj vFkok nkf;Ro lftr fd;k tkrk g tk bl çofrr dju d fy, fo'k"k mipkj nrk g] doy ml lfofèk }kjk çkoèkkfur mipkj dk ykHk yuk gkxk-------A***

7. पूर्वोक्त तथ्यों पर विचार करते हुए वर्तमान रिट याचिका अपोषणीय होने के रूप में खारिज की जाती है किंतु याची विधि के अनुरुप बिहार एवं उड़ीसा लोक मांग वसूली अधिनियम, 1914 की धारा 60 के अधीन सांविधिक उपचार का लाभ ले सकता है।

---

ekuuh; ç'kkUr dekj] U;k;efr

राजेश्वर मिस्त्री

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Rev. No. 890 of 2015. Decided on 12th January, 2016.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 279, 337 एवं 304A—लापरवाह एवं उपेक्षापूर्ण चालन द्वारा मृत्यु कारित किया जाना–दोषसिद्धि–गवाह घटना के चश्मदीद गवाह नहीं हैं–अन्वेषण अधिकारी के गैर-परीक्षण के कारण बचाव पक्ष द्वारा निकाला गया महत्वपूर्ण विरोधाभास सिद्ध नहीं किया गया है जिसने बचाव पक्ष पर अत्यन्त प्रतिकूलता कारित किया–दोनों अवर न्यायालयों ने मामला विनिश्चित करने में गंभीर अवैधता किया–आक्षेपित निर्णय अपास्त किया गया एवं याची दोषमुक्त। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Dilip Kumar Chakraverty, For the Petitioner; Mrs. Vandana Bharti, For the Opp. Party.

आदेश

यह दांडिक पुनरीक्षण विद्वान जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश IV, जमशेदपुर द्वारा दांडिक अपील सं॰ 141 वर्ष 2009 में पारित दिनांक 12.6.2015 के निर्णय एवं आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन उन्होंने अपील खारिज कर दिया और जी॰ आर॰ सं॰ 1607 वर्ष 2005, टी॰ आर॰ सं॰ 190 वर्ष 2009 के तत्सम, में विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 18.5.2009 का निर्णय अभिपुष्ट किया जिसके द्वारा याची को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 279, 337 एवं 304A के अधीन दोषसिद्ध किया गया है और डेढ़ वर्ष का कठोर कारावास भुगतने एवं 3000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का दंडादेश दिया गया है।

2. याची के विद्वान अधिवक्ता श्री दिलीप कुमार चक्रवर्ती द्वारा निवेदन किया गया है कि वर्तमान मामले में दोनों अवर न्यायालयों के निर्णय विकृत हैं क्योंकि इन्हें किसी विधिक साक्ष्य पर दाखिल नहीं किया गया है। यह निवेदन किया गया है कि दोनों अवर न्यायालयों ने अपीलार्थी/याची को अ॰ सा॰ 4 एवं 5 के साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्ध किया था जो घटना के चश्मदीद गवाह नहीं हैं क्योंकि उन्होंने पुलिस के समक्ष कथन किया है कि वे कुछ अज्ञात व्यक्तियों से दुर्घटना के बारे में सूचना प्राप्त करने के बाद घटना स्थल पर गए। यह निवेदन किया गया है कि पूर्वोक्त गवाहों का ध्यान पुलिस के समक्ष दिए गए उनके पूर्व बयानों की ओर आकृष्ट किया गया था, किंतु अन्वेषण अधिकारी के गैर परीक्षण के कारण उक्त विरोधाभास सिद्ध नहीं किए गए हैं। इस प्रकार, अन्वेषण अधिकारी के गैर–परीक्षण के कारण याची पर अति प्रतिकूलता कारित की गयी थी। अत:, वर्तमान मामले में, अन्वेषण अधिकारी का गैर परीक्षण अभियोजन मामले के लिए घातक है।

3. दूसरी ओर, विद्वान अपर पी॰ पी॰ श्रीमती वंदना भाटी निवेदन करती हैं कि चूँकि पूर्वोक्त दोनों गवाहों ने स्पष्टत: कथन किया है कि घटना उनकी उपस्थिति में हुई थी और याची को पुलिस द्वारा दुर्घटनास्थल के निकट पकड़ा गया था, विद्वान अवर न्यायालयों ने सही प्रकार से याची को अपराध के लिए दोष सिद्ध किया है। तद्नुसार, विद्वान अपर पी॰ पी॰ निवेदन करती हैं कि इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

4. निवेदनों को सुनने पर, मैंने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है। यह स्वीकृत अवस्था है कि मृतक व्यक्तियों अर्थात् गुरु चरण सिंह एवं सूरज प्रसाद की मृत्यु दुर्घटना में हुई जो दिनांक 31.7.2005 को राष्ट्रीय उच्च पथ (एन॰ एच॰ 33) पर हुई। यह भी स्वीकृत अवस्था है कि अज्ञात व्यक्तियों के विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज की गयी है। किंतु, अन्वेषण के दौरान याची पकड़ा गया था और उक्त अन्वेषण पूरा होने के बाद उसे आरोप–पत्रित किया गया था।

5. आक्षेपित निर्णयों के परिशीलन से, मैं पाता हूँ कि दोनों अवर न्यायालयों ने याची को दोषसिद्ध करने के लिए अ॰ सा॰ 5 एवं 6 के अभिसाक्ष्य पर विश्वास किया था क्योंकि विद्वान अवर न्यायालयों के अनुसार वे दो गवाह घटना के चश्मदीद गवाह हैं। मैंने पूर्वोक्त दोनों गवाहों के बयानों का परिशीलन किया है। यद्यपि, उन दोनों गवाहों ने अपने मुख्य परीक्षण में कथन किया था कि दुर्घटना के समय पर वे घटनास्थल पर उपस्थित थे, किंतु उनका ध्यान पुलिस के समक्ष दिए गए उनके पूर्व बयानों की ओर आकृष्ट किया गया था कि वे दुर्घटना के बारे में जानकारी पाने के बाद घटनास्थल पर गए। बचाव ने भी गवाहों को सुझाया था कि वे घटना के चश्मदीद गवाह नहीं हैं। यह उल्लेखनीय है कि इस मामले में अन्वेषण अधिकारी का परीक्षण नहीं किया गया है, अत: बचाव पक्ष द्वारा निकाला गया पूर्वोक्त विरोधाभास सिद्ध नहीं किया गया है। किंतु, मैंने केस डायरी का परिशीलन किया है जो अवर न्यायालय के अभिलेख के साथ संलग्न है। पुलिस द्वारा पूर्वोक्त दोनों गवाहों का बयान दर्ज किया गया था। इसके परिशीलन से, मैं पाता हूँ कि दोनों गवाह घटना के चश्मदीद गवाह नहीं हैं बल्कि उन्होंने पुलिस के समक्ष कथन किया है कि वे उक्त घटना के बारे में जानकारी मिलने के बाद घटनास्थल पर गए। उक्त परिस्थिति के अधीन, अन्वेषण अधिकारी के गैर-परीक्षण के कारण बचाव पक्ष द्वारा निकाला गया पूर्वोक्त महत्वपूर्ण विरोधाभास सिद्ध नहीं किया गया है जिसने निश्चय ही बचाव पक्ष पर गंभीर प्रतिकूलता कारित किया है।

6. आक्षेपित निर्णयों के परिशीलन से, मैं पाता हूँ कि दोनों अवर न्यायालयों में बचाव अधिवक्ता ने इन दोनों बिंदुओं पर तर्क किया, किंतु अवर न्यायालयों ने इसका उत्तर नहीं दिया है जो मेरे दृष्टिकोण में अवैधता और/अथवा अनियमितता है। इस प्रकार, दोनों अवर न्यायालयों ने मामला विनिश्चित करने में गंभीर अवैधता और/अथवा अनियमितता किया है। तद्नुसार, मैं इस पुनरीक्षण आवेदन को अनुज्ञात करता हूँ और दोनों अवर न्यायालयों के निर्णयों को अपास्त करता हूँ। याची को उसके विरुद्ध लगाए गए समस्त आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है।

7. चूँकि याची को उसके विरुद्ध लगाए गए समस्त आरोपों से दोषमुक्त कर दिया गया है, विचारण न्यायालय को याची को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; jfo ukFk oek] U;k;efr

आनन्द कुमार सिंह

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 370 of 2014. Decided on 26th November, 2015.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 364A/120B/34—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 227—अपहरण एवं षडयंत्र–मामले से उन्मोचन इप्सित करने वाले आवेदन का अस्वीकरण–उन्मोचन आवेदन पर विचार करने के समय न्यायालय को इस धारणा के साथ अग्रसर होना होगा कि अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लायी गयी सामग्री सत्य है–न्यायालय को अभिकथनों में कोई अतिगामी जाँच अथवा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का विस्तारपूर्वक परीक्षण नहीं करना है–भले ही अभियुक्त कुछ संदेह दर्शाने में सफल हुआ है, विचारण के पहले

अभियुक्त को उन्मोचित नहीं किया जा सकता है–याची ही वह व्यक्ति था जिसने मोबाइल से पीड़ित एवं एक अन्य सह-अभियुक्त से संपर्क किया था और उन्हें बुलाया था–अभियुक्तों के इकबालिया बयान में याची की अपराधिता प्रतीत हुई–पुनरीक्षण आवेदन खारिज। (पैराएँ 6 से 9)

निर्णयज विधि.–2005 (1) East Cr. C. 178 (Jhr.)—Referred; 2000(4) PLJR 90 (SC) 2012 (2) East Cr. C. 411 (Jhr.) 4—Distinguished; (2010) 9 SCC 368; (2013) 3 SCC 330—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Shashank Shekhar Prasad, For the Petitioner; Mr. Asif Khan, For the State.

आदेश

इस पुनरीक्षण आवेदन का याची भारतीय दंड संहिता की धाराओं 364A/120B/34 के अधीन संस्थित जगरनाथपुर पी॰ एस॰ केस सं॰ 89 वर्ष 2013 से उद्भूत होने वाले एस॰ टी॰ सं॰ 653 वर्ष 2013 में अपर न्यायिक आयुक्त I, राँची द्वारा पारित दिनांक 24.3.2014 के आदेश की वैधता को चुनौती देता है जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन दंड प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'संहिता') की धारा 227 के अधीन अपने उन्मोचन के लिए याची द्वारा दाखिल याचिका अस्वीकार कर दिया गया है।

2. इस आवेदन में अंतर्ग्रस्त विवाद्यक के निपटान के लिए प्रासंगिक एवं आवश्यक तथ्य निम्नलिखित हैं:–सूचक राखी कुमारी की प्रेरणा पर दिनांक 16.4.2013 को पूर्वोक्त मामला इस अभिकथन के साथ दर्ज किया गया था कि दिनांक 15.4.2013 को पूर्वाह्न लगभग 6.30 बजे चार व्यक्ति सफेद बोलेरो वाहन में आए और उसके पति डॉ॰ शिवानंद काशी को अपनी गाय के इलाज के झूठे बहाना पर ले गए किंतु 24 घंटों से अधिक का समय बीत गया है, उसका पति घर वापस नहीं आया है और उसने अपने पति से उसके मोबाइल पर संपर्क करने का प्रयास किया किंतु यह काम नहीं कर रहा था। इस दशा में, उसे संदेह हुआ है कि अज्ञात व्यक्तियों द्वारा फिरौती के लिए उसके पति का अपहरण कर लिया गया है।

3. अन्वेषण पूरा करने के बाद, इस याची सहित सात अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था जिसके बाद अपराध का संज्ञान लिया गया था और मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था। न्यायालय के समक्ष, याची द्वारा अपने उन्मोचन के लिए संहिता की धारा 227 के अधीन याचिका इस आधार पर दाखिल की गयी थी कि कुछ सह-अभियुक्तों के इकबालिया बयान के अतिरिक्त इस याची की अपराधिता दर्शाने के लिए अभिलेख पर साक्ष्य मौजूद नहीं है। अवर न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य एवं विद्वान अधिवक्ताओं के निवेदनों पर विचार करने के बाद यह अभिनिर्धारित करते हुए उन्मोचन प्रार्थना अस्वीकार कर दिया कि सह-अभियुक्तों ने वर्तमान याची का नाम प्रकट किया है और उन तथ्यों को भी प्रकट किया है जिनके आधार पर बरामदगी की गयी है और वर्तमान याची ही वह व्यक्ति है जो पीड़ित का मोबाइल नंबर अच्छी तरह जानता था। अवर न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया है कि याची ही वह व्यक्ति था जिसने मोबाइल से पीड़ित से संपर्क किया था और उसे बुलाया था और इस तथ्य को अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य द्वारा सुसंपुष्ट किया गया है। कॉल विवरण रिपोर्ट के परिशीलन से, इस याची के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला है। अत:, यह पुनरीक्षण दाखिल किया गया है।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश का विकृत एवं विधि में दोषपूर्ण रूप में विरोध करते हुए गंभीर रूप से प्रतिवाद किया कि भले ही अन्वेषण के दौरान संग्रहित संपूर्ण साक्ष्य को इसकी संपूर्णता में स्वीकार किया जाता है, फिर भी उक्त साक्ष्य के आधार पर, जहाँ सह-अभियुक्तों के इकबालिया बयान के सिवाए कुछ भी नहीं है, इस याची के विरुद्ध अपराध नहीं बनता है क्योंकि पुलिस के समक्ष दिए गए इकबालिया बयान विधि की दृष्टि में ग्राह्य नहीं है। यह निवेदन भी किया गया है कि

संहिता की धारा 164 के अधीन दर्ज पीड़ित के बयान में उसने कहीं भी इस याची का नाम प्रकट नहीं किया है अथवा इस याची की अभिकथित अपराध में याची की अपराधिता के बारे में चर्चा तक नहीं किया है बल्कि एक सह–अभियुक्त सूरज के कॉल विवरण रिपोर्ट पर विश्वास मात्र करके अवर न्यायालय द्वारा याची की उन्मोचन की प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी है। विद्वान अधिवक्ता ने **मंसूर आलम बनाम झारखंड राज्य, 2005 (1) East Cr. C. 178 (Jhr.)** मामले पर विश्वास करते हुए निवेदन किया कि समरुप मामले में जहाँ पुलिस के समक्ष सह–अभियुक्त के इकबालिया बयान के आधार पर याची को अभियुक्त बनाया गया था, याची को उन्मोचित किया गया था क्योंकि पुलिस के समक्ष की गयी संस्वीकृति विधि की दृष्टि में ग्राह्य नहीं थी। विद्वान अधिवक्ता ने आगे **आशीष कुमार सिन्हा उर्फ अंतिम सिंह उर्फ आशीष सिंह बनाम झारखंड राज्य, 2012 (2) East Cr.C. 411 (Jhr.)** मामले पर विश्वास किया एवं निवेदन किया कि उस मामले में भी साक्ष्य ज्ञापन में अन्वेषण अधिकारी द्वारा किए गए संदेह के सिवाए सामग्री नहीं थी और मामला टी॰ आई॰ पी॰ पर रखा गया था, माननीय न्यायालय ने अभियुक्त को अभिकथित अपराध से उन्मोचित कर दिया। विद्वान अधिवक्ता ने **मध्य प्रदेश राज्य बनाम मोहनलाल सोनी,** 2000 (4) PLJR 90 (SC) में एक अन्य निर्णय पर आगे विश्वास करते हुए निवेदन किया कि यदि साक्ष्य, जिसे अभियोजन अभियुक्त का दोष सिद्ध करने के लिए देने का प्रस्ताव देता है, नहीं दर्शा सकता है कि अभियुक्त ने अपराध विशेष किया है, तब आरोप अभिखंडित किया जा सकता है। अतः, आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है और याची उन्मोचित किए जाने योग्य है।

5. पूर्वोक्त निवेदनों के विपरीत, राज्य का प्रतिनिधित्व कर रहे विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय ने याची की उन्मोचन प्रार्थना अस्वीकार करते हुए इस याची के विरुद्ध अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर सही परिप्रेक्ष्य में चर्चा किया है और अनेक सह–अभियुक्तों ने अपने इकबालिया बयान में इस याची का नाम प्रकट किया है। अतः, अवर न्यायालय ने कोई अवैधता नहीं किया है।

6. विद्वान अधिवक्ताओं के परस्पर विरोधी निवेदनों पर आने के पहले, मैं संहिता की धारा 227 के विस्तार का परीक्षण करना आवश्यक महसूस करता हूँ। यह सत्य है कि उन्मोचन के लिए आवेदन पर विचार करने के समय न्यायालय अभियोजन के मुखपत्र के रूप में अथवा डाकघर के रूप में कृत्य नहीं कर सकता है और यह इंगित करने के लिए साक्ष्य की छानबीन कर सकता है कि अभिकथन आधारहीन हैं या नहीं ताकि उन्मोचन आदेश पारित किया जा सके। यह पूर्व से प्रचलित है कि उन्मोचन के लिए आवेदन पर विचार करने के चरण पर न्यायालय को इस धारणा के साथ अग्रसर होना होगा कि अभियोजन द्वारा अभिलेख पर लायी गयी सामग्री सत्य है और यह पता लगाने की दृष्टि से उक्त सामग्री का मूल्यांकन करना होगा कि क्या उससे सामने आने वाले तथ्य उनके अंकित मूल्य पर लिए जाने पर अभिकथित अपराध गठित करने वाले समस्त अवयवों को प्रकट करते हैं। **सज्जन कुमार बनाम सी॰ बी॰ आई॰, (2010)9 SCC 368,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस बिंदु पर विधि का सारगर्भित रूप से विश्लेषण किया गया है जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैरा 19 पर निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

> *"19. ;g Li"V g fd vkjfHkd pj.k ij ;fn etcr lng g tk U;k;ky; dk ;g lkpu dh vkj y tkrk g fd ;g mièkkfjr dju dk vkèkkj g fd vfHk;Dr u vijkèk fd;k g] rc U;k;ky; dk ;g dgu dh NV ugh g fd vfHk;Dr d fo#) vxlj gku d fy, i;klr vkèkkj ugh gA vfHk;Dr d nk"k dh mièkkj.kk ftl vkjfHkd pj.k ij fd;k tkuk g doy çFke n"V;k ;g fofuf'pr dju d ç;ktu l g fd D;k U;k;ky; dk fopkj.k gr vxlj gkuk pkfg, ;k ughA ;fn lk{; ftl nu dk çLrko vfHk;ktu nrk g vfHk;Dr dk nk"k fl) djrk g] Hky*

*gh çfr ijh{k.k e pukrh vFkok cpko lk{; ;fn gk] }kjk [kfMr fd, tku d igy i.krh Lohdkj fd;k tkrk g] ;g ugh n'kk ldrk g fd vfHk;Dr u vijkèk fd;k g] rc fopkj.k gr vxlj gku dk i;kIr vkèkkj ugh gkxkA***

एक अन्य मामले **राजीव थापर एवं अन्य बनाम मदन लाल कपूर, (2013)3 SCC 330,** में समरुप विवाद्यक अंतर्ग्रस्त था और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने परिवाद मामले में उन्मोचन याचिका पर विचार करते हुए पैराग्राफ 28 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

*^^;g vfHk;Dr d fo#) vfHk;ktu@ifjoknh }kjk fd, x, vfHkdFkuk dh lR;rk vFkok vU;Fkk dk eY;kdu dju dk pj.k ugh gA blh çdkj l] ;g ;k Hkh fofuf'pr dju dk pj.k ugh g fd vfHk;Dr dh vkj l fd;k x;k cpko fdruk otunkj gA Hky gh vfHk;Dr vfHk;ktu@ifjoknh }kjk fd, x, vfHkdFkuk e dN lng n'kku e lQy gkrk g] fopkj.k d igy vfHk;Dr dk mUekfpr dju vuuK; gkxkA ,lk blfy, g D;kfd bldk ifj.kke vfHk;ktu@ifjoknh dk bl fl) dju d fy, lk{; nu dh vuefr fn, fcuk vfHk;ktu@ifjoknh }kjk fd, x, vfHkdFkuk dk vfrerk nu e gkxkA fdr foijhr lR; ugh g D;kfd Hky gh fopkj.k d lkFk vxlj gvk tkrk g] vfHk;Dr dk fdlh vlèkk; ifj.kkek d vè;èkhu ugh fd;k tkrk gA vfHk;Dr vHkh Hkh fofèk d vu#i lk{; ndj viuk cpko LFkkfir djd lQy gku dh voLFkk e gkxkA fofèkd voLFkk ?kkf"kr djr g,] bl U;k;ky; }kjk fn, x, fu.k;k dh vrghu lph g fd ,l ekey e tgk vfHk;ktu@ifjoknh u yxk, x, leLr vkjkik d leLr vo;ok dk lkeu ykr g, vfHkdFku fd;k g vkj U;k;ky; d le{k lkexh çLrr fd;k g] çFke n"V;k fd, x, vfHkdFkuk dh lR;rk lkf{;r djr g,] fopkj.k djuk gh gkxkA***

7. प्रकटत: उक्त दो निर्णयों की दृष्टि में यह आसानी से निष्कर्षित किया जा सकता है कि आरोप विरचित करने अथवा अभियुक्त को उन्मोचित करने के चरण पर न्यायालय ने प्राथमिकी में किए गए अभिकथनों की सत्यता अथवा अन्यथा का मूल्यांकन करने के लिए अथवा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का विस्तारपूर्वक परीक्षण करने के लिए अभिकथनों में कोई अतिगामी जाँच नहीं किया है। इस चरण पर भले ही अभियुक्त कुछ संदेह दर्शाने में सफल रहा है, विचारण के पहले अभियुक्त को उन्मोचित करना अननुज्ञेय होगा क्योंकि इसका परिणाम अभियोजन को इसे सिद्ध करने के लिए साक्ष्य देने की अनुमति दिए बिना पीड़ित अथवा सूचक द्वारा किए गए अभिकथनों को अंतिमता देने में होगा।

8. वर्तमान मामले में, अवर न्यायालय ने याची की उन्मोचन याचिका पर विचार करते हुए साक्ष्य का सही परिप्रेक्ष्य में अधिमूल्यन किया है और अभिलेख पर उपलब्ध उन साक्ष्यों को भी प्रकट किया है और याची के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला पाया है। मैंने भी केस डायरी के विभिन्न पैराग्राफों का परिशीलन किया है और पाया है कि अनेक अभियुक्तों ने इस याची का नाम प्रकट किया है और उन प्रकटीकरणों के आधार पर बरामदगी भी की गयी है। अवर न्यायालय ने सही प्रकार से दर्ज किया है कि याची ही वह व्यक्ति था जिसने मोबाइल से पीड़ित और एक अन्य सह–अभियुक्त से संपर्क किया था और बुलाया था। यह सत्य है कि अनेक सह–अभियुक्तों के इकबालिया बयान में इस याची का नाम आया था और उन इकबालिया बयानों के आधार पर बरामदगी भी की गयी थी। **आशीष कुमार सिन्हा उर्फ अंतिम सिंह उर्फ आशीष सिंह बनाम झारखंड राज्य (ऊपर)** में न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि एक अन्य सह–अभियुक्त के इकबालिया बयान में भी याची की अपराधिता प्रतीत नहीं हुई थी, अभियुक्त को

उन्मोचित किया किंतु वर्तमान मामले में अभिकथित अपराध में इस याची की अपराधिता दर्शाते हुए अनेक अभियुक्तों के इकबालिया बयान हैं। अत:, **मध्य प्रदेश राज्य बनाम मोहन लाल सोनी (ऊपर)** में विनिश्चित निर्णयाधार वर्तमान मामले पर प्रयोज्य नहीं है। मैं याची की ओर से किए गए तर्क से दृढ़तापूर्वक असहमत हूँ कि याची के विरुद्ध विधिक साक्ष्य नहीं है ताकि उसे अभिकथित अपराध में अभियोजित किया जाए।

9. उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं इस पुनरीक्षण आवेदन में कोई गुणागुण नहीं पाता हूँ। तद्नुसार, यह पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; çeFk iVuk;d] U;k;efr

मो॰ रिजवान अख्तर (298 में)

मो॰ युसूफ अंसारी (306 में)

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य (दोनों में)

W.P. (S) Nos. 298 with 306 of 2013. Decided on 27th November, 2015.

सेवा विधि–सेवा समाप्ति–ग्राम स्तर कर्मकार के पद से–याचियों ने चयन प्रक्रिया में भाग लिया और उन्हें अनारक्षित उम्मीदवारों के रूप में मेधा सूची में अपना स्थान सुरक्षित करने पर सफल घोषित किया गया था–याचीगण पिछड़ी कोटि का सदस्य होने के नाते महत्तम आयु सीमा के लाभों के हकदार थे जैसा पिछड़ी कोटि के लिए विहित किया गया है–भले ही उस कोटि विशेष के लिए आरक्षित पद नहीं था, वे उनकी कोटि को ध्यान में लिए बिना अनारक्षित पद के विरुद्ध नियुक्ति के अपने मामले पर विचार किए जाने के हकदार हैं–याचियों को पिछली मजदूरी के बिना सेवा में पुनर्बहाल किया जाए। (पैराएँ 12 से 14)

निर्णयज विधि.–(2010) 3 SCC 119—Relied; 2014 (3) JLJR 255; (2015)4 SCC 458—Referred.

अधिवक्तागण.–Ms. Rakhi Rani, For the Petitioners; Mr. Ajit Kumar, For the Respondents.

प्रमथ पटनायक, न्यायमूर्ति.–दोनों रिट याचिकाओं में, चूँकि इप्सित किए गए अनुतोष समरुप प्रकृति के हैं, अत: दोनों पक्षों की सहमति से उन्हें साथ सुना गया है और इसे एक ही आदेश द्वारा निपटाया जा रहा है।

2. संलग्न रिट आवेदनों में याचियों ने अन्य बातों के साथ ग्राम स्तर कर्मकार (संक्षेप में (वी॰ एल॰ डब्ल्यू॰) के पद से याचियों की सेवा समाप्ति से संबंधित उपायुक्त, लोहरदग्गा द्वारा जारी दिनांक 29.12.2012 के आदेश का भाग अभिखंडित करने एवं आगे समस्त पारिणामिक लाभों के साथ सेवा में पुनर्बहाली करने की प्रार्थना किया है।

3. अनावश्यक विवरणों से रहित रिट आवेदनों में प्रकट किए गए संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि याचियों जो पिछड़े वर्ग से आने वाले स्नातक हैं ने ''दैनिक भाष्कर'' सहित दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित दिनांक 21.10.2011 के विज्ञापन के अनुसरण में झारखंड राज्य के अधीन वी॰ एल॰ डब्ल्यू॰ पद के लिए आवेदन दिया। यह कथन किया गया है कि उक्त विज्ञापन में लोहरदग्गा जिला में रिक्तियों की संख्या 58 दर्शायी गयी थी जिसमें से रिक्तियों की 28 संख्या अनारक्षित कोटि के लिए थी। आवेदनों की प्राप्ति पर, कृषि

एवं गन्ना विकास विभाग, झारखंड सरकार ने याचियों के पक्ष में एडमिड कार्ड जारी किया जो लिखित परीक्षा में उपस्थित हुए और पूर्वोक्त परीक्षा के अनुसरण में मेधा सूची तैयार की गयी थी जिसमें याचियों का नाम अनारक्षित कोटि की मेधा सूची में रखा गया था। तत्पश्चात, दिनांक 3.11.2012 के मेमो के तहत याचियों एवं अन्य के पक्ष में नियुक्ति पत्र जारी किए गए थे जिसमें डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 298/13 में याची को क्रमांक 13 पर रखा गया था जबकि डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 306/13 में याची को क्रमांक 12 पर रखा गया था और क्रमश: लोहरदग्गा जिला के सेनहा एवं किसको प्रखंड में पदस्थापित किया गया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि याचियों के द्वारा पद ग्रहण किए जाने के बाद उन्हें प्रशिक्षण के लिए कृषि विज्ञान केन्द्र, लोहरदग्गा भेजा गया था। किंतु बिल्कुल आश्चर्यजनक रूप से उपायुक्त, लोहरदग्गा द्वारा दिनांक 29.12.2012 का आदेश पारित किया गया था। जिसके द्वारा याचियों की सेवा समाप्त कर दी गयी है।

4. सेवा समाप्ति के आक्षेपित आदेश से व्यथित होकर, याचीगण कोई वैकल्पिक, प्रभावकारी एवं त्वरित उपचार नहीं होने के चलते अपनी शिकायत दूर करवाने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब लेकर इस न्यायालय के पास आए हैं।

5. समानांतर स्तंभ में, रिट आवेदनों में किए गए प्रकथनों का खंडन करते हुए प्रत्यर्थियों की ओर से प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है। प्रतिशपथ पत्र में, अन्य बातों के साथ यह निवेदन किया गया है कि याचियों ने आयु शिथिलीकरण का लाभ लेते हुए पिछड़ी कोटि के अधीन उक्त पद के लिए आवेदन दिया था। किंतु, उन्हें प्राप्त किए गए अंकों के अनुसार सामान्य कोटि में चयनित किया गया था। किंतु, दिनांक 31.10.2012 के पत्र के तहत कार्मिक विभाग, झारखंड राज्य द्वारा जारी मार्गदर्शक सिद्धांतों के मुताबिक, जो कहता है कि ''यदि उम्मीदवार एक बार आरक्षित कोटि का लाभ पाता है, तब उसे केवल उस कोटि में चयनित किया जाएगा, उसे सामान्य कोटि में चयनित कभी नहीं किया जाएगा,'' याचियों जिन्हें दिनांक 31.10.2012 के पहले चयनित किया गया था, जिला चयन कमिटी ने दिनांक 29.12.2012 के मेमो के तहत याचियों की सेवा समाप्त करने का निर्णय लिया है।

6. याचियों के विद्वान अधिवक्ता सुश्री राखी रानी और प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान ए॰ ए॰ जी॰ श्री अजित कुमार को सुना गया।

7. याचियों के विद्वान अधिवक्ता ने जोरदार आग्रह किया है कि परिशिष्ट 10 के तहत जारी दिनांक 29.12.2012 का आक्षेपित आदेश इस तथ्य के कारण विधित: संपोषणीय नहीं है कि दिनांक 17.9.2012 को चयन प्रक्रिया समाप्त हो गयी थी और दिनांक 31.10.2012 के मार्गदर्शक सिद्धांतों को जारी किए जाने के पहले याचियों को वी॰ एल॰ डब्ल्यू॰ पद पर चयनित किया गया था, अत: उक्त सरकारी अनुदेश को भूतलक्षी प्रभाव नहीं दिया जा सकता था ताकि याचियों की सेवा अभिमोचित की जा सके। याचियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि प्रत्यर्थियों की आक्षेपित कार्रवाई नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन में है क्योंकि प्रत्यर्थियों द्वारा सेवा समाप्ति आदेश जारी किए जाने के पहले न तो कोई कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था और न ही कोई विभागीय कार्यवाही आरंभ की गयी थी जो भारत के संविधान के अनुच्छेदों 311 (2) एवं भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के उल्लंघन में है।

8. अपने निवेदन के समर्थन में याचियों के विद्वान अधिवक्ता ने **मिथिलेश कुमार बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य,** 2014 (3) JLJR 255, मामले में दिए गए निर्णय पर विश्वास किया जिसमें माननीय न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि मापदंड जो उस समय पर प्रचलित था, जब चयन प्रक्रिया शुरु की गयी थी को आवेदकों के अलाभ के लिए बदला नहीं जा सकता है, अत:, अपनी नियुक्ति के लिए

याचियों के दावा से इनकार करने के लिए उक्त अधिसूचना भूतलक्षी प्रभाव से प्रयोज्य नहीं बनायी जा सकती है।

9. याचियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे **जसमेर सिंह बनाम हरियाणा राज्य एवं एक अन्य, (2015)4 SCC 458,** मामले में दिए गए निर्णय पर विश्वास किया जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय सेवा समाप्ति आदेश अपास्त करते हुए पूर्ण पिछली मजदूरी के साथ पुनर्बहाली का निर्देश देने में न्यायोचित था चूँकि जहाँ सेवा समाप्ति आदेश आरंभ से शून्य है, कर्मकार पूर्ण पिछली मजदूरी का हकदार है।

10. याचियों के विद्वान अधिवक्ता ने आगे **सुदेश्वर साहू बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 2867 वर्ष 2005,** में पारित निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें माननीय न्यायालय ने पैराग्राफ 11 पर निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:-

> *"11. çR;fFk;k }kjk fy;k x;k nf"Vdk.k fd vkjf{kr dkfV d mEehnokj dk vukjf{kr in d fo#) fu;Dr ugh fd;k tk ldrk g] Lohdkj ugh fd;k tk ldrk gA tkfr è;ku e fy, fcuk vU; ik= 0;fDr vukjf{kr in d fo#) viu ekey ij fopkj fd, tku d ik= gA tgk rd egÙke vk; lhek dk lcèk g] bldk mEehnokj ,o ml dkfV ftl l mEehnokj vkrk g d lkFk lcèk gA bldk in d lkFk lcèk ugh gA pkg ;g vkjf{kr gk ;k vukjf{krA***

याचियों के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 2867 वर्ष 2005 में पारित आदेश ने पहले ही अंतिमता प्राप्त कर लिया है।

11. इसके विरुद्ध, प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने अपना तर्क देकर याचियों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों का जोरदार खंडन किया कि आयु के शिथिलीकरण एवं फीस की रियायत से संबंधित मामला कि क्या आयु के शिथिलीकरण का लाभ लेने वाले उम्मीदवार को फीस की रियायत का शिथिलीकरण आरक्षित कोटि उम्मीदवार के रूप में माना जाएगा यदि उसे सामान्य कोटि के अधीन आने वाला पाया गया है, राज्य सरकार के सक्रिय विचार के अधीन था और अंततः दिनांक 31.10.2012 के झारखंड सरकार ने परिशिष्ट A के तहत आदेश पारित किया है कि ''यदि उम्मीदवार एक बार आरक्षित कोटि का लाभ पाता है, तब केवल उस कोटि में उसका चयन किया जाएगा और सामान्य कोटि में उसका चयन कभी नहीं किया जाएगा'' और परिपत्र जारी किए जाने की तिथि पर चूँकि याची चयनित किया गया था, अतः, उक्त परिपत्र को निर्दिष्ट करके प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने याचियों की सेवा समाप्त कर दिया, जिसे शक्ति का मनमाना प्रयोग नहीं माना जा सकता है जो विधितः असंपोषणीय नहीं है।

12. विरोधी पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद एवं प्रासंगिक अभिलेखों का परिशीलन करने पर मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि याचीगण निम्नलिखित तथ्यों, कारणों एवं न्यायिक उद्घोषणाओं के कारण हस्तक्षेप का मामला बनने में सक्षम हुए हैं:-

> *(i) LohÑr :i l] oreku ekey e] fjV vkonu d ifjf'k"V 1d rgr foKkiu d vulj.k e ;kfp;k] tk fiNMh dkfV d vèkhu vkr Fk] u vk; f'kfFkyh dj.k dk ykHk yr g, ykgjnXxk ftyk e oh0 ,y0 MCY;0 in d fy, vkonu fn;k] ;fi ml ftyk e fiNM ox d fy, vkjf{kr fjfDr ugh FkhA rRi'pkr] ;kphx.k p;u çfØ;k e mifLFkr g, vkj mUg vukjf{kr dkfV mEehnokjk d :i e eèkk lphe viuk p;u fd, tku l lQy ?kkf"kr fd;k x;k FkkA*

(ii) ckn e] fnukd 31.10.2012 d lj dkjh ifji= dh nf"V e tk dgrk g fd tc vukjf{kr dkfV mEehnokjk dh ryuk e vk;] 'k{kf.kd vgrk ,o volj k dh l[;k dk f'kfFkyhdj.k nr g, vkjf{kr dkfV mEehnokj dk p;u fd;k tkrk g rc mUg doy mlh vkjf{kr dkfV d fo#) lek;ftr fd;k tk,xk] fnukd 29.12.2012 d vkn'k d rgr ;kfp;k dh lok lekIr dh x;h FkhA ,l mEehnokjk dk vukjf{kr dkfV d fy, vuiyCèk le>k tkrk gA

(iii) ekuuh; lokPp U;k;ky; u ftrUn dekj flg ,o ,d vU; cuke mÙkj çn'k jkT; ,o vU;] (2010)3 SCC 119, ekey e foLrkjiod blh fook|d ij fopkj fd;k gA çklfxd ijkxkQk 48, 49, 52, 71, 72 ,o 75 dk ;gk uhp m)r fd;k tkrk g%

"48. iokDr rF;k dh nf"V e gekjk lfopkfjr nf"Vdk.k g fd vihykFkh;k dk fuonu fd Qhl vFkok vk; dk f'kfFkyhdj.k vkjf{kr dkfV l vku oky mEehnokjk dk lkekU; dkfV d mEehnokjk d fo#) Liièkk dju d volj l ofpr djxk] fdlh Hkh vkèkkj d fcuk gA ;g xkj fd;k tkuk g fd vkjf{kr dkfV mEehnokjk dk p;u çfØ;k e dkb ykHk ugh fn;k x;k gA leLr mEehnokjk dk ,d gh ijh{kk e mifLFkr gkuk Fkk vkj ,d gh lk{kkRdkj dk lkeuk djuk FkkA vr% ;g fcYdy çdV g fd Qhl e fj;k;r vkj vk; f'kfFkyhdj.k u doy vkjf{kr dkfV l vku oky dfri; mEehnokjk dk fopkj fd, tku d {k= d vrxr vku d fy, l{ke cuk;k Fkk] vk; e fj;k;r u vfre eèkk@p;u lph r;kj dju e vkjf{kr dkfV d mEehnokjk d i{k e fdlh rjhd l lryu ugh >dk;k FkkA

49. Hkkjr d lfoèkku d vuPNnk 14, 15, 16 ,o 38 dh nf"V e lkekftd ,o 'k{kf.kd :i l fiNM oxk l vku oky mEehnokjk dk vyxHk lekIr dju d fy, fofèk e mi;Dr çkoèkku cukuk jkT; d fy, vuK; gA vkj{k.k Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 16 (1) d vèkhu çR;kHkr volj dh lekurk çklr dju dk <x gA vkj{k.k dk ykHk bfllr dju d fy, vkj Liièkk dju e mudk l{ke cuku d fy, vkjf{kr dkfV d mEehnokjk dk çnku fd;k x;k Qhl vFkok vk; e fj;k;r ,o f'kfFkyhdj.k vkj{k.k dk lgk;d ek= gA fj;k;r ,o f'kfFkyhdj.k vkj{k.k dk lgk;d ek= gA fj;k;r ,o f'kfFkyhdj.k mEehnokjk dk lkekU; dkfV mEehnokjk d i{k e vkx fdlh fj;k;r d fcuk mEehnokjk dh eèkk fofuf'pr dh tkrh gA

52. oreku ekey e] vk; f'kfFkyhdj.k ,o Qhl fj;k;r e vkjf{kr dkfV mEehnokjk }kjk ykHk fy, x, fj;k;rk dh vfre fyf[kr ijh{kk ,o lk{kkRdkj d vkèkkj ij ijLij eèkk dk fofu'p;dj.k d çfr çklfxdrk ugh FkhA oLrr% iokDr fu.k; dk fu.k;kèkkj eèkk d vkèkkj ij lkekU; dkfV mEehnokjk e lfEefyr fd, tku dh vuefr vkjf{kr dkfV mEehnokjk dk nrk gA

71. gekjk lfopkfjr er g fd vfèkfu;e o"k 1994 dh èkkjk 8 d vrxr vku oky fj;k;rk dk fyf[kr ijh{kk e vfgr gku d fy, fofgr ekud e f'kfFkyhdj.k ugh dgk tk ldrk gA èkkjk 8 Li"Vr% çkoèkkfur djrh g fd jkT; ljdkj çfr;kfxrk ijh{kk vFkok lk{kkRdkj e Qhl d lcèk e fj;k;r vkj mijh vk; lhek e f'kfFkyhdj.k çnku dj ldrh gA

72. vfèkfu;e o"k 1994 d ioru d rjUr ckn ljdkj u mÙkj çn'k ykd lok e vulfpr tkfr] vulfpr tutkfr ,o vU; fiNM legk d fy, vkj{k.k d fo"k; ij fnukd 25.3.1994 dk vun'k tkjh fd;kA o vun'k vU; ckrk d lkFk fuEufyf[kr çkoèkkfur djr g%

"4. ;fn vkjf{kr dkfV;k l vku oky fdlh 0;fDr dk lkekU; dkfV d mEehnokjk d lkFk [kyh çfr;kfxrk e eèkk d vkèkkj ij p;fur fd;k tkrk g] rc ml vkjf{kr dkfV e lek;kftr ugh fd;k tk,xk vFkkr ml vukjf{kr fjfDr;k d fo#) lek;kftr fd;k x;k le>k tk,xkA ;g vrkfRod gkxk fd mlu vkjf{kr dkfV dk miyCèk (vk; lhek e f'kfFkyhdj.k tl) fdlh lfoèkk vFkok f'kfFkyhdj.k dk ykHk fy;k gA**

mDr l ;g fcYdy çdV gk tkrk g fd vk; lhek e f'kfFkyhdj.k vU; leLr phtk d leku gku ij] lkekU; dkfV d mEehnokj d lkFk Lièkk dju d fy, vkjf{kr dkfV mEehnokj dk l{ke ek= cuku d fy, gA jkT; u vk; ,o Qhl e f'kfFkyhdj.k dk p;u ijh{kk vFkkr lk{kkRdkj }kjk vulfjr e[; fyf[kr ijh{kk e mEehnokj dh eèkk ij vkèkkfjr p;u d fy, ekud e f'kfFkydj.k d :i e ugh ekuk gA vr%] ,lk f'kfFkyhdj.k çfr;kfxrk ijh{kk e eèkk d vkèkkj ij lkekU; dkfV d mEehnokj d :i e fopkj fd, tku d fy, vkjf{kr dkfV mEehnokj dk vfèkdkj l ofpr ugh dj ldrk gA èkkjk 8 dh mièkkjk (2) vkx çkoèkkfur djrh g fd Åijh vk;lhek e f'kfFkyhdj.k lfgr fj;k;rk ,o f'kfFkyhdj.kk tk vfèkfu;e d lkFk vlxr ugh g d lcèk e vfèkfu;e d vkjHk ij çoÙk ljdkjh vkn'k mUg mikrfjr vFkok çfrlâr fd, tku rd ç;kT; cu jgr gA

75. gekj er e] vk; e] f'kfFkyhdj.k fdlh rjhd l ^^[ky d fu;ek** dk vLr&0;Lr ugh djrh gA vihykfFk;k d fo}ku vfèkoDrk dk fuonu Lohdkj djuk lHko ugh g fd vk; e f'kfFkyhdj.k vFkok Qhl e fj;k;r fdlh rjhd l Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 16 (1) dk vfry?ku gkxkA ; fj;k;r çfr;kfxrk ijh{kk e mifLFkr gku d fy, mEehnokj dh ik=rk l lcfèkr çkoèkku gA ml le; ij fj;k;rk dk ykHk fy;k tkrk g] [kyh çfr;kfxrk vkjHk ugh gb gA ;g rc vkjHk gkrh g tc leLr mEehnokjk] tk ik=rk 'krk vFkkr vgrk] vk;] vkjfHkd fyf[kr ijh{kk ,o 'kkjhfjd ijh{kk dk ifji.k djr g] dk e[; fyf[kr ijh{kk e cBu dh vuefr nh tkrh gA vk; f'kfFkyhdj.k ,o Qhl fj;k;r d lkFk vkjf{kr mEehnokjk dk fopkj fd, tku d {k= e yk;k ek= tkrk g rkfd o eèkk ij [kyh çfr;kfxrk e Hkkx y ldA tc ,d ckj mEehnokj fyf[kr ijh{kk e Hkkx yrk g] ;g vrkfRod g fd mEehnokj fdl dkfV l vkrk gA ik= ?kkf"kr fd, tku d fy, leLr mEehnokjk u vkjfHkd ijh{kk e ,o 'kkjhfjd ijh{kk e Hkh Hkkx fy;k FkkA doy rRi'pkr lQy mEehnokjk dk [kyh çfr;kfxrk e Hkkx yu dh vuefr nh x;h gA**

oreku ekey e] bUgh fl)krk dk ykx djr g, ljf{kr :i l ;g vfHkfuèkkfjr fd;k tk ldrk g fd ;kphx.k fiNMh dkfV dk lnL; gku d ukr egÙke vk; lhek d ykHkk d gdnkj g tlk fiNMh dkfV d fy, fofgr fd;k x;k g vkj Hky gh ml dkfV fo'k"k d fy, vkjf{kr in ugh Fkk] o viuh dkfV dk è;ku e fy, fcuk vkjf{kr in d fo#) fu;fDr d viu ekeyk ij fopkj fd, tku d fy, gdnkj gA tgk rd egÙke vk; lhek dk lcèk g] bldk mEehnokjk ,o dkfV ftll o vkr g d lkFk lcèk gA bldk fjDr@in d lkFk lcèk ugh g] pkg ;g vukjf{kr gk ;k vkjf{krA

(iv) fnukd 31.10.2012 dh vfèkIpuk@ifji= d ifj'kyu ij vkx ;g çrhr gkrk g fd ;g tkjh fd, tku dh frfFk l çHkkodkjh gkxk] rn}kjk ft ldk vFk g fd vfèkIpuk Hkry{kh çHkko l ykx ugh dh tk ldrh FkhA fdr] oreku ekey e] bl Hkry{kh çHkko l ykx fd;k x;k g D;kfd fnukd 31.10.2012 rd p;u çfØ;k lekIr gk x;h FkhA vr%] bl vkèkkj ij Hkh lok lekfIr dk vk{kfir vkn'k fofèk e lik"k.kh; ugh gA

13. पूर्वोक्त तथ्यों, कारणों एवं न्यायिक उद्घोषणाओं के समेकित प्रभाव पर दिनांक 29.12.2012 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है और प्रत्यर्थियों को याची को तुरन्त सेवा में पुनर्बहाल करने का निर्देश दिया जाता है।

14. जहाँ तक पिछली मजदूरी का संबंध है, 'काम नहीं तो वेतन नहीं' के सिद्धांत को लागू करते हुए याची बीच की अवधि के दौरान अर्थात् सेवा समाप्ति की तिथि से पुनर्बहाली की तिथि तक किसी पिछली मजदूरी का हकदार नहीं है। किंतु, याची जहाँ तक पेंशन की अवधि एवं अन्य सेवानिवृत्ति लाभों के गणना का संबंध है, सेवा के सातत्यता के लाभ का हकदार होगा।

15. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों एवं निर्देशों के साथ रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; çeFk iVuk;d] U;k;efr

रघुवंश सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P.(S) No. 5648 of 2011. Decided on 6th November, 2015.

सेवा विधि–बर्खास्तगी–याची को नकली शिक्षकों को पदग्रहण करने की अनुमति देने और उनके पक्ष में वेतन के संवितरण का दोषी पाया गया था–अभिकथनों की गंभीरता एवं याची द्वारा किए गए अवचार की दृष्टि में न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति लागू नहीं की जा सकती है और अभिलेख पर मौजूद सामग्री पर आधारित जाँच अधिकारी द्वारा दिए गए तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है–रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 7 से 9)

निर्णयज विधि.–(2009) 8 SCC 310—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Pratyush Kumar, For the Petitioner; Mr. Chanchal Jain, For the Respondents.

प्रमथ पटनायक, न्यायमूर्ति.–संलग्न रिट आवेदन में याची ने अन्य बातों के साथ सेवा से याची की बर्खास्तगी से संबंधित दिनांक 29.4.2009 के पत्र (रिट याचिका का परिशिष्ट 7) अभिखंडित करने के लिए उत्प्रेषण रिट जारी करने के लिए और पिछली मजदूरी के साथ उसकी पुनर्बहाली की अनुमति देने के लिए प्रत्यर्थियों को निर्देश देने के लिए प्रार्थना किया है।

2. अनावश्यक विवरणों से रहित, रिट आवेदन में वर्णित तथ्य संक्षेप में ये हैं कि याची को नकली शिक्षक को पद ग्रहण करने की अनुमति देने के लिए और उनके पक्ष में वेतन के संवितरण के लिए भी रिट आवेदन के परिशिष्ट 1 के तहत निलंबन के अधीन किया गया था। याची के विरुद्ध आरोप विरचित किया गया था और विभागीय कार्यवाही आरंभ की गयी थी जिसके दौरान उसने जाँच कार्यवाही में भाग

लिया। रिट आवेदन में प्रकथन किया गया है कि याची ने रिट याचिका के परिशिष्टों 4 एवं 4/A के मुताबिक दिनांक 15.9.1995 के पत्र सं॰ 5205 और दिनांक 26.10.1995 के पत्र सं॰ 5421 के तहत पूरे राज्य में अर्थात दक्षिण छोटानागपुर में व्यापक स्तर पर स्थानांतरण के आधार पर शिक्षकों का पद ग्रहण स्वीकार किया जिनमें प्राचार्यों/प्रधानाध्यापकों को एक सप्ताह के भीतर उनको पद ग्रहण करवाने को अनुदेश अभिव्यक्त रूप से दिया गया है और यह विद्यालय निरीक्षकों के डी॰ ई॰ ओ॰ एवं उनके अधिकारियों की जानकारी में भी लाया गया है। जाँच के दौरान यह पाया गया है कि विद्यालयों में शिक्षकों का पदग्रहण नकली था और अंतर्ग्रस्त व्यक्तियों के विरुद्ध समुचित कार्रवाई का आदेश दिया गया था। राज्य सरकार ने भी नकली शिक्षकों के विरुद्ध प्राथमिकी दर्ज करने का आदेश दिया था। आगे रिट आवेदन में यह कथन किया गया है कि कुछ शिक्षक डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 960 वर्ष 2005 में इस न्यायालय के पास आए और उनके पक्ष में अंतरिम संरक्षण अनुज्ञात किया गया है। याची को सेवा से बर्खास्त किया गया था और याची द्वारा दाखिल अपील अस्वीकार की गयी है।

बर्खास्तगी आदेश एवं अपीलीय प्राधिकारी के आदेश से व्यथित होकर, कोई वैकल्पिक एवं प्रभावकारी उपचार नहीं होने के कारण याची अपनी शिकायत दूर करवाने के लिए इस न्यायालय की असाधारण अधिकारिता का अवलंब लेते हुए भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन इस न्यायालय के पास आया है।

3. समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थियों ने रिट आवेदन में किए गए प्रकथनों का खंडन करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया है। प्रतिशपथ पत्र में, यह निवेदन किया गया है कि निदेशक, माध्यमिक शिक्षा, बिहार, पटना ने दिनांक 7.7.2004 के पत्र सं॰ 1953 के तहत सूचित किया कि राम विलास + 2 उच्च विद्यालय, बेरमो, बोकारो में कुछ नकली शिक्षक कार्यरत हैं। बाद में उक्त पत्र के अनुसरण में जिला शिक्षा अधिकारी, बोकारो को दिनांक 7.10.2004 के पत्र के तहत रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया था। जिला शिक्षा अधिकारी, बोकारो ने रिपोर्ट किया कि 15 नकली शिक्षक उक्त विद्यालय में कार्यरत थे, अत: दिनांक 3.1.2005 के मेमो के तहत जिला शिक्षा अधिकारी, बोकारो को उनके वेतन का भुगतान रोकने का निर्देश जारी किया गया था। समग्र सत्यापन के बाद यह पाया गया था कि याची, तत्कालीन प्राचार्य, राम विलास + 2 उच्च विद्यालय, बेरमो, बोकारो ने उनके नियुक्ति पत्रों का समुचित सत्यापन किए बिना 11 नकली शिक्षकों का पदग्रहण स्वीकार किया और उनके वेतन का भुगतान करने की अनुमति दिया। याची ने निदेशक, माध्यमिक शिक्षा, बिहार, पटना के वास्तविक आदेश के बिना तथाकथित नकली शिक्षकों को पदग्रहण करने की अनुमति भी दिया। याची 11 नकली शिक्षकों के पदग्रहण के लिए जिम्मेदार था, परिणामस्वरुप उसे दिनांक 4.9.2001 के पत्र के तहत निलंबित किया गया था और विभागीय जाँच के अधीन किया गया था। क्षेत्रीय उपनिदेशक, शिक्षा, उत्तरी छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग ने दिनांक 24.4.2002 के मेमो के तहत अपना रिपोर्ट प्रस्तुत किया और अनुशंसा किया कि याची को निलंबन से विमुक्त किया जाना चाहिए किंतु उसे आगे विभागीय जाँच के अधीन रखा जाना चाहिए। उनकी अनुशंसा पर, निलंबन आदेश प्रतिसंहृत किया गया था। किंतु, विभागीय जाँच आगे जारी रही और जाँच कमिटी ने भी याची को नकली शिक्षकों का पद ग्रहण स्वीकार करने और सरकारी खजाना को धनीय हानि कारित करते हुए उनको वेतन संवितरित करने में मदद देने का दोषी पाया गया था। याची को पुन: दिनांक 3.1.2005 के आदेश के तहत निलंबित किया गया था। तत्पश्चात, क्षेत्रीय उपनिदेशक, शिक्षा, उत्तरी छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग द्वारा आगे जाँच के लिए दिनांक 1.7.2005 के मेमो के तहत याची को आरोप-पत्र जारी किया गया था जिन्होंने अपना रिपोर्ट प्रस्तुत किया और पाया कि याची के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को प्रतिशपथ पत्र के परिशिष्ट A के तहत प्रथम दृष्टया सिद्ध किया गया था। तत्पश्चात, याची को दिनांक 18.1.2007 के पत्र सं॰ 183 के तहत द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था। याची अपने पक्ष में कोई गवाह प्रस्तुत करने में विफल रहा, परिणामस्वरुप, उसे सिविल सेवा

(वर्गीकरण, नियंत्रण एवं अपील) अधिनियम, 2002 के नियम 9 (1) के अधीन दिनांक 29.4.2009 के तहत सेवा से बर्खास्त किया गया था। डब्ल्यू पी॰ (एस॰) सं॰ 1150 वर्ष 2009 में दिनांक 9.2.2011 के आदेश के अनुसरण में याची ने दिनांक 29.4.2009 के आदेश के विरुद्ध अपीलीय प्राधिकारी अर्थात् प्रमुख सचिव, मानव संसाधन विकास विभाग के समक्ष अपील दाखिल किया और अपीलीय प्राधिकारी ने दिनांक 30.7.2011 को याची को सुना और पाया कि याची ने अपने पक्ष में कोई नया तथ्य प्रस्तुत नहीं किया था और केवल वही दोहराया था जो उसने अपने द्वितीय कारण बताओ में कहा था। चूँकि याची के विरुद्ध किए गए अभिकथन गंभीर प्रकृति के थे और मुख्य दंड आवश्यक बनाते थे, अत:, दिनांक 16.8.2011 के आदेश के तहत उसकी अपील याचिका अस्वीकार की गयी थी। इसके अतिरिक्त, जिला शिक्षा अधिकारी, बोकारो को नकली शिक्षकों को वेतन का भुगतान रोकने का और वेतन के रूप में उनको भुगतान की गयी राशि की वसूली के लिए नकली शिक्षकों के विरुद्ध दांडिक मामला तथा प्रमाण पत्र मामला दाखिल करने का निर्देश दिया गया था जैसा प्रतिशपथपत्र के परिशिष्ट-C से स्पष्ट है। याची ने नकली शिक्षकों के साथ सह-अपराधिता में कृत्य किया और वह उनका पदग्रहण स्वीकार करते हुए संपूर्ण षड्यंत्र का भाग था और उसने सरकारी खजाने को असुधार्य हानि कारित करते हुए वेतन के भुगतान की अनुमति दिया, अत: उसे सही प्रकार से सेवा से बर्खास्त किया गया है।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री प्रत्युष कुमार और प्रत्यर्थियों के लिए उपस्थित श्री चंचल जैन, ए॰ ए॰ जी॰ के जे॰ सी॰ सुने गए।

5. याची के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क के क्रम के दौरान पूरक शपथ पत्र को निर्दिष्ट किया है, जिसमें यह निवेदन किया गया है कि रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान व्यक्तियों जिन्हें प्रत्यर्थियों द्वारा नकली नियुक्त व्यक्ति अभिकथित किया गया था ने डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 960 वर्ष 2005 दाखिल किया था और उक्त मामला दिनांक 2.1.2014 के निर्णय के तहत अनुज्ञात किया गया है और तद्द्वारा, उसमें प्रत्यर्थियों द्वारा जारी दिनांक 27.1.2005 का कारण बताओ नोटिस इस आधार पर अभिखंडित किया गया है कि इसे पूरक शपथ पत्र के परिशिष्ट 9 के मुताबिक प्रत्यर्थियों द्वारा संदेह मात्र पर जारी किया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची पूरी तरह निर्दोष है और उसे झूठा आलिप्त किया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 16.12.2014 को दाखिल पूरक शपथ पत्र को भी निर्दिष्ट किया है, जिसमें यह निवेदन किया गया है कि याची को पूरक शपथ पत्र के परिशिष्ट S/1 के मुताबिक पूर्वोक्त नयी नियुक्तियों का पदग्रहण स्वीकार करने का निर्देश निदेशक, माध्यमिक शिक्षा, पटना, बिहार द्वारा दिया गया था और याची ने पूर्वोक्त पाँच नव नियुक्तों का पदग्रहण स्वीकार करने के बाद इसे राज्य सरकार द्वारा सत्यापन/अन्वेषण के लिए जिला शिक्षा अधिकारी के कार्यालय को अग्रसारित किया और सत्यापन के बाद यह पाया गया था कि पूर्वोक्त पाँच नयी नियुक्तियाँ वास्तविक थी और इसे निदेशक, माध्यमिक शिक्षा, पटना, बिहार द्वारा जिला शिक्षा अधिकारी बोकारो को दिनांक 14.5.1996 के पत्र द्वारा संसूचित भी किया गया था जिसे पूरक शपथ पत्र के परिशिष्ट S/2 के रूप में संलग्न किया गया है। पूरक शपथ पत्र पर विश्वास करते हुए याची के अधिवक्ता ने जोरदार तर्क किया कि याची को झूठा आलिप्त किया गया है और राज्य प्राधिकारियों की ओर से हुए लोप के कारण बलि का बकरा बनाया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 21.1.2015 के एक अन्य शपथपत्र को भी निर्दिष्ट किया है, जिसमें यह निवेदन किया गया है कि याची ने पाँच नव नियुक्तों का पदग्रहण स्वीकार करने के बाद इसे राज्य सरकार द्वारा सत्यापन के लिए जिला शिक्षा अधिकारी के कार्यालय को तुरन्त अग्रसारित किया और उक्त तथ्य जिला शिक्षा अधिकारी, बोकारो सह-धनबाद द्वारा निदेशक, माध्यमिक शिक्षा, बिहार, पटना को लिखे

गए दिनांक 14.5.1996 के पत्र द्वारा निश्चयात्मक रूप से सिद्ध किया गया है। अत:, याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि पाँच नयी नियुक्तियाँ वास्तविक पायी गयी थी।

6. प्रत्यर्थियों के लिए उपस्थित ए॰ ए॰ जी॰ के जे॰ सी॰ श्री चंचल जैन ने जोरदार निवेदन किया है कि सेवा से बर्खास्तगी का आक्षेपित आदेश, जिसे अपीलीय प्राधिकारी द्वारा संपुष्ट किया गया है, किसी हस्तक्षेप की अपेक्षा नहीं करता है क्योंकि विभागीय कार्यवाही में हस्तक्षेप की गुंजाइश अत्यन्त सीमित है और याची के विरुद्ध किए गए अभिकथनों जो गंभीर प्रकृति के हैं को पूरी तरह सिद्ध किया गया है और जाँच के दौरान याची की सह अपराधिता सिद्ध की गयी है। अत: प्रत्यर्थियों ने सही प्रकार से याची को सेवा से बर्खास्त किया है।

7. रिट आवेदन, पूरक शपथ पत्र और परस्पर विरोधी निवेदनों का परिशीलन करने के बाद यह प्रतीत होता है कि याची निम्नलिखित तथ्यों, कारणों एवं न्यायिक उद्घोषणाओं के कारण हस्तक्षेप का मामला बनाने में सक्षम नहीं हुआ है:

(I) कि वर्तमान मामले में स्वीकृत रूप से आरोपों के अनुसरण में जाँच की गयी थी और याची को नकली शिक्षकों का पद ग्रहण स्वीकार करने और सरकार को धनीय हानि कारित करने में उनकी मदद करने का दोषी पाया गया था। जाँच के दौरान यह भी सामने आया है कि याची ने पूर्वोक्त नकली शिक्षकों के साथ कृत्य किया और जानबूझकर नकली शिक्षकों का पद ग्रहण स्वीकार करते हुए और उनको वेतन का भुगतान किए जाने की अनुमति देते हुए षड्यन्त्र का भाग था जो गंभीर अवचार है, अत:, याची को न्यायोचित दंड दिया गया है।

(II) वर्तमान मामले में, कार्यवाही के आरंभ से इसके समापन तक प्रक्रियात्मक अनियमितता नहीं है और न ही कार्यवाही साक्ष्य के बिना है, अत: दंड के आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप करने का आधार बिल्कुल नहीं है।

(III) वर्तमान मामले में, अभिकथनों की गंभीरता एवं याची द्वारा किए गए अवचार की दृष्टि में न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति लागू नहीं की जा सकती है और इसके अतिरिक्त अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर जाँच अधिकारी द्वारा दिए गए तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है जैसा **उ॰ प्र॰ राज्य एवं एक अन्य बनाम मनमोहन नाथ सिन्हा एवं एक अन्य, (2009)8 SCC 310,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विशेषत: पैराग्राफ 10 पर अभिनिर्धारित किया गया है जिसे यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

> *"15. fofèkd voLFkk lfuf'pr g fd U;kf;d iufoykdu dh 'kfDr fu.k; d fo#) funf'kr ugh g cfYd fu.k; yu dh çfØ;k rd lhfer gA U;k;ky; fu.k; d x.kkx.kk ij fu.k; ugh nrk gA vihyh; U;k;ky; d :i e U;k;ky; dk tkp vfèkdkjh d le{k fn, x, lk{; dk iuvfèkeY;u ,o iuvkdyu dju vkj tkp vfèkdkjh }kjk nt fu"d"k dk ijh{k.k dju ,o Lo; viu fu"d"k ij vku dh NV ugh g--------***

8. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के पूर्वोक्त सिद्धांतों को लागू करते हुए, जैसा यहाँ ऊपर उपदर्शित किया गया है, मैं रिट याचिका के परिशिष्ट 7 के तहत दिनांक 29.4.2009 के बर्खास्तगी के आक्षेपित आदेश में और प्रधान सचिव, मानव संसाधन विकास विभाग, झारखंड, राँची द्वारा पारित दिनांक 16.8.2011 के अपीलीय प्राधिकारी के आदेश में हस्तक्षेप करने का कारण नहीं पाता हूँ।

9. तद्नुसार, रिट याचिका गुणागुण रहित होने के कारण खारिज की जाती है।